निवेदन

शरत् बाबूका यह उपन्यास बंगलाके सुप्रसिद्ध मासिक पत्र 'भारतवर्ष' में धारावाहिक रूपमें प्रकाशित हो रहा था, इसके १५ परिच्छेद ही लिखे गये थे कि अचानक उनका स्वर्गवास हो गया और यह अधूरा ही पड़ा रहा।

कलकत्तेमें रहते समय शरत् बाबू प्रायः नित्य ही शामके वक्त कवि-दम्पति श्रीयुत नरेन्द्रदेव और श्रीयुक्ता राधारानी देवीके घर जाकर घंटों बैठते थे ओर तरह-तरहकी चर्चा और आलोचनामें समय बिताते थे। शरच्चन्द्रके जीवनके अनुभवोंकी और उनके साहित्यानुशीलनकी सैकड़ों बातें उन्हींके मुखसे सुननेका सौभाग्य उक्त कविदम्पतिको प्राप्त हुआ था। शरतसाहित्यको केन्द्र करके ही मुख्य रूपसे इन लोगोंकी शामकी बैठक जमा करती थी।

श्रीमती राधारानी देवी बंगलाकी सुलेखिका हैं। लीलाकमल, वनविहंगी, सिंथी मौर आदि अनेक ग्रन्थ उनके लिखे हुए हैं। शरच्चन्द्रके साथ उनकी इस असमाप्त रचनाके बारेमें अच्छी तरह आलोचना और विचारविनिमय करनेका सुयोग उन्हें प्राप्त हुआ था, अतएव इसे पूर्ण करनेके लिए उनसे अधिक उपयुक्त पात्र मिलना कठिन था। हर्षकी बात है कि अन्तक ११ परिच्छेद लिखकर उन्होंने इसे पूरा कर दिया। इसके लिए साहित्य-जगत् उनका चिरऋणी रहेगा।

पाठक देखेंगे कि उन्होंने मुख्य लेखकके भावोंकी रक्षा करनेका पूरा पूरा प्रयत्न किया है और सविता, राखाल, तारक, व्रजविहारी और विमल बाबूके चरित्रोंको उसी मार्गसे आगे बढ़ाया है जिस मार्गपर वे प्रारभमे चले थे। हम नहीं जानते कि वास्तवमें शरत्-बाबू सविताके जीवनकी समस्याको अन्तमे किस रूपमें सुलझाते, परन्तु श्रीमती राधारानी देवीने जो पूर्ति की है, वह बेमेल तो नहीं मालूम होती।

शरत् बाबूके लिखे हुए अंशकी जो आलोचना प्रेसीडेन्सी कालेज कलकत्ताके प्रो० सुबोधचन्द्रसेन गुप्तने की है, उसका हिन्दी अनुवाद आगे दिया जा रहा है। शरत्साहित्यका हार्द समझनेके लिए पाठक उसे अवश्य पढ़ें।

— **प्रकाशक**

निवेदन

शरत् बाबूका यह उपन्यास बंगलाके सुप्रसिद्ध मासिक पत्र 'भारतवर्ष' में धारावाहिक रूपमें प्रकाशित हो रहा था, इसके १५ परिच्छेद ही लिखे गये थे कि अचानक उनका स्वर्गवास हो गया और यह अधूरा ही पड़ा रहा।

कलकत्तेमें रहते समय शरत् बाबू प्रायः नित्य ही शामके वक्त कवि-दम्पति श्रीयुत नरेन्द्रदेव और श्रीयुक्ता राधारानी देवीके घर जाकर घंटों बैठते थे और तरह-तरहकी चर्चा और आलोचनामें समय बिताते थे। शरच्चन्द्रके जीवनके अनुभवोंकी और उनके साहित्यानुशीलनकी सैकड़ों बातें उन्हींके मुखसे सुननेका सौभाग्य उक्त कविदम्पतिको प्राप्त हुआ था। शरत्साहित्यको केन्द्र करके ही मुख्य रूपसे इन लोगोंकी शामकी बैठक जमा करती थी।

श्रीमती राधारानी देवी बंगलाकी सुलेखिका हैं। लीलाकमल, वनविहंगी, सिंथी मौर आदि अनेक ग्रन्थ उनके लिखे हुए हैं। शरच्चन्द्रके साथ उनकी इस असमाप्त रचनाके बारेमें अच्छी तरह आलोचना और विचारविनिमय करनेका सुयोग उन्हें प्राप्त हुआ था, अतएव इसे पूर्ण करनेके लिए उनसे अधिक उपयुक्त पात्र मिलना कठिन था। हर्षकी बात है कि अन्तक ११ परिच्छेद लिखकर उन्होंने इसे पूरा कर दिया। इसके लिए साहित्य-जगत् उनका चिरऋणी रहेगा।

पाठक देखेंगे कि उन्होंने मुख्य लेखकके भावोंकी रक्षा करनेका पूरा पूरा प्रयत्न किया है और सविता, राखाल, तारक, व्रजबिहारी और विमल बाबूके चरित्रोंको उसी मार्गसे आगे बढ़ाया है जिस मार्गपर वे प्रारंभमें चले थे। हम नहीं जानते कि वास्तवमें शरत्-बाबू सविताके जीवनकी समस्याको अन्तमें किस रूपमें सुलझाते, परन्तु श्रीमती राधारानी देवीने जो पूर्ति की है, वह बेमेल तो नहीं मालूम होती।

शरत् बाबूके लिखे हुए अंशकी जो आलोचना प्रेसीडेन्सी कालेज कलकत्ताके प्रो० सुबोधचन्द्रसेन गुप्तने की है, उसका हिन्दी अनुवाद आगे दिया जा रहा है। शरत्साहित्यका हार्द समझनेके लिए पाठक उसे अवश्य पढ़ें।

— प्रकाशक

निवेदन

शरत् बाबूका यह उपन्यास बंगलाके सुप्रसिद्ध मासिक पत्र 'भारतवर्ष' में धारावाहिक रूपमें प्रकाशित हो रहा था, इसके १५ परिच्छेद ही लिखे गये थे कि अचानक उनका स्वर्गवास हो गया और यह अधूरा ही पड़ा रहा।

कलकत्तेमें रहते समय शरत् बाबू प्रायः नित्य ही शामके वक्त कवि-दम्पति श्रीयुत नरेन्द्रदेव और श्रीयुक्ता राधारानी देवीके घर जाकर घंटों बैठते थे और तरह-तरहकी चर्चा और आलोचनामें समय बिताते थे। शरच्चन्द्रके जीवनके अनुभवोंकी और उनके साहित्यानुशीलनकी सैकड़ों बातें उन्हींके मुखसे सुननेका सौभाग्य उक्त कविदम्पतिको प्राप्त हुआ था। शरत्साहित्यको केन्द्र करके ही मुख्य रूपसे इन लोगोंकी शामकी बैठक जमा करती थी।

श्रीमती राधारानी देवी बंगलाकी सुलेखिका हैं। लीलाकमल, वनविहंगी, सिंथी मौर आदि अनेक ग्रन्थ उनके लिखे हुए हैं। शरच्चन्द्रके साथ उनकी इस असमाप्त रचनाके बारेमें अच्छी तरह आलोचना और विचारविनिमय करनेका सुयोग उन्हें प्राप्त हुआ था, अतएव इसे पूर्ण करनेके लिए उनसे अधिक उपयुक्त पात्र मिलना कठिन था। हर्षकी बात है कि अन्तक ११ परिच्छेद लिखकर उन्होंने इसे पूरा कर दिया। इसके लिए साहित्य-जगत् उनका चिरऋणी रहेगा।

पाठक देखेंगे कि उन्होंने मुख्य लेखकके भावोंकी रक्षा करनेका पूरा पूरा प्रयत्न किया है और सविता, राखाल, तारक, व्रजबिहारी और विमल बाबूके चरित्रोंको उसी मार्गसे आगे बढ़ाया है जिस मार्गपर वे प्रारम्भमें चले थे। हम नहीं जानते कि वास्तवमें शरत्-बाबू सविताके जीवनकी समस्याको अन्तमें किस रूपमें सुलझाते, परन्तु श्रीमती राधारानी देवीने जो पूर्ति की है, वह बेमेल तो नहीं मालूम होती।

शरत् बाबूके लिखे हुए अंशकी जो आलोचना प्रेसीडेन्सी कालेज कलकत्ताके प्रो० सुबोधचन्द्रसेन गुप्तने की है, उसका हिन्दी अनुवाद आगे दिया जा रहा है। शरत्साहित्यका हार्द समझनेके लिए पाठक उसे अवश्य पढ़ें।

— **प्रकाशक**

आलोचना

उपन्यास हो चाहे नाटक, उसमें एक कल्पित परिस्थितिमें कल्पित नर-नारियोंसे इस तरहकी बातें करानी होंगी या काम कराना होगा कि जिसमें ऐसा जान पड़े कि वे जीते जागते मनुष्य हैं। कवि विधाताके समान होता है। वह नित्य नये-नये मनुष्योंकी सृष्टि करता रहता है, जो परिस्थितिके बीच भाषा और कार्य द्वारा अपनी प्राण-शक्तिका प्रमाण देते हैं।

शरच्चन्द्रमें सृष्टि करनेकी यह शक्ति असाधारण थी। वह नर, नारी और शिशुको अनेक घटनाओंके चक्रमें डालकर, उन्हें प्राणवान् करके प्रकट कर सकते थे। जिन्होंने केवल परिस्थितिकी विचित्रतापर नजर जमा रखी है, उन्होंने हमेशा ही कहा है कि ये सब घटनाएँ असभव हैं, ये विस्मयमें डाल सकती हैं, किन्तु सत्य नहीं हैं। कोई 'बाईजी' अपने पाठशालाके साथीके लिए अपने हृदयमें पवित्र प्रेम संचित कर रखेगी, मेसकी नौकरानी पवित्रताका आदर्श होगी, रोगी मित्रको छोड़कर उसकी पत्नीको लेकर मित्र भाग जाएगा, ये सब परिस्थितियाँ एकदम अविश्वासके योग्य जान पड़ती हैं। किन्तु इन सब मामलोंको—घटनाओंको—विच्छिन्न भावसे अर्थात् अलग अलग देखनेसे काम न चलेगा। राजलक्ष्मी, सावित्री, सुरेश और अचलाके चरित्रकी विशेषताने ही इन सब असभव घटनाओंको विश्वासके योग्य बना दिया है। इन सब चरित्रोंकी असाधारणता इन सब अद्भुत घटनाओंकी सहायताके बिना प्रकाशित नहीं हो सकती थी। 'शेष परिचय' म जो कहानी वर्णन की गई है, वह प्रथम दृष्टिमें अतिनाटकीय मालूम पड़ सकती है। कुलका त्याग करनेवाली स्त्री तेरह वर्ष बाद अपनी परित्यक्त कन्याके विवाहको रोकनेके लिए व्यग्र हो उठी है और अपना इरादा कार्यरूपमें परिणत करनेके लिए पहलेके अपने एक आश्रित युवकसे भेंट करने आई है और वहीं उसी स्वामीके साथ एकाएक सामना हो गया, जिस स्वामीको तेरह वर्षके भीतर उसने कभी नहीं देखा! फिर उस कन्याकी बीमारीको उपलक्ष्य करके एकाएक वह स्त्री उस आदमीसे चिरकालके लिए अलग हो गई, जिसका आश्रय लेकर तेरह वर्ष पहले उसने गृहका त्याग किया था और लबे तेरह साल तक वह जिसके साथ रही-सही। इस कहानीमें ऐसी ही और भी अति नाटकीय घटनायें हैं जो साधारणत. असभव ही जान पड़ती हैं, किन्तु शरच्चन्द्रको जिस रहस्यकी खोज है, उसके लिए असाधारण चरित्र और परिस्थिति ही चाहिए।

शरच्चंद्रने नारी-हृदयके रहस्यको खोलनेकी चेष्टा की है और नारीको न्यायसंगत मर्यादा दी है। उन्होंने दिखाया है कि समाजने जिनको कलंकिनी कहकर पंगतके बाहर कर दिया है, वे हृदयकी पवित्रता और अनुभूतिके गौरवमें असाधारण हो सकती हैं। उन्होंने यह भी दिखाया है कि विधवाके प्रेममें वास्तवमें कोई कलक नहीं है। रमा रमेशको जो प्यार करती थी, वह सार्थक नहीं हो सका; किन्तु उसमें गहराई या पवित्रताका अभाव नहीं था। शरच्चन्द्रने देखा है कि ये सब स्त्रियाँ केवल समाजके द्वारा ही विडंबनाको नही प्राप्त हुई हैं; उन्हें सबसे अधिक समाजके दिये हुए संस्कारने विडम्बित किया है। राजलक्ष्मी, रमा आदिके हृदयमें गहरे प्रेम और अनतिक्रमणीय धर्मबुद्धिका अविराम संघर्ष चलता रहा है। वे किसी तरह यह नहीं समझ पाईं कि इन दोनोंमें कौन शक्ति अधिक प्रबल है अथवा किसकी मर्यादा अधिक है। अचलाके चरित्रके विश्लेषणमें शरत्‌ने और भी थोड़ा-सा साहस किया है। उस जगह संघर्ष हुआ है अनुभूति और बुद्धिके बीच, अथवा अनुभूतिके भीतर ही। मानव-जीवनका श्रेष्ठ रहस्य यही है कि उसमें जो सब बहुत ही गहरी अनुभूतियाँ हैं, उनके बीच अनेक समय स्वविरोधिता रहती है। इसी लिए वे दुर्ज्ञेय और अलंघ्य हैं। आप जिसे अच्छी तरह नहीं समझा जाता, उसे दूसरेके आगे स्पष्ट करके प्रकट नहीं किया जा सकता और इसी कारण उसे अपने काबूमें करना भी कठिन है। अचला समझती थी कि वह महिमको प्यार करती है और सुरेशको पराई स्त्रीके प्रति लुब्ध और विश्वासघातक समझकर घृणा करती है। किन्तु अपने अनजानेमें ही सुरेशकी ओर उसका मन आगे बढ़ता रहा है। सुरेश जो अति नाटकीय और दुःसाहसिक उपायसे उसे लेकर भाग गया, यह जैसे उसके अन्तःकरणके भीतर छिपी हुई प्रणयकी आकांक्षाका ही प्रतीक है। उसके हृदयमें इन परस्पर-विरोधी अनुभूतियोंने कैसे आश्रय ग्रहण किया था, इस बातको वह न समझ सकी। इस सारे व्यापारको उसने दैवका अभिशाप ही समझा।

'शेष परिचय' में शरच्चन्द्र और भी थोड़ा आगे बढ़े हैं। इस उपन्यासकी नायिका सविता अपने जिस स्वामीके प्रति अत्यंत अनुरक्त और भक्ति रखनेवाली थी, उसी स्वामीको त्याग कर बाहर निकल गई रमणीबाबू नामके एक दूरके नातेके आदमीके साथ। उसके पीछे घरमें उसकी तीन वर्षकी लड़की रेणु, उसके धर्मपरायणस्वामी, गृहदेवता गोविन्दजी और कुल-वधूकी मर्यादा पड़ी रही। तेरह साल तक रमणी बाबूकी रखेलके रूपमें रहनेके बाद सविताके

हमारी पहली भेंट होती है। कहानीका आरम्भ यहींसे होता है। हम देखते हैं कि तेरह साल बाद भी स्वामीके प्रति सविताकी भक्ति पहलेहीकी तरह अटल है कन्याके पति उसका प्रेम अम्लान है और रमणी बाबूके प्रति उसकी वितृष्णा (नफरत) की सीमा नहीं है। अगर यह समझा जाता कि रमणीबाबूके साथ रहनेके फलस्वरूप उसके मनमें यह वितृष्णा उत्पन्न हुई है, तो फिर यह प्रश्न अपेक्षाकृत सरल हो जाता। रवि बाबूके ' घरे बाहिरे ' (घर और बाहर) की मोह-मुक्त विमलाके साथ उसकी तुलना की जा सकती। किन्तु देखा जाता है कि उसके चरित्रका रहस्य और भी जटिल, और भी गभीर है। जिस दिन वह रमणी बाबूके साथ घरसे निकली, उस दिन भी उसने रमणीबाबूको प्यार नहीं किया। अथ च तेरह वर्ष तक उसने रमणी बाबूके ऐश्वर्यका अंश ग्रहण किया और उनकी शय्यासंगिनी बनी रही। राजलक्ष्मी या सावित्रीने जो अपने शरीरको पवित्र बनाये रखा, वह भी सविताने नहीं किया। शायद उसने सोचा कि जिस नारीने कुलका त्याग कर दिया, स्वामी और कन्याके बन्धनको काट डाला, उसके लिए देहको अकलंकित रखनेसे लाभ क्या है? प्रश्न यह है कि फिर सविताने घरका त्याग क्यों किया? गहरी अर्धरात्रिके समय अपमानकी गठरी सिरपर लादकर घरसे बाहर होते समय उसने कहा था—" तुम कोई इनकी देहमें हाथ न लगाना। मैं मना किये देती हूँ। हम अभी घरसे निकले जाते हैं। " तो क्या उसके गृहत्यागका कारण रमणी बाबूके प्रति अनुकम्पा है? उसे अत्याचारसे बचानेकी इच्छा है? किन्तु जिस आदमीको उसने किसी दिन भी प्यार नहीं किया, उसके ऊपर उसकी यह अनुकम्पा क्यों होगी? खासकर उसने खुद ऐसी कोई व्याख्या देकर अपने पापको हलका करनेकी चेष्टा नहीं की। अगर रमणी बाबूके ऊपर दयाहीने उसे इसके लिए प्रेरित किया होता, तो किसी न किसी समय वह उसका उल्लेख अवश्य करती। इसके अलावा सविताका एकान्त अनुगत राखाल इस मामलेमें बाहरके षड्यन्त्रके ऊपर कितना ही जोर क्यों न दे, इसमें सन्देह नहीं कि व्रज बाबूके घरमें रहते समय रमणी बाबूके साथ सविताका सम्बन्ध शुचिताकी सीमाको लाँघ गया था। जिस अवस्थामें निर्जन कक्षमें गहरी रातको इन दोनोंको पाया गया, उसकी व्यंजना ही यथेष्ट है। सविताने स्वयं अपने इस पद-स्खलनको सम्पूर्ण रूपसे मान लिया है। स्वामीका घर छोड़नेके पहलेके अपने आचरणको उसने कभी अनिन्द्य नहीं माना। अथ च

स्वामीके प्रति एकनिष्ठ भक्तिका अभाव भी उसमें कभी किसी दिन नहीं हुआ। तब फिर क्यों उसका पदस्खलन हुआ? नारी-हृदयके रहस्यकी ठीक यह दिशा शरच्चन्द्रने अपने और किसी उपन्यासमें खोलनेकी चेष्टा नहीं की। अथच पहलेके उपन्यासोंमें उन्होंने जिन सब समस्याओंकी चर्चा या आलोचना की थी, उनके साथ इस उपन्यासकी समस्याका सयोग है। उन्होंने पद-स्खलिता रमणियोंको अपने उपन्यासोंका केन्द्र बनाया है और अनेक पहलुओंसे उनके चरित्रकी विशेषताका विश्लेषण किया है। किन्तु यहाँ उन्होंने उन स्त्रियोंके जीवनके मौलिक प्रश्नकी आलोचना की है। वह प्रश्न यह है कि उनका पदस्खलन होता क्यों है और वह पद-स्खलन उनके जीवन अथवा चरित्रके ऊपर रेखापात करता है या नहीं। इस पहलूसे विचार करनेपर यह उपन्यास सचमुच ही शरच्चन्द्रका शेष परिचय देता है।

जिस सुगम्भीर कलंकका बोझा लादकर सविता समाजके बाहर निकल गई, उसका कोई कारण ही उसे खोजे नहीं मिला। उसने जोर देकर कहा है कि रमणी बाबूको उसने कभी किसी दिन प्यार नहीं किया, किसी दिन श्रद्धा नहीं की, अपने स्वामीकी अपेक्षा किसी दिन उसे बड़ा नहीं माना—जिस दिन घर छोड़ा उस दिन भी नहीं। उसने बारबार अपनेसे यही प्रश्न पूछा है; किन्तु उत्तर नहीं पाया। उसने अपने स्वामीसे क्षमा चाही, किन्तु स्वामीके प्रश्नका वह उत्तर नहीं दे सकी। उसने कहा है कि जिस दिन वह स्वयं इसका उत्तर पावेगी, उसी दिन स्वामीको इसका उत्तर जनावेगी। अथ च रमणी बाबूको उसने पुराने फटे कपड़ेकी तरह अथवा उससे भी अधिक हेय किसी वस्तुकी तरह त्याग कर दिया। उन दोनोंकी सम्मिलित जीवन-यात्राका जो चित्र हम पाते हैं, उससे जान पड़ता है कि कभी किसी दिन इन दोनोंमें हृदयका कोई सम्बन्ध नहीं था। रमणी बाबू हररोज आये हैं, पलँगपर बैठकर पान-तमाखूसे एक गाल आम जैसा फुलाए बारबार उच्चारित उन्हीं सब अत्यंत अरुचिकर सभापणोंसे और हँसी-दिल्लगीसे उसके मनोरजनका प्रयास करते रहे हैं। इस कामार्त अति प्रौढ व्यक्तिके विरुद्ध पर्वताकार घृणा और विद्वेष मनमें रखकर हर रातको वह उसकी शय्याकी साथिन बनी है। तो भी इसी तरह उसका एक युग कट गया है। युग कट जाना विचित्र नहीं है; किन्तु इसीके संस्पर्शमें आकर उसका पदस्खलन क्यों हुआ? इसी 'क्यों' का कोई जवाब उसे ढूँढे नहीं मिला। बारह सालसे अधिक समय तक सविता इस प्रश्नकी आलोचना करती रही; किन्तु उत्तर नहीं पाया। शारदाके

प्रश्नके उत्तरमें सविताने कहा है—" पद-स्खलनकी क्या कोई 'क्यों' होती है शारदा ? यह एकाएक सम्पूर्ण अकारण निरर्थकतामें हो जाता है।" अपने हृदयकी अली-गलीमें घूमकर और दूसरोंसे पूछकर भी सविताको इस रहस्यका पता नहीं लगा। कह नहीं सकते, यही उसके स्रष्टाका भी आखिरी जवाब है कि नहीं। शायद शरच्चन्द्रने समझा होगा कि स्त्री और पुरुषके बीच जो यौन आकर्षण है, उसके साथ हृदयकी अनुभूतिका सम्पर्क कम है, इसका बुद्धिसे विचार करना या जाँचना असभव है। इसके भीतर कोई 'क्यों' नहीं है।

उपन्यास-लेखक चाहे प्रश्न उपस्थित करें और चाहे प्रश्नका उत्तर ही दें, उनकी रचनाकी प्रधान विशेषता यह है कि वह नर-नारीके सम्पर्कका सजीव चित्र खींचेंगे, उनके इस चित्रके भीतर हृदयका रहस्य प्रतिबिम्बित होगा, उनकी जिज्ञासाके समाधानका सकेत रहेगा। सविताका चरित्र अगर संपूर्ण उतर पाता, तो शायद उसकी किसी असलर्क बातके बीच अथवा उसके व्यवहारके द्वारा यह रहस्य अच्छी तरह स्पष्ट हो सकता। किन्तु हम उसका सम्पूर्ण चित्र नहीं पाते। जिस उपन्यासको औपन्यासिक समाप्त नहीं कर जा सके, उसका विस्तृत विश्लेषण और आलोचना सभव नहीं है। तो भी एक बात जान पड़ती है कि उपन्यासका मूल विषय पदस्खलिता नारीका चरित अंकित करना है। अथ च उपन्यासका आरभ हुआ है पदस्खलनके तेरह वर्ष बाद, और कहानीके आगे बढ़ते-न-बढ़ते ही प्रतिनायक रमणी बाबू अन्तर्द्धान हो गये हैं। कहानीमें दो बातोंने प्रधानता पाई है—सविताने अपने स्वामीके निकट आश्रय चाहा है और विमल बाबूने सविताके निकट आना चाहा है। सविताके स्वामी और कन्याने स्पष्ट करके जना दिया है कि उनके साथ उसका सम्बन्ध या सम्पर्क शेष हो गया है। विमल बाबूने मित्रता चाही है, और उसे पाया है, किन्तु नर-नारीका सम्पर्क जिस जगह गहरा, घना और रहस्याच्छन्न है, वहाँतक वह मित्रता नहीं पहुँची। अतएव शरच्चन्द्र किस घटना और परिस्थितिके भीतरसे सविताके चरित्रको सम्पूर्ण रूपसे प्रकट करते और उसे वह पूरी तौरसे अभिव्यक्त कर पाते या नहीं, यह कहा नहीं जा सकता। किन्तु यह निश्चित है कि सविताके चरित्रमें उन्होंने एक परम अद्भुत रमणीके चरित्रको अंकित करनेका प्रयास किया है और उसके बीचसे नारी-हृदयके गोपनतम और गभीरतम रहस्यके ऊपर रोशनी डाली है। असम्पूर्ण होनेपर भी यह उपन्यास उनकी स्वकीय प्रतिभाका परिचय देता है।

— श्रीसुबोधचन्द्र सेनगुप्त

शेष परिचय

१

राखालराजका एक नया मित्र आ जुटा है। उसका नाम है तारकनाथ परिचय लगभग तीन ही महीनेका है, किन्तु इसी बीच 'आप' की वारी समाप्त होकर वात-चीतमें 'तुम' का प्रयोग होने लगा है। और आजकल ऐसा भाव देखा जाता है कि यह संभाषण और एक सीढी नीचे 'तू' पर उतर आवे, तो दोनोंको आपत्ति नहीं।

ढाई वजे तारकको निश्चय ही जाना आ चाहिए—उसे कोई वहुत जरूरी सलाह करनी है; लेकिन वह नहीं दिखाई पड़ रहा है। इधर घड़ीमें तीन वज रहे हैं। राखाल छटपटा रहा है—सलाहके लिए नहीं; किन्तु ठीक तीन वजे उसे स्वय कहीं जाना है—गये विना नहीं वनेगा। भवानीपुरमें, एक सुशिक्षित परिवारमें, शामके वाद ही 'महिला-मजलिस'की वैठक है। वहुत-सी विदुषी तरुणियोंके पधारनेकी नि संशय संभावना वतलाकर उस परिवारकी गृहिणीने स्वयं वहाँ वेगार करनेका वुलावा भेजा है, और जरूर जरूर आनेकी हिदायत कर दी है। अतएव ठीक समयपर न जानेसे अत्यन्त अन्याय होगा, अर्थात् जाना ही चाहिए।

इधर उसकी जानेकी तैयारी पूरी हो चुकी है। दाढी-मूछ दो वार अच्छी तरह साफ करके चार-पाँच वार 'स्नो' लगाया जा चुका है। पलँगके ऊपर कायदेसे चुना हुआ पजावी कुर्ता, सिल्ककी गजी, चुनियाई हुई देशी धोती और चादर, पलगके नीचे अभी-अभी क्रीम लगाकर वार्निश किया चमचमाता हुआ पप (जूता), तिपाईपर रखी हुई स्वर्णनिर्मित चेनमे वँधी सोनेकी चौपहल रिस्टवाच—जो युवकोंकी मडलीमें युवतियोंके मनको मोहनेवाली प्रसिद्ध है—सभी प्रस्तुत है। टेविलपर केटलीमें चायका पानी गाढेसे गाढा होकर प्राय. न पीने लायक हो गया है, किन्तु मित्रवरका पता नहीं। अतएव कसूर जब मित्रका ही है, तब दर्वाजेमें ताला लगाकर चल देनेमें क्या दोप है! लेकिन मनमें कहीं कुछ खटकता-सा है, पर उस ओरका आकर्पण भी दुर्निवार है।

प्रवल मानसिक चचलताके मारे राखाल चट्टी पैरोंमें डालकर वडी मडक तक एक वार घूम आया। इसके वाद कपमे चाय भरकर अकेले ही पीने लगा। मनमें अतिम वार प्रतिज्ञा की कि यह प्याली खतम होते ही वस, अव न रुकूँगा। उसका परामर्श भाडमे जाय। फिजूल—फिजूल, सव फिजूल है। सचमुच अगर काम होता तो वह आध घटा पहले ही आकर हाजिर हो जाता, देर कभी न करता। न होगा, तो कल सवेरे एक वार उसके मेस तक घूम आया जायगा—वस।

तारकका परिचय वादको दिया जायगा। यहाँपर राखालका इतिहास मोटे तौरपर दे देता हू।

पूछनेपर वह कहता है—मैं सन्यासी आदमी हूँ। अर्थात् माता और पिताके पक्षके सभी लोग परलोक सिधार गये हैं, वही केवल वाकी है। एक दिन वे निश्चय ही इस लोकको समुज्ज्वल करते थे, किन्तु वह सब हाल राखालको अच्छी तरह मालूम नहीं। अगर कुछ मालूम भी है तो वताना नहीं चाहता। इस समय पटलडागा मोहल्लेमे रहता है। मकानवाला कहता है—उसके पास दो कमरे हैं, पर वह कहता है—केवल एक है। किराया अन्तको डेढ कमरेका देनेका फैसला हुआ है। घर एकमंजिला है और उसमें काफी सीलन है। मगर हवादार न होनेपर भी प्रकाश इतना है कि दिनको दियासलाई जलाकर जूता ढूढते फिरना नहीं पडता। खैर, घर चाहे जैसा हो राखालका असबाब कुछ कम नहीं है। अच्छा पलँग, अच्छा विछौना, अच्छी मेज-कुर्सी,

अच्छी-सी दो अलमारियाँ। एक आलमारी किताबोंसे और दूसरी कपड़े-लत्तो-पोशाकोंसे भरी है। एक कीमती बिजलीका पंखा है। दीवारकी घड़ी भी निहायत कम कीमती नहीं है। इसी तरहकी और कितनी ही शौककी—न जाने क्या-क्या—छोटी-मोटी चीजें हैं। माहवारी पर नौकर एक बूढ़ी दासी उसका कुकर और चाय बनानेका सामान धो-माँजकर रख जाती है, घर-द्वार साफ करती है, भीगी धोतीको छाँटकर, धोकर, सुखाकर, उठाकर यथास्थान रख जाती है। समय मिलता है तो बाजारसे सौदा भी खरीद लाती है। राखाल तिथि-त्यौहारके बहाने रुपया-धेली जो देता है, वह अक्सर 'महीने' की रकमसे भी बढ जाता है। राखाल बीच-बीचमें प्यारके स्वरमें उसे 'नानी' कहकर पुकारता है। राखालको सचमुच वह बुढिया प्यार करती है।

राखाल सबेरे लड़कोंको पढाता है, बाकी दिनभर सभा-समितियोंमें घूमता-फिरता है—राजनीतिक नहीं, सामाजिक। वह कहता है—मैं साहित्यिक हूँ। राजनीतिके शोर-गुलसे हमलोगोंकी साधनामें विघ्न पड़ता है।

लड़के पढ़ाता है, लेकिन कालिजके नहीं—स्कूलके। सो भी बहुत नीची क्लासोंके। पहले उसने नौकरीके लिए बहुत कोशिश की, लेकिन पा नहीं सका। अब वह चेष्टा छोड़ दी है।

लेकिन एक बेला छोटे लड़के पढाकर किस तरह इतने सुख और इतनी स्वच्छन्दतासे रह सकता है, यह भी समझमें नहीं आता। वह साहित्यिक है, लेकिन किसी साप्ताहिक या मासिकमें उसका नाम ढूँढ़े नहीं मिलता। बहुत रात गये तक जागकर वह लिखा करता है, किन्तु उसका क्या करता है, किसीको नही बताता। स्कूल-कालिजमें उसने क्या-क्या पढ़ा है—कोई नहीं जानता। पूछनेपर ऐसा भाव दिखाता है कि वह टीचर्स-ट्रेनिंगसे लेकर डाक्टरेट तक सब कुछ हो सकता है। उसकी आलमारीमें सब तरह की—सब विषयोंकी पुस्तकें हैं। काव्य, साहित्य, दर्शन, विज्ञान आदिकी मोटी-मोटी चुनिंदा-चुनिंदा कितावें मौजूद हैं। बातचीत सुनकर एकाएक शंका होती है कि यह कोई छुपा हुआ महामहोपाध्याय तो नहीं है। होमिओपैथी शास्त्रसे लेकर वायरलेस (wireless) तक उसे मालूम है। उसके मुखसे सुननेपर सदेह होता है कि वह वैद्युतिक तरंग-प्रवाहके बारेमें प्रसिद्ध आविष्कारक मार्कोनीसे कुछ कम नहीं है। काण्टिनेण्टल ग्रन्थकारोंके नाम राखालको कण्ठस्थ हैं—किसने

कितनी पुस्तकें लिखी हैं, वह घड़ल्लेसे कह सकता है। 'ह्यूम' के साथ 'लाक' के विचारोंमें कितना अन्तर है और 'स्पिनोजा' के साथ 'डेकार्टे' का असल मेल कहाँपर है, तथा भारतीय दर्शनकी तुलनामें इन लोगोंके विचार कितने हल्के या निकम्मे हैं—ये सब तत्त्वकी बातें वह एक पण्डितकी ही तरह सबके आगे कहता है। बुअर-वारमें सेनापति कौन कौन थे, रूस और जापानकी लड़ाईमें रूसकी हार किस कारण हुई, अमेरिकाके लोगोंने किस तरह इतना रुपया पैदा कर लिया, ये सब विवरण उसके नाखूनमें लिखे हुए हैं। भारतीय मुद्राके विनिमयमें राष्ट्रीय दर क्या होना चाहिए, रिवर्स कौन्सिल बेचकर भारतको कितने रुपयोंकी हानि हुई, गोल्डस्टेंडर्ड (स्वर्णमान) रिजर्वमें कितना रुपया आता है और करेन्सी (नोटों) की अमानतमें कितना रुपया जमा रहना चाहिए—इस सम्बन्धमें वह एकदम निःसंशय है। यहाँ तक कि न्यूटनके साथ आइन्स्टीनके मतवादका कितने दिनोंमें सामंजस्य होगा, इस मामलेमें भी भविष्यवाणी करनेमें वह नहीं हिचकता। सुनकर कुछ लोग हँसते हैं और कुछ श्रद्धासे विगलित हो जाते हैं। लेकिन एक बातको सभी सच्चे दिलसे स्वीकार करते हैं कि राखाल परोपकारी है और उसके बूते हो सकता है तो वह किसीकी भी सहायता करनेसे मुँह नहीं मोड़ता।

बहुतसे घरोंमें राखालकी बेरोकटोक पहुँच है—उनके द्वार खुले रहते हैं। सभी उससे अपना काम करा लेते हैं—वह खुशीखुशी यह बेगारें करता है। जो औरतें अवस्थामें बड़ी हैं, वे बीच बीचमें अनुरोध करके कहती हैं—राखाल, यह तुम्हारी बड़ी गलती है। अब अपना ब्याह कर डालो और गिरिस्ती जमाओ। कबतक इस तरह बिताओगे?—अवस्था तो काफी हो चुकी है।

राखाल कानमें उंगली देकर कहता है—और चाहे जो कहिए, केवल यही आज्ञा न कीजिए। मैं मजेमें हूं।

तो भी लोग आदेश-उपदेश देनेमें कृपणता नहीं करते। जो और अधिक शुभचिन्तक हैं, वे दुःख प्रकट करके कहते हैं—भला वह किसीकी बात सुनेगा! स्वदेश और साहित्यके पीछे ही पागल है।

बात वह नहीं सुन सकता, किन्तु पागलपन दूर होता है कि नहीं, यह आजतक किसी शुभाकांक्षीने जाँचकर नहीं देखा। किसीने यह नहीं कहा कि

राखाल, हमने तुम्हारे लिए लड़की ठीक की है—तुमको व्याहके लिए राजी होना होगा।

इसी तरह राखालके दिन कट रहे थे और उम्र बढ़ रही थी।

इस प्रसंगमें और एक बात कहनेका प्रयोजन है। दर्शन-विज्ञानमें चाहे जो हो, राखाल यह बात समझता है कि संसारमें अपना कहनेको उसके कहीं कोई नहीं है और भविष्यके पन्नेमें भी शून्यका अंक लिखा हुआ है—यह खबर और चाहे जिसकी नजरसे छिपी रहे, किन्तु औरतोंकी आँखोंसे छिपी नहीं है। इसीसे विवाहके अनुरोधमें वह उन लोगोंकी सदिच्छा और सहानुभूति-भर ही ग्रहण करता है। उनका काम करता है, बेगारमें परिश्रम करता है—इससे अधिकके लिए प्रलुब्ध नहीं होता। एक तरहका संयम और मिताचार इसी जगह उसकी रक्षा करता है।

चाय पीना समाप्त करके राखाल चुनियाई हुई धोतीको कायदेके साथ सुंदर ढंगसे पहनकर सिल्ककी गंजीको और एक बार झाड़कर पहनने चला कि इसी समय तारकने आकर प्रवेश किया।

राखालने कहा—वाह—अच्छे आदमी हो तुम! इसीका नाम जरूरी सलाह है? क्यों?

"कहीं जा रहे हो क्या?"

"नहीं, सारे तीसरे पहर घरमें बैठा रहूँगा।"

"नहीं, यह न होगा। तीसरा पहर होनेमें अब भी बहुत देर है। बैठो।"

"नहीं जी नहीं—यह नहीं हो सकता। परामर्श अब कल होगा।"

इतना कहकर उसने गंजीके ऊपर कुर्ता पहना।

तारकने क्षणभर उसकी ओर ताकते रहकर कहा—तो फिर परामर्श रह गया। कल सवेरे मैं बहुत दूर जा पहुँचूँगा। शायद फिर कभी—ना, यह न होगा—बहुत दिन तक फिर मुलाकात होनेकी संभावना अब नहीं है।

राखाल धपसे कुर्सीके ऊपर बैठ गया। बोला—इसका मतलब?

तारक—इसका मतलब यह कि मुझे एक नौकरी मिल गई है। बर्दवान जिलेके एक गाँवमें। एक नये स्कूलकी हेडमास्टरी।

"प्राइमरी स्कूल है?"

"नहीं, हाईस्कूल है।"

"हाईस्कूल? मेट्रिक तक? महीना क्या है?"

"लिखा तो है नब्बे रुपए। और एक छोटा-मोटा मकान रहनेके लिए देंगे।"

राखाल हा. हाः करके हँस पड़ा। फिर बोला—धोपा है धोपा—सब धोपेबाजी है। किसीने दिल्लगी की है। यह तो सौ रुपएसे ऊपर हो गया जी। क्यों, उन्ह क्या कोई आदमी नहीं मिला?

तारकने कहा—जान पड़ता है, नहीं मिला। देहातमें क्या कोई सहजमें जाना चाहता है?

"नहीं, नहीं चाहता। अरे, सौ रुपएमें तो आदमी यमराजके घर भी जानेको तैयार हो जाता है—वह तो बर्दवान है। ओह, तीन दम हो गये। अब देर नहीं की जा सकती।—ना, ना, पागलपन रहने दो—कल सवेरे बातचीत होगी। देखा जायगा, किसने लिखा है और क्या लिखा है। तुम यह नहीं समझते कि एक सौ रुपए। न जाने—न पहचाने आदमी और जगह। धत्। एप्लिकेशन (दरख्वास्त) का जवाब ही तो? वह मैं बहुत जानता हूँ, इसीमें दाढ़ घुन चले हैं। धत्।—अब जाता हूँ।" यह कहकर राखाल उठ खड़ा हुआ।

तारकने विनती करके कहा—और दस मिनट ठहरो भाई। वह सच या झूठ, चाहे जो हो, रातकी गाड़ीसे जाना ही होगा।

राखालने कहा—क्यों, जरा सुनूँ तो? जान पड़ता है, मेरी बातका विश्वास नहीं हुआ?

तारकने इसका उत्तर नहीं दिया। बोला—मगर अभ्यास कुछ ऐसा हो गया है कि दिनके अन्तमें मुलाकात न होनेसे दम जैसे घुटने लगता है।

राखालने कहा—मेरा शायद नहीं घुटने लगता है—क्यों न?

इसके बाद दोनों जने क्षणभर चुप रहे।

तारकने कहा—अगर जिंदा रहा तो बड़े दिनकी छुट्टियोंमें शायद फिर भेंट होगी। तब तक...

तारकने उँगलीसे एक बहुत इस्तेमालकी हुई सोनेकी सील-अँगूठी उतारकर

मेजके एक छोरपर रख दी। बोला—भाई राखाल, तुम्हारे बीस रुपए देना हैं।—

बात पूरी नहीं होने पाई। "यह क्या उन रुपयोंका बंधक है?" कहते कहते झपट्टा मारकर राखालने वह अँगूठी उठा ली और झोंकमें आकर उसे खिड़कीसे बाहर फेंकना ही चाहता था कि तारकने उसका हाथ पकड़कर स्निग्ध स्वरमें कहा—अरे नहीं, नहीं, बंधक नहीं—क्योंकि इसे बेचनेसे तो दस रुपये भी कोई न देगा—यह मेरी निशानी है। जानेके पहले मैं तुम्हें यह पहना जाऊँगा।

यह कह कर उसने जबर्दस्ती वह अँगूठी मित्रकी उँगलीमें पहना दी। फिर कहा—दस मिनट समय माँग लिया था; किन्तु पंद्रह मिनट हो गये। अब तुम्हारी छुट्टी है। लो, पोशाक-ओशाक पहन लो।—यह कहकर वह हँसा।

उस समय तक महिला-मजलिसका दृश्य राखालके मनमें फीका पड़ गया था। वह चुपचाप बैठा रहा। ड्रेसिंग-टेबिलके आईनेमें पास-पास दोनों मित्रोंका प्रतिबिंब पड़ रहा था। राखाल ठिगना, गोलमटोल, गोरे रंगका है। उसके परिपुष्ट मुखपर एक सहृदयता सरलता जैसे बहुत स्पष्ट झलकती है। आदमी जैसे सचमुच भलामानुस है; इसमें सन्देह नहीं होता। लेकिन तारकका चेहरा इस प्रकारका नहीं है। उसका कद लम्बा, शरीर कृश—छरहरा, देहका रंग प्रायः साँवलेसे कुछ अधिक काला है। बाहर तो जाहिर नहीं होता, लेकिन गौर करनेहीसे सन्देह होता है। आदमी शायद अतिशय बलवान् है। चेहरा देखकर एकाएक कोई धारणा करना कठिन है, किन्तु उसकी आँखोंमें—दृष्टिमें एक अद्भुत विशेषता है। आँखें चौड़ी या सुन्दर नहीं हैं; लेकिन उनसे जान पड़ता है, जैसे इसपर भरोसा या विश्वास किया जा सकता है—सुख या दुःखमें भार सहनेकी शक्ति यह रखता है। अवस्था उसकी सत्ताईस-अट्ठाईस होगी, राखालसे दो तीन साल छोटा, लेकिन न जाने क्यों, वही बड़ा जान पड़ता है।

राखाल एकाएक जोर देकर कह उठा—लेकिन मैं कहता हूँ, तुम्हें वहाँ न जाना चाहिए—तुम्हारा वहाँ जाना ठीक नहीं है।

"क्यों?"

"'क्यों' और क्या है? एक हाईस्कूलको चलाना क्या सहज काम है!

मैट्रिक क्लासके लड़के पढाने होंगे, उन्हें पास कराना होगा—वह कालिफिकेशन (योग्यता) क्या..."

तारकने कहा—वे लोग कालिफिकेशन नहीं चाहते। वे चाहते थे यूनिवर्सिटीकी छाप (सर्टिफिकेट)। वे सब 'मार्के' मैंने कर्ता-धर्ता लोगोंके दरबारमें पेश किये—अर्जी मजूर हो गई। लड़के पढानेका भार मेरा है, लेकिन उन्हें पास करानेका दायित्व उनका है।

राखालने गर्दन हिलाते-हिलाते कहा—यह कहनेसे काम नहीं चलता भाई, काम नहीं चलता।

इसके बाद ही गभीर होकर राखालने कहा—लेकिन मुझसे भी तो तुमने सच बात नहीं कही तारक। कहा था कि तुमने कुछ अधिक पढ़ा लिखा नहीं।

तारकने हँसकर कहा—अब भी वही कहता हूँ—युनिवर्सिटीकी छाप है, लेकिन जिसे यथार्थ पढ़ना-लिखना कहना चाहिए, वह नहीं हुआ। उसके लिए समय ही कहाँ पाया ? किताबें रटनेकी पाली समाप्त होते ही नौकरीकी उम्मेदवारीमें लग गया। इसमे दो-तीन साल गुजर गये। उसके बाद दैवसयोगसे तुमसे परिचय हुआ और तुम्हारी दयासे कलकत्ते आकर साधारण खाने-पहननेको पा रहा हूँ।

राखालने कहा—देखो तारक, फिर अगर तुम...

अकस्मात् सामनेके आईनेमें दोनों मित्रोंके प्रतिबिम्बके सिरपर और एक छाया दिखाई पड़ी। वह नारी-मूर्ति थी। दोनोंने घूमकर देखा—एक अपरिचित महिला लगभग कमरेके मध्यभागमें आ खड़ी हुई हैं। बेशक महिला ही हैं। अवस्था शायद यौवनके दूसरे सिरेपर पैर बढा चुकी है, किन्तु यह बात नजर नहीं आती। रग बहुत ही गोरा है, शरीर कुछ रोगी-सा है, लेकिन सारे अगोंमे असीम मर्यादाका भाव भरा हुआ है। माथेपर सोहागका चिह्न है। गरदकी साड़ी पहने हैं। हाथ-गलेमें दो-एक प्रचलित साधारण आभूषण जैसे सामाजिक रीतिका पालन करनेके लिए ही पहन रखे हैं।

दोनों ही मित्र कुछ देर स्तब्ध विस्मयसे ताकते रहे। एकाएक राखाल कुर्सी छोड़कर यह कहता हुआ उछल पड़ा—"यह क्या ! नई-मा हैं !" इसके बाद ही वह उनके पैरोंपर पट पड़ गया। दोनों पैरोंपर सिर रखकर उसका यह साष्टांग प्रणाम जैसे समाप्त ही होना नहीं चाहता था।

जब राखाल उठकर खड़ा हुआ, तब महिलाने हाथसे उसकी ठोड़ी छूकर चुम्बन किया। वह जब कुर्सीपर बैठ चुकीं, तब राखाल उनके पैरोंके तले जमीन-पर बैठ गया। तारक भी उठकर मित्रके पास जा बैठा।

"एकाएक देखकर पहचान नहीं पाया मा।"

"न पहचान पानेकी ही तो बात है भैया।"

"मन ही मन सोच रहा था, इतनेमें आपके बालोंपर नजर पड़ गई जो लाल आँचलकी पाढको नाँघकर पैरोंतक आ पहुँचे हैं। ऐसे लम्बे केश इस देशमें मैंने किसीके भी नहीं देखे। तब सभी कहते थे कि इनमेंसे थोडे थोड़े काटकर अबकी देवीकी प्रतिमाको सजाना होगा। याद है मा?"

महिला जरा हँस दीं, लेकिन बातको दबा दिया। बोली—राजू, यही शायद तुम्हारे नये मित्र हैं? इनका नाम क्या है?

राखालने कहा—नाम है तारकनाथ चटर्जी। लेकिन आपने कैसे जाना? यह आज ही चला जाना चाहता है बर्दवानके किसी एक छोटे गाँवमें। इसे वहांके एक स्कूलकी हेडमास्टरी मिल गई है। लेकिन मैं इससे कहता हूँ कि तुमने जब एम्. ए. पास किया है, तब मास्टरीकी कोई चिन्ता न करो। यहीं कोई नौकरी मिल जायगी। लेकिन इसे यहाँ नौकरी पानेका भरोसा नहीं। बतलाइए तो यह इसका कैसा अन्याय है!

सुनकर महिलाने मुसकाकर कहा—तुम्हारे आश्वासनपर विश्वास न कर पानेको मैं अन्याय नहीं कह सकती राजू। तारक बाबू, आप क्या सचमुच आज चले जा रहे हैं?

तारकने विनयके साथ कहा—लेकिन यह तो उससे भी बडा अन्याय हुआ! राखालराजके पैतृक नामको सिरसे काटकर खुशीसे उसे छोटा-सा 'राजू' आपने बना दिया, और मेरे ही भाग्यमें आ जुटा एक फालतू 'बाबू' शब्द? यह बोझ बर्दाश्त न होगा नई-मा, इसे खारिज करना होगा।

उन्होंने गर्दन हिलाकर कहा—यही होगा तारक।

सम्मति पाकर तारक कृतज्ञ चित्तसे कुछ कहने जा रहा था, किन्तु उसे इसका समय नहीं मिला। महिलाके मुसकाते हुए चेहरेके ऊपर एकाएक न जाने क्यों अचानक एक विषादकी छाया आ पड़ी, गलेका स्वर भी जैसे बदल गया। उन्होंने कहा—राजू, आजकल उस घरमें क्या तुम्हारा आना-जाना नहीं होता?

राखालने कहा—होता क्यों नहीं नई-मा, लेकिन हाँ, इधर तरह तरहके झंझटोंसे लगभग पन्द्रह-बीस दिनसे नहीं ..

नई माने कहा—रेणुका ब्याह होनेवाला है—जानते हो ?

" कहाँ, मुझे तो नहीं मालूम, आपसे किसने कहा ? "

" हाँ, ब्याह तय है। आज दस बजे उसकी 'लगन' चढ़ गई। लेकिन यह ब्याह तुमको रोकना होगा। "

" क्यों ? "

" होना असंभव है, इसलिए। वरका बाबा पागल होकर मरा, एक बुआ पागल है, बाप पागल तो नहीं है, लेकिन अगर पागल होता तो अच्छा होता—हाथ-पैर रस्सीसे बाँधकर लोग उसे पड़ा रहने देते। "

" कैसा अनर्थ है। बाबूजीने क्या इन सब बातोंका पता नहीं लगाया ? "

" बाबूजीको तो तुम जानते ही हो। लड़का रूपवान् है, लिखा-पढ़ा है, इसके सिवा उन लोगोंके बहुत-सा धन है। घटक* संबंध लाया—उसने जो कहा उसपर उन्होंने विश्वास कर लिया। और अगर उन्हें मालूम ही हो जाय तो उससे क्या होगा ? सब कुछ सुनकर भी शायद वह समझ ही न पावेंगे कि इसमें भयकी क्या बात है! "

राखालने विषाद-मलिन मुखसे कहा—तब !

तारक चुप बैठा सुन रहा था, मित्रके इस निरुत्सुक कंठस्वरसे वह सहसा उत्तेजित हो उठा, बोला—तबके क्या माने ? बाधा देनेकी चेष्टा न करोगे, और यह ब्याह हो जायगा ? इतना बड़ा भयानक अन्याय !

राखालने कहा—यह मैं समझता हूँ, लेकिन मेरे कहनेसे यह ब्याह क्यों बंद होगा भाई ? फिर केवल बाबूजी ही तो नहीं हैं, और सभी क्यों राजी होंगे ?

तारकने कहा—क्यों न होंगे ? वरके घरकी तरह क्या लड़कीके घरके भी सब आदमी पागल हैं जो कहनेसे भी न सुनेंगे—लड़कीको ब्याह ही देंगे ?

---

* बंगालमें इस कामको पीढ़ी-दर पीढ़ीसे करनेवाले 'घटक' हैं। उन्हें सब खानदानोंका पता रहता है। वे जन्मपत्रियाँ भी लड़कोंकी अपने पास रखते हैं। वे लड़की-लड़कोंके सम्बन्ध कराकर ही अपनी जीविका चलाते हैं। यह पेशा करनेवाली 'घटक' जाति सम्भवतः केवल बंगालमें ही पाई जाती है। हाँ, व्यक्तिगतरूपसे यह काम करनेवाले लोग अन्य प्रान्तोंमें भी होंगे।—अनुवादक।

राखालने कहा—लेकिन यह क्यों भूल रहे हो कि लगन चढ़ गई है ?

तारकने कहा—लगन चढ़ चुकी है तो क्या हुआ ! लड़कीको तो चितापर नहीं चढ़ाया जा सकता !—

इतना कहकर ही उसकी नजर उस अपरिचित रमणीपर पड़ गई जो चुपचाप उसीकी ओर ताक रही थी। लज्जित होकर कंठ-स्वरको शान्त करके तारकने कहा—ये लोग कौन हैं, मै नहीं जानता; शायद मेरा बीचमे बोलना उचित नहीं है, लेकिन मुझे जान पड़ता है राखाल, कि इस ब्याहमे प्राणपणसे बाधा देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। किसी तरह यह ब्याह नहीं होने दिया जा सकता।

महिलाने पूछा—और सब लोग कौन राजू ? लड़कीकी सोतेली मा ही तो ? उसे आपत्ति करनेका क्या अधिकार है ?

राखाल चुप रहा, कुछ बोला नहीं। महिला खुद भी क्षणभर चुप रहकर बोली—तो फिर तुमको एक बार बागबाजार जाना होगा, लड़केके मामाके पास। सुनती हूँ, उस तरफके वही कर्ताधर्ता है। उन्हें लड़कीकी माका इतिहास बताकर मना कर देना होगा। मुझे विश्वास है कि इससे काम बन जायगा। अगर काम न चले तो फिर वह भार मेरा रहा। मैं रात ग्यारह बजेके बाद फिर आऊँगी भैया,—अब चलती हूँ।

इतना कहकर वह उठ खड़ी हुई। राखाल व्याकुल होकर कह उठा—लेकिन उसके बाद फिर रेणुका ब्याह न होगा नई-मा। जाना-जानी हो जानेपर—

महिलाने कहा—न हो भैया, वह भी अच्छा।

राखालने फिर कोई तर्क नहीं किया, झुककर पहलेकी ही तरह भक्तिके साथ प्रणाम किया। उसकी देखादेखी अबकी तारकने भी पैरोंके पास आकर प्रणाम किया। वह दरवाजे तक आगे बढ़कर ही एकाएक घूमकर खड़ी हो गई। बोली—तारक, तुमसे कहना शायद मुझे उचित नहीं है, लेकिन तुम राजूके मित्र हो। अगर कोई हानि न हो, तो इधर दो-एक दिन कहीं न जाना। यह मेरा अनुरोध है।

तारक मन-ही-मन विस्मित हुआ, लेकिन सहसा कुछ जवाब न दे सका। किन्तु इसके लिए महिलाने राह भी नहीं देखी, चली गई। राखालने खिड़कीसे सिर

निकालकर देखा, वह पैदल जा रही थीं। केवल गलीके मोड़पर दरवान जैसा एक आदमी अपेक्षा कर रहा था, वह चुपचाप उनके पीछे हो लिया।

२

राखालने कुर्ता उतार डाला।

तारकने पूछा—जाओगे नहीं ?

"नहीं। लेकिन तुम ? आज ही वर्दवान जा रहे हो न ?"

"ना। तुम क्या करते हो, यह देखूँगा। अपनी इच्छासे न करोगे तो जबरदस्ती कराऊँगा।"

"चायकी केटली और एक बार चढ़ा दूँ—क्यों ?"

"चढ़ा दो।"

"कुछ नाश्तेके लिए जाकर खरीद लाऊ—क्यों ?"

"मैं राजी हू।"

"तो तुम केटलीमें पानी चढ़ा दो, मैं दूकानपर जाऊँ।"

इतना कहकर वह धोतीका पल्ला ओढ़कर, चट्टी पहनकर चल दिया। गलीके मोड़पर ही हलवाईकी दूकान है—नगद पैसे नहीं देने होते—उधार मिल जाता है।

खाना-पीना समाप्त हुआ। सन्ध्याके बाद लैंप जलाकर चायकी प्याली हाथमें लेकर दोनों मित्र टेबिलके पास बैठे।

तारकने प्रश्न किया—अब क्या करोगे ?

राखालने कहा—मेरी अवस्था उस समय दस या ग्यारह वर्षकी होगी। मेरे पिता चार-पाँच दिन पहले हैजेसे मर गये थे। सबने कहा—'बाबू लोगोंकी मँझली बेटी सविता बापके घर नवरात्रमें दुर्गा-पूजा देखने आई है। तू जाकर उससे प्रार्थना कर।' बाबू लोगोंका बूढ़ा गुमाश्ता मुझे साथ लेकर एक अन्तःपुरके भीतर उपस्थित हुआ। बाबूकी मँझली लड़की दालानके आगेके चबूतरेपर एक किनारे बैठी सूपमें तिल बीन रही थी। गुमाश्तेने जाकर कहा—'मँझली बिटिया, यह ब्राह्मणका बालक तुम्हारा नाम सुनकर भिक्षा माँगने आया है। अचानक बापकी मौत हो गई है—तीनों कुलमें ऐसा कोई

नहीं जो इस दाय* से इसे उबार ले।' सुनकर उनकी आँखोंमें आँसू भर आये। बोलीं—'तुम्हारे क्या अपना कोई नहीं है?' मैंने कहा—'जी, मौसी हैं, लेकिन उन्हें मैंने कभी देखा नहीं।' उन्होंने पूछा—'तेरहीं-श्राद्ध करनेमें कितने रुपए लगेंगे?' यह मैंने सुन रखा था। मैंने कहा—'पुरोहितजी कहते हैं—पचास रुपए लगेंगे।' वह सूप रखकर उठ गई और एक बात भी नहीं पूछी। थोड़ी देरमें लौट आकर मेरे दुपट्टेके आँचलमें दस दस रुपएके पाँच नोट बाँध दिये। फिर पूछा—'तुम्हारा नाम क्या है बेटा?' मैंने कहा—"साधारण नाम है राजू। ठीक नाम है राखालराज।' बोलीं—'तुम चलोगे बेटा मेरे साथ मेरी ससुराल? वहाँ अच्छा-सा स्कूल है, कालिज है; तुमको कोई कष्ट न होगा। चलोगे?' मुझे जवाब नहीं देना पड़ा, गुमाश्ता महाशय जैसे उछल पड़े, बोले—'जायगा क्यों नहीं? जायगा—अभी जायगा। इतना बड़ा भाग्य यह कहाँ किससे पावेगा? इससे बढ़कर असहाय इस गाँवमें और कोई नहीं है बिटिया। मा दुर्गा तुम्हें धन और दूध-पूतसे सदा सुखी रखेंगे।' इतना कहकर बूढ़ा गुमाश्ता जोरसे रोने लगा।

सुनकर तारककी आँखें भी सजल हो उठीं।

राखाल कहने लगा—मेरे पिताका श्राद्ध और महामाया दुर्गाकी पूजा दोनों ही काम निबट गये। तेरसके दिन यात्रा करके, चिरकालके लिए देश छोड़कर, उनके स्वामीके घरमें आकर मैंने आश्रय लिया। वह दूसरी पत्नी थीं, इसीसे सभी उन्हें नई-मा कहते थे। मैं भी नई-मा कहने लगा। सास ससुर नहीं हैं; लेकिन सगे-सम्बन्धी पोष्य-परिजन बहुत हैं। आर्थिक दशा अच्छी है, धनी भी कहें तो कह सकते हैं। इस घरकी वह केवल गृहिणी ही नहीं, पूरी मालकिन हैं—वह जो करती हैं वही होता है। स्वामीकी अवस्था अधिक है, बाल सफेद हो चले हैं। लेकिन उनका स्वभाव बच्चोंका-सा सरल है। ऐसे मीठे मिजाजका मनुष्य मैंने और कभी नहीं देखा। देखते ही अपने लड़के जैसे प्यार और आदरसे मुझे

---

* दाय शब्द संस्कृतका है बँगलामें इसका अर्थ है—१ संकट, विपद। २ अवश्य करणीय नैमित्तिक कर्म (जैसे पिता-माताका क्रिया-कर्म, कन्याका ब्याह) और ३ गरज, प्रयोजन। संस्कृतमें इसका अर्थ केवल उत्तराधिकारमें प्राप्य सम्पत्ति होता है। संस्कृतमें जीमूतवाहन नामके पण्डितका 'दाय-भाग' नामक उत्तराधिकार-सम्बन्धी ग्रन्थ है। यहाँ पर २ नं० के अर्थमें इसका प्रयोग हुआ है। —अनुवादक

ग्रहण किया। देशमें उनके बाग-बगीचा, जमीन और खेती-बारी भी थी, दो-एक छोटे-मोटे तालुके भी थे और कलकत्तेमें कोई एक कारोबार भी चल रहा था। लेकिन वह अधिकांश समय घरमें रहते थे और तब लगभग आधा दिन उनका पूजा-घरमें बीतता था ठाकुरकी सेवामें, पूजा-आह्निकमें, जप-तपमें।

मैं स्कूलमें भर्ती हुआ। किताब-कापी-पेन्सिल-कागज-कलम आया, कुर्ता-धोती, जूता मोजे कई जोड़ आये। घरमें पढ़ानेके लिए मास्टर रखा गया। जैसे मैं इसी घरका लड़का हूं। यह बात सब जैसे भूल ही गये कि निराश्रय जानकर नई मा मुझे अपने साथ ले आई है।—तारक, इस जीवनमें वे सुखके दिन अब फिर नहीं लौटेंगे। आज भी अक्सर मैं चुपचाप लेटा-लेटा वही सब बातें सोचा करता हूँ।

इतना कहकर राखाल चुप हो गया और बहुत देर तक न जाने कैसा उदास अनमना-सा हो रहा।

तारकने कहा—राखाल, क्या जानें क्यों मेरी छाती धड़क रही है। अच्छा, उसके बाद?

राखालने कहा—उसके बाद इसी तरह बहुत दिन बीत गये। स्कूलमें मैट्रिक पास करके कालिजमें आई. ए क्लासमें भर्ती हुआ। इसी समय एकदिन एकाएक भूचाल-सा आ गया—सब उलटपलटकर विश्व-ब्रह्माण्ड जैसे तहस-नहस हो गया। मन तोड़फोड़से चूर-चूर हो गया—कहीं कुछ बाकी न रहा।

इतना कहकर वह चुप हो गया।

किन्तु चुप भी नहीं रह सका। बोला—इतने दिन मैंने किसीसे कोई बात नहीं कही। और कहता ही किससे? नहीं जानता, आज भी कहना उचित है कि नहीं—लेकिन छातीके भीतर जैसे एक तूफ़ान-सा उठता रहता है—

राखालने तारकके मुखपर एक असीम कौतूहल देखा, किन्तु तारकने कोई प्रश्न नहीं किया। क्षणभर अपने मनकी दुविधासे लड़कर अकस्मात् उच्छ्वसित कण्ठसे राखाल ही कह उठा—तारक, अपनी माको मैंने आँखोंसे नहीं देखा। मा कहनेसे मुझे नई-मा ही याद आती है। यही वह मेरी नई-मा है।

इतनी देरमें अब सचमुच ही उसका गला रुँध गया। पहले दोनों आखोंमें आसू भर आये, उसके बाद बड़ी-बड़ी कई आँसुओंकी बूंदें गिर पड़ीं।

दो-तीन मिनट बाद आँखें पोंछकर आप ही शान्त होकर उसने कहा—वह तुमसे दो-तीन दिन रहनेको कह गई हैं। शायद उन्हें तुम्हारी जरूरत है। बारह-तेरह साल पहलेकी बात कह रहा हूँ। उस दिन क्या घटना हुई थी, तुमको सुनाता हूँ। उसके बाद रहना न रहना तुम्हारे विचारपर निभर है।

तारक चुप बैठा था, चुप ही रहा।

राखाल कहने लगा—उन दिनों उन लोगोंके एक आत्मीय कलकत्तेसे अक्सर उनके घर आया करते थे। कभी दो-एक दिन और कभी सप्ताह दो सप्ताह ठहरते थे। उनके साथ आता था तेलकी मालिश करनेको खानसामा, तमाखू भरकर देनेको नौकर, ट्रेनमें चौकशी करनेको दरवान—और कितने ही प्रकारके बेशुमार फल-मूल-मिष्टान्न। तिथि-त्योहारपर भेंट-उपहारका तो कोई परिमाण ही न रहता था। उनके साथ इन नई-माका कोई दूरका या गाँव-घरका हँसी-दिल्लगीका नाता था। केवल किसी सम्पर्कके हिसाबसे ही नहीं, जान पड़ता है, शायद धनके हिसाबसे भी इस घरमें उनका आदर-सत्कार बहुत था। लेकिन घरकी औरतें धीरे-धीरे कुछ सन्देह-सा करने लगीं। बात व्रजबाबूके कानोंमें पहुँची; लेकिन उसपर विश्वास करना तो दूर, उल्टे वह नाराज हो उठे। उनकी एक दूरके रिश्तेकी फुफेरी बहनको अपनी ससुराल चले जाना पड़ा। सुना है, ऐसा ही हुआ करता है—यही दुनियाका साधारण नियम है। इसके सिवा, अभी तो उनके अपने मुँहसे ही तुम सुन चुके हो कि व्रजबाबू जैसे सरल-स्वभाव भले आदमी संसारमें बिरले ही हैं। सचमुच यही बात है। किसीके किसी कलंकको मनके भीतर स्थान देना ही उनके लिए कठिन है।

दिन बीतने लगे। बात ऊपरसे तो दब गई, लेकिन विद्वेष-विषके कीटाणुओंने पोष्य परिजनों अर्थात् परवरिश पानेवाले दूर-संबंधके लोगोंके एकान्त गृहकोणमें अड्डा जमा लिया। जिन्हें नई-माने ही बड़े आदर और स्नेहसे एक दिन आश्रय दिया था; उन्हीं लोगोंके बीच। नई-मा एक दिन केवल मुझे ही 'चलोगे बेटा मेरे पास?' कहकर नहीं बुला लाई थीं—और भी बहुतोंको ले आई थीं जगह-जगहसे। यह उनका स्वभाव ही था। इसीसे फुफेरी बहन तो चली गई, किन्तु उसका बदला लेनेको बुआजी रह गईं।

तारकने केवल गर्दन हिलाकर हामी भरी। राखाल कहने लगा—इस बीच

षड्यंत्र कितना गहरा और घातक हो उठा था, इसकी खबर एक दिन अकस्मात् गहरी रातमें मुझे मिली। न जाने कैसे एक प्रकारके दबे गलेके कर्कश कोलाहलने मुझे जगा दिया। उठकर बाहर आया। देखा, सामनेके कमरेके दर्वाजेमें बाहरसे साँकल चढ़ी है। आँगनके बीच पाँच-छः लालटेनें जमा हैं। बरामदेमें एक किनारे सिर झुकाये व्रजबाबू स्तब्ध बैठे हैं और उस कमरेके सामने नवीन बाबू—उनके चचेरे छोटे भाई—खड़े बंद दरवाजेपर लगातार धक्के मारकर कड़ी आवाजमें बार बार कह रहे हैं—रमणी बाबू, दर्वाजा खोलो। हम कमरेको देखेंगे। निकल आओ।

यह नवीन बाबू व्रजबाबूकी कलकत्तेकी आढ़तसे बीस-पचीस हजार रुपए उड़ाकर कुछ दिनोंसे घर आ बैठे हैं।

घरकी औरतें बरामदेके आसपास खड़ी हैं। जान पड़ा, जैसे नौकर लोग पास ही कहीं आड़में अपेक्षा कर रहे हैं। नींदसे उठनेके कारण पहले मामला कुछ समझमें नहीं आया, किन्तु क्षणभर बाद ही सब समझ गया। अभी कोई भयानक काण्ड घटित होगा, यह सोचकर भयसे मेरे सब अंग पसीनेसे तर हो गये। आँखोंके आगे अँधेरा छा गया। शायद चक्कर आनेसे वहीं गिर पड़ता। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। दर्वाजा खोलकर रमणी बाबूका हाथ पकड़े नई मा बाहर निकल आईं। बोलीं—तुम कोई इनके हाथ न लगाना, मैं मना किये देती हूं। हम अभी इस घरसे निकले जाते हैं।

एकाएक जैसे एक वज्रपात हो गया। यह क्या सचमुच ही इस घरकी नई-मा हैं! किन्तु घरभरके सब लोग उन लोगोंका अपमान क्या करते, मानों स्वयं ही लज्जासे मर गये। जो जहाँ था, वहीं स्तब्ध होकर खड़ा रहा। नई-मा और रमणी बाबू जब सदर दरवाजा पार हो गये, तब व्रजबाबू अकस्मात् फफककर रो उठे। बोले—नई-बहू, तुम्हारी रेणु जो रह गई! कल उसे मैं क्या कहकर समझाऊँगा!

नई-माने एक शब्द भी न कहा। चुपचाप धीरे-धीरे चली गईं। उस दिन रेणु तीन सालकी थी, और आज उसकी अवस्था सोलह सालकी है। इन तेरह वर्षोंके बाद आज एकाएक मा दिखाई दी हैं लड़कीको विपदसे बचानेके लिए।

अबकी इतनी देर बाद तारकने बात की—साँस छोड़कर कहा—और इन तेरह वर्षोंने माने लड़कीको आँखोंकी ओट नहीं किया और केवल लड़कीको ही नहीं, सच समझो, तुम लोगोंमेंसे किसीको भी नहीं।

राखालने कहा—यही तो जान पड़ता है भाई। किन्तु क्या कभी तुमने ऐसा मामला सुना है ?

तारकने कहा—ना, नहीं सुना; लेकिन पढ़ा है। मैं इसमें एक अँगरेजीके उपन्यासकी झलक पाता हूँ। पर आशा करता हू इसका उपसंहार वैसा न हो।

राखालने कहा—जान पड़ता है, नई-माके ऊपर अब तुम्हें घृणा उत्पन्न हुई है तारक ?

तारकने कहा—घृणा उत्पन्न होना ही तो स्वाभानिक है राखाल।

राखाल चुप हो रहा। यह उत्तर उसे पसंद नहीं आया, वल्कि इससे उसके मनपर जैसे कहीं चोट पहुँची। दमभर वाद उसने कहा—इसके वाद फिर देशमें रहना न हो सका। व्रजवावूने कलकत्ते आकर फिर व्याह किया और तभीसे वे यहाँ हैं।

"और तुम ?"

राखालने कहा—मैं भी उनके साथ आया। बुआजीने मुझे निकाल देनेकी सिफारिश करके कहा—व्रज मैया, वह अभागिनी ही तो इस वलाको वटोर लाई थी—इसे भी दूर कर दो।

मैं नई-माके स्नेहका पात्र होनेके कारण बुआकी आँखोंमें खटकता था—वह मुझपर सदय नहीं थीं।

व्रज बाबू शान्त मनुष्य हैं; किन्तु बुआजीकी वात सुनकर उनकी आँखोंका कोना कुछ रूखा हो उठा। तो भी शान्त भावसे ही वोले—यही तो उसे रोग था बुआ। आफत-वला उसने यही तो नहीं वटोरी थी—केवल इसी वेचारेको भगा देनेसे हम लोगोंको सुविधा हो जायगी ?

बुआकी अपनी वात तव वहुत पुरानी हो चुकी थी—शायद उसका खयाल भी अब उन्हें नहीं था। वोली—तो क्या इसे रोटी-कपड़ा देकर हमेशा ही पालना-पोसना पड़ेगा ? ना, ना, यह जहाँका आदमी है, वहीं जाकर रहे; इसके मुँहसे वाप-मा वेटीकी कीर्ति-कहानी सुनें; अपने वंशका थोड़ा-सा परिचय पावें।

अवकी व्रज वावू जरा हँसे। वोले—वह अभी वच्चा है, सव ठीक ठीक वयान न कर सकेगा, उसके लिए वल्कि तुम और कोई व्यवस्था कर दो।

जवाव सुनकर बुआ खफा होकर चली गई। कह गई—जो अच्छा समझो वह करो। मैं अव किसीके वीचमें नहीं पड़ती।

नई माके जानेके बाद इस घरमें बुआजीका प्रभाव कुछ बढ़ चला था। सभी जानते थे कि उन्हींकी बुद्धिसे इतना बड़ा अनाचार पकड़ा गया। इतने दिनोंकी लक्ष्मी-श्री तो जानेहीको बैठी थी। नवीन बाबूके कारण जो कारोबारमें नुकसान बैठा, उसका मूल-कारण भी यह गुप्त पाप ठहराया गया। नहीं तो, कहाँ, पहले तो कभी नवीनको ऐसी बुद्धि नहीं हुई! बुआने यही कहना भी शुरू कर दिया था। कहती थीं—यह सब तो घरकी लक्ष्मीसे ही बँधा हुआ है। उनके चंचल होने पर तो ऐसा होना ही चाहिए। हुआ भी वही।

तारकने बहुत देर चुप रहकर पूछा—कलकत्ते आकर क्या तुम उन्हीं लोगोंके घरमें रहे?

राखाल—हाँ, लगभग दस साल तक।

तारक—फिर चले क्यों आये?

राखालने कुछ इधर-उधर करके अन्तमें कहा—फिर सुविधा नहीं हुई।

तारक—इससे अधिक कुछ और बताना नहीं चाहते?

राखालने फिर कुछ देर मौन रहकर कहा—कहनेसे कोई लाभ नहीं है, लज्जा भी लगती है।

तारकने फिर जानना नहीं चाहा, चुपचाप बैठकर सोचने लगा। अन्तको बोला—तुम्हारी नई-मा जो इतना बड़ा एक भार सौंप गई हैं, उसका क्या होगा? एक बार ब्रज बाबूके पास नहीं जाओगे?

राखालने कहा—वही बात सोच रहा हूँ। न हो, कल...

तारकने कहा—कल! लेकिन वह जो कह गई हैं कि आज रातको ही आवेंगी—तब उनसे क्या कहोगे?

राखालने हँसकर सिर हिलाया।

तारकने प्रश्न किया—सिर हिलानेके माने? क्या तुम कहना चाहते हो कि वह नहीं आवेंगी?

राखाल—यही तो जान पड़ता है। कमसे कम, इतनी रातको उनका आ सकना मुझे संभव नहीं जान पड़ता।

अबकी तारकने और अधिक गंभीर होकर कहा—मगर मुझे संभव जान पड़ता है। असंभव न होता तो वह कभी कहती नहीं। मुझे विश्वास है कि वह

आवेंगी और ठीक ग्यारह बजे आवेगी। लेकिन तब तुम्हारे पास कोई जवाब नहीं होगा।

राखाल—क्यों ?

तारक—क्यों क्या ? उनकी इतनी बड़ी दुश्चिन्ताकी पर्वाह न करके तुमने एक पग भी घरसे आगे नहीं बढाया, यह तुम किस मुँहसे उनके सामने कहोगे ? ना, यह न होगा राखाल, तुमको जाना होगा।

राखाल कई सेकिंड तक उसके मुँहकी ओर ताकता रहा, इसके बाद धीरे-धीरे बोला—मेरे जानेसे भी कुछ नहीं होगा तारक। मेरी बात उस घरका कोई आदमी नहीं सुनेगा।

तारकने कहा—कारण ?

राखालने कहा—कारण यह है कि वरके पक्षमें जैसे एक मामा मालिक हैं, वैसे ही कन्याकी तरफ भी एक और मामा मौजूद हैं—ब्रज बाबूके तीसरे व्याहके बड़े साले। वास्तवमें वरके मामाका कितना प्रभाव है, यह मैं नहीं जानता; किन्तु इन मामाके पराक्रमको बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। बाल्यकालमें बुआकी मुझे निकाल देनेकी उतनी बड़ी सिफारिश मुझे उस घरसे हटा नहीं सकी, किन्तु इन मामा महाशयकी आँखके इशारेका एका धक्का भी न सँभाल सका—मुझे पोटली हाथमें लेकर विदा होना पड़ा।

इतना कहकर उसने जरा हँसकर फिर कहना शुरू किया—नहीं भाई तारक, मैं बहुत सीधा-सादा आदमी हूँ—लड़के पढ़ाता हूँ, भोजन बनाता-खाता हूँ—डेरेमें आकर सो रहता हूँ। फुरसत मिलनेपर निबल-सबलका विचार किये बिना परिश्रमपूर्वक बड़े लोगोंकी फरमाइशेंपूरी करता हूँ—किसी बखशीशकी आशा नहीं करता—वह सब भाग्यवानोंके लिए है। अपने नसीबकी दौड़ अच्छी तरहसे ही जान रखी है—उसके लिए मनमें दुःख भी नहीं है, एक तरहसे सहनेका अभ्यास हो गया है। दिन बुरे नहीं कट रहे हैं। लेकिन इसी लिए अखाड़ेके किनारे खड़े होकर मामा मामामें कुश्ती कराकर उनकी झपटका वेग मैं नही सँभाल सकूँगा।

सुनकर तारक हँस पड़ा। राखालको वह जैसा समझता था, देखा, वह वैसा भोंदू नहीं है। तारकने पूछा—दोनों तरफ मामा हैं, इसीलिए दोनोंमें मल्ल-युद्ध क्यों छिड़ जायगा ?

नई माके जानेके वाद इस घरमें बुआजीका प्रभाव कुछ वढ चला था। सभी जानते थे कि उन्हींकी बुद्धिसे इतना बड़ा अनाचार पकड़ा गया। इतने दिनोंकी लक्ष्मी-श्री तो जानेहीको वैठी थी। नवीन वावूके कारण जो कारोवारमें नुकसान वैठा, उसका मूल-कारण भी यह गुप्त पाप ठहराया गया। नहीं तो, कहाँ, पहले तो कभी नवीनको ऐसी वुद्धि नहीं हुई! बुआने यही कहना भी शुरू कर दिया था। कहती थीं—यह सव तो घरकी लक्ष्मीसे ही वँधा हुआ है। उनके चचल होने पर तो ऐसा होना ही चाहिए। हुआ भी वही।

तारकने वहुत देर चुप रहकर पूछा—कलकत्ते आकर क्या तुम उन्हीं लोगोंके घरमें रहे?

राखाल—हाँ, लगभग दस साल तक।

तारक—फिर चले क्यों आये?

राखालने कुछ इधर-उधर करके अन्तमें कहा—फिर सुविधा नहीं हुई।

तारक—इससे अधिक कुछ और वताना नहीं चाहते?

राखालने फिर कुछ देर मौन रहकर कहा—कहनेसे कोई लाभ नहीं है, लज्जा भी लगती है।

तारकने फिर जानना नहीं चाहा, चुपचाप वैठकर सोचने लगा। अन्तको ोला—तुम्हारी नई-मा जो इतना वड़ा एक भार सौंप गई हैं, उसका क्या ोगा? एक वार व्रज वावूके पास नहीं जाओगे?

राखालने कहा—वही वात सोच रहा हूँ। न हो, कल...

तारकने कहा—कल! लेकिन वह जो कह गई हैं कि आज रातको ही ावेंगी—तव उनसे क्या कहोगे?

राखालने हँसकर सिर हिलाया।

तारकने प्रश्न किया—सिर हिलानेके माने! क्या तुम कहना चाहते हो कि ह नहीं आवेंगी?

राखाल—यही तो जान पड़ता है। कमसे कम, इतनी रातको उनका आ सकना मुझे सभव नहीं जान पड़ता।

अवकी तारकने और अधिक गभीर होकर कहा—मगर मुझे सभव जान पड़ता है। सभव न होता तो वह कभी कहती नहीं। मुझे विश्वास है कि वह

आवेगी और ठीक ग्यारह बजे आवेंगी। लेकिन तब तुम्हारे पास कोई जवाब नहीं होगा।

राखाल—क्यों ?

तारक—क्यों क्या ? उनकी इतनी बड़ी दुश्चिन्ताकी पर्वाह न करके तुमने एक पग भी घरसे आगे नहीं बढाया, यह तुम किस मुँहसे उनके सामने कहोगे ? ना, यह न होगा राखाल, तुमको जाना होगा।

राखाल कई सेकिंड तक उसके मुँहकी ओर ताकता रहा, इसके बाद धीरे-धीरे बोला—मेरे जानेसे भी कुछ नहीं होगा तारक। मेरी बात उस घरका कोई आदमी नहीं सुनेगा।

तारकने कहा—कारण ?

राखालने कहा—कारण यह है कि वरके पक्षमें जैसे एक मामा मालिक हैं, वैसे ही कन्याकी तरफ भी एक और मामा मौजूद है—व्रज बाबूके तीसरे ब्याहके बड़े साले। वास्तवमें वरके मामाका कितना प्रभाव है, यह मैं नहीं जानता; किन्तु इन मामाके पराक्रमको बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। बाल्यकालमें बुआकी मुझे निकाल देनेकी उतनी बड़ी सिफारिश मुझे उस घरसे हटा नहीं सकी, किन्तु इन मामा महाशयकी आँखके इशारेका एका धक्का भी न सँभाल सका—मुझे पोटली हाथमें लेकर विदा होना पड़ा।

इतना कहकर उसने जरा हँसकर फिर कहना शुरू किया—नहीं भाई तारक, मैं बहुत सीधा-सादा आदमी हूँ—लड़के पढाता हूँ, भोजन बनाता-खाता हूँ—डेरेमें आकर सो रहता हूँ। फुरसत मिलनेपर निबल-सबलका विचार किये बिना परिश्रमपूर्वक बड़े लोगोंकी फरमाइशेंपूरी करता हूँ—किसी बखशीशकी आशा नहीं करता—वह सब भाग्यवानोंके लिए है। अपने नसीबकी दौड़ अच्छी तरहसे ही जान रखी है—उसके लिए मनमें दुःख भी नहीं है, एक तरहसे सहनेका अभ्यास हो गया है। दिन बुरे नहीं कट रहे हैं। लेकिन इसी लिए अखाड़ेके किनारे खड़े होकर मामा मामामें कुश्ती कराकर उनकी झपटका वेग मैं नहीं सँभाल सकूँगा।

सुनकर तारक हँस पड़ा। राखालको वह जैसा समझता था, दिखा, वह वैसा भोंदू नहीं है। तारकने पूछा—दोनों तरफ मामा हैं, इसीलिए दोनोंमें मल्ल-युद्ध क्यों

राखालने कहा—तो जरा खोलकर कहता हूँ। इधरके मामा महाशयने मुझसे घर अवश्य छुड़ा दिया है, किन्तु वे उसकी माया-ममता अभी तक नहीं छुड़ा सके। इसी लिए वहाँकी थोड़ी-बहुत खबर मेरे कानों तक पहुँच जाती है। सुना गया है—बहनोईकी कन्याके ब्याहकी चिन्ता ही सालेके आराममें अधिक विघ्न डाल रही है। इस लड़केको खोज निकालना भी उन्हींकी कीर्ति है। अतएव इस मामलेमें मेरे द्वारा विशेष कुछ न होगा। सभवतः किसीके भी किये कुछ न होगा। वरिच्छा, तिलक, आशीर्वाद और लगन तक सब हो गया है—इस लिए यह विवाह अवश्य होगा।

तारकने कहा—अर्थात् उधरके मामाको कन्याकी माताका किस्सा सुनाना ही होगा और उसके बाद उस घटनाका हाल लोगोंके मुँहसे चारों ओर फैलते देर न लगेगी। फिर उसका अवश्य होनेवाला परिणाम यह है कि उस लड़कीका किसी अच्छे घरमें ब्याह न हो सकेगा।

राखालने कहा—आशका तो होती है कि अन्तको कुछ ऐसी ही बात होगी।

तारकने कहा—लेकिन लड़कीके पिता तो आज भी जीवित हैं!

राखालने कहा—ना, पिता नहीं जीवित हैं, सिर्फ ब्रज बाबू जीवित हैं।

तारकने क्षण-भर स्थिर रहकर कहा—राखाल, चलो न एक बार चलकर देख आवें—बाप एकदम मर गया है या इस आदमीमें अब भी कुछ जान बाकी है।

राखालने कहा—तुम जाओगे?

तारकने कहा—हर्ज क्या है। कहना, यह वरके पड़ोसी हैं—बहुत कुछ जानते हैं।

राखालने हँसकर कहा—तुम्हारी भी अच्छी बुद्धि है। पहले तो यह बात सच नहीं है, दूसरे जिरहकी लपेटमें जब तुम गोलमोल जवाब दोगे, तब उन लोगोंके मनमें घोर सन्देह उत्पन्न होगा—वे समझेंगे, तुम मोहल्लेके आदमी हो, व्यक्तिगत शत्रुताके कारण इस ब्याहमें भँग मारने आये हो। इससे काम तो सिद्ध होगा ही नहीं, उल्टा फल निकलेगा।

यही तो। तारकने मन-ही-मन और एक बार राखालकी ससारिक बुद्धिकी प्रशसा की। [illegible]—यह ठीक कहते हो। जिरहमें हम लोग उखड़ जायँगे।

नई-मासे हम लोगोंको और भी अधिक हाल-चाल जान लेना चाहिए था।—अच्छा, एक अपना मित्र कहकर ही मेरा परिचय देना।

राखाल—हाँ, परिचय देना पड़ा तो यही दूँगा।

तारकने कहा—इस ब्याहको वन्द करनेकी चेष्टामें तुम्हारी सहायता करूँ—यही मेरी इच्छा है। और कुछ न कर सका तो इस मामाको ही एक वार आँखसे देख आ सकूँगा। और भाग्य प्रसन्न हुआ तो केवल व्रज वावू ही नहीं, उनकी तीसरी धर्मपत्नीके भी दर्शन हो जायँगे।

राखालने कहा—कमसे कम यह असभव नहीं है।

तारकने पूछा—यह महिला कैसी हैं राखाल?

राखालने कहा—खूब गोरा रंग, मोटी ताजी देह, परिपुष्ट गढ़न—खाते-पीते वंगालीके घरमें कुछ अधिक अवस्था होनेपर गृहिणियाँ जैसी हो जाती हैं वैसीं।

तारकने कहा—लेकिन आदमी कैसी हैं?

राखालने कहा—आदमी तो जान लो, वंगालीके घरकी लड़की हैं। वंगाली-घरोंकी और जैसी दस औरते होती हैं, वैसी ही। कपड़ों-गहनोंपर गहरा अनुराग, उत्कट और अन्ध सन्तान-वत्सलता, पराये दुखमें कातर होकर आँसू वरसाना, दो-आने चार-आने दान करना और दमभरमें ही सव भूल जाना। स्वभाव वुरा नहीं है—अच्छा कहना भी कुछ अपराध न होगा। थोड़ी-वहुत क्षुद्रता, छोटी-मोटी उदारता, एक-आध—

तारकने वीचमें रोकते हुए कहा—रुको रुको। यह सव तुम क्या केवल व्रज वावूकी स्त्रीके वारेमें कह रहे हो, या सारी वंगाली स्त्रियोंको लक्ष्य करके जो मुँहमें आता है वही व्याख्याताकी तरह वकते जा रहे हो? किसका यह वर्णन है?

राखालने कहा—दोनोंका ही रे भाई, दोनोंका। सिर्फ उसका तात्पर्य समझना श्रोताकी अभिज्ञता और अभिरुचिके अनुसार होता है।

सुनकर तारक सचमुच विस्मित हुआ। वोला, मैं नहीं जानता था कि स्त्रियोंके सम्वन्धमें तुम्हारे मनमे इतना उपेक्षाका भाव है। वल्कि सोचता था कि...

राखाल चटपटकर उठा—ठीक ही सोचते थे भाई, ठीक ही सोचते थे। मैं जरा-सी भी उनकी उपेक्षा नहीं करता। उनके वुलाते ही दौड़ा जाता हूँ, न वुलानेपर भी वुरा नहीं मानता। दया करके वे काम करा लेती हैं, केवल इससे

ही अपनेको धन्य मानता हूँ। महिलाएँ अनुग्रह भी यथेष्ट करती हैं, उनकी मैं निन्दा नहीं कर सकूँगा।

तारकने कहा—अनुग्रह जो करती हैं, उनका थोड़ा परिचय दो तो सुनूँ।

राखालने कहा—अबकी तुमने मुशकिलमें डाल दिया। जिरह करनेसे ही मैं घबरा उठता हूं। इस अवस्थामें मैंने बहुत कुछ देखा और सुना, साक्षात् परिचय भी कुछ कम नहीं है, किन्तु ऐसी खराब स्मरणशक्ति है कि कुछ भी याद नहीं रहता। न उनका बाहरका चेहरा, न उनके भीतरका रूप। सामने खूब काम चलता है, किन्तु जरा आड़में आते ही सब चेहरा लिप-पुतकर एकाकार हो जाता है—एकके साथ दूसरीका भेद नहीं ठहरा पाता।

तारकने कहा—हम गँवई गाँवके आदमी हैं। मोहल्लेके आत्मीय-परोसियोंके घरकी दो-चार महिलाओंके सिवा बाहरकी किसी औरतको पहचानते भी नहीं, जानते भी नहीं। औरतोंके बारेमें हम लोगोंकी यही तो जानकारी है। किन्तु इस भारी शहरकी कितनी नई, कितनी विचित्र...

राखालने हाथ उठाकर, रोककर कहा—कुछ चिन्ता न करो तारक, मैं उपाय बतला दूँगा। देहाती कहकर तुम जिनकी अवज्ञा करते हो—अथवा मन-ही-मन जिनके बारेमें डर रहे हो, उन्हीं औरतोंको शहरमें लाकर पाउडर रूज आदि जरा जोरसे मलकर दो-एक महीने थोड़ेसे चुने हुए नाटक-उपन्यास और उन्हींके साथ दो-चार चलते गाने सिखा-पढ़ा दो—बस। अँगरेजी नहीं जानतीं? न जानें। शुरूसे आखिरतक सिखाना नहीं पड़ता, दस-बीस भव्य बातें या शब्द तो याद कर सकेंगी? बस, काम बन जायगा। इसके बाद. .

तारकने खीझकर टोका—'इसके बाद' की अब जरूरत नहीं राखाल, रहने दो। अब समझ पा रहा हूँ कि तुम्हें क्यों पर्वा नहीं है। इस लड़कीका चाहे जिसके साथ ब्याह हो, उससे तुम्हारा कुछ नहीं आता-जाता। असलमें उन लोगोंके साथ तुम्हें हमदर्दी नहीं है।

राखालने मजाकके तौर पर प्रश्न किया—हमदर्दी कैसे होगी, बता दे सकते हो?

तारकने कहा—बता सकता हूँ। बिना विचारे मिलना-जुलना जरा कम करो। जो खो दिया है, वह शायद एक दिन फिर पा सकते हो—अच्छा, केवल इसी कारण नई-माके अनुरोधको लापर्वाहीसे टाल सके?

राखाल लगभग एक मिनिट तक तारकके मुँहको ताकता रहा। इसके बाद उसकी परिहासकी मुद्रा धीरे-धीरे बदल गई। उसने कहा—अबकी तुमसे भूल हुई। किन्तु तुम्हारी पहलेकी बातमें शायद कुछ सत्य है—उन लोगोंमेंसे बहुतोंका बहुत कुछ जान सकनेमें लाभकी अपेक्षा क्षति ही शायद अधिक होती है। अबसे मैं तुम्हारी बात सुनूँगा—मानूँगा। किन्तु जिनके सम्बन्धमें तुमसे कह रहा था, वे साधारण औरतें हैं—हजारमें नौ सौ निन्नानवे। नई-मा उनमें नहीं हैं। कारण, हजारमें एक जो बाकी रही वही वह हैं। उनकी अवहेला नहीं की जा सकती, चाहने पर भी नहीं। तुम आज किस कारण वर्दवान नहीं जा पा रहे हो, इसे तुम नहीं जानते, किन्तु मैं जानता हूँ। किसके तगादेसे तुम मुझे ठेल ठालकर अभी मामा बाबूकी माँदमें भेजना चाहते हो, इसका कारण तुम्हारे निकट स्पष्ट नहीं है, किन्तु मैं उसे साफ देख पा रहा हूँ। उनके पिछले इतिहासको सुनकर अभी तुमने जो कहा था तारक, कि ऐसी स्त्रीको घृणा करना ही स्वाभाविक है—अपनी यह राय तुमको एक दिन बदलनी पड़ेगी। उससे काम न चलेगा।

तारक मुँहपर हँसी लाकर व्यंगके स्वरमें बोला—काम न चलेगा तो तुमको सूचित करूँगा। लेकिन तब तक अगर मैं यह कहूँ कि मैं अपनी बात दूसरेकी अपेक्षा अधिक जानता हूँ तो नाराज न होओ राखाल। लेकिन इस बहससे कोई लाभ नहीं है भाई,—इसे जाने दो। किन्तु तुम्हारी दृष्टिमें आजतक एक नारी भी श्रद्धाकी पात्री होकर टिकी हुई है—यह बड़ी आशाकी बात है। मगर वह हम लोगोंकी पहुँचके बाहर हैं राखाल। हम तुम्हारी इन एकको बाद देकर बाकी नौ सौ निन्नानवेके ऊपर ही श्रद्धा बनाये रख सकें, तो उसीसे हम जैसे साधारण मनुष्य धन्य हो जायें।

राखालने तर्क नहीं किया—जवाब नहीं दिया। केवल यह जान पड़ा कि वह सहसा जैसे कुछ उदास हो गया है।

तारकने पूछा—क्योंजी, चलोगे?

राखालने कहा—चलो।

तारक—जाकर क्या कहोगे?

राखाल—जो कुछ सत्य है वही। कहूँगा—विश्वस्त सूत्रसे खबर पाई गई है— इत्यादि इत्यादि।

तारक—यह ठीक है।

दोनों मित्र उठ खड़े हुए। राखालने दरवाजेमें ताला वद करके जोड़े हुए हाथ माथेसे लगाकर दो वार भगवती दुर्गाका नाम स्मरण किया। इसके उपरान्त दोनों व्रज वावूके घरको चल दिये।

तारकने हँसकर कहा—आज कोई काम न होगा। नामका माहात्म्य देख पाओगे।

३

दूसरे दिन तीसरे पहरके लगभग दोनों मित्र चायका सामान सामने टेबिलपर रखकर आ वैठे। केटलीमें चायके पानीको खौलकर तैयार होनेमें देर देखकर राखाल वार-वार चम्मच डुवाकर उसे देखने लगा।

तारकने कहा—नामका माहात्म्य देखा तो?

राखालने कहा—अविश्वास करके तुमने मा दुर्गाको खामखा कुपित कर दिया, इसीसे यात्रा निष्फल हुई। नहीं तो ऐसा न होता।

तारकने केवल हँसकर गर्दन हिलाते हुए इसका प्रतिवाद किया।

सचमुच कल कुछ काम नहीं हुआ। व्रज वावू घरमें नहीं थे, कहीं उनका निमत्रण था, वहाँ गये थे। मामा-वावू कुछ अस्वस्थ होनेके कारण जल्दी ही भोजन आदि करके पलँगपर लेट गये थे। राखाल घरके भीतर मिलने गया, तव व्रज वावूकी वर्तमान स्त्रीने यह कहकर विस्मय प्रकट किया कि राखाल अवतक उन लोगोंको नहीं भूला। और लौटते समय और लोगोंकी आँख वचाकर रेणु भी आकर धीमी आवाजमें ठीक इसी तरहका उलाहना दे गई।

तारकने रेणुसे कहा था—अपने वावूजीसे यह कहना न भूलना कि मैं सन्ध्याके वाद कल फिर आऊँगा। मुझे उनसे मिलना वहुत जरूरी है।

रेणुने कहा था—अच्छा। लेकिन नौकरोंसे भी कहे जाओ।

अतएव व्रज वावूके खास नौकरसे भी यह वात राखाल विशेष रूपसे कह आया था। लेकिन वह यथासमय डेरे पर नहीं पहुंच सका। उसने आकर देखा, दरवाजेकी साँकलमें कागजका एक टुकड़ा लिपटा है। उसमें पेंसिलसे लिखा है—
“आज भेंट नहीं हुई, कल तीसरे पहर पाच वजे फिर आऊँगी।—न० मा”

आज उसी पाँच वजनेकी प्रतीक्षामें दोनों मित्र वैठे हैं। किन्तु पाँच वजनेमें

अभी लगभग बीस मिनट बाकी हैं। तारकने जल्दी करते हुए कहा—बस पानी खौल गया, चाय बनाओ। उनके आनेके पहले यह सब साफ कर डालना चाहिए।

राखालने कहा—क्यों? लोग चाय पीते हैं, यह क्या वह नहीं जानतीं?

तारकने कहा—देखो राखाल, बहस न करो। आदमी आदमीका बहुत कुछ जानता है, तो भी बहुतसे काम वह उससे छिपाकर आड़में करता है। गाय-बैलोंको इसका प्रयोजन नहीं होता। इसके सिवा यह सब क्या है! इतना कहकर उसने ऐश-ट्रे समेत सिगरेटका टीन हाथमें उठा लिया। फिर कहा—मर्दानगी करके यह भी उन्हें दिखाना होगा क्या!

राखाल हँस पड़ा। बोला—देख भी लेंगी तो तुम्हें कोई डर नहीं है तारक। अपराधी कौन है, यह वह ठीक समझ लेंगी।

तारकने इस टहोकेका अनुभव किया। खीझको दबाकर कहा—ऐसी ही आशा करता हूँ। तो भी, मुझे वह गलत समझें तो कोई हानि नहीं है; किन्तु एक दिन जिसे उन्होंने पाल पोसकर मनुष्य बना दिया है, उसे न समझ पावें तो यह अन्याय होगा।

राखालने कुछ भी क्रोध नहीं किया, हँसता हुआ चुपचाप चाय बनाने लगा।

तारकने चाय पीते-पीते दो-एक मिनट बाद कहा—एकाएक ऐसे चुप-चाप क्यों हो?

राखालने कहा—क्या करूँ? उनके आनेके पहले उन्हीं नौ सौ निन्नानबेके धक्केको मन-ही-मन जरा सँभाले रखना पड़ता है भाई!

इतना कहकर वह फिर जरा हँसा।

सुनकर तारकके आग लग गई। किन्तु अबकी वह चुप ही रहा।

चाय पीना समाप्त होने पर सब धो-पोंछकर साफ करके दोनों जने प्रस्तुत हो रहे। घड़ीमें पाँच बजे। क्रमशः पाँच, दस, पन्द्रह मिनिट नाँघकर घड़ीकी सुई नीचेकी ओर लटक चली; किन्तु नई-मा नहीं दिखाई पड़ीं। उन्मुख अधीरतासे सारा कमरा भीतर-ही-भीतर कंटकित हो उठा है—यह बात प्रकट करके न कहने पर भी दोनों मित्र भली भाँति जान रहे थे।

इसी समय तारक एकाएक कह उठा—यह बात ठीक है कि तुम्हारी नई-मा एक असाधारण स्त्री हैं।

अत्यन्त विस्मयसे अवाक् होकर राखाल तारकका मुँह ताकने लगा।

तारकने कहा—नारीका ऐसा इतिहास मैंने केवल पुस्तकमें पढ़ा है, किन्तु आँखोंसे नहीं देखा। जिन्हें हमेशा देखता आया हूँ, वे भली हैं, सती-साध्वी हैं, किन्तु यह जैसे...

वातको सम्पूर्ण होनेका अवसर नहीं मिला।

"राजू, मैं आ सकती हूँ भैया?"—सुन पड़ा।

दोनो ही मित्र हड़बड़ाकर सम्मानमें उठ खड़े हुए। राखालने दरवाजेके पास आकर झुककर प्रणाम किया। बोला—आइए।

तारकने क्षण भर इधर-उधर किया, किन्तु फिर वैसे ही पैरोंके पास आकर उसने भी अभिवादन किया।

सबके बैठ चुकनेपर राखालने कहा—कल सभी ओरसे यात्रा निष्फल हुई। काका बाबू (व्रज बाबू) घरमें न थे। मामा-बाबू डटकर खा लेनेके कारण अस्वस्थ और पलँगपर पड़ रहे थे। आपको निरर्थक लौट जाना पड़ा। किन्तु इसके लिए असलमें यह तारक जिम्मेदार है। अभी अभी इसीके लिए मैं इसकी भर्त्सना कर रहा था। बहुत सम्भव है, अपने अपराधके भारीपनको समझकर इसे पश्चात्ताप हुआ है। न यह दुर्गा माताको चिढ़ा देता और न हमारी यात्रा भरभण्ड होती।

तारकने सारी घटना खोलकर कही। नई-माने हँसते हुए मुखसे प्रश्न किया—जान पड़ता है, तारकको इन सबपर विश्वास नहीं है?

तारकने कहा—विश्वास करनेके कारण ही तो डर गया था कि आज जान पड़ता है, कुछ न होगा।

उसका जवाब सुनकर नई-मा हँसने लगीं। फिर पूछा—किसीसे भेंट नहीं हुई?

राखालने कहा—सो हुई थी मा। घरकी मालिकिनने अचरजमें आकर पूछा—राह भूलकर तो नहीं आ गया! लौटते समय रेणुने भी ठीक यही उलाहना दिया। अवश्य छिपकर, आड़से। उसीसे मैं कह आया कि काका-बाबूसे कह दे कि मैं फिर कल शामको आऊँगा। मेरा बहुत जरूरी काम है। मैं जानता हूँ, और चाहे जो कहना भूल जाय, वह नहीं भूलेगी।

"तुम लोग आज फिर जाओगे?"

"हाँ, सन्ध्याके बाद ही।"

"वे सब लोग अच्छे हैं? खूब मजेमें हैं?"

"जी हाँ।"

नई-मा चुप हो रहीं। कुछ देरमें मनकी भारी दुविधा और संकोचको दूर करके बोलीं—देखनेमें रेणु कैसी हुई है राजू?

राखाल पहले विस्मयपरिपूर्ण मुखसे स्तब्ध हो देखता रहा। फिर कृत्रिम क्रोधके स्वरमें बोला—यह प्रश्न तो केवल व्यर्थ ही नहीं है मा—अन्याय भी है। नई-माकी कन्या देखनेमें कैसी होनी चाहिए, यह क्या आप नहीं जानतीं? हाँ रग जान पड़ता है, कुछ बापके रंगसे मेल खाता है। उसे ठीक स्वर्ण-चम्पा नहीं कहा जा सकता। बताइए, यही बात है न नई-माँ?

लड़कीकी चर्चासे माकी दोनों आखोंमें आँसू छलक आये। दीवारकी घड़ीकी ओर घड़ी-भर सिर उठाये ताकते रहनेके बाद उन्होंने कहा—तुम लोगोंके जानेका समय जान पड़ता है, हो आया।

राखालने कहा—नहीं। अभी दो घंटे बाकी है।

तारकने शुरूमें दो-एक बातोंके सिवा और कोई बात नहीं की और दोनोंकी बातचीत मन लगाकर सुनी। जिस अज्ञात लड़कीके अशुभ अमंगलमय विवाहके संबंधको तोड़ देनेका सकल्प उन लोगोंने मनमें किया है, वह देखनेमें कैसी है, यह जाननेका आग्रह तो उसे था, किन्तु व्यग्रता नहीं थी। मगर राखालने यह जो कुछ वर्णना नहीं की, केवल उलाहनेके स्वरमें लड़कीके रूपका इशारा भर किया, उसने जैसे उसके अधकारसे अवरुद्ध मनकी दसों ओरकी दसों खिड़कियोंको खोलकर पूर्ण प्रकाशसे उसका कोना-कोना चकित चंचल कर दिया। अब तक उसने जैसे देखकर भी कुछ देखा न था; अब माकी ओर देखकर अकस्मात् उसके विस्मयकी सीमा नहीं रही।

नई-माकी अवस्था पैंतीस-छत्तीसकी होगी। रूपमें कोई कमी या दोष न हो, यह बात नहीं है। सामनेके दोनों दाँत बड़े है, बात करते ही वे देख पड़ते हैं। रंग सचमुच स्वर्णचम्पाके फूलका-सा है; किन्तु हाथ-पैरोंकी गढ़नकी तुलना मक्खनके साथ किसी तरह नहीं की जा सकती। आँखें बड़ी या चौड़ी नहीं हैं। नाकको भी देखकर वशीका भ्रम होना असंभव है। किन्तु इकहरे छरहरे शरीरमें शोभा-सौन्दर्यकी हद नहीं है। कहाँ क्या है, यह न जानकर अत्यन्त सहजमें जान पड़ता है कि प्रच्छन्न मर्यादासे यह प्रौढ़ नारी-शरीर जैसे लबालब भरा हुआ है। और सबसे बढ़कर नई-माके कण्ठके अद्भुत स्वरपर ध्यान जाता है। उसमें जैसे बेशुमार मिठास भरी पड़ी है।

नई-माके प्रश्नसे तारककी अन्यमनस्कता दूर हुई। नई-माने एकाएक जैसे व्याकुल होकर प्रश्न किया—राजू, तुमको क्या जान पड़ता है भैया कि तुम इस व्याहको वद कर सकोगे?

"यह वात तो कुछ नहीं जा सकती मा!"

"तुम्हारे काका-वावू क्या कुछ भी न देखेंगे? कोई बात ही न सुनेंगे?"

"आँख-कान तो अव उनके हैं नहीं मा। वह देखते हैं मामा-वावूकी आँखोंसे, सुनते हैं नई मालिकिनके कानोंसे। मैं जानता हूँ, यह व्याहका संवध उन्हीं लोगोंने तय किया है।

"तो घरके मालिक क्या करते हैं?"

"जो हमेशा करते थे—वही गोविन्दजीकी सेवा-पूजा। और अव तो उसका जोर सौगुना वढ़ गया है। दूकान पर जानेको भी वहुत कम समय पाते हैं। ठाकुरद्वारेसे निकलते-निकलते ही दिन ढल जाता है।

"तो फिर जमीन-जायदाद, कारोवार, घर-गिरस्ती कौन देखता है?"

"जायदाद और कारोवार देखते हैं मामाजी और घर-गिरस्ती देखती हैं उनकी मा—अर्थात् काका वावूकी सास। लेकिन मुझसे पूछनेसे क्या फायदा, आपका न जाना तो कुछ नहीं है।" जरा ठहरकर कहा, यह सच है कि हम आज भी जायँगे, किन्तु उसका निश्चित परिणाम भी आप जानती हैं नई-मा।

नई-मा चुप रहीं, केवल उनके मुहसे एक दवी हुई लम्वी साँस निकली। जान पड़ता है, निरुपायकी वह आखिरी विनती थी।

एकाएक सुनाई पड़ा, जैसे वाहर कोई पूछ रहा है—ए लड़के, यही राजू वावूका घर है?

वालकके स्वरमें जवाव मिला—नहीं महाशय, इसमें राखाल वावू रहते हैं।

"हाँ, हाँ, उन्हींको खोजता हू"—यह कहकर एक भद्र पुरुपने दर्वाजा ठेलकर भीतर मुँह वढ़ाकर कहा—राजू, घरमें हो?—वाह—यह वैठा तो है राजू!

राखालपर नजर पड़ते ही सरल स्निग्ध हँसीके साथ वह भद्र पुरुप घरके आगनमें आ खड़े हुए। वोले—सोचता था, शायद ढूँढे ही न पाऊँगा। वाह—घर तो खासा है!

एकाएक आलमारीकी कुछ आड़में स्थित महिलापर नजर पड़नेसे, कुछ व्यतिव्यस्त होकर, पीछे हटकर दर्वाजे तक चले गये; किन्तु वहाँ स्थिर होकर खड़े हो गये। कुछ सेकिंड ध्यानसे देखनेके वाद वोले—नई-वहू हैं न ?

इतना कहकर ही गर्दन घुमाकर उन्होंने राखालकी ओर देखा।

एक कठिनतम अपमानका मर्मभेदी दृश्य विजलीकी तरह राखालके मानसिक नेत्रोंके सामने कौंध गया और उसका चेहरा मुर्देकी तरह सफेद पड़ गया। मामला क्या है, यह अनुमान करके भी तारक ठीक ठीक समझ न पाया, तथापि एक अज्ञात भयसे वह भी हतवुद्धि हो गया। वह भद्रपुरुष वारी-वारीसे सवकी ओर देखकर हँस पड़े। वोले—तुम लोग कह क्या रहे थे ? कोई षड्यंत्र है क्या ? मदकके अड्डेमें किसी पुलीसके सिपाहीके घुस पड़नेसे भी तो लोग इतने आतंकित नहीं हो उठते। हुआ क्या ? नई-वहू ही तो हैं ?

महिला कुर्सीसे उठ खड़ी हुईं। दूरसे पृथ्वीपर सिर नवाकर प्रणाम किया। फिर हटकर खड़ी हुईं और वोलीं—हाँ, मैं नई-वहू हूँ।

"वैठो, वैठो, अच्छी तो हो ?" कहकर वह आपही आगे वढ़कर, कुर्सी खींचकर वैठ गये। वोले—नई-वहू, मेरे राजूके मुखकी ओर एक वार देखो। जान पड़ता है, उसने सोचा कि मैं पहचान पाते ही तुमको युद्धके लिए ललकारकर एक घोरतर सग्राम छेड़ दूँगा। उसके घरकी सव चीज-वस्तु सहीसलामत नहीं रहेगी—तहस-नहस हो जायगी।

उनके कहनेका ढंग देखकर केवल तारक और राखाल ही नहीं, नई-मा तक मुँह फेरकर हँस पड़ीं। अव तारकने निःसंशय रूपसे समझ लिया कि यही व्रज वावू हैं! उसके आनन्द और विस्मयकी सीमा न रही।

व्रज वावूने अनुरोध किया—खड़ी न रहो नई-वहू, वैठो।

वह आकर जव वैठ गईं तव व्रज वावू कहने लगे—परसों रेणुका व्याह है। लड़केका स्वास्थ्य अच्छा है। सुन्दर है, लिख-पढ़ रहा है। हमारा जाना-पहचाना घर है। जमीन-जायदाद, रुपया-पैसा भी कुछ कम नहीं है। इस कलकत्ता शहरमें ही उसके चार-पाँच मकान हैं। यह मोहल्ला वह मोहल्ला ही कहना चाहिए; जव जी चाहे, लड़की-दामादको देखा जा सकेगा। जान तो पड़ता है कि यह व्याह सव तरहसे ही अच्छा होगा।

जरा रुककर बोले—मुझे तो जानती ही हो नई-बहू, ऐसा लड़का खोज निकालना मेरे बूतेके वाहर था। सभी गोविन्दजीकी कृपा है।

इतना कहकर उन्होंने दाहिना हाथ माथेसे छुआया।

कन्याके सुख-सौभाग्यके सुनिश्चित परिणामकी कल्पना करके उनका सारा मुखमण्डल स्निग्ध प्रसन्नतासे चमक उठा। सब लोग चुप रहे—एक कड़वे अत्यन्त अप्रीतिकर विरुद्ध प्रस्तावको उपस्थित कर उन्हींकी आँखोंके सामने यह माया-जाल छिन्न-भिन्न कर देनेको किसीका जी न चाहा।

व्रज वावूने कहा—हमारे राखाल-राजको तो चिट्ठी भेजकर न्योता दिया नहीं जा सकता। इसे तो स्वयं जाकर पकड़ लाना होगा। इसके सिवा करने-करानेवाला ही मेरे कौन है? कल रातको घर लौटकर रेणुके मुँहसे जब खबर पाई कि राजू आया था, किन्तु मुझसे भेंट नहीं हुई—उसका कोई खास काम है, कल शामको फिर आवेगा, तव मैंने निश्चय किया कि यह सुयोग हाथसे न जाने दिया जाय, जिस तरह हो, ढूंढ ढाँढकर उसके डेरे जाकर मुझे इस त्रुटिका सशोधन करना होगा। इसीसे दोपहरके समय घरसे निकल पड़ा। किन्तु याद नहीं, किसका मुँह देखकर घरसे चला था, केवल एक पन्थ दो काम ही नहीं, मेरे सभी काम आज सिद्ध हो गये।

स्पष्ट समझा गया कि भाग्यकी विडम्बनाको प्राप्त अपनी एकमात्र कन्याके व्याहके मामलेको लक्ष्य करके ही उन्होंने यह बात कही है। लड़कीने जैसे अपनी अनजानी जीवनयात्राके पहले माताके अप्रत्याशित आशीर्वादको पा लिया।

राखालने बहुत ही सीधे आदमीका-सा मुह बनाकर कहा—आपको क्या याद आता है कि चलते समय मामा वाबू आपके सामने थे?

"क्यों, कहो तो?"

"वह भाग्यवान् आदमी हैं, चलते समय उनका मुह देखा हो तो शायद..."

"ओह—यह बात है।" कहकर व्रज वावू हँस पड़े।

नई-माने छिपे तौरपर राखालके मुँहकी ओर एक वार देखकर ही मुँह फेर लिया। उनका यह हँसनेका भाव व्रज वावूकी आँखोंसे छिपा नहीं रहा। उन्होंने कहा—राजू, तुम्हारा यह कहना ठीक नहीं हुआ। चाहे जो हो, नातेमें वह नई-बहूके भी भाई होते हैं। भाईकी निन्दा बहनें कभी सह नहीं सकतीं। जान पड़ता है, वह मन ही मन नाराज हो गई हैं।

राखाल हँस दिया। ब्रज बाबू भी हँसे। बोले—यह कुछ बेजा नहीं है, नाराज होनेकी ही बात है कि नहीं।

तारकके साथ अभी तक उनका परिचय नहीं हुआ, इस लोभको वह दबा नहीं सका। बोला—आज घरसे चलते समय आपने अपने मुखसे दुर्गाका नाम निश्चय ही उच्चारण न किया होगा ?

ब्रज बाबू इस प्रश्नका मतलब समझ न पाये। बोले—नहीं तो। अभ्यासके माफिक मैं गोविन्दजीका स्मरण करता हूँ। आज भी शायद उन्हींको पुकारा होगा।

तारकने कहा—इसीसे आपकी यात्रा सफल हुई। दुर्गाका नाम लेते तो खाली हाथ लौटना होता।

ब्रज बाबू तो भी मतलब नहीं समझ पाये—मुँह ताकते रहे। राखालने तारकका परिचय देकर कलकी घटनाका ब्योरा बताकर कहा—उसकी रायमें दुर्गाका नाम लेनेसे काम पूरा नहीं होता। कल जो आपसे मुलाकात नहीं हुई और हमें असफल होकर लौटना पड़ा, इसका कारण यही है कि घरसे चलते समय मैंने दुर्गाका नाम लिया था। हो सकता है, ऐसा दुर्भोग उसके भाग्यमें पहले भी कभी घटित हुआ हो, इसीसे वह उस नामसे ही चिढ़ा हुआ है।

सुनकर ब्रज बाबू पहले तो हँसे, उसके बाद एकाएक बनावटी गंभीरतासे चेहरेको बहुत भारी बनाकर बोले—होता है राखालराज, ऐसा होता है—यह मिथ्या नहीं है। संसारमें नाम और द्रव्यकी महिमा कोई आज भी ठीक-ठीक नहीं जान पाया। मैं भी इस मामलेमें पूरी तौरसे भुक्तभोगी हूँ। यदि भुने मटरका नाम ले दिया जाय तो फिर मेरी कुशल नहीं।

जिज्ञासा-व्यंजक मुखसे सभीने आँख उठाकर उनकी ओर देखा। राखालने हँसकर पूछा—यह कैसे काका बाबू ?

ब्रज बाबूने कहा—अच्छा तो घटना सुनाता हूँ—सुनो। ब्रजविहारी नाम होनेके कारण लड़कपनमें मेरा पुकारनेका नाम था बलाई। भुने मटर खाना मुझे बहुत ही अच्छा लगता था। वैसा ही भुगतता भी था। मेरी एक दूरके नातेकी दादी सावधान करके कहती थी—

"ओ बलाई, ओ बलाई, भुने मटर मत खाना।
खिड़की तोड़ बहू भागेगी, होगा फिर पछताना॥"

अव सोचता हूँ, लड़कपनमें भुने मटर खानेसे बुढ़ापेमें मेरा कैसा सर्वनाश हुआ। द्रव्यके दोषगुणका क्या यह वड़ा भारी प्रमाण नहीं है? जैसा द्रव्यका वैसा ही नामका भी प्रभाव अवश्य होता है।

तारक और राखालने लज्जासे सिर झुका लिया। नई-माने कुछ मुँह फिरा कर दवी आवाजमें झिझकते हुए कहा—लड़कोंके सामने तुम यह कह क्या रहे हो?

व्रज वावूने कहा—क्यों? इन लोगोंको सावधान किये देता हूँ। प्राण रहते ये कभी भुने मटर न खायँ।

नई-माने कहा—अच्छा तो तुम यही करो। मैं जाती हूँ।

व्रज वावूने कहा—यही तो तुममें दोष है नई-वहू। हमेशा झिड़की ही वताओगी और नाराज होगी—कोई सच वात कभी न कहने दोगी। मैंने सोचा था कि असल दोष यथार्थमें किसका है, यह खवर इतने दिनके वाद पाकर तुम खुश हो उठेगी—सो हुआ इसका उल्टा।

नई-माने हाथ जोड़कर कहा—वस हो गया—अव चुप रहो।—राजू!

राखालने सिर उठाकर देखा। नई-माने कहा—तुम जिस कामसे कल गये थे, वह इनसे कहो।

राखालने कुछ इधर-उधर किया। किन्तु इशारेसे नई-माका फिर सुस्पष्ट आदेश पाकर कह डाला—काका वावू, रेणुका व्याह तो उस जगह किसी तरह नहीं हो सकता।

सुनकर व्रज वावू अवकी विस्मयसे सीधे होकर वैठ गये। उनका वह हँसी-दिल्लगीका भाव सम्पूर्ण रूपसे गायव हो गया। वोले—क्यों नहीं हो सकता?

राखालने कारण खुलासा करके वताया।

व्रज वावूने पूछा—यह तुमसे किसने कहा?

राखालने इशारेसे दिखाकर कहा—नई-माने।

व्रज वावूने पूछा—इनसे किसने कहा?

राखालने कहा—यह आप इनसे ही पूछ लीजिए।

व्रज वावू स्तब्ध भावसे वड़ी देर तक वैठे रहे। फिर प्रश्न किया—नई-वहू यह वात क्या सच है?

नई-माने गर्दन हिलाकर जताया कि हाँ, सच है।

व्रज बाबूकी चिन्ताकी सीमा नहीं रही। बहुत देर चुपचाप बैठे रहनेके बाद बोले—तो भी रोकनेका उपाय नहीं है। रेणुको वे लोग देखकर आशीर्वाद दे गये हैं, लगन तक चढ़ गई है। परसों ब्याह है। एक दिनके भीतर मैं दूसरा लड़का कहाँ पाऊंगा?

नई-माने विस्मित होकर कहा—तुम स्वयं तो लड़का खोजकर लाये नहीं मँझले बाबू। जो लोग लाये थे, उनको हुकुम दो।

व्रज बाबूने कहा—वे सुनेंगे ही क्यों? तुम तो जानती हो नई-बहू, हुकुम देना मैं नही जानता और इसीसे कोई मेरी बात सुनता नहीं। वे तो खैर गैर हैं; लेकिन तुमने ही क्या कभी मेरी बात सुनी है आज सच-सच कहो तो भला!

शायद इस उल्लेखके भीतर विगत दिनोंका कोई कठिन अभियोग छिपा था, जिसे संसारमें इन दोनों आदमियोंके सिवा और कोई नहीं जानता। नई-मा इसका कुछ जवाब नही दे सकीं—गहरी लज्जासे सिर झुका कर रह गईं।

कई मिनट चुपचाप बीत गये। व्रज बाबू सिर हिलाकर बहुत कुछ जैसे अपनेसे ही कह उठे—असंभव है।

राखालने धीरेसे पूछा—असंभव किस कारणसे है काका बाबू?

व्रज बाबूने कहा—असंभव होनेसे ही असंभव है राजू। नई-बहू नहीं जानतीं—वह जान भी कैसे सकती हैं—लेकिन तुम तो जानते हो। उनके स्वरमें, आँखोंकी दृष्टिमें जैसे निराशा फूट-पड़ी। जैसे वह अन्यथा होनेकी बात सोच ही न सके।

नई-माने सिर उठाकर देखा। कहा—नई-बहू तो नहीं जानती, उसे समझा कर बताओ न मँझले बाबू, असंभव किस लिए है? रेणुके मा नहीं है, उसके बापने जिससे ब्याह किया है, उसका भाई चाहता है एक पागलके हाथमें लड़कीको सौंपना—इसीसे असंभव है? किसी तरह यह ब्याह नहीं रोका जा सकता, यही क्या तुम्हारा अंतिम उत्तर है? उनके मुखपर क्रोधकी, करुणाकी या ताच्छील्यकी, काहेकी छाया देख पड़ी, यह निःसंशय होकर कहना कठिन है।

उसे देखकर व्रज बाबूको उसी दम स्मरण हुआ कि जिस अबाध्य नई-बहूके विरुद्ध उन्होंने अभी शिकायत की, यह वही है। राखालको याद आया कि जो नई-मा लड़कपनमें उसका हाथ पकड़कर अपनी ससुराल ले आई थीं, यह वही हैं।

लज्जा और वेदनासे अभिसिंचित जिस घरका प्रकाश और वायु-मण्डल, स्निग्ध हास-परिहासके मुक्त प्रवाहमें, अभावनीय सहृदयतासे उज्ज्वल होता आ रहा था, वह एक घड़ीमें ही फिर सावन-भादोंकी अमावसके अन्धकारसे भर गया। राखाल व्यस्त होकर एकाएक उठ खड़ा हुआ। बोला, मा, बहुत देरसे आपने पान नहीं खाया। मुझे याद ही न था मा, कसूर हो गया।

नई-माको कुछ आश्चर्य-सा हुआ। बोलीं—पान? पानकी जरूरत नहीं है भैया।

राखालने कहा—है क्यों नहीं। दोनों होठ सूखकर काले पड़ गये हैं। लेकिन आप शायद समझती हैं कि मैं किसी पछाहीं पानवालेकी दूकानमें दौड़ा जाऊँगा। नहीं मा, इतनी समझ मुझमें है।—आओ तो तारक, उस मोड़के पास तुम जरा खड़े रहना।

इतना कहकर मित्रका हाथ पकड़कर एक जोरका झटका देते ही वह और उसके साथ तारक, दोनों जने तेजीके साथ घरके बाहर निकल गये।

अब सूने घरमें आमने सामने बैठकर दोनों जने सकोचसे जैसे मर गये। जिनसे कोई सम्बन्ध नहीं ऐसे जो दो आदमी मेघ-खण्डकी तरह अब तक आकाशके मौर प्रकाशको रोककर एक आड़ किये हुए थे, उनके अन्तर्धान होनेके साथ-साथ ही खुलासा सूर्य-किरणोंके उजालेमें कुछ भी अस्पष्ट या धुँधला नहीं रहा। पति और स्त्रीका गहरा और निकटतम सम्बन्ध ऐसा भयकर विकृत और लज्जाकर भी हो उठ सकता है, इस बातको इस एकान्तके सूनेपनमें दोनोंने स्पष्ट अनुभव किया। इसके पहले जो हँसी-दिल्लगी की गई थी, वह कितनी अशोभन, कितनी असगत थी, यह व्रज बाबूको याद आया और अपरिचित पुरुषोंके सामने इस लज्जासे अवगुंठित नारीको लक्ष्य करके किये गये भुने मटरके मजाकने जैसे इस समय उन्हींके कान मल दिये। उनके मनमें आया—छी छी, यह मैंने क्या किया!

पान लानेका बहाना करके राखाल उन्हें अकेला छोड़ गया है। लेकिन उनका यह समय चुप रहकर ही कट रहा है। शायद वे अब लौटकर आते ही होंगे। ऐसे समयमें नई-बहू ही पहले बोलीं। सिर उठाकर उन्होंने कहा—मॅझले बाबू, मुझे तुम क्षमा कर दो।

व्रज बाबूने कहा—क्षमा करना तुम सभव समझती हो क्या?

नई-बहूने कहा—केवल तुमसे ही संभव समझती हूँ। इस संसारमें शायद और कोई क्षमा नहीं कर सकता; लेकिन तुम कर सकते हो।

इतनी देरमें उनकी आँखोंसे आँसू गिर पड़े।

ब्रज बाबूने क्षणभर चुप रहकर कहा—नई-बहू, तुम क्षमा कर सकतीं?

नई-बहूने आँचलसे आँसू पोंछकर कहा—हम औरतें तो क्षमा कर ही सकती हैं मँझले-बाबू। पृथ्वीतलमें ऐसी कौन स्त्री है जिसे पतिका यह अपराध क्षमा नहीं करना पड़ता? लेकिन मैं वह तुलना नहीं करती। मैंने अपने सौभाग्यसे ऐसा पति पाया था, जो देह और मन दोनोंसे निष्पाप है, जो सब सन्देहसे परे है। मैं किस तरह तुमको इस प्रश्नका उत्तर दूँगी?

ब्रज बाबूने कहा—लेकिन मेरी क्षमा लेकर तुम करोगी क्या?

नई-बहूने कहा—जब तक जियूँगी, सिर आँखोंपर रखूँगी। मुझे क्या तुम भूल गये हो मँझले-बाबू?

ब्रज बाबूने कहा—तुम्हें क्या जान पड़ता है, कहो तो नई-बहू?

इस प्रश्नका जवाब नहीं मिला। केवल सिर झुकाये स्तब्ध होकर दोनों बैठे रहे। थोड़ी देर बाद ब्रज बाबूने कहा—क्षमा न माँगना नई बहू, यह मुझसे न हो सकेगा। जब तक जिऊँगा, तुम्हारे ऊपर मेरा यह अभिमान भाव नहीं जायगा। तो भी, पतिके अभिशापसे पीछे तुम्हारा कष्ट न बढ़, इस भयसे तुमको मैंने किसी दिन अभिशाप नहीं दिया। लेकिन ऐसी अद्भुत बातपर तुम विश्वास कर सकती हो नई बहू?

नई बहूने सिर उठाये बिना ही कहा—कर सकती हूँ।

ब्रज बाबूने कहा—तो फिर अब मैं उसके लिए दुःख नहीं करूँगा। उस दिन सभीने मुझे अन्धा कहा, निर्बोध कहा, कहा—दिखा देनेपर भी जो देख नहीं पाता, प्रमाण देनेपर भी जो उसपर विश्वास नहीं करता, उसकी ऐसी दुर्दशा न होगी तो किसकी होगी। लेकिन क्या दुर्दशा होनेसे ही अपनेको अन्धा मान लेना होगा नई बहू? और कहना होगा कि जो मैंने किया है, सब गलत है—भूल है? मैं जानता हूँ, माईने मुझे ठगा है, मित्रोंने ठगा है—आत्मीय-स्वजन, दास-दासी, कर्मचारी, बहुतोंने ही ठगा है। लेकिन जब सब कुछ जानेवाला था, उस दुर्दिनमें मैं ही तो तुमको ब्याहकर घरमें लाया था। तुमने आकर एक एक सब बंद किया, और सब नुकसान पूरा हो गया—उन्हीं तुमपर अविश्वास नहीं

कर सका, इसलिए मैं अन्धा हूँ ? और जिन्होंने कुचक्र रचकर, बाहरके आदमी इकट्ठे करके तुमको नीचे खींचकर उतारकर घरके बाहर निकाल दिया, वे ही आँखोंवाले है ? उनकी नालिश और उनकी गन्दी बातोंको नहीं सुना—उनपर ध्यान नहीं दिया—इसीसे आज मेरी दुर्गति हो रही है ! मेरे दु खका क्या यही सच्चा इतिहास है ? तुम्हीं बताओ, नई-बहू ?

नई-बहू कब सिर उठाकर स्वामीके मुखपर दोनों आँखें टिका कर ताकने लगी थीं, यह शायद वह खुद ही नहीं जानती थीं। इस समय एकाएक स्वामीके थमते ही उन्होंने जैसे चोंककर फिर सिर झुका लिया।

व्रज बाबूने कहा— तुम क्या केवल मेरी स्त्री ही थीं ? तुम थीं घरकी लक्ष्मी, सारे परिवारकी मालिकिन, मेरी सब आत्मीयोंसे बढकर आत्मीय, सब मित्रोंसे—बन्धुओंसे बडी। तुमसे बढकर श्रद्धा-भक्ति मुझपर कब किसने की है ? लेकिन एक बात अक्सर सोचा करता हूँ नई-बहू, मगर उसका जवाब किसी तरह नहीं पाता। आज दैवसयोगसे तुम्हे पास पा गया हूँ तो बताओ, उस दिन क्या हुआ था ? इतनी अपनी होकर भी क्या तुम सचमुच मुझे प्यार नहीं कर सकी ? बिना समझे बूझे तो तुम कभी कुछ नहीं करतीं। इसका सच सच जवाब दोगी ? अगर दो, तो शायद आज भी मै फिर मनमें शान्ति पा सकूँ। बताओगी ?

नई-बहूने सिर उठाकर देखा नहीं, किन्तु धीरेसे कहा—आज नहीं मँझले बाबू।

व्रज बाबूने कहा—आज नहीं तो कब दोगी, बताओ ? और अगर भेट फिर न हो तो क्या चिट्ठी लिखकर बताओगी ?

अबकी नई-बहूने आँख उठाकर देखा। बोलीं—नहीं मँझले बाबू, मैं तुमको चिट्ठी भी नहीं लिखूंगी और मुँहसे भी नहीं कहूँगी।

व्रज बाबू—तो फिर मुझे कैसे मालूम होगा ?

नई-बहू—जिस दिन मैं खुद जान पाऊँगी, उस दिन जानोगे।

व्रज बाबू—किन्तु यह तो एक पहेली हुई !

नई-बहू—होने दो पहेली। आज आशीर्वाद करो कि इसका अर्थ एक दिन मै तुमको समझा दे सकूँ।

द्वारके बाहर सुनाई पड़ा—मुझे बहुत देर हो गई और यह कहते हुए राखालने प्रवेश किया। एक डिब्बा-भर गिलौरियाँ सामने रखकर बोला—

सावधानीके साथ गिलौरी वनवा लाया हूँ मा । इनसे कोई अपवित्र चीज नहीं छू गई है । इन्हें विना संकोचके आप मुँहमें रख सकती हैं ।

नई-वहूने इशारेसे स्वामीको देनेके लिए कहा । राखालने गर्दन हिला दी। व्रज वावूने कहा—मैंने तेरह सालसे पान खाना छोड़ दिया है नई वहू। अव तुम अपने हाथसे उठाकर दो, तो भी मैं न खा सकूँगा ।

अतएव पानका डिब्बा वैसा ही पड़ा रहा, कोई पान मुँहमें न दे सका ।

तारकने आकर प्रवेश किया । उसे अपने डेरे जाना चाहिए था, लेकिन गया नहीं, पास ही कहीं अपेक्षा कर रहा था । चाहे जिस कारणसे हो, वह वहुत देर तक यहाँ अनुपस्थित रहना नहीं चाहता । उसका यह अनचाहा कौतूहल राखालकी नजरमें ठीक नहीं जँचा, लेकिन वह चुप ही रहा ।

व्रज वावूने कहा—नई-वहू, तुमने अपना वह भारी गलेका हार क्या भट्टाचार्य महाशयकी छोटी लड़कीको उसके व्याहके समय देनेको कहा था ? व्याह तो वहुत दिन हुए हो गया, उसके दो लड़की-लड़के भी हो चुके हैं । जान पड़ता है, इतने दिन संकोचके मारे माँग नहीं सकी, किन्तु अवकी दुर्गापूजाके समय आकर उसने वह हार माँगा था—दे दूँ ?

नई-वहूने कहा—हाँ, वह उसे दे देना ।

व्रज वावूने कहा—और एक वात है । तुम्हारा जो रुपया कारोबारमें लगा हुआ था, वह सूद और असल मिलाकर अव पचास हजारके लगभग हो गया है । उसका क्या करोगी ? निकालकर तुमको भेज दूँ ?

नई-वहूने कहा—निकालोगे क्यों ? और भी वढ़ने दो न ?

व्रज वावूने कहा—नहीं नई-वहू, अव साहस नहीं होता । वरीसालकी चलानी सुपारीके काममें वहुत रुपयोंका घाटा हो गया है । तुम्हारा रुपया रहेगा तो शायद यह भी खिंच जायगा ।

नई-वहूने जरा सोचकर कहा—यह डर मुझे वरावर रहा है । गोकुल साहाको हटाकर तुम वीरेन्द्रको वहाँ भेज दो । मेरा रुपया मारा न जायगा ।

व्रज वावूकी आँखें एकाएक सजल हो उठीं । अपनेको सँभाल लेकर उन्होंने कहा—मैं खुद भी तो अव वूढ़ा हो गया हूँ, और कवतक मेहनत करूँगा ? सोचता हूँ, सव कारोवार उठाकर अव—

नई-बहू कह उठीं—ठाकुरद्वारेके बाहर न निकलोगे—यही तो ? ना, यह न होगा।

ब्रज बाबू निस्तब्ध होकर बैठे रहे। बहुत देर तक एक शब्द भी मुँहसे नहीं निकाला। मन-ही-मन क्या सोचने लगे, इसका आभास जान पड़ता है केवल एक ही आदमीने पाया।

एकाएक वह कह उठे—देखो नई-बाबू, सोनापुरका कुछ हिस्सा दादाके लड़कोंको छोड़ देना तुम उचित समझती हो ?

नई-बहूने कहा—उन लोगोंके तो और कुछ भी नहीं है। सभी दे दो।

"सब ?"

"हर्ज क्या है!"

ब्रज बाबूने कहा—अच्छा, यही होगा। तुम्हें याद है, शायद दादाकी बड़ी लड़की जयदुर्गाको कुछ देनेकी बात हुई थी। जयदुर्गा जिंदा नहीं है, लेकिन उसकी एक लड़की है। उसकी दशा अच्छी नहीं है। ये लोग अपनी उस भाजीको कुछ भी देना नहीं चाहते। तुम क्या कहती हो ?

नई-बहूने कहा—सोनापुरकी आमदनी शायद हजार रुपएसे ऊपर है। जय-दुर्गाकी लड़कीको सौ सवा सौ रुपये मिलनेकी व्यवस्था कर देनेसे अन्याय न होगा।

ब्रज बाबू—अच्छा, यही होगा।

फिर कुछ समय चुपचाप बीता।

ब्रज बाबूने फिर कहा—तुम्हारे सब गहने क्या संदूकमें ही पड़े सड़ते रहेंगे ? सिर्फ तैयार ही करा लिये, पहने कभी नहीं। वे सब तुमको भेज दूँ ?

नई-बहू शायद एकाएक इस प्रस्तावको समझ नहीं पाईं—इसके बाद उन्होंने सिर झुका लिया। दमभर बाद देखा गया, टेबिलके ऊपर टप-टप करके आँसु-ओंकी कई बूँदें टपक पड़ीं।

ब्रज बाबू हड़बड़ाकर कह उठे—रहने दो रहने दो, तुम्हारी रेणु पहनेगी। इस बातको छोड़ो।

पांच-छः मिनटके बाद घड़ीकी तरफ देखकर उन्होंने कहा—सन्ध्या हो रही है, अब मैं चलूं।

राखाल यह जानता था कि सन्ध्या-आह्निक, गोविन्दजीकी सेवा-पूजा ये सब नित्य-कर्त्तव्य वह ठीक समय पर ही करते हैं, किसी भी कारणसे समयका व्यतिक्रम नहीं होने पाता। वह भी व्यस्त हो उठा। मगर नई-बहू यह नहीं जानती थीं कि प्रौढावस्थामें ब्रज बाबूका यही प्रतिदिनका प्रधान कर्त्तव्य हो गया है। उन्होंने आँचलसे आँसू पोंछकर कहा—रेणुके ब्याहकी बात तो समाप्त नहीं हुई मँझले बाबू।

ब्रज बाबूने कहा—तुम जब नहीं चाहतीं, तब उस घरमें न होगा।

नई-बहूने स्वस्तिकी साँस लेकर कहा—चिन्ता मिटी।

ब्रज बाबूने कहा—लेकिन ब्याह तो बन्द नहीं किया जा सकता। कोई और सुपात्र मिलना चाहिए। खाने-पहननेका सुभीता हो, यह भी देखना चाहिए।—राजू, तुम्हारा तो भैया, बहुत-से घरोंमें जाना-आना है। तुम कोई लड़का देख-सुनकर ठीक नहीं कर दे सकते? ऐसी लड़की तो कोई सहजमें नहीं पावेगा।

राखाल सिर झुकाये चुप रहा।

नई-बहूने कहा—इतनी जल्दीकी क्या जरूरत है मँझले बाबू?

ब्रज बाबूने सिर हिलाया, कहा—यह हो नहीं सकता नई-बहू। इसी लग्नमें—निर्दिष्ट दिनमें—ब्याह देना होगा। देशाचार * को अमान्य न कर सकूँगा। इसके सिवा और भी अमंगलकी संभावना है।

नई-बहूने कहा—लेकिन अगर इतने समयमें सुपात्र न मिले?

ब्रज बाबूने कहा—मिलना ही चाहिए।

नई-बहूने कहा—लेकिन अगर न मिला तो क्या पागलके बदले किसी बन्दरके हाथ लड़की दे दोगे?

ब्रज बाबूने कहा—लड़कीका भाग्य।

नई-बहूने कहा—इसकी अपेक्षा तो हाथ-पैर बाँधकर उसे नदीमें बहा दो; वही तो कर रहे थे।

---

* बंगालमें यह प्रथा है कि अगर किसी कारणसे लड़कीका ब्याह रुक जाय तो उसी दिन उसी लग्नमें दूसरे पात्रसे उसका ब्याह हो जाना चाहिए। अन्यथा लड़कीके माता-पिता-परिवारको जातिच्युत होना पड़ता है। पहले कड़ाईके साथ इस नियमका पालन किया जाता था। अब नई शिक्षा-दीक्षाके कारण समाजका दबदबा उतना नहीं रहा।

—अनुवादक

आलोचना पीछे वादविवादका रूप न धारण कर ले, इस भयसे राखाल बीचमें बोल उठा। उसने कहा—मामा बाबू झगड़ा खड़ा करेंगे, क्या ऐसा जान पड़ता है काका बाबू ?

व्रज बाबूने मुरझाई हुई हँसी हँसकर कहा—जान तो पड़ता ही है। हेमन्तके स्वभावको तो तुम जानते हो राजू, वह सहजमें न छोड़ेगा।

राखाल खूब जानता था, इसीसे चुप रहा।

नई-बहूने एकाएक क्रुद्ध होकर कहा—लड़की तुम्हारी है, तुम्हारा जहाँ जी चाहेगा, उसको ब्याहोगे। इच्छा न होगी, न ब्याहोगे। इसमें हेमन्त बाबू क्यों बाधा देंगे ? देंगे भी तो तुम क्यों सुनोगे ?

इसके प्रत्युत्तरमें व्रज बाबूने ' ना ' कहा अवश्य, लेकिन यह सभीने अनुभव किया कि उसमें गलेका जोर नहीं है। नई-बहू कहने लगीं—तुम्हारे कोई लड़का नहीं है, सिर्फ दो लड़कियाँ हैं। ये जो तुम्हारी सम्पत्ति पावेंगी उससे, ढूँढनेपर, कलकत्ता शहरमें सुपात्रका अभाव न होगा। लेकिन सुपात्रको खोजनेके लिए तुमको कुछ दिन स्थिर होकर ठहरना ही होगा। आशीर्वाद और लगन चढ़नेका उज्र खड़ा करके भूत-प्रेत, आगल-पागलके, हाथमें लड़कीको नहीं सौंपा जा सकेगा। इसके बीचमें हेमन्त बाबू कोई नहीं है। समझे मँझले बाबू ?

व्रज बाबूने विषादपूर्ण मुखसे सिर हिलाकर कहा—हाँ।

राखालने कहा—यह तो हुई सहज युक्ति और न्याय-अन्यायकी बात नई-मा। लेकिन हेमन्त बाबूको तो आप जानतीं नहीं। रेणुको बहुत कुछ मिलेगा, यही तो मुश्किल है—इसीसे तो उसके भाग्यमें आज मामा-बाबूका एक पागल रिश्तेदार आ जुटा है, नहीं तो न जुटता—वह साँस लेनेका समय पाती। मामा बाबू कह देने मात्रसे ' हाल ' छोड़नेवाले आदमी नहीं हैं।

नई-बहू—क्या करेंगे वह, जरा सुनूँ ?

राखालने जवाब देना चाहा, पर एकाएक उसे दबा गया। व्रज बाबूने यह देखकर कहा—लज्जा न करो राजू, कहो। मैं अनुमति देता हूँ।

तो भी राखालका सकोच दूर न हो रहा था। कुछ इधर-उधर करके अन्तको उसने कह दिया—यह आदमी हाथ तक चला सकता है।

नई-बहूने कहा—किसके ऊपर हाथ चला सकता है ? मँझले बाबूपर !

राखालने कहा—हाँ। एक बार ढकेल दिया था—पन्द्रह-सोलह दिन काका बाबू उठ नहीं पाये।

नई-माकी दृष्टि सहसा धक-से जल उठी। बोलीं—उसके बाद भी वह उस घरमें है? खाता-पहनता है?

राखालने कहा—केवल वह आप ही नहीं है, अपनी माँ तकको ले आये हैं—काका बाबूकी सासको। उनकी स्त्री नहीं हैं, वह मर चुकी हैं, नहीं तो शायद अब तक वे भी आकर हाजिर हो जातीं। जड़ जमाकर वे लोग बैठे हैं मा, किसकी ताकत है जो उन्हें वहाँसे हटावे। मुझे आप एक दिन अभय देकर लाई थीं, इसलिए मुझे कोई निकाल नहीं सका, लेकिन मामा-बाबूकी एक बारकी टेढ़ी नजरको मैं सँभाल नहीं सका, मुझे जान लेकर भागना ही पड़ा। सच कहता हूँ मा, रेणुके ब्याहके हंगामेमें मुझे काका बाबूके लिए बड़ा डर हो रहा है।

नई-बहू आँखें फाड़े ताकती रहीं। निरुपाय निष्फल आक्रोशसे उनकी आँखोंसे जैसे एक आगकी धारा निकलने लगी।

राखालने इशारेसे ब्रज बाबूको दिखाकर कहा—अब हेमन्तबाबू ही घरके मालिक हैं, उनकी मा हैं घरकी मालिकिन। उस दावानलके भीतर इन शान्त निरीह मनुष्यको अकेले झोंककर मेरा भय किसी तरह दूर नहीं होता। मगर एक पागलके हाथमें पड़नेसे रेणुको बचाना ही होगा। आज आपकी लड़की और आपके स्वामीको इस विपत्तिके समुद्रसे निकलनेके लिए किनारा नहीं मिल रहा है, यह सोचते ही सिर फोड़कर प्राण दे देनेको मेरा जी चाह रहा है।

नई-माने कुछ जवाब नहीं दिया, केवल सामने रखे टेबिलके ऊपर धीरेसे सिर रखकर वे स्तब्ध हो रहीं।

तारक उत्तेजनासे छटपटाने लगा। संसारमें इतनी बड़ी नालिश भी है, इसकी उसने इसके पहले कल्पना भी नहीं की थी। और यह पत्थरकी-सी मूर्त्ति—जो न बोलती है, न हिलती-डुलती है—अपने मनमें क्या सोच रही है!

दो-तीन मिनट इसी तरह बीते। कौन जाने, और भी कितना समय बीतता; किन्तु इसी समय बाहरके बन्द किवाड़ोंमें किसीने धक्का दिया। बुढ़िया दासी होगी, यह सोचकर राखालने जाकर किवाड़ खोल दिये। एक व्यस्त व्याकुल बंगाली नौकरने घरमें घुसकर पुकारा—मा!

नई-माने सिर उठाकर देखा। बोलीं—अरे तू कैसे?

नौकर अत्यन्त उत्तेजित था। बोला—ड्राइवर ले आया मा। जल्दी चलिए, बाबू बहुत खफा हैं।

बात साधारण ही थी, किन्तु कदर्यताकी सीमा नहीं रही। व्रज बाबूने लज्जासे दूसरी ओर मुह फेर लिया।

नौकरसे देर सही नहीं जा रही थी। उसने तगादा करते हुए फिर कहा—उठिए उठिए मा, जल्दी चलिए। गाड़ी ले आया हूँ।

"क्यों?"

नौकर इधर-उधर करने लगा। स्पष्ट ही जान पड़ा कि उसे बतानेको मना कर दिया गया है।

नई-माने फिर पूछा—बाबू क्यों बुला रहे हैं?

नौकरने कहा—चलो न मा, राहमें ही बताऊँगा।

और बहस न करके नई-मा उठ खड़ी हुईं। बोलीं—जाती हूँ मँझले बाबू।

व्रज बाबू—जाती हो?

नई-बहू—हाँ। यह क्या तुमने बुला भेजा है जो जोर करके, नाराज होकर कहूँगी कि इस समय मुझे जानेकी फुर्सत नहीं है, तू जा? मुझे जाना ही होगा। जिसे तुमने कभी कुछ नहीं कहा, उस अपनी नई-बहूको आज एक बार जरा याद करके देखो तो मंझले बाबू—देखो तो आज उसे पहचाना जाता है कि नहीं।

व्रज बाबू सिर उठाकर एकटक उनके मुँहकी ओर ताकते रहे।

नई-बहूने कहा—क्षमाकी भीख माँगी थी, लेकिन स्वीकार नहीं की। उपेक्षा करके बोले—यह क्षमा लेकर तुम क्या करोगी? मैंने तुमसे कभी कुछ नहीं माँगा—तुमसे कुछ माँगनेमें मुझे लज्जा आती है, अभिमान होता है। किन्तु और कोई चाहे जो कहे मँझले-बाबू, तुम ऐसी बात मुझसे कभी न कहना। कहो—नहीं कहोगे?

व्रज बाबूकी छातीके भीतर जैसे भूकम्प हो गया। बहुत दिन पहलेकी एक घटना याद आ गई। तब रेणुके जन्मके बाद नई-बहू बीमार थीं। किसी एक जरूरी कामसे व्रज बाबूको ढाका जानेकी जरूरत थी। उस दिन भी इन नई-बहूने

कण्ठ-स्वरमें ऐसी ही आकुलता भरकर प्रार्थना जनाई थी—कहो, मेरे सो जानेपर मुझे छोड़कर भाग तो न जाओगे? उस दिन बहुत बड़ी हानि स्वीकार करके भी उन्हें ढाका जानेका विचार छोड़ देना पड़ा था। उस दिन लोगोंने उन्हें स्त्रैण कह-कर फटकारनेमे कसर नहीं रखी थी। किन्तु आज?

नौकरकी समझमें कुछ नहीं आया; किन्तु रंगढंग देखकर एकाएक डरकर कह बैठा—मा, आपके नीचेके एक किराएदारने अफीम खा ली है और मरने ही वाला है। इसीसे बुलाने आया हूँ।

नई-बहूने डरकर पूछा—किसने अफीम खा ली है रे?

नौकरने कहा—जीवन बाबूकी घरवालीने।

नई बहूने पूछा—जीवन बाबू कहाँ हैं?

नौकरने कहा—उनका तो आठ-दस दिनसे पता ही नहीं है। सुना है, नौकरी छूट गई है, इसीसे वह भाग गये हैं।

नई-बहूने कहा—लेकिन तेरे बाबू क्या कर रहे हैं? उसे अस्पताल भेजनेकी व्यवस्था हुई है?

नौकरने कहा—कुछ भी नहीं हुआ मा। पुलिसके खौफसे बाबू दूकान चले गये हैं। तुम्हारा घर है, तुम्हारा किराएदार है—तुम्हीं उसकी व्यवस्था करो मा। वह औरत शायद अब नहीं बचेगी।

राखाल उठ खड़ा हुआ। बोला—जरूरत पड़ सकती है मा, मैं क्या आपके साथ चल सकता हूँ?

नई-माने कहा—क्यों नहीं चल सकते भैया आओ।

जानेके पहले अबकी उन्होंने हाथसे स्वामीके दोनों पैर छूकर प्रणाम किया। चरण-रज माथेसे लगाई।

सबके निकल आनेपर राखाल दरवाजेमें ताला लगाकर नई-माके पीछे-पीछे चला।

४

नई-माने बुलाया नहीं, राखाल आप ही उनकी सहायता करने जा रहा है। उन दिनों रमणी बाबू राखालराजको खूब अच्छी तरहसे जानते-पहचानते

इनके प्राण बचाये जा सके तो पुलीसके हाथसे इनके शरीरको भी बचाया जा सकेगा, यह भरोसा मैं आप लोगोंको दे सकता हूँ।

नई-माने राजी होकर कहा—यही करो भैया। गाड़ी मेरी खड़ी ही है, तुम ले जाओ।

उनके आदेशसे एक दासी साथ जाकर उस स्त्रीको अस्पताल पहुँचा देनेके लिए राजी हुई। नई-माने खर्च-वर्चके लिए राखालके हाथमें कुछ रूपये थमा दिये।

सन्ध्याकाल बीत गया है, निकटवर्ती रात्रिके प्रथम अन्धकारमें राखालने अर्ध-सचेतन उस अपरिचित नारीको अपने जोरसे गाड़ीमें डालकर अस्पतालके लिए यात्रा की। राहमें, गैसके उज्ज्वल प्रकाशमें उस मरण-पथकी यात्री नारीका चेहरा बीच-बीचमें दिखाई पड़ जानेसे राखालको जान पड़ने लगा जैसे ठीक ऐसा उसने कभी नहीं देखा। उसने अपने जीवनमें बहुत औरतोंको देखा है। तरह-तरहकी, छोटी-बड़ी-जवान-अधेड़। तरह-तरहके चेहरे, तरह-तरहका डील-डौल। इकहरे, दोहरे, तेहरे, चौहरे बदनकी—तीली-सी दुबली-पतली, मोटी-ताजी, हृष्ट-पुष्ट—लम्बी, ठिंगनी—काली, गोरी, पीले-फीके रंगकी—बड़े बड़े बालोंवाली और झड़ते हुए छोटे छोटे बालोंवाली—पास-फेल—गोल और लम्बे चेहरेकी—इस तरहकी कितनी ही। आत्मीयता और परिचयकी घनिष्ठतासे उसकी जानकारी काफीसे भी ज्यादा है। इस अवस्थामें ही इन सबके बारेमें देखनेकी उसकी साध मिट गई है। ठीक वितृष्णा नहीं, एक दबी हुई अवहेला कहींपर उसके मनके एक कोनेमें अत्यन्त गुप्त रूपसे जमा हो रही थी। कल नई माको देखकर उसमें पहला धक्का लगा था। तेरह साल पहलेकी बातको प्रायः वह भूला ही हुआ था, किन्तु वही नई मा जवानीके दूसरे छोरपर पैर रखकर कल जब उसके घरके भीतर दिखाई दीं, तब कृतज्ञ चित्तसे अपना संशोधन करके यही बात उसने मन-ही-मन कही थी—नारीके सच्चे रूपका दर्शन कितनी बड़ी दुर्लभ वस्तु है, इस बातको जगत्के अधिकांश लोग जानते ही नहीं। आज गाड़ीके भीतर प्रकाश और अन्धकारकी सन्धिमें बार बार इस मरणोन्मुख स्त्रीको देखकर उसी बातको उसने एक बार मन-ही-मन दुहराया। उसकी अवस्था बस उन्नीस-बीस वर्ष ही होगी। साज-सिंगार और आडम्बरसे शून्य दरिद्र भद्र घरकी औरत है। अनशन और आधे पेट भोजनसे उसके पीले पड़े हुए मुखपर मृत्युकी छाया पड़ी है, किन्तु राखालकी मुग्ध दृष्टिमें जान पड़ा कि मृत्युने जैसे इस नारीको रूपके उसपार पहुँचा

दिया है। किन्तु यह देहकी अक्षुण्ण सुषमासे है या भीतरकी नीरव महिमासे, राखाल निःसंशयरूपसे समझ न सका। अस्पतालमें अपनी शक्तिसे भी अधिक उसके लिए करनेका संकल्प किया; किन्तु इस दुःख-कष्ट-साध्य प्रचेष्टाकी विफलताकी चिन्तासे करुणाके मारे उसकी आँखोंमें आँसू भर आये। एकाएक साथकी उस स्त्रीके कंधेके ऊपरसे रोगिणीका सिर लुढकते देखकर राखालने हड़बड़ाकर उसे सँभालनेके लिए हाथ बढाया ही था कि वह वैसे ही चटपट सँभल गया।

इस अपरिचिताकी तुलनामें कितने ही बड़े घरोंकी औरतोंका उस समय उसे खयाल आने लगा। वहाँ रूपकी लोलुपतासे कैसी उग्र अनावृत क्षुधा रहती है! रूपकी दीनताको ढकनेके कितने विचित्र आयोजन किये जाते हैं! कितने महँगे प्रसाधन होते हैं! उनमें कितना अपव्यय होता है! उसने बराबर अपनी आँखोंसे उन नारियोंको परस्पर ईर्षासे कातर होकर पीठ-पीछे बुराई करते देखा है—उनकी जलनका अनुभव किया है।

और उसी समाजके और एक सिरेपर यह नारी जिसके शरीरपर न कोई आभूषण है और न सजाव-सिंगार! यह कुण्ठित श्री, यह अदृष्टपूर्व माधुर्य, इसे भी क्या अहंकृत आत्मम्भरिताके मारे वे उपहाससे कलुषित करेंगी?

वह सोचने लगा। क्या जानें, कन्याके ब्याहकी चिन्तासे व्याकुल किस गरीब भिखारी माता-पिताकी यह बेटी है, किस अभागे कायरके हाथमें उन्होंने इसे सौंपा था। क्या जानें, कितने अनाहारोंके बाद इस निर्वाक् लड़कीने आज धैर्य खो दिया, तो भी जिस संसारने उसे कुछ नहीं दिया, उसे भिक्षा-पात्र हाथमें लेकर अपना दुःख जनाना नहीं चाहा। जितने दिन हो सका, मुँहमें ताला लगाकर उसकी सेवा करती रही। शायद वह शक्ति समाप्त हो गई—इसीसे क्या आज इस धिक्कारसे, वेदनासे, अभिमानसे अपने उसी विधाताके आगे नालिश करने चली है, जिसने अपने रूपका बर्तन खाली करके, सारा रूप देकर इसे इस दुनियामें भेजा!

कल्पनाका जाल फट गया। राखालने चौंककर देखा, गाड़ी अस्पतालके आँगनमें आ पहुंची है। वह स्ट्रेचरके लिए दौड़ा, मगर उस नारीने मना कर दिया। बची हुई सारी शक्तिको प्राणपणसे सजग करके उसने क्षीण स्वरसे कहा—मुझे उठाकर मत ले चलो, मैं आप ही जा सकूँगी। इतना कहकर वह साथकी औरतके कंधेका सहारा लेकर लटपटाती हुई किसी तरह आगे बढ़ी।

अस्पतालमें उस नारीकी जान कैसे बची, कानूनका झगड़ा किस तरह मिटा, राखालने क्या किया, क्या दिया-लिया, किससे क्या कहा, इन सब बातोंका विस्तारसे वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं। चार-पाँच दिनके बाद राखालने कहा—भाग्यमें जो दु:ख-कष्ट लिखा था, वह भोग लिया। अब घर चलिए।

वह नारी शान्त काली आँखें फैलाकर चुपचाप राखालका मुँह ताकती रही, कुछ बोली नहीं।

राखालने कहा—यहाँके शिक्षित, सुसभ्य सम्प्रदायके कायदे-कानूनसे आपका नाम मिसेज चकरबुटी (चक्रवर्ती) हो गया, किन्तु मैं तो आपका यह अपमान कर न सकूँगा। साथ ही मुश्किल यह है कि कुछ-न-कुछ कहकर पुकारना भी तो चाहिए?

सुनकर उसने एकदम सहज गलेसे कहा—क्यों, मेरा नाम तो शारदा है। लेकिन मैं कितनी छोटी हूँ, 'आप' कहनेसे मुझे बड़ी लज्जा लगती है।

राखालने हँसकर कहा—लज्जाकी तो बात ही है। मैं अवस्थामें कितना बड़ा हूँ! अच्छा तो चलनेका प्रस्ताव मुझे इस तरह करना होगा—शारदा, अब तुम घर चलो।

शारदाने पूछा—मैं आपको क्या कहकर पुकारूँगी? नाम तो लिया नहीं जा सकता।

राखालने कहा—नाम न लिया जा सकनेपर भी इसका एक उपाय है। मेरा पैतृक नाम है राखाल—राखालराज। इसीसे बचपनमें नई-मा मुझे राजू कहकर पुकारती थीं। इसके साथ 'बाबू' और जोड़ देनेसे तो अनायास पुकारा जा सकता है।

शारदाने सिर हिलाकर कहा—वह तो एक ही बात हुई! और गुरुजन जो कहकर पुकारते हैं वही तो नाम होता है। हमारे देशमें ब्राह्मणको देवता कहते हैं। मैं भी आपको देवता कहकर पुकारूँगी।

"अरे! कहती क्या हो? लेकिन ब्राह्मणत्व तो मुझमें कानी-कौड़ीभर भी नहीं है शारदा!"

"सो भले ही न हो, लेकिन देवतात्व सोलह आने है। फिर ब्राह्मणके भले-बुरेपनका हम लोग विचार नहीं करते। करना भी न चाहिए।"

जवाब सुनकर, खासकर कहनेके ढंग या भावको देखकर राखाल मन-ही-मन

कुछ विस्मित हुआ। शारदा गँवई गाँवके गरीब ब्राह्मणकी लड़की है, इसलिए पहले राखालने उसे जितना अशिक्षित और अपरिमार्जित ठहरा रखा था इस समय ठीक वैसी ही नहीं समझ सका। और एक बात उसके कानोंमें खटकी। देहातमें शूद्रही साधारणतः ब्राह्मणको देवता कहकर सम्बोधन करते हैं—उसके अपने गाँवमें भी यह चलन है। किन्तु ब्राह्मणकी कन्याके मुखसे इस सम्बोधनकी बात उसे न जाने कैसी लगी। हाँ, इस जगह अगर कोई विशेष अर्थ इस लड़कीके मनमें हो तो वह दूसरी बात है।

राखालने कहा—अच्छी बात है, यही कहकर पुकारो। लेकिन अब घर चलो। ये तो अब तुमको यहाँ रखेंगे नहीं।

शारदा सिर झुकाये चुप रही।

राखालने क्षणभर उत्तरकी राह देखकर फिर कहा—क्या कहती हो शारदा? घर चलो।

अबकी शारदाने सिर उठाकर देखा। धीरेसे बोली—मैं घरका किराया कहाँसे दूँगी? तीन-चार महीनेका पिछला किराया बाकी है—हम वह भी तो नहीं दे सकते।

राखालने हँसकर कहा—इसके लिए कोई चिन्ता नहीं है।

शारदाने विस्मयके साथ कहा—चिन्ता क्यों नहीं है?

"तुम्हारे लिए चिन्ताका कारण इसलिए नहीं है कि घरका किराया तुम्हारे पति देंगे। लज्जाके कारणसे और पास पैसा न होनेसे कहीं छिपे हुए होंगे, जल्दी ही लौट आवेंगे—शायद लौट भी आये हों, हम जाते ही उन्हें देख पावेंगे।

"नहीं, वह नहीं आये।"

"न भी आये हों तो अब निश्चय ही आवेंगे।"

शारदाने कहा—ना, वह न आवेंगे।

"नहीं आवेंगे? तुमको अकेली छोड़कर हमेशाके लिए भाग जायँगे? ऐसा भी कहीं हो सकता है? निश्चय ही आवेंगे।"

"ना।"

"ना? यह तुमने कैसे जाना?"

"मैं जानती हूँ।"

उसके कंठस्वरके भारीपनसे आगे कुछ कहने-सुनने या बहस करनेको नहीं रह गया। राखाल स्तब्ध भावसे कुछ देर बैठा रहा, फिर बोला—तो फिर चाहे अपने ससुरके घर और नहीं तो बापके ही घर चलो। मैं वहाँ भेजनेकी व्यवस्था कर दूँगा।

शारदा चुपचाप सिर झुकाये बैठी रही, उत्तर नहीं दिया।

राखालने घड़ीभर अपेक्षा करके कहा—कहाँ जाओगी, ससुराल ?

शारदाने गर्दन हिलाकर जताया—नहीं।

" तो फिर क्या बापके घर जाना चाहती हो ? "

उसने फिर वैसे ही गर्दन हिला दी।

राखाल अधीर हो उठा। बोला—यह तो बड़ी मुश्किल है। यहाँके डेरेपर भी न जाओगी, ससुराल भी न जाओगी और बापके घर भी नहीं जाना चाहती हो। लेकिन, हमेशा अस्पतालमें तो रहनेका कायदा नहीं है शारदा, कहीं तो जाना ही होगा ?

प्रश्न समाप्त करते ही उसने देख पाया कि उस लड़कीके घुटनोंके पासकी बहुत-सी धोती आँसुओंसे भीग गई है और इसी कारण वह मुँहसे कुछ न कहकर अब तक गर्दन हिलाकर ही प्रश्नोंका उत्तर दे रही थी।

" यह क्या शारदा, रोती क्यों हो ? मैंने बेजा तो कुछ कहा नहीं ! "

सुनते ही उसने चटपट आँसू पोंछ डाले, लेकिन तुरन्त ही कुछ बोल न सकी, रुंधे हुए गलेको साफ करनेमें कुछ देर लगी। फिर कहा—मुझसे अब कुछ सोचा नहीं जाता—मुझे मरने भी किसीने नहीं दिया।

राखाल मन ही-मन असहिष्णु हो उठा था। लेकिन इस आखिरी बातको सुनकर खीझ उठा। यह अभियोग जैसे उसीके ऊपर था। तथापि स्वरको पहले ही की तरह संयत रखकर उसने कहा—मनुष्य एक ही बार बाधा दे सकता है शारदा, बार-बार नहीं दे सकता। जो मरना ही चाहता है उसे किसी तरह बचाकर रखा नहीं जा सकता। और अगर सोचना ही चाहती हो तो उसके लिए भी बहुत समय पाओगी। अब घर चलो, गाड़ी बुला लाकर तुमको पहुँचा आऊँ। मुझे और भी तो बहुत काम हैं।

राखालके दिये खोंचोंका उसने अनुभव किया या नहीं, कुछ समझ न पड़ा। उसने राखालके मुँहकी ओर देखकर कहा—मैं किराया जो न दे सकूँगी देवता !

" न दे सको, न देना।"

" आप क्या मासे कह देंगे ?"

राखालने कहा--नहीं। बचपनमें, मा-बापके मरनेपर, तुम्हारी ही तरह असहाय होकर मैं भी एक दिन उनके पास भीख माँगने गया। जानती हो, क्या भिक्षा दी ? जितनेका प्रयोजन था और जो मैंने माँगा, सब। उसके बाद हाथ पकड़कर अपनी ससुराल ले आईं--अन्न देकर, वस्त्र देकर, विद्या-दान करके मुझे इतना बड़ा किया। आज दूसरेकी ओरसे दयाकी अर्जी पेश करने उनके पास जाऊँगा ? ना, यह नहीं करूँगा। जो करना उचित है, सो वह आप ही करेंगी--किसीको तुम्हारी सिफारिश नहीं करनी होगी।

दमभर चुप रहकर शारदाने पूछा--आपको तो कभी मैंने इस घरमें नहीं देखा ?

राखालने पूछा--तुम कितने दिनसे इस घरमें हो ?

" लगभग दो सालसे।"

राखालने कहा--इस बीच मुझे आनेका सुयोग नहीं मिला।

शारदा फिर कुछ देर स्थिर होकर बैठी रही। फिर बोली--कलकत्तेमें इतने आदमी नौकरी करते हैं; मुझे क्या कहीं दासीका काम नहीं मिल सकता ?

राखालने कहा--मिल सकता है। लेकिन तुम्हारी अवस्था अभी कम है--तुम्हारे ऊपर उपद्रव हो सकता है। अच्छा, तुम्हारे घरका किराया कितना है ?

शारदाने कहा--पहले छ. रुपये थे; लेकिन अब सिर्फ तीन रुपये देने पड़ते हैं।

राखालने पूछा--सहसा कम क्यों हो गया ? मकानवालोंका तो यह स्वभाव नहीं है ?

शारदाने कहा--मुझे नहीं मालूम। जान पड़ता है, उन्होंने कभी मासे अपने दुःख-कष्टकी बात कही होगी।

राखाल जैसे उछल पड़ा। बोला--तब देखो। मैं कहता हूँ, तुम्हारे लिए कुछ चिन्ताकी बात नहीं है, तुम चलो।--अच्छा, तुम्हारे खाने-पहननेमें महीनेमें क्या खर्च लगता है ?

शारदाने बिना सोचे ही कह दिया--शायद और भी तीन-चार रुपए लगेंगे।

राखाल हँसा। बोला--जान पड़ता है, तुमने एक ही बेला खानेकी बात

सोच रखी है; लेकिन एक वक्त भी इतनेमे पूरा नहीं पड़ेगा ।—अच्छा, तुम क्या बंगला लिखना-पढ़ना नही जानतीं ?

शारदाने कहा—जानती हूं। मेरे हाथकी लिखावट भी खूब साफ और स्पष्ट है।

राखाल प्रसन्न हो उठा। बोला—तब तो कोई चिन्ता ही नहीं है। तुमको मैं लिखा हुआ ला दूंगा। तुम अगर उसकी नकल कर दोगी तो मैं तुमको दस पंद्रह बीस रुपये मजेमें दिला दे सकूंगा। लेकिन खूब यत्न करके अच्छा लिखना होगा—खूब स्पष्ट, गलती न हो। क्यों, कर सकोगी ?

शारदाने इसके जवाबमें सिर हिलाया, किंतु आनन्दसे उसका सारा चेहरा चमक उठा। देखकर और एक बार राखाल चौंक उठा। अँधेरे कमरेके भीतर अकस्मात् बिजलीकी रोशनीमें उसने जैसे इस लड़कीके अद्भुत रूपकी एक अत्यन्त अद्भुत झाँकी देखी।

राखालने कहा—जाऊं अब गाड़ी बुला लाऊँ न ?

शारदाने कहा—हां, जाइए। अब मुझे कोई चिंता नहीं है। जान पड़ता है, इसीलिए मैं इस दुनियासे नहीं जा सकी, भगवानने मुझे लौटा दिया।

राखाल गाड़ी बुलाने गया। रास्तेमें सोचता हुआ गया—शारदाने मुझपर विश्वास किया है। एक तरफ इतने रुपए हैं, और दूसरी तरफ ? ऐसा कुछ भी उसे न याद आया जिसे वह तुलनामें रखता।

डेरेपर पहुँचकर राखालने नई-माकी खोजमें ऊपर जाकर सुना कि वह घरमें नहीं हैं। कब और कहां गई हैं, यह दासी नहीं बता सकी। सिर्फ इतना ही कह सकी कि घरकी मोटर गैरेजमें ही खड़ी है। अतएव उन्होंने राहमें कोई टैक्सी या किराएकी गाड़ी ले ली है, या पैदल ही गई हैं।

राखालने उद्विग्न होकर पूछा—साथ कौन गया है ?

दासीने कहा—कोई नहीं। दरवानजीको मैंने बाहर बैठे देखा है।

"और रमणी बाबू ?"

दासीने कहा—हमारे बाबू ? वह तो रोज नहीं आते। आते भी हैं तो नव-दस बजे।

राखालने पूछा—रोज नहीं आते, इसके माने ? नहीं आते तो रहते कहाँ हैं ?

दासी जरा ओंठसे होंठ दबाकर हँसी। बोली—क्यों, उनके क्या घरबार नहीं है ?

राखालने फिर दूसरा प्रश्न नहीं किया। मन ही मन समझ लिया कि असल मामला इन लोगोंसे छिपा नहीं है। नीचे आकर देखा, आसपासकी औरतें शारदाके चारों ओर भारी भीड़ लगाये हुए हैं। और बच्चोंके झुंड, जो तब तक सोये नहीं थे, उनके आनन्द-कोलाहलसे वहाँ एक बाजार-सा लगा हुआ है। राखालको देखकर सभी औरतें खिसक गईं। जिस अधेड़ औरतके जिम्मे शारदाके घरकी चाबी थी, वह आकर ताला खोल गई। राखालने पूछा—तुम्हारे स्वामीकी कोई खबर नहीं मिली क्या?

शारदाने कहा—नहीं।

"आश्चर्यकी बात है!"

"नहीं। आश्चर्य इसमें ऐसा क्या है?"

"कहती क्या हो शारदा? इससे बढ़कर भी क्या कोई आश्चर्य हो सकता है?"

शारदाने इसका कुछ जवाब नहीं दिया। बोली—मैं लालटेन जलाऊँ, आप मेरे कोठरीमें आकर जरा बैठिए। तबतक मैं माको प्रणाम कर आऊं जाकर।

राखालने कहा—मा घरमें नहीं हैं।

शारदाने कहा—नहीं हैं? शायद कहीं गई हैं। कालीघाट गई होंगी, या दक्षिणेश्वर। ऐसे ही अक्सर जाया करती हैं। लेकिन अभी लौटेंगी। मैं लालटेन जला दूँ—हाथ-मुंह धोनेको पानी ला दूं। जरा बैठिए, मेरे घरमें आपके चरणोंकी धूल पड़े।

राखालने हँसकर कहा—चरणोंकी धूल पड़नेको बाकी नहीं है शारदा। वह पहले ही पड़ गई है।

शारदाने कहा—यह जानती हूं। लेकिन वह तब पड़ी थी जब मैं अज्ञान (बेहोश) थी—आज मेरी जानमें पड़े, मैं आँखसे देखूं।

राखालको कुछ कहनेके लिए न सूझा। बात कुछ ऐसी नहीं कि जो अचिन्तनीय हो। अचभेसे अवाक् होनेकी भी बात नहीं। यह गाँवकी लड़की चाहे जितनी अल्पशिक्षित क्यों न हो, जिसने उसे मौतके मुँहसे बचाया है और जीनेका रास्ता दिखा दिया है उसके प्रति उसके कृतज्ञ मनके भीतर ऐसी एक करुण प्रार्थनाका उठना अत्यन्त स्वाभाविक है। किन्तु इस बातके लिए तो नहीं, कहनेकी सुन्दर विशेषता या ढंगसे राखालको अत्यन्त विस्मय हुआ। साथ ही, पल-भरमें, बहुत-सी परिचित रमणियोंके चेहरे और बहुतसे परिचित कण्ठस्वर उसे

याद आ गये। जरा देर बाद कहा—अच्छा, लाल्टेन जलाओ। किन्तु आज मुझे काम है—कल या परसों मैं फिर आऊँगा।

लाल्टेन जलाई जा चुकने पर क्षणभरके लिए वह भीतर आकर तख्तके ऊपर बैठा, पाकेटसे कुछ रुपए निकालकर वहीं रख दिये। फिर कहा—यह तुम्हारे पारिश्रमिकका कुछ पेशगी है शारदा।

शारदाने कहा—किन्तु मुझसे जब आपका काम चल जाय तभी तो। पहले शायद काम कुछ खराब होगा, लेकिन मैं निश्चय ही सीख लूँगी। देखिएगा मेरे हाथका लिखा? ले आऊँ कलम-दावात? यह कहकर ही वह उठने लगी, किन्तु राखालने व्यस्त होकर रोक दिया। बोला—ना ना, अभी रहने दो। मैं जानता हूँ, तुम्हारे हाथकी लिखावट अच्छी है, मेरा काम खूब अच्छी तरह चल जायगा।

शारदा केवल तनिक-सा मुसकरा दी। पूछा—आपके घरमें कौन कौन है देवता?

राखालने जवाब दिया—मेरा घर यहाँ नहीं है। यहाँ तो मेरा डेरा है और अकेला रहता हूँ।

"उन लोगोंको यहाँ क्यों नहीं लाते?"

राखाल मुशकिलमें पड़ गया। उससे यह प्रश्न बहुतोंने किया है, जवाब देनेमें हमेशा उसे सकोच और लज्जा हुई है। शारदासे भी उसने कह दिया—शहरमें लाकर रखना क्या सहज है?

सहज नहीं है, यह बात शारदा खुद ही जानती है। शायद उसे भी कोई देहातकी बात याद आ गई। जरा चुप रहकर उसने पूछा—तो फिर यहाँ कौन आपका काम-काज कर देता है।

राखालने कहा—नौकरानी है।

"भोजन कौन बनाता है? महाराज?

राखालने हँसकर कहा—तब तो हो चुका। एक साधारण प्राणीका खाना बनानेके लिए एक समूचा महराज? मैं आप ही बना लेता हूँ। कुकरका नाम कभी तुमने सुना है? उसमें आप ही भोजन पक जाता है, केवल रसोईका सामान सजोकर रख देनेकी जरूरत होती है।

शारदाने कहा—मैं जानती हूँ। खाना तैयार होनेपर खा-पी चुकनेके बाद वह बर्तन वगैरह माज-धोकर रख जाती है।

"हाँ, ठीक यही बात है।"

"और क्या क्या काम वह करती है?"

राखालने कहा—जो जरूरत होती है, सब कर देती है। मैं उसको नानी कहता हूँ। मुझे किसी कामके लिए चिन्ता नहीं करनी पड़ती। अच्छा, बताओ, आज तुम्हारे खाने-पीनेका क्या होगा? घरमें सामान तो कुछ है नहीं, दूकानसे लाकर दे जाऊं?

शारदाने कहा—ना। आज मेरा सब परोसियोंके यहाँ न्योता है। लेकिन आपको तो जाकर रसोई बनवाना होगा?

राखालने कहा—ना। मुझे कुछ न करना होगा। जो कुछ करना है, सब उसने कर रखा होगा।

"अच्छा मान लो, वह बीमार पड़ गई हो तो?"

राखालने कहा—नहीं, बीमार नहीं पड़ सकती। उसके बूढे हाड़ खूब मजबूत हैं। तुम लोगोंकी तरह जरामें खटिया नहीं पकड़ लेती।

शारदाने कहा—लेकिन दैवसयोगकी बात तो कोई कह नहीं सकता—बीमार पड़ भी तो सकती है—तब?

राखालने हँसकर कहा—तो भी चिन्ता नहीं है। मेरे डेरेके पास ही हलवाईकी दूकान है। वह मुझे प्यार करता है, कष्ट नहीं होने देता।

शारदाने कहा—आपको सभी प्यार करते हैं। फिर पूछा—

"आपको चायका बहुत शौक है—"

राखाल—यह तुमसे किसने कहा?

शारदाने कहा—आप खुद ही उस दिन अस्पतालमें कह रहे थे, आपको याद नहीं है। बहुत देरसे आपने कुछ खाया-पिया नहीं। चाय बना लाऊँ? जरा देर बैठिएगा!

राखालने कहा—किंतु चायकी व्यवस्था तो तुम्हारे घरमें नहीं है। कहाँ पाओगी?

शारदा—वह मैं खूब कर लूँगी। कहकर तेजीके साथ उठने लगी। राखालने उसे रोककर कहा—यह समय मेरे चाय पीनेका नहीं है शारदा, मुझे सहन नहीं होती।

याद आ गये। जरा देर बाद कहा—अच्छा, लालटेन जलाओ। किन्तु आज मुझे काम है—कल या परसों में फिर आऊँगा।

लालटेन जलाई जा चुकने पर क्षणभरके लिए वह भीतर आकर तख्तके ऊपर बैठा, पाकेटसे कुछ रुपए निकालकर वहाँ रख दिये। फिर कहा—यह तुम्हारे पारिश्रमिकका कुछ पेशगी है शारदा।

शारदाने कहा—किन्तु मुझसे जब आपका काम चल जाय तभी तो। पहले शायद काम कुछ खराब होगा, लेकिन मैं निश्चय ही सीख लूँगी। देखिएगा मेरे हाथका लिखा ? ले आऊँ कलम-दावात ? यह कहकर ही वह उठने लगी, किन्तु राखालने व्यस्त होकर रोक दिया। बोला—ना ना, अभी रहने दो। मैं जानता हूँ, तुम्हारे हाथकी लिखावट अच्छी है, मेरा काम खूब अच्छी तरह चल जायगा।

शारदा केवल तनिक-सा मुसकरा दी। पूछा—आपके घरमें कौन कौन है देवता ?

राखालने जवाब दिया—मेरा घर यहाँ नहीं है। यहाँ तो मेरा डेरा है और अकेला रहता हूं।

"उन लोगोंको यहाँ क्यों नहीं लाते ?"

राखाल मुशकिलमें पड़ गया। उससे यह प्रश्न बहुतोंने किया है, जवाब देनेमें हमेशा उसे सकोच और लज्जा हुई है। शारदासे भी उसने कह दिया—शहरमें लाकर रखना क्या सहज है ?

सहज नहीं है, यह बात शारदा खुद ही जानती है। शायद उसे भी कोई देहातकी बात याद आ गई। जरा चुप रहकर उसने पूछा—तो फिर यहाँ कौन आपका काम-काज कर देता है।

राखालने कहा—नौकरानी है।

"भोजन कौन बनाता है ? महाराज ?

राखालने हँसकर कहा—सब तो हो चुका। एक साधारण प्राणीका खाना बनानेके लिए एक समूचा महराज ? मै आप ही बना लेता हू। कुकरका नाम कभी तुमने सुना है ? उसमें आप ही भोजन पक जाता है, केवल रसोईका सामान सजोकर रख देनेकी जरूरत होती है।

शारदाने कहा—म जानती हूँ। खाना तैयार होनेपर खा-पी चुकनेके बाद वह बर्तन वगैरह माज धोकर रख जाती है।

"हाँ, ठीक यही बात है।"

"और क्या क्या काम वह करती है?"

राखालने कहा—जो जरूरत होती है, सब कर देती है। मैं उसको नानी कहता हूँ। मुझे किसी कामके लिए चिन्ता नहीं करनी पड़ती। अच्छा, बताओ, आज तुम्हारे खाने-पीनेका क्या होगा? घरमें सामान तो कुछ है नहीं, दूकानसे लाकर दे जाऊँ?

शारदाने कहा—ना। आज मेरा सब परोसियोंके यहाँ न्योता है। लेकिन आपको तो जाकर रसोई बनवाना होगा?

राखालने कहा—ना। मुझे कुछ न करना होगा। जो कुछ करना है, सब उसने कर रखा होगा।

"अच्छा मान लो, वह बीमार पड़ गई हो तो?"

राखालने कहा—नहीं, बीमार नहीं पड़ सकती। उसके बूढ़े हाड़ खूब मजबूत हैं। तुम लोगोंकी तरह जरामें खटिया नहीं पकड़ लेती।

शारदाने कहा—लेकिन दैवसयोगकी बात तो कोई कह नहीं सकता—बीमार पड़ भी तो सकती है—तब?

राखालने हँसकर कहा—तो भी चिन्ता नहीं है। मेरे डेरेके पास ही हलवाईकी दूकान है। वह मुझे प्यार करता है, कष्ट नहीं होने देता।

शारदाने कहा—आपको सभी प्यार करते हैं। फिर पूछा—

"आपको चायका बहुत शौक है—"

राखाल—यह तुमसे किसने कहा?

शारदाने कहा—आप खुद ही उस दिन अस्पतालमें कह रहे थे, आपको याद नहीं है। बहुत देरसे आपने कुछ खाया-पिया नहीं। चाय बना लाऊँ? जरा देर बैठिएगा!

राखालने कहा—किंतु चायकी व्यवस्था तो तुम्हारे घरमें नहीं है। कहाँ पाओगी?

शारदा—वह मैं खूब कर लूँगी। कहकर तेजीके साथ उठने लगी। राखालने उसे रोककर कहा—यह समय मेरे चाय पीनेका नहीं है शारदा, मुझे सहन नहीं होती।

शारदाने कहा—तो कुछ खानेको ला दूँ—लाऊँ? बहुत देरसे कुछ खाया नहीं, निश्चय ही आपको भूख लगी है।

राखालने कहा—लेकिन ला कौन देगा? तुम्हारे तो कोई आदमी नहीं है।

"है क्यों नहीं। हारू मेरी बात खूब सुनता है। उससे कहते ही वह दौड़ा जायगा।" यह कहकर वह फिर व्यस्त होकर उठ रही थी, किन्तु अबकी भी राखालने मना कर दिया। शारदाने हठ अवश्य नहीं किया, लेकिन उदास हो गई। उसके विषाद-मलिन मुखको देखकर राखालको फिर उन्हीं सब बहुपरिचित स्त्रियोंके चेहरे याद आ गये। इन औरतोंके बीच उसका बहुत आना-जाना था, उसका बहुत जाना-सुना था, बहुत सभ्यता और भद्रताका देना-पावना था, किन्तु ठीक इस चीजको वह जैसे बहुत दिन हुए भूल गया है। उसे अपनी माताकी याद बहुत धुंधली है। वह जब बहुत ही छोटा था, तभी उसकी माताका स्वर्गवास हो गया था। एक खँडहर जैसे टूटे-फूटे घरके बरामदेमें बेड़ेसे घिरा हुआ छोटा-सा रसोईघर है, उसमें चौड़ी लाल किनारीकी धोती पहने कोई जैसे रसोई बना रही है—शायद उनकी सब कुछ राखालकी कल्पना ही है—किन्तु वह उसकी मा है—उन्हीं माके बहुत ही अस्पष्ट मुखका चित्र आज एकाएक जैसे उसे आँखोंके आगे दिखाई पड़ने लगा। मनके भीतर न जाने कैसा होने लगा। वह चटपट उठ खड़ा हुआ। बोला—कुछ खयाल न करना शारदा, आज मैं जाता हूँ। फिर जिस दिन समय मिलेगा, मैं आप मागकर तुम्हारी चाय पियूँगा, तुम्हारा दिया जलपान करूँगा।

शारदाने गलेमें दुपट्टा डालकर प्रणाम किया फिर कहा—मुझे लिखनेका काम कब ला दीजिएगा?

"इसी बीच एक दिन दे जाऊँगा।"

"अच्छा।"

तो भी वह कुछ और कहनेके लिए इधर-उधर कर रही है, ऐसा अनुमान करके राखालने पूछा—तुम और कुछ कहना चाहती हो?

शारदाने क्षणभर मौन रहकर धीरे-से कहा—पहले पहल शायद मुझसे लिखनेमें बहुत-सी गलतियाँ होंगी, लेकिन आप नाराज न हों। नाराज होकर मुझे छोड़ दीजिएगा तो मेरे खड़े होनेके लिए और कोई जगह नहीं है।

उसके डरे हुए स्वरकी इस करुण प्रार्थनासे विगलित होकर राखालने कहा—मैं नाराज न होऊँगा। लेकिन तुम सीख लेनेकी चेष्टा करो।

इसके उत्तरमें शारदाने सिर हिलाकर सहमति प्रकट की। इसके बाद चुपचाप खड़ी रही।

लौटते समय राखाल पैदल ही चला। ट्रामगाड़ीमें बहुत लोगोंके बीच बैठनेको आज उसका जी किसी तरह न चाहा।

वह गरीब आदमी है, उल्लेख करने योग्य विद्याकी पूँजी भी नहीं है, नाम लेने लायक आत्मीय-स्वजन भी कोई नहीं है, तो भी वह जो इस शहरमें बहुत घरोंमें, बहुत-से प्रतिष्ठित परिवारोंमें एक 'अपना आदमी' हो गया था, सो केवल अपने गुणसे। उनमें स्नेहका, सहृदयताका अभाव न था, अनुकम्पा भी बहुत थी, किन्तु भीतर छिपी हुई एक अनिर्दिष्ट उपेक्षाकी ऐसी बाधा थी, जिसके कारण इस शारदाकी अपेक्षा कोई किसी दिन उसे अपने पास नहीं खींच सका। कारण, वह था केवल राखाल—इससे अधिक नहीं। वह लड़कों बच्चोंको पढाता है, मेस-एसमें रहता है। इस बातको चाहे कहीं कोई न भी जानता हो, किन्तु उसके डेरेके पतेपर बरातमें शामिल होनेके निमंत्रणपत्र डाकसे अनेक आते हैं। प्रीतिभोजनके निमंत्रणमें भी उसका नाम छूटने नहीं पाता। और न जाने पर उस दिन न हो, दो दिन बाद भी यह बात उन लोगोंको याद आती है। काम-काजके घरमें उसकी अनुपस्थिति वास्तवमें बहुत खलती है। जीवनमें उसने अनेक ब्याहोंमें बिचवानीका काम किया है, अनेक लड़के और लड़कियाँ ढूँढ दी हैं, छाँट दी हैं। इसमें उसने जो परिश्रम किया उसकी हद नहीं। हर्षसे भरे हुए माता-पिताओंने साधुवादसे—वाहवाहीसे उसके कान भरकर उससे कहा है कि राखाल बड़ा अच्छा आदमी है, राखाल बड़ा परोपकारी है। कृतज्ञताका पारितोषिक इसी तरह हमेशा यहींपर समाप्त हो गया है। इसके लिए उसका कोई विशेष अभियोग हो, यह बात भी न थी। केवल, कभी, शायद नौकरीकी निष्फल उम्मेदवारीके दिन बीच बीचमें याद आ जाते थे। लेकिन वह ऐसा था ही क्या!

भीड़के बीच चलते-चलते आज फिर बार-बार वही सब बहुपरिचित स्त्रियाँ याद आने लगीं। उनका पहनावा-पोशाक, हाव-भाव, आलाप-आलोचना, पढ़ना-लिखना, हँसना-रोना—इसी तरह न जाने क्या-क्या। प्रकट-अप्रकट कितनी ही चंचल प्रणयकी कहानियाँ, मिलन-विछोहके कितने ही आँसुओंसे भीने विवरण।

किन्तु राखाल? बेचारा बड़ा भला आदमी है, बड़ा परोपकारी है। लड़के-बच्चे पढ़ाता है—मेस-एसमें रहता है।

और आज शारदाने क्या कहा? कहा—देवता, मुझसे बहुत भूलें होंगी, लेकिन तुम छोड़ दोगे तो फिर मेरे लिए कहीं खड़े होनेको जगह नहीं है।

शायद सचमुच नहीं है। अथवा—? एकाएक उसे बड़ी हँसी आई। अपने मनमें खिलखिलाकर हँस पड़ा—राखाल बड़ा अच्छा आदमी है—राखाल बड़ा परोपकारी है।

पाससे जानेवाले एक पथिकने अवाक् होकर उसके मुँहकी ओर ताका और फिर वह भी हँस पड़ा। राखाल लज्जित होकर और एक गलीमें घुसकर तेजीके साथ आगे बढ गया।

५

डेरेपर पहुँचने पर राखालको दो पत्र मिले। दोनों ही पत्रोंका सम्बन्ध ब्याहसे था। एक पत्रमें ब्रजविहारी बाबूने लिखा है कि रेणुका ब्याह इस समय स्थगित रहा—यह खबर नई-बहूको दे दी जाय। और-और साधारण बातोंके बाद चिट्ठीके अन्तमें लिखा है कि अनेक झंझटोंमें वह इस समय व्यस्त हैं, आनेवाले शनिवारको तीसरे पहर वह आप राखालके डेरे पर आकर सारा विवरण अपने मुँहसे सुनावेंगे। दूसरा पत्र मालिकके पाससे आया है। मालिक, अर्थात् जिनके लड़की-लड़कोंको वह पढ़ाता है। उनके भतीजेका ब्याह अचानक दिल्लीमें पक्का हो गया है, लेकिन इतनी दूर उनका जा पाना सम्भव नहीं, और वैसा विश्वास करने लायक और कोई आदमी नहीं है, अतएव उसीको वरके बापकी जगह समधी बनकर जाना होगा। इसी रविवारको यात्राका दिन है, इसलिए राखालको फौरन आकर मिलना चाहिए। इन कई दिनोंमें नागा होनेसे लड़के बच्चोंके पढ़नेमें जो हानि होगी, उसका उल्लेख जो उन्होंने नहीं किया, इसीको राखालने गनीमत समझा।

खैर, वह चाहे जो हो, पत्र दोनों ही अच्छे हैं। रेणुके ब्याहके मामलेमें उसे बड़ी चिन्ता थी। 'अब स्थगित रहने'का अर्थ अच्छी तरह स्पष्ट न रहने पर भी, पागल वरके साथ जो ब्याह नहीं हुआ इसीसे वह पुलकित हो गया। दूसरी बात है दिल्ली जानेकी। यह भी आनदकी ही बात है। वहां प्राचीन युगके बहुत-से स्मृति-चिह्न मौजूद हैं। इतने दिन उन सबका हाल उसने केवल पुस्तकोंमें ही पढ़ा और लोगोंके मुहसे सुना है। अबकी इस उपलक्षमें उन सबको अपनी आँखोंसे देख लेगा।

दूसरे दिन सवेरे ही वह चिट्ठी लेकर राखाल नई-मासे मिलने गया। उन्होंने हँसते हुए चेहरेसे बताया कि यह खबर वह पहले ही सुन चुकी हैं; किन्तु विस्तृत विवरणकी अपेक्षामें वह तभीसे अधीर हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस ब्याहको रोकनेमें एक प्रबल बाधा थी, तथापि शान्त, दुर्बल प्रकृतिके आदमी (व्रज बाबू) अकेले किस तरह इतनी बड़ी बाधाको हटाकर कृतकार्य हो सके, यह सचमुच एक विस्मयकी बात है।

राखालने कहा—रेणुने निश्चय ही अपने बापका साथ दिया होगा नई-मा, नहीं तो यह ब्याह किसी तरह बंद नहीं किया जा सकता।

नई-माने धीरेसे कहा—उसे तो मैं जानती नहीं भैया कि उसका कैसा स्वभाव है। तुम कहते हो, वह हो भी सकता है।

राखालने जोर देकर कहा—लेकिन मैं तो जानता हूँ। तुम देख लेना मा, मेरा अनुमान ही ठीक है। खुद उसके सिवा हेमन्त बाबूको कोई नहीं रोक सकता था।

नई-मासे विदा होकर राखाल नीचे एक बार शारदाके घरकी ओर घूम गया। देखा, इसी बीचमें वह लड़कोंसे कागज-कलम माँगकर एकाग्र मनसे लिखनेमें हाथ पक्का करने बैठ गई है। राखालको देखते ही व्यस्त होकर लिखनेका सब सामान छिपानेकी चेष्टा उसने नहीं की। बल्कि यथोचित मर्यादाके साथ उसे तख्तके ऊपर बिठाकर उसने कहा—देखो तो देवता, इससे क्या आपका काम चल जायगा?

राखालने नहीं सोचा था कि शारदाके अक्षर इतने अच्छे और स्पष्ट हो सकते हैं। खुश होकर बारबार प्रशंसा करके उसने कहा—यह तो मेरे अपने लेखसे भी अच्छा है शारदा। हम लोगोंका खूब काम चल जायगा। तुम यत्न करके लिखना-पढ़ना सीखो शारदा, तुम्हारे खाने-पहननेकी चिन्ता नहीं रहेगी। शायद तुम ही कितने ही लोगोंको खिलाने-पहनानेका भार ले सकोगी।

सुनकर अकृत्रिम आनन्दसे शारदाका चेहरा चमक उठा। राखाल दो-एक मिनट चुपचाप उसकी ओर देखता रहा, फिर पाकेटसे एक दस रुपएका नोट निकालकर बोला—यह रुपया तुम अपने पास रखो शारदा, यह तुम्हारा ही है। मैं एक मित्रके ब्याहमें दिल्ली जा रहा हूँ, लौटनेमें शायद दस बारह दिनकी देर

होगी। आकर तुम्हें लिखनेको ला दूगा—है न ठीक? कुछ चिन्ता न करना—क्यों?

शारदाने कहा—इस समय मुझे रुपयोंकी कोई जरूरत नहीं है देवता। जो आप दे गये थे, वही अब तक खर्च नहीं हुए।

राखालने कहा—कोई हर्ज नहीं—ये रुपए भी आप ही अदा हो जायँगे। अगर एकाएक कोई जरूरत पड़ गई तो किससे माँगोगी बताओ? किन्तु मेरे लिए कुछ चिन्ता न करना। जितना जल्दी हो सकेगा, मैं चला आऊँगा। आते ही तुम्हे लिखनेको दे जाऊगा।

शारदासे विदा होकर राखाल अपने मालिकके घर पहुँचा। वहाँ घरके मालिक और मालिकिनमें बहुत वादानुवादके बाद यह तय हुआ कि पूरे दल-बलके साथ बरातको लेकर उसे रविवारको रातकी गाड़ीसे ही यात्रा करनी होगी। मालिकिनने कह दिया—राखाल, तुम्हारा कोई बधु-बांधव या इष्ट-मित्र अगर जाना चाहे तो खुशीसे ले जाना, सब खर्च उनका (कन्या पक्षका) है। याद रखना, इस तरफके तुम्हीं कर्ता-धर्ता हो—रुपया-पैसा, गहना-गाँठा, चीज-वस्तु, सबकी जिम्मेदारी तुम्हारी है।

राखालको सबके पहले तारककी याद आई। वह होशियार आदमी है। उसे साथ लेना होगा, बिना खर्चके, यह सुयोग नष्ट न किया जायगा। केवल एक आशंका थी, इस आदमीकी किसी एक तरफ झुक पड़नेवाली नैतिक बुद्धिकी। वहाँ किसी मामलेमें उचित-अनुचितका प्रश्न उठ पड़नेपर उसको राजी करना कठिन होगा। किन्तु इस बातका खयाल ही न आया कि तारक इसी बीचमें मास्टर होकर बर्दवान चला जा सकता है। कारण, उसने सोचा कि तारक उसके लौट आनेकी अपेक्षा भले ही न कर सके, एक चिट्ठी भी उसके नाम लिखकर न रख जायगा, ऐसा तो हो ही नहीं सकता। रविवारको अभी तीन दिन बाकी हैं, इस बीच तारक आकर भेंट करेगा ही। न हो, कल एक बार समय निकालकर वह खुद ही तारकके मेसमें जाकर यह खबर दे आयेगा। डेरेमें आकर राखाल नाना कामोंमें लग गया। वह शौकीन आदमी है। इन कई दिनोंकी अवहेलासे—ध्यान न देनेसे—घरमें बहुत-सी विशृंखलता आ गई है। जानेके पहले यह सब ठीक कर डालना चाहिए। अगरेजी दूकानसे एक अच्छा-सा विलायती ट्रंक खरीदना है, जिससे विदेशमें ताला खोलकर कोई कुछ चुरा न सके। समधीकी मर्यादाके अनुसार

उसके पहनने लायक कुर्ता-धोती वगैरह क्या-क्या आलमारीमें मौजूद है, यह भी देखनेकी जरूरत है। अगर कोई कपड़ा न हो तो वह भी बनवा लेनेकी अत्यन्त आवश्यकता है। फिर केवल तारक ही तो नहीं है, योगेश बाबूसे भी एक बार कहना होगा। उन्हें पछॉह जानेका शौक बहुत दिनोंसे है, केवल पास पैसा न होनेसे ही वह उसे पूरा नहीं कर सके। आफिसके बड़े बाबूसे खुशामद दरामद करके अगर दस-बारह दिनकी छुट्टी मंजूर करा दी जाय तो योगेश बाबू जन्मभर कृतज्ञ रहेंगे। मालिकके घरमें भी कमसे कम एक बार तो जाना चाहिए, नहीं तो छोटी-मोटी भूल-चूक कैसे मालूम होगी? एक बार सब बातोंकी आलोचना दरकार है, क्योंकि विदेशकी सारी जिम्मेदारी अकेले उसीपर है। इस संक्षिप्त समयमें इतना सब काम वह कैसे पूरा कर सकेगा, यह सोचकर भी ठीक न कर सका। शनिवारको तीसरे पहरका समय तो केवल नई-मा और व्रज बाबूके लिए ही रखना होगा—उस दिन तो शायद कुछ भी न होगा। इसी बीचमें याद करके पोस्ट-आफिसके सेविंग बैंकसे कुछ रुपए भी निकालने होंगे, क्योंकि अपनी पूँजी न लेकर विदेश जाना ठीक नहीं, संकटमें पड़ा जा सकता है। कामकी भीड़ और तगादेसे राखालको जैसे ऑखोंके आगे अंधकार दिखाई देने लगा। किन्तु उसका एक कान हर घड़ी दरवाजेकी ओर ही लगा रहता है तारकके दरवाजेकी जंजीर खटखटाने और पुकारनेकी प्रतीक्षामें। मगर उसकी सूरत नहीं दिखाई देती। इधर बृहस्पतिवार बीत गया, शुक्रवार आ गया। दोपहरको वह पोस्ट आफिसमें रुपए निकालने गया। कुछ ज्यादह रुपये निकालने होंगे। मनमें था, कि अगर तारक कह बैठे कि उसके पास बाहर जाने लायक कपड़े नहीं है तो किसी तरह यह बढ़ती रुपया उसके हाथमें थमा दिया जा सके। इसमें मुशकिल है। तारक न उधार लेता है, न दान लेना चाहता है, न उपहार। एक आशा है, राखालके जोर-जबर्दस्ती करने पर वह हार मान लेता है। समय नष्ट नहीं किया जा सकता। पोस्ट आफिससे एक टैक्सी लेनी होगी। तारक जरा नाराज होगा जरूर—हो नाराज।

लेकिन रुपए निकालनेमें बहुत देर लगी। खीझसे मुँह बनाये राखाल बाहर निकलकर किरायेकी गाड़ी तय कर रहा था, इसी बीच मोहल्लेके डाकिएने उसके हाथमें एक चिट्ठी दी—तारकने लिखी थी। खोलकर देखा, तारकने बर्दवान जिलेके एक गॉवसे वहीं हेडमास्टरकी जगह पानेकी खबर दी है और आनेके पहले

जो भेंट करके नहीं आ सका, इसके लिए दु ख प्रकट किया है। नई-मा और व्रज बाबूको प्रणाम लिखा है। अन्तमें यह भी आशा की है कि बिना कहे चले आनेके अपराधके लिए क्षमाकी भिक्षा मांगने वह जल्दी ही कई दिनकी छुट्टी लेकर स्वय उपस्थित होगा। चिट्ठी जेबमें रखकर राखालने एक साँस छोड़ते हुए कहा—अच्छा हुआ, टैक्सीका किराया बच गया।

दूसरे दिन तीसरे पहर राखाल नये खरीदे हुए ट्रंकमें कपड़े वगैरह सँभालकर रख रहा था, क्योंकि दस-बारह दिन लगेंगे। इतनेमें नई-मा आकर उपस्थित हुई। राखालने प्रणाम करके बैठनेके लिए कुर्सी बढ़ा दी। उन्होंने बैठकर पूछा—शायद कल रातको ही तुम लोगोंको जाना होगा भैया?

राखालने कहा—हाँ मा, कल ही सबको लेकर रवाना होना होगा।

"लौटनेमें शायद आठ-दस दिन लग जायँगे?"

"हाँ मा, आठ-दस दिन लगेंगे।"

नई-माने क्षणभर मौन रहकर पूछा—के बजे हैं राजू?

राखालने दीवालकी घड़ीकी ओर देखकर कहा—पाँच बज गये। मैं डर रहा था कि शायद आज आपको ही आनेमें देर होगी, किन्तु आज काका बाबूने ही देर कर दी।

नई-माने कहा—देर हो तो कोई हर्ज नहीं, वह आवे तो सही—तभी मैं निश्चिन्त हो सकूँगी।

राखालने हँसकर कहा—जब उस पागलके साथ ब्याह बन्द हो गया है, तब चिन्ताकी तो अब कोई बात नहीं है मा। काका बाबू अगर न आ सके तो भी कोई हानि नहीं है।

नई-माने सिर हिलाकर कहा—नहीं भैया, केवल रेणुके ब्याहकी ही बात नहीं है, तुम्हारे काका बाबूके लिए भी तो चिन्ता है। मैं यही सोचती रहती हूँ कि इस अकेले निरीह, शान्त, मनुष्यने इसके लिए न जाने कितनी लाञ्छना और कितना उत्पीड़न सहन किया होगा।—कहते-कहते उनकी आँखोंमें आसू भर आये।

राखाल मन-ही मन मामा बाबू हेमन्तकुमारके चक्कीके पाट जैसे भारी चेहरेको स्मरण करके चुप हो रहा। यह ब्याह रोकनेका काम सहजमें सम्पन्न नहीं हुआ, यह निश्चय है।

नई-मा कहने लगीं—उन्होंने केवल इतना ही पत्रमें लिखा है कि ब्याह वन्द हो गया। किन्तु यह तो अव भी नहीं मालूम हुआ कि कुछ दिनोंके लिए टल गया है या हमेशाके लिए।

राखाल कह उठा—हमेशाके लिए मा, हमेशाके लिए। इन पागलोंके पल्ले आपकी रेणु कभी नहीं पड़ेगी, आप निश्चिन्त होइए।

नई-माने कहा—भगवान् करें ऐसा ही हो। किन्तु उन दुर्वल मनुष्यकी वात सोचकर मेरे मनको किसी तरह चैन नहीं पड़ रही है राजू। दिन-रात कितनी चिन्ता, कितने प्रकारका भय होता है, यह मैं किससे कहूँ ?

राखालने कहा—किन्तु वह क्या आपको वहुत ही दुर्वल प्रकृतिके आदमी जान पड़ते हैं मा ?

नई-माने जरा मलिन हँसी हँसकर कहा—दुर्वल प्रकृतिके तो वह हमेशासे हैं राजू। इसमें क्या कुछ सन्देह है ?

राखालने कहा—दुर्वल मनुष्य क्या इतना आघात चुपचाप सह सकता है मा ? काका वावूने इधर जीवनमें कितनी व्यथाएँ सही हैं, इसे आप नहीं जानतीं, किन्तु मैं जानता हूँ। यह लीजिए, वह आ रहे हैं।

खुली खिड़कीके भीतरसे उसने व्रज वावूको आते देख लिया था। उसने चटपट उठकर दर्वाजा खोल दिया। वह जव भीतर वढे तव वह एक तरफ हटकर खड़ा हो गया। नई-माने पास आकर, गलेमें आँचल डालकर प्रणाम करके पैरोंकी धूल माथेसे लगाई और फिर उठकर खड़ी हो गईं।

व्रज वावू कुर्सी खींचकर वैठनेके वाद वोले—रेणुकाका ब्याह मैंने उस घरमें नहीं किया, सुना है तुमने नई-वहू ?

“ हाँ, सुना है। जान पड़ता है, वहुत झगड़ा हुआ ? ”

“ सो तो होगा ही नई-वहू। ”

“ तुम शान्त मनुष्य हो, किसीसे विरोध नहीं रखते। मुझे वड़ी चिन्ता थी कि यह ब्याह कैसे वंद करोगे। ”

व्रज वावूने कहा—यह सच है कि मैं शान्तिको ही पसद करता हूँ, विरोध करनेको किसी तरह जी नहीं चाहता। किन्तु तुम्हारी लड़की है, अथ च वाधा देना तुम्हारे हाथमें नहीं है—तुम्ही उसमें वोल नहीं सकतीं। इसलिए सारा भार मेरे ऊपर आ पड़ा और मुझे अकेले ही वह भार उठाना पड़ा। जानती हो

नई-बहू, उस दिन क्या खयाल बारबार मेरे मनमें आया ? मेरे मनमें आया कि आज अगर तुम घरमें रहतीं तो सारा बोझ तुम्हारे ऊपर डालकर मैं किलेके मैदानकी किसी बेंचपर सोकर रात बिता देता और उन लोगोंसे मन-ही-मन कहा—आज वह अगर यहाँ होती तो तुम लोग समझते कि जुल्म करनेकी भी एक हद है—सभीके ऊपर सब कुछ नहीं चलाया जा सकता।

सविता चुपचाप बैठी रही। उस दिनका विगतवार ब्योरा पूछकर जाननेका साहस उसे नहीं हुआ। राखाल भी वैसे ही निर्वाक्, निस्तब्ध बैठा रहा। ब्रज बाबूने स्वयं अपनी ओरसे इससे अधिक खोलकर नहीं कहा।

दो-तीन मिनट सभीके चुप रहनेके बाद राखालने कहा—काका बाबू, आज आप बहुत ही थके हुएसे दिखाई देते हैं।

ब्रज बाबूने कहा—इसका कारण भी यथेष्ट है राजू। इधर छः-सात दिन कारोबारके कागजपत्र देखने और जाँचनेमें बहुत परिश्रम करना पड़ा है।

राखालने डरकर पूछा—सब कुशल तो है काका बाबू ?

ब्रज बाबूने कहा—कुशल बिलकुल ही नहीं है।

फिर सविताको लक्ष्य करके बोले—तुम्हारे वे रुपए मैंने कोई एक साल पहले कारोबारसे निकालकर बैंकमें जमा कर दिये थे। सोचा था, मेरे अपने कारोबारमें लगे रहनेकी अपेक्षा बैंकमें रहनेसे भयकी सम्भावना कम है। अब देखता हूँ, मैंने ठीक ही सोचा था। अब उन्हीं रुपयोंका भरोसा है नई-बहू,—अब उन्हें लिये बिना काम नहीं चलेगा।

सविताने अबकी सिर उठाकर उनकी ओर देखा, बोलीं, न लेनेसे क्या उनके नष्ट होनेकी सम्भावना है ?

ब्रज बाबूने कहा—है क्यों नहीं नई बहू—कुछ कहा तो नहीं जा सकता।

सविता चुप हो रही।

ब्रज बाबूने कहा—क्या कहती हो नई-बहू, तुम तो चुप हो गईं ?

सविता दो-तीन मिनट चुप रहकर बोली—मैं और क्या कहूँ मँझले बाबू। रुपए तुमने ही दिये थे, तुम्हारे काममें अगर जायँ तो जायँ। लेकिन मेरा तो और कुछ नहीं है।

सुनकर ब्रज बाबू जैसे चौंक उठे। जरा देर बाद धीरेसे बोले—ठीक कहती हो

नई-वहू, यह दु:साहस मुझसे नहीं हो सकता। तुम्हारे रुपए मैं तुमको लौटा दूँगा—कल एक वार आओगी?

"अगर आनेको कहो तो आऊँगी।"

"और तुम्हारे गहने?"

"तुम क्या नाराज होकर कह रहे हो मॅझले वावू?"

व्रज वावू एकाएक उत्तर नहीं दे सके। उनकी आँखोंकी दृष्टि वेदनासे मलिन हो उठी। इसके वाद वोले—नई-वहू, जिसकी चीज है उसे मैं लौटा देना चाहता हूँ नाराज होकर—ऐसी वात आज तुम भी सोच सकीं?

सविता सिर झुकाये चुप रही। व्रज वावूने कहा—मैं जरा भी नाराज नहीं हूँ नई-वहू, सरल मनसे ही लौटा देना चाहता हूँ। तुम्हारी चीज तुम्हारे ही पास रहे—यह वोझ लादे फिरनेकी शक्ति अव मुझमें नहीं है।

अव भी सविता वैसे ही चुप रही, कोई जवाव न दे सकी।

शाम हो रही थी। व्रज वावू उठ खड़े हुए। वोले—अच्छा तो आज चलता हूँ। कल इसी समय आना। मेरे इस अनुरोधकी उपेक्षा न करना नई-वहू।

राखालने उन्हें प्रणाम करके कहा—मैं एक मित्रका व्याह कराने कल रातकी गाड़ीसे दिल्ली जा रहा हूँ काका वावू। लौटनेमें शायद आठ-दस दिनकी देर होगी।

व्रज वावूने कहा—लौटनेमें देर होने दो, लेकिन मैं पूछता हूँ कि क्या तुम दूसरोंके ही व्याह कराते फिरोगे; आप नहीं करोगे?

राखालने हँसकर कहा—मुझे अपनी लड़की दें, ऐसे अभागे इस ससारमें कौन है काका वावू?

सुनकर व्रज वावू भी हँसे। वोले—हैं राजू। जिन्होंने मुझे अपनी वेटी दी थी, वे आज भी संसारसे लुप्त नहीं हुए। तुमको वेटी देनेका दुर्भाग्य उनके दुर्भाग्यकी अपेक्षा अधिक नहीं है। तुम्हें विश्वास न हो तो अपनी नई-माको आइने ले जाकर पूछ लो, वह मेरे कथनका समर्थन करेंगी।—अच्छा चलता हूँ नई-वहू, कल फिर भेंट होगी।

सविताने पास आकर पैरोंकी रज माथेसे लगाकर प्रणाम किया। व्रज वावू अस्पष्ट स्वरमें शायद आशीर्वाद देते-देते ही घरके वाहर हो गये।

-

दूसरे दिन ठीक उसी समय व्रज वाबू आकर उपस्थित हुए। उनके हाथमें सील-मोहर किया हुआ एक टीनका छोटा बक्स था। सविता पहले ही आ गई थी। व्रज वाबूने वह बक्स उसके सामने टेबिल पर रख दिया और कहा—यह इतने दिनसे बैंकमें ही रक्खा था। इसके भीतर तुम्हारे सभी गहने मौजूद हैं। और यह लो अपने वावन हजार रुपयोंका चेक। आज मैंने छुट्टी पाई नई-बहू, यह बोझा लादे फिरनेकी मेरी वारी समाप्त हुई।

सविताने कहा—लेकिन तुमने जो कहा था कि ये सब गहने तुम्हारी रेणु पहनेगी?

व्रज बाबूने कहा—गहने तो मेरे नहीं हैं नई-बहू, गहने तुम्हारे हैं। अगर वह दिन कभी आवे तो तुम्हीं उसे पहना देना।

राखाल वार-बार घड़ीकी ओर ताक रहा था। व्रज वाबूने इसे लक्ष्य करके कहा—जान पड़ता है, तुम्हारे जानेका समय हो गया राजू?

राखालने सलज्जभावसे स्वीकार करके कहा—उस घरसे सब लोगोंको लेकर स्टेशन जाना होगा न—

व्रज वाबूने कहा—तो मैं अब उठूँ। लेकिन लौटकर जब आना तब एक वार मुझसे मिलना राजू।

यह कहकर वह उठ खड़े हुए। एकाएक जैसे उन्हें कुछ याद आया। उन्होंने कहा—लेकिन आज तो तुम्हारी नई-माको अकेले न जाना चाहिए। कोई पहुँचा न आवेगा तो—

राखालने कहा—अकेली नहीं है काका वावू। नई-माका दरबान उनकी मोटर लिये मोड़पर खड़ा है।

व्रज वाबूने कहा—ओः—है? अच्छा, अच्छा।—अच्छा तो जाता हूँ नई-बहू?

सविताने पास आकर कलकी तरह प्रणाम किया, पैरोंकी धूल माथेसे लगाई, फिर धीरेसे कहा—अब फिर कब दर्शन मिलेंगे मँझले वावू?

व्रज वावूने कहा—जिस दिन तुम कहला भेजोगी। कोई काम है नई-बहू?

"ना, काम तो कुछ नहीं है।"

व्रज वाबूने हँसकर कहा—सिर्फ यों ही देखना चाहती हो?

इस प्रश्नका उत्तर क्या दे! सविता गर्दन झुकाये बैठी रही।

व्रज बावूने कहा—मैं कहता हूँ, इन सब बातोंकी जरूरत नहीं है नई-बहू। मेरे लिए अब तुम अपने मनमें कोई अनुशोचना न रखो। जो भाग्यमें लिखा था, हुआ—गोविन्दजीने उसका एक प्रकारसे विचार भी कर दिया है—आशीर्वाद करता हूँ, तुम लोग सुखी होओ। मुझपर अविश्वास न करो नई-बहू, मैं यह सत्य ही कह रहा हूँ।

सविता वैसे ही सिर झुकाये चुपचाप खडी रही।

राखालको खयाल आया कि अब और विलम्ब करना ठीक नहीं। बिना विलम्बके गाड़ी बुलाकर उसपर ट्रूक वगैरह लादना होगा। और यही कहते-कहते वह व्यस्त भावसे बाहर निकल गया।

सविताने सिर उठाकर देखा, उनकी दोनों आँखोंसे आँसुओंकी धारा बह रही थी। व्रज बावू उसकी ओर जरा खिसककर खड़े हुए। बोले, अपनी रेणुको क्या एक बार देखना चाहती हो नई-बहू?

"नहीं मँझले-बावू, यह प्रार्थना मैं नहीं करती।"

"तो रोती क्यों हो?"

"जो माँगूँगी वह दोगे? बोलो।"

व्रजबावू इसका उत्तर नहीं दे सके, केवल सविताके मुँहकी ओर ताकते खड़े रहे।

सविताने कहा—अभी न जाने कितने दिन जियूँगी मँझले-बावू, मैं क्या लेकर रहूँगी?

व्रज बावू इस जिज्ञासाका भी उत्तर नहीं दे सके, सोचने लगे। इसी समय बाहर राखालकी आवाज सुनाई पड़ी। सविताने चटपट आँचलसे आँखें पोंछ डालीं और दूसरे ही क्षण दर्वाजा ठेलकर राखालने भीतर प्रवेश किया। उसने कहा—नई-मा आपका ड्राइवर पूछ रहा है कि अब चलनेमें कितनी देर है? चलिए, यह भारी बक्स आपकी गाड़ीमें रख आऊँ।

नई-माने कहा—राजू मुझे किसी-न-किसी तरह जल्दीसे विदा कर देना चाहता है, तभी जैसे इसे चैन पड़ेगी। मानों इसके लिए एक बला हूँ।

राखालने हाथ जोड़कर उत्तर दिया—माके मुखसे यह शिकायत चल नहीं सकती नई-मा। लीजिए आपके राजूका दिल्ली जाना अब न होगा। बचपनकी तरह फिर एक बार मैंने माकी गोदमें आश्रय लिया। यहाँसे अब जाने न दूँगा मा, लड़केके घरमें आपको चाहे कितना ही कष्ट क्यों न हो।

सविता लज्जासे जैसे मर गई। राखालने भी जबानसे यह बात निकलनेके साथ ही अपनी गल्ती समझ ली थी। लेकिन भले मानुस व्रज बाबूने उधर लक्ष्य भी नहीं किया। बल्कि बोले—देर हो गई है नई-बहू। तुम्हारा गहनोंका बक्स राजू गाड़ीतक पहुँचा आवे। मैं तब तक उसका घर ताकता रहूँगा।

इतना कहकर उन्होंने आप ही वह बक्स उठाकर राजूके हाथमें थमा दिया।

सविताके प्रश्नका उत्तर दब गया। राखालके पीछे पीछे नई-मा चुपचाप चल पड़ी।

६

ब्याह कराकर राखाल दस बारह दिन बाद दिल्लीसे लौट आया। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि वरके बापके कर्त्तव्यको पूरा करनेमें उसने कुछ भी कसर नहीं रखी और मालिक तथा मालिकिनने उसकी कार्यकुशलतासे असीम आनन्द प्राप्त किया।

किन्तु उसका यह कई दिनका दिल्ली-प्रवास केवल इतनी-सी ही घटना नहीं है। वहाँ वह विधिपूर्वक अपना प्रभाव और प्रतिष्ठा-प्रतिपत्ति फैला आया है। इसका एक फल यह हुआ है कि विवाह योग्य आकांक्षित वरके रूपमें उसे कई लड़कियाँ दिखाई गईं—आडम्बरशून्य गृहस्थ घरोंकी लड़कियाँ, पछाँहमें रहनेसे जिनका स्वास्थ्य और अवस्था बढ़ गई है, किन्तु अभिभावकोंकी अनेक असुविधा-ओंके कारण जो अभी तक ब्याही नहीं गईं। बहुत आग्रह और अनुरोधके उत्तरमें राखाल वहाँ कह आया है कि कलकत्तेमें अपने काका बाबू और नई-माका अभिमत लेकर बादको चिट्ठी लिखेगा। उसके इस सौभाग्यका कारण उसका मित्र योगेश है। वह बरातियोंमें शामिल होकर मुफ्तमें दिल्ली, हस्तिनापुर, लाल किला, कुतुबमीनार आदि लोगोंके मुँहसे सुने हुए सभी दर्शनीय स्थानोंकी सैर कर आया है। अतएव उसने मित्रके इस उपकारका बदला चुकानेमें और कृतज्ञताका ऋण सोलहों आना अदा करनेमें कोई कसर नहीं रखी। लोगोंने उससे पूछा कि राखालका ब्याह अभी तक क्यों नहीं हुआ? योगेशने जवाब दिया—यह भी उसका एक शौक है। हम जैसे साधारण लोगोंके साथ इन बड़े लोगोंकी बातें मिलेंगी—ऐसी आशा करना ही अन्याय है। कन्यापक्षके लोगोंने संकोचके साथ पूछा कि यह कलकत्तेमें करते क्या हैं? योगेशने फौरन जवाब दिया—

विशेष कुछ नहीं। उसके बाद जरा मुसकाकर कहा—और करनेकी जरूरत ही क्या है ?

इस उक्तिके अनेक अर्थ लगाये जा सकते हैं।

कलकत्तेके खास-खास लोगोके विविध वृत्तान्त राखालको मालूम हैं। उनके घरकी औरतों तकके नाम वह जानता है। नये बैरिस्टरों और ताजे पास हुए आई. सी. एस. लोगोंका उल्लेख वह उनके साधारण पुकारनेके नामसे करता है। पाँचू बोस, डम्बल सेन, पटल बाडुज्जे—सुनकर इतनी दूरके प्रवासी साधारण नौकरीपेशा बंगाली विस्मयसे अवाक् हो गये। किन्तु अबतक ब्याहकी बात उठने पर राखालने केवल जबानी आपत्ति की हो, यह बात नहीं है; उसके मन-में भी भय है। कारण, अपनी अवस्थाके संबंधमें वह बेखबर नहीं है। वह जानता है कि इस कलकत्ता शहरमें अपने परिचित इष्ट-मित्रोंका घेरा यथेच्छ संकुचित किये बिना परिवारका प्रतिपालन करना उसके बूतेके बाहर है। जिस परिवेष्टनमें, जिस आसपासके समाजमें, अबतक वह स्वच्छन्द होकर घूमा-फिरा है, उस जगहमें छोटा होकर रहनेकी कल्पना भी वह नहीं करना चाहता। तथापि इस निःसग जीवनके अनेक अभाव उसे खटकते हैं। वसंतमें विवाहो-त्सवकी बंशी बीच-बीचमें उसके मनको चंचल कर देती है। बरातमें शामिल होनेका सादा निमत्रण पाकर उसका मन शायद एकाएक विद्रोही हो उठता है, अखबारमें कहीं किसी आत्महत्या कर लेनेवाली क्वाँरी कन्याका पीला चेहरा अनेक समय जैसे उसे दिखाई देने लगता है, शायद अकारण अभिमानसे कभी मनमें आता है कि संसारमें इतनी प्रचुरता, इतने अभाव इतने साधारण, इतने निरन्तरके भीतर केवल क्या उसीपर किसीकी नजर नहीं पड़ती ? क्या उसीको वरमाला पहनाने लिए कहीं भी कोई कुमारी ही नहीं है ?

लेकिन ये सब खयाल उसके मनमें क्षण भरके ही लिए आते हैं। मोह दूर हो जाता है, वह फिर अपनी पहलेकी स्थितिमें आ जाता है—पहलेहीकी तरह हँसता-बोलता है, आमोद-प्रमोद करता है, लड़के पढ़ाता है, साहित्यकी आलोचनामें सम्मिलित होता है। बुलाये जानेपर ब्याहकी महफिलमें रंग जमाने दौड़ा जाता है, नव-विवाहित वर-वधूको फूलोंका गुलदस्ता भेंट करके शुभ कामना जनाता है। फिर जैसे दिन बीतते थे वैसे ही बीतते रहते हैं। इतने दिनोंके इस मनोभावमें अबकी दिल्लीसे लौटनेपर थोड़ा परिवर्तन हो गया है। अबकी वहाँ

सविता लज्जासे जैसे मर गई। राखालने भी जबानसे यह बात निकलनेके साथ ही अपनी गल्ती समझ ली थी। लेकिन भले मानुस ब्रज बाबूने उधर लक्ष्य भी नहीं किया। बल्कि बोले—देर हो गई है नई-बहू। तुम्हारा गहनोंका बक्स राजू गाड़ीतक पहुँचा आवे। मैं तब तक उसका घर ताकता रहूँगा।

इतना कहकर उन्होंने आप ही वह बक्स उठाकर राजूके हाथमें थमा दिया।

सविताके प्रश्नका उत्तर दब गया। राखालके पीछे पीछे नई-मा चुपचाप चल पड़ी।

६

ब्याह कराकर राखाल दस बारह दिन बाद दिल्लीसे लौट आया। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि वरके बापके कर्त्तव्यको पूरा करनेमें उसने कुछ भी कसर नहीं रखी और मालिक तथा मालिकिनने उसकी कार्यकुशलतासे असीम आनन्द प्राप्त किया।

किन्तु उसका यह कई दिनका दिल्ली-प्रवास केवल इतनी-सी ही घटना नहीं है। वहाँ वह विधिपूर्वक अपना प्रभाव और प्रतिष्ठा-प्रतिपत्ति फैला आया है। इसका एक फल यह हुआ है कि विवाह योग्य आकांक्षित वरके रूपमें उसे कई लड़कियाँ दिखाई गईं—आडम्बरशून्य गृहस्थ घरोंकी लड़कियाँ, पछाँहमें रहनेसे जिनका स्वास्थ्य और अवस्था बढ़ गई है, किन्तु अभिभावकोंकी अनेक असुविधाओंके कारण जो अभी तक ब्याही नहीं गईं। बहुत आग्रह और अनुरोधके उत्तरमें राखाल वहाँ कह आया है कि कलकत्तेमें अपने काका बाबू और नई-माँका अभिमत लेकर बादको चिट्ठी लिखेगा। उसके इस सौभाग्यका कारण उसका मित्र योगेश है। वह बरातियोंमें शामिल होकर मुफ्तमें दिल्ली, हस्तिनापुर, लाल किला, कुतुबमीनार आदि लोगोंके मुहसे सुने हुए सभी दर्शनीय स्थानोंकी सैर कर आया है। अतएव उसने मित्रके इस उपकारका बदला चुकानेमें और कृतज्ञताका ऋण सोलहों आना अदा करनेमें कोई कसर नहीं रखी। लोगोंने उससे पूछा कि राखालका ब्याह अभी तक क्यों नहीं हुआ? योगेशने जवाब दिया—यह भी उसका एक शौक है। हम जैसे साधारण लोगोंके साथ इन बड़े लोगोंकी बातें मिटेंगी—ऐसी आशा करना ही अन्याय है। कन्यापक्षके लोगोंने सकोचके साथ पूछा कि वह कलकत्तेमें करते क्या हैं? योगेशने फौरन जवाब दिया—

विशेष कुछ नहीं। उसके बाद जरा मुसकाकर कहा—और करनेकी जरूरत ही क्या है?

इस उक्तिके अनेक अर्थ लगाये जा सकते हैं।

कलकत्तेके खास-खास लोगोंके विविध वृत्तान्त राखालको मालूम हैं। उनके घरकी औरतों तकके नाम वह जानता है। नये बेरिस्टरों और ताजे पास हुए आई. सी. एस. लोगोंका उल्लेख वह उनके साधारण पुकारनेके नामसे करता है। पाँचू बोस, डम्बल सेन, पटल बाड़ुज्जे—सुनकर इतनी दूरके प्रवासी साधारण नौकरीपेशा बंगाली विस्मयसे अवाक् हो गये। किन्तु अबतक ब्याहकी बात उठने पर राखालने केवल जबानी आपत्ति की हो, यह बात नहीं है; उसके मनमें भी भय है। कारण, अपनी अवस्थाके संबंधमें वह बेखबर नहीं है। वह जानता है कि इस कलकत्ता शहरमें अपने परिचित इष्ट-मित्रोंका घेरा यथेच्छ संकुचित किये बिना परिवारका प्रतिपालन करना उसके बूतेके बाहर है। जिस परिवेष्टनमें, जिस आसपासके समाजमें, अबतक वह स्वच्छन्द होकर घूमा-फिरा है, उस जगहमें छोटा होकर रहनेकी कल्पना भी वह नहीं करना चाहता। तथापि इस निःसंग जीवनके अनेक अभाव उसे खटकते हैं। वसंतमें विवाहोत्सवकी वंशी बीच-बीचमें उसके मनको चंचल कर देती है। बरातमें शामिल होनेका सादा निमंत्रण पाकर उसका मन शायद एकाएक विद्रोही हो उठता है, अखबारमें कहीं किसी आत्महत्या कर लेनेवाली क्वाँरी कन्याका पीला चेहरा अनेक समय जैसे उसे दिखाई देने लगता है, शायद अकारण अभिमानसे कभी मनमें आता है कि संसारमें इतनी प्रचुरता, इतने अभाव इतने साधारण, इतने निरन्तरके भीतर केवल क्या उसीपर किसीकी नजर नहीं पड़ती? क्या उसीको वरमाला पहनाने लिए कहीं भी कोई कुमारी ही नहीं है?

लेकिन ये सब खयाल उसके मनमें क्षण भरके ही लिए आते हैं। मोह दूर हो जाता है, वह फिर अपनी पहलेकी स्थितिमें आ जाता है—पहलेहीकी तरह हँसता-बोलता है, आमोद-प्रमोद करता है, लड़के पढ़ाता है, साहित्यकी आलोचनामें सम्मिलित होता है। बुलाये जानेपर ब्याहकी महफिलमें रंग जमाने दौड़ा जाता है, नव-विवाहित वर-वधूको फूलोंका गुलदस्ता भेंट करके शुभ कामना जनाता है। फिर जैसे दिन बीतते थे वैसे ही बीतते रहते हैं। इतने दिनोंके इस मनोभावमें अबकी दिल्लीसे लौटनेपर थोड़ा परिवर्तन हो गया है। अबकी वहाँ

उसने देखा है कि कलकत्ता ही सारी दुनिया नहीं है—इसके बाहर भी बंगाली रहते हैं, वे भी भद्र हैं, वे भी मनुष्य हैं। ऐसे माता-पिता भी हैं जो उसे भी अपनी कन्या देनेके लिए तैयार हैं। कलकत्तेमें, जिस समाजमें वह अबतक जिन स्त्रियोंके सम्पर्कमें आया है, उनसे प्रवासी साधारण घरोंकी स्त्रियाँ शायद अनेक बातोंमें कम हैं। स्त्री कहकर उनका परिचय देनेमें आज भी शायद उसे लज्जा मालूम होती। तथापि इस नई अभिज्ञताने उसे सान्त्वना दी है, बल दिया है, भरोसा दिया है।

संसारमें किसीका भार ग्रहण करनेकी शक्ति उसमें नहीं है। पराये मुखसे सीखे हुए इस आत्मविश्वासने उसे अब तक सभी विषयोंमें दुर्बल बना रखा है। उसने अबतक सोचा है कि स्त्री, पुत्र, कन्या—उनकी कितनी ही तरहकी जरूरतों—खाने-पहनने और मकानके भाड़ेसे लेकर रोग-शोक, विद्योपार्जन तक—माँगोंका कहीं अन्त नहीं। इन माँगोंकी वह कैसे पूर्ति करेगा? किन्तु उसके इस संशयकी जड़में पहले पहल कुल्हाड़ी चलाई शारदाने, जिस दिन उसने अकूल समुद्रके बीच उसका आश्रय लिया। प्रत्युत्तरमें उसने उस दिन उसे अभय देकर कहा कि तुम डरो नहीं शारदा, मैंने तुम्हारा भार लिया। शारदा उसपर विश्वास करके घर लौटी है—उसने जीना चाहा है! इस दूसरेके विश्वासने ही राखालको इतने दिन बाद अपने ऊपर विश्वास करना सिखाया है। फिर वही चीज उसके प्रवाससे लौटनेपर कई गुना बढ़ गई है। उसे केवल यही जान पड़ा है कि वह अक्षम नहीं है, दुर्बल नहीं है—वह भी संसारमें और अनेक लोगोंकी तरह बहुत कुछ कर सकेगा। इस नई जागी हुई चेतनासे बलिष्ठ चित्त लेकर वह सबसे पहले शारदासे मिलने गया। घरके द्वारपर ताला बन्द था। एक छोटा-सा लड़का वहाँ खेल रहा था। उसने कहा,—भाभी ऊपर मालिकिनके घर हैं। आज रातको हम सबका न्योता है।

राखालने ऊपर जाकर देखा, बड़ी धूमधाम है, लोगोंको खिलाने-पिलानेका भारी आयोजन चल रहा है। रमणी बाबू अकारण ही अत्यन्त व्यस्त हैं—कामकी अपेक्षा अकाज ही अधिक कर रहे हैं। और शारदा कमरमें धोती लपेटे चीज-वस्तु भण्डारमें जमा रही है। रमणी बाबूमें जैसे जान आ गई। बोले—यह लो, राजू आ गया! नई-बहू!

सविता अन्यत्र थी, चिल्लाना सुनकर पास आकर खड़ी हुई। रमणी बाबूने

उसने देखा है कि कलकत्ता ही सारी दुनिया नहीं है—इसके बाहर भी बंगाली रहते हैं, वे भी भद्र हैं, वे भी मनुष्य हैं। ऐसे माता-पिता भी हैं जो उसे भी अपनी कन्या देनेके लिए तैयार हैं। कलकत्तेमें, जिस समाजमें वह अबतक जिन स्त्रियोंके सस्पर्शमें आया है, उनसे प्रवासी साधारण घरोंकी स्त्रियाँ शायद अनेक बातोंमें कम हैं। स्त्री कहकर उनका परिचय देनेमें आज भी शायद उसे लज्जा मालूम होती। तथापि इस नई अभिज्ञताने उसे सान्त्वना दी है, बल दिया है, भरोसा दिया है।

ससारमें किसीका भार ग्रहण करनेकी शक्ति उसमें नहीं है। पराये मुखसे सीखे हुए इस आत्मविश्वासने उसे अब तक सभी विषयोंमें दुर्बल बना रखा है। उसने अबतक सोचा है कि स्त्री, पुत्र, कन्या—उनकी कितनी ही तरहकी जरूरतों—खाने-पहनने और मकानके भाड़ेसे लेकर रोग-शोक, विद्योपार्जन तक—माँगोंका कहीं अन्त नहीं। इन माँगोंकी वह कैसे पूर्ति करेगा? किन्तु उसके इस सशयकी जड़में पहले पहल कुल्हाड़ी चलाई शारदाने, जिस दिन उसने अकूल समुद्रके बीच उसका आश्रय लिया। प्रत्युत्तरमें उसने उस दिन उसे अभय देकर कहा कि तुम डरो नहीं शारदा, मैंने तुम्हारा भार लिया। शारदा उसपर विश्वास करके घर लौटी है—उसने जीना चाहा है! इस दूसरेके विश्वासने ही राखालको इतने दिन बाद अपने ऊपर विश्वास करना सिखाया है। फिर वही चीज उसके प्रवाससे लौटनेपर कई गुना बढ़ गई है। उसे केवल यही जान पड़ा है कि वह अक्षम नहीं है, दुर्बल नहीं है—वह भी ससारमें और अनेक लोगोंकी तरह बहुत कुछ कर सकेगा। इस नई जागी हुई चेतनासे बलिष्ठ चित्त लेकर वह सबसे पहले शारदासे मिलने गया। घरके द्वारपर ताला बन्द था। एक छोटा-सा लड़का वहाँ खेल रहा था। उसने कहा,—भाभी ऊपर मालिकिनके घर हैं। आज रातको हम सबका न्योता है।

राखालने ऊपर जाकर देखा, बड़ी धूमधाम है, लोगोंको खिलाने-पिलानेका भारी आयोजन चल रहा है। रमणी बाबू अकारण ही अत्यन्त व्यस्त हैं—काजकी अपेक्षा अकाज ही अधिक कर रहे हैं। और शारदा कमरमें धोती लपेटे चीज-वस्तु भण्डारमें जमा रही है। रमणी बाबूमें जैसे जान आ गई। बोले—यह लो, राजू आ गया! नई-बहू!

सविता अन्यत्र थी, चिल्लाना सुनकर पास आकर खड़ी हुई। रमणी बाबूने

साँस छोड़कर दम लेकर कहा—चलो जान बची—राजू आ गया।—भैया, अबसे सब भार तुमपर रहा।

सविताने कहा—यही अच्छा है। तुम अब जाकर जरा कमरेमें आराम करो, हम लोग निस्तार पावें।

शारदा अलक्ष्यमें जरा हँसी, राखालसे पूछा—कब आये?

"कल।"

"कल? तो कल ही क्यों नहीं आये?"

"बहुत काम था, वक्त नहीं मिला।"

सविताने हँसकर कहा—इसे मरनेसे बचा लिया है, इसलिए राजूके ऊपर इसका बहुत बड़ा दावा है।

शारदा सन्देशकी झबरी उठाकर चली गई। राखालने रमणी बाबूको नमस्कार किया और सवितासे प्रणाम करके पूछा—इतनी धूमधाम काहेकी है नई-मा?

सविताने मुसकाकर कहा—यों ही।

रमणी बाबू बोले—हूँ—यों ही। ऐसी औरत हो भला तुम! फिर सविताको ही दिखाकर बोले—इन्होंने लगभग आधी कीमतमें एक बड़ी जायदाद खरीदी है, यह उसीकी खुशीकी दावत है। मेरे सिंगापुरके कारोबारके पार्टनर कलकत्ते आये हैं—बी० सी० घोषाल। नाम सुना होगा। नहीं सुना? अच्छा, आज रातको उन्हें देख लेना—करोड़पती हैं। और लोग भी हैं—मेरे यहाँके बन्धु-बान्धव, वकील-अटर्नी, मय दो-तीन बैरिस्टरोंके। कुछ गाना-बजाना भी होगा। आजकल मालतीमाला खासा गाती है। सुनकर खुश हो जाओगे।

सविताके थोड़ी-सी बाधा देनेकी चेष्टा करते ही कह उठे—लो, छलना रहने दो। लेकिन तुमने तकदीर खूब पाई है। देशमें रहते समय किसी सालेको बहुत-से रुपए उधार दिये थे। वही अचानक वसूल हो गये। डूबा हुआ रुपया भैयाजी, डूबा हुआ रुपया,—ऐसा कभी नहीं होता। इसे बिलकुल ही भाग्यका जोर कहना चाहिए। सालेने डरके मारे कैसे दे डाले! किन्तु उसीसे कहाँ पूरा पड़ा? दस हजार कम पड़ गये। मचलकर मुझसे कहा, सँझले-बाबू, इतने रुपए तुम दे दो। मैंने कहा—श्रीचरणोंमें क्या नहीं दिया जा सकता, बोलो? यह देह-मन-प्राण, सभी तो तुम्हारा है। यों कहकर वह इस अत्यन्त अरुचिकर भद्दे मजाकके

आनन्दसे आप ही ही-ही-ही करके हँसीको खींच-खींचकर हँसने लगे। राखालने लज्जासे मुँह फिरा लिया।

रमणी बाबूके चले जानेपर सविताने कहा—दिन चढ़ आया। यहीं स्नान करके भोजन कर लो भैया, उस वक्त तुमको; फिर बहुत परिश्रम करना होगा। बहुत काम है।

राखालने कहा—कामसे मैं नहीं डरता मा, श्रम करनेको भी राजी हूँ किन्तु, इस वेलाको नष्ट न कर सकूँगा। मुझे एक बार उस घर जाना होगा।

"कल जानेसे नहीं बनेगा?"

"नहीं।"

"तो फिर किस वक्त आओगे, बोलो?"

"आऊँगा निश्चय ही, लेकिन यह कैसे कहूँ कि किस वक्त आऊँगा?"

"तारक शायद यहाँ नहीं है?"

"नहीं है। बर्दवान जाकर हेडमास्टरीकी नौकरी कर ली है। लेकिन यहीं रहता भी तो शायद न आता।"

सविताने लक्ष्य किया था कि राखालमें तीव्र भावान्तर हो गया है। उसे कुछ प्रसन्न करनेके लिए कहा—उनके ऊपर क्रोध न करो राजू। उन लोगोंकी बातचीत ऐसी ही होती है।

इस वकालतसे राखाल मन-ही-मन और चिढ़ गया। बोला—नहीं मा, मैं एक जानवरपर क्रोध करने जाऊँगा ही क्यों? और वह चल दिया। सीढ़ियोंसे उतरते-उतरते बोला—ना, कृतज्ञताका ऋण याद रखना कठिन है।

यद्यपि राखालने मन-ही-मन समझ लिया कि जिस आदमीने नई-माका इतने रुपयोंका कर्ज अदा कर दिया है, उसका नाम रमणी बाबू नहीं जानते, तथापि उस धर्मप्राण सदाशय मनुष्यके लिए इस अशिष्ट भाषाका प्रयोग वह क्षमा नहीं कर सका। अथ च नई-माने इसपर ध्यान ही नहीं दिया—इसकी पर्वाह ही नहीं की, जैसे बात कुछ भी नहीं है। अन्तको उसी नई-माके प्रति इस आदमीका ऐसा भोंडा मजाक। किन्तु अब उसे और क्रोध नहीं आया, बल्कि उसने जैसे अपने मनकी ज्वालाको एकाएक हल्का कर दिया। उसने मन-ही-मन कहा—यह ठीक ही हुआ। नई माको यही मिलना चाहिए। मैं व्यर्थ ही जला मरता हूँ।

बहूबाजारमें ट्रामसे उतरकर गलीके भीतर घुसकर ब्रजविहारी बाबूके घरके सामने आकर राखालको जान पड़ा, उसकी आँखें धोखा दे रही हैं—वह कहीं और आ पड़ा है। यह क्या! दरवाजेमें ताला बंद है। ऊपरकी सब खिड़कियाँ बंद हैं। एक नोटिस लटक रहा है, "मकान किरायेपर दिया जायगा।" बड़ी देरतक खड़े खड़े अपनेको प्रकृतिस्थ करके वह गलीके मोड़पर मोदीकी दूकानमें आकर उपस्थित हुआ। दूकानदार बहुत दिनोंका है, इस तरफके सभी भले घरोंमें सामान देता है। उससे जाकर पूछा—नवद्वीप काका-बाबूका घर किराएपर उठाये जानेका यह नोटिस कैसा?

मोदीने राखालको भीतर बुलाकर पूछा—आप क्या कुछ भी नहीं जानते राखाल बाबू?

"ना। मैं यहाँ नहीं था।"

नवद्वीपने कहा—कर्ज चुकानेके लिए बाबूने घर बेच दिया है।

"घर बेच डाला! लेकिन वे सब हैं कहाँ?"

"बहूजी अपनी लड़कीको लेकर अपने भाईके घर गईं और ब्रज बाबूने रेणुके साथ किराएका मकान ले लिया है।"

"वह मकान कहाँ है, जानते हो नवद्वीप?"

"जानता हूँ" कहकर उसने हाथसे एक तरफ दिखाकर कहा—उधर सीधे जाकर बाएं हाथकी गलीमें दो मकानोंके बाद १७ नंबरका घर है।

१७ नंबरके घर पहुँचकर राखालने कुंडी खटखटाई। दासी दरवाजा खोलकर राखालको देखते ही रो पड़ी। राखालने पूछा—फटिककी माँ, काका बाबू कहाँ हैं?

"ऊपर रसोई बना रहे हैं।"

"महाराज नहीं है?"

"ना।"

"और नौकर?"

"मधुआ है। वह दवा लेने गया है।"

"दवा किसके लिए?"

"बिटियाको बुखार है। डाक्टर देखता है।"

राखालने कहा—ज्वरका अपराध नहीं है। इस मकानमें कब आना हुआ?

दासीने कहा—चार दिन हुए। चार ही दिनसे बुखारमें पड़ी हैं।

राखालने देखा, भीगे सीलनसे भरे आँगन-भरमें सब चीजें अस्तव्यस्त बिखरी पड़ी हैं। सीढ़ियाँ टूटी-फूटी हैं। राखालने ऊपर चढ़कर देखा, सामनेके बरामदेके एक कोनेमें लोहेका चूल्हा जलाकर व्रज बाबू पसीनेसे नहाये हुए हैं। सागूदाना बनाकर उतार लिया है। रसोई भी लगभग बन गई है। किन्तु हाथ जल गया है, तरकारी जल गई है, भात लग गया है और उसकी गंध आ रही है।

राखालको देखकर व्रज बाबू लज्जा ढकनेके लिए कह उठे—यह देखो राजू, फटिककी माकी करतूत! चूल्हेमें इतना कोयला भर दिया कि मैं आँचका अंदाज ही न कर सका। चावलका माड़ जैसे—कुछ गंध जान पड़ती है न?

राखालने कहा—बस हो चुका। आप उठिए तो काका बाबू, बारह बज गये हैं। आप गोविन्दजीकी सेवासे निबट लीजिए, मैं तबतक नये सिरेसे भात चढ़ाये देता हूँ, उबाल आनेमें दस मिनटसे अधिक समय नहीं लगेगा। रेणु कहाँ है? कहकर उसने पासकी कोठरीमें जाकर देखा, वह नीचे बिछौनेपर पड़ी है। राजू दादाको देखकर उसकी दोनों आँखोंमें आँसू भर आये। राखालने किसी तरह अपनेको सँभालकर कहा—रोती किस लिए हो? बुखार क्या किसीको आता नहीं? वह दो दिनमें ठीक हो जायगा। और मैं तो अभी मरा नहीं रेणु, चिन्ताकी क्या बात है? उठकर बैठो। मुँह धोना धोती बदलना हो चुका?

रेणुके सिर हिलाते ही राखालने चिल्लाकर पुकारा—फटिककी मा, अपनी बिटिया रानीको सागू दे जाओ—बड़ी देर हो गई है। उसके आने पर कहा—भात लग गया है फटिककी मा। उससे काम न चलेगा। तुम, मधुआ, काका बाबू और मैं, चार जनोंके लायक चावल धो डालो। मैं नीचेसे चटपट स्नान कर आता हूँ। घरमें अनाज तो है न? है, तो अच्छी बात है। वह भी थोड़ा-सा कूट दो। थोड़ी-सी चचड़ी* पका लूँ। मैं एक तरकारीके साथ भात नहीं खा सकता। रेलिंगपर धुली धोती सूख रही थी। राखाल उसे लेकर नीचे चला और जाते-जाते कह गया—काका बाबू, देर न करिए, जल्दी उठिए।—रेणु, नहाकर लौटने पर मैं देखूँ कि तुम भोजन कर चुकी हो। मधुआके आ पड़ने पर जो हो—

एकाएक विषादपूर्ण नीरव घरके भीतर जैसे कहींसे शोरगुलकी एक आँधी-सी आ गई।

---

* तेलमें पकाया गया एक व्यंजन। यह कढ़ीकी तरहका होता है।

स्नानगृहमें घुसकर दरवाजा बन्द करके, भीगे फर्शपर पड़कर, राखाल दो-तीन मिनट तक खूब रोता रहा—बचपनमें अकस्मात् जिस दिन उसके पिता हैजेसे मर गये थे, ठीक उसी दिनकी तरह। इसके बाद उठकर बैठा। दो-तीन लोटे पानी सिरपर डालकर धोती बदलकर बाहर निकला। एकदम सहज मनुष्य। कौन कहेगा कि अभी अभी स्नानगृहमें किवाड़े बन्द करके जमीनमें लोटकर वह बच्चोंकी तरह रो रहा था।

रसोई बनानेमें राखाल कच्चा नहीं है। अपने लिए यह काम उसे नित्य करना पड़ता है। थोड़ी ही देरमें उसने यह सब कर डाला। उसके तगादेसे आज ठाकुरजीकी पूजा और भोग आदि लगानेमें भी ब्रज बाबूको आवश्यकतासे अधिक देर नहीं लगी। राखालने परोसकर सबको खिलाया-पिलाया, आप भोजन किया। फिर नीचेसे हाथ मुह धोकर धोती बदलकर जब वह ऊपर आया, उस समय तीन बज गये थे। रेणु कुछ ही दूर पर बैठी सब देख रही थी। काम समाप्त होनेपर बोली, राजू दादा, तुमने तो हम लोगोंको भी हरा दिया। तुम्हारी जो बहू होगी, वह भाग्यवती है। लेकिन तुम क्या ब्याह नहीं करोगे?

राखालने हँसकर कहा—क्या करूं बहन, इतनी बड़ी भाग्यवती देख भी तो पड़े कोई कहीं?

रेणुने कहा—ना, यह न होगा। बाबूजीसे जिद करके अबकी मैं निश्चय ही तुम्हारा ब्याह करा दूंगी।

"अच्छा अच्छा, करा देना, पहले अच्छी तो हो लो। हाँ, विनोद डाक्टरने आज क्या कहा?—बुखार क्यों नहीं छोड़ता?"

फटिककी मा खड़ी थी, बोली,—आज तो डाक्टर साहब आये नहीं, परसों आये थे। वही एक दवा चल रही है।

सुनकर राखाल स्तब्ध हो रहा। उसके शंकित मुखकी ओर देखकर रेणु लज्जित होकर बोली—रोज दवा बदलना शायद अच्छा होता है! और बेकार डाक्टरको रुपए देते रहनेसे ही शायद रोग दूर हो जाता है फटिककी मा? मैं इसी दवासे अच्छी हो जाऊँगी—तुम लोग देख लेना।

राखाल कुछ नहीं बोला। समझ लिया कि दुर्दशामें पड़कर अब वह पिताके रुपए खर्च नहीं कराना चाहती।

"तुम क्या चले जा रहे हो राजू दादा?"

"आज जाता हूँ बहन, कल सवेरे ही फिर आऊँगा।"

"आओगे तो जरूर?"

"जरूर आऊँगा। जब तक मैं न आऊँ, तब तक काका बाबूको चूल्हेके पास भी न फटकने देना रेणु।"

सुनकर रेणु जैसे बहुत ही कुठित हो उठी। बोली—कल अगर मुझे बुखार नहीं रहा तो क्या मैं रसोई न बनाऊँगी राजू दादा!

"कभी नहीं, किसी तरह नहीं।"

दासीको सावधान करते हुए कहा—मेरे आनेके पहले किसीको कुछ न करने देना फटिककी मा। यह कहकर वह चल दिया। विनोद डाक्टर मोहल्लेके ही आदमी हैं, थोड़ी ही दूरपर घर है। नीचेके खंडमें डिस्पेन्सरी है। वहीं उनसे भेंट हुई। राखालने पूछा—रेणुका बुखार कैसा है डाक्टर साहब? अभी तक उतरा क्यों नहीं?

विनोद बाबूने कहा—मैं तो आशा करता हूँ कि सहज ही है। लेकिन जब आज भी बना हुआ है, तब दो-तीन दिन और देखे बिना कुछ ठीक नहीं कहा जा सकता राखाल।

डाक्टर इस परिवारके बहुत दिनोंके चिकित्सक हैं, सभीको जानते हैं। इसके बाद उन्होंने ब्रज बाबूके आकस्मिक दुर्भाग्यके लिए दुःख प्रकट किया, विस्मय प्रकट किया। अन्तमें कहा, तुम जब आ गये राखाल बाबू, तब कोई चिन्ता नहीं है। मैं कल सवेरे ही जाऊँगा।

"निश्चय जाइएगा डाक्टर साहब। हमारे यहाँ बुलानेवाला कोई नहीं है।"

"बुलानेकी जरूरत नहीं है राखाल, मैं आप ही जाऊँगा।"

वहाँसे लौटकर राखाल अपने डेरेमें आकर लेट रहा। उसका मन एकदम टूट गया है। अनेक कामोंमें उलझे रहनेके कारण यह बात सोचकर देखनेका उसे अवकाश ही नहीं मिला कि ब्रज बाबूकी यह दुर्दशा कितनी बड़ी है और उनके सर्वनाशका परिणाम कितना गहरा है। अब सूने एकान्त घरमें उसकी दोनों आँखोंसे जलधारा बहने लगी। कहाँ इसका किनारा है और इस दुःखके दिनमें वह क्या कर सकता है, बहुत सोचनेपर भी उसे नहीं सूझ पड़ा। किस तरह इतनी जल्दी ऐसा हो गया, यह कल्पनाके भी अगोचर है। उसपर रेणु बीमार है। मोहल्लेमें टाइफाइड बुखार फैल रहा है, यह उसे मालूम था। उसने लक्ष्य

किया है कि डाक्टरकी बातचीतमें भी ऐसे ही एक सन्देहका इशारा था। सलाह या उपदेश देनेको कोई नहीं है, सेवा-सुश्रूषा करनेको कोई नहीं है, शायद चिकित्सा करानेके लिए धन भी हाथमें नहीं है। इस सीधे-सादे, किसीसे विरोध न रखनेवाले निरीह मनुष्यकी बात आद्योपान्त सोचकर उसके मनमें जैसे संसारमें धर्म-बुद्धि, भगवद्भक्ति और साधुता, सभीके ऊपर घृणा हो गई। वह अपने मनमें सोच रहा था कि दिल्लीसे लौटनेपर तरह-तरहके अपव्यय करनेके कारण अपना हाथ भी इस समय खाली है, पोस्ट आफिसमें जो कुछ थोड़ा-सा है उससे एक दिनका भी काम नहीं चल सकता, अथ च यह रेणु एक दिन उसीके निकट पली है—बड़ी हुई है। लेकिन वह बात आज छोड़ दी जाय। उसकी चिकित्साके लिए उसीके पास जाकर वह हाथ कैसे फैलाए? अगर उसके पास कुछ न हो? वह जानता है कि जिसके लड़के वह पढाता है, वह अत्यन्त कृपण है। यह सच है कि उसके इष्ट-मित्र अनेक हैं, लेकिन उन लोगोंसे निवेदन करना भी वैसे ही निष्फल है। बहुतसे 'बड़े आदमी' गुप्त रूपसे उसीके निकट ऋणी हैं। उस ऋणको वह खुद बेशक नहीं भूला, लेकिन वे लोग भूल गये हैं।

सहसा उसे नई-माकी याद आ गई। लेकिन दीपककी लौ जलकर ही धीमी पड़ गई। उसके आगे 'दो' कहकर खड़े होनेकी कल्पनासे भी वह कुंठित हो उठा। कारण पूछनेपर वह क्या कहेगा और कैसे कहेगा? यह रास्ता नहीं है, किन्तु इसके सिवा और कोई भी राह उसे नहीं सूझी। लेकिन यह कहनेसे तो काम नहीं चलेगा? रास्ता उसे चाहिए ही—रास्ता उसे निकालना ही पड़ेगा।

दासीने आकर खाने-पीनेके बारेमें पूछा, उसने मना करके कह दिया, उसकी एक जगह दावत है। ऐसा प्रायः ही होता है।

दासीके चले जाने पर उसने दरवाजा बंद कर दिया। राखाल शौकीन आदमी है। वेष-भूषाकी साधारण त्रुटि या सफाईकी कमी उससे सही नहीं जाती। मगर आज इस ओर उसका ध्यान ही नहीं गया। जैसा था वैसा ही बाहर चल दिया।

नई-माके घर जब पहुँचा, तब सन्ध्याकाल बीत गया था। सामने कुछ मोटरें खड़ी थीं। बड़ा-सा मकान बहुतसे बिजलीके बल्बोंकी रोशनीसे जगमगा रहा था। दुमजिलेके बड़े कमरेमें तबला आदि बाजोंको मिलानेकी आवाज आ रही है। घरकी स्वामिनी बहुत ही व्यस्त हैं—भाग्यशाली आमंन्त्रित लोगोंके

आदर-सत्कारमें कोई त्रुटि न हो। राखालको देखकर पलभर ठिठककर प्रश्न किया—इतनी देरमें शायद हम लोगोंका खयाल आया भैया?

इधर कई दिन जिस नई-माको उसने देखा है, जैसे यह वह नहीं है। अभिनव और बहुमूल्य वेष-भूषाकी सजावटने जैसे उसकी अवस्थाको दस साल पीछे ठेल दिया है। राखाल जैसे हतबुद्धिकी तरह उसकी ओर ताकता रह गया—सहसा उत्तर नहीं दे सका। उसने वैसे ही फिर कहा—आज जरा काम-काज कर देनेके लिए मैंने कहा था, इसीसे शायद बिल्कुल रात करके आये हो राजू?

राखालने नम्र भावसे कहा—कामसे छुट्टी पानेमें देर हो गई मा। इसके सिवा मेरे न आ पानेसे क्षति तो कुछ भी नहीं हुई।

"क्षति नहीं हुई, यह सच है, लेकिन तभी कह जाते तो अच्छा होता।" उनके कण्ठस्वरमें अबकी कुछ खीझका सुर मिला हुआ जान पड़ा।

राखालने कहा—तब तो मैं खुद भी नहीं जानता था नई-मा, उसके बाद फिर समय नहीं मिला।

इतनेमें किसीके बुलानेपर सविता चली गई और पाँचेक मिनटके बाद लौटकर देखा, राखाल वैसा ही खड़ा है। सविताने कहा—खड़े क्यों हो राजू? भीतर जाकर बैठो।

राखाल किसी तरह संकोचको दूर नहीं कर पा रहा था, लेकिन कहे बिना भी तो नहीं चलेगा। अन्तको धीरे-धीरे उसने कहा—एक विशेष प्रयोजनसे आया हूं मा। मुझे आज कुछ रुपए देने होंगे।

सविताने विस्मयके साथ देखा। कहते समय उनकी भी जबान कुछ अटकी किन्तु कहा—रुपए तो नहीं हैं राजू। जो थे, सो सब जायदाद खरीदनेमें ही खर्च हो गये, यह तो तुम सवेरे ही सुन गये हो।

"कुछ भी नहीं हैं मा?"

"न होनेके ही बराबर हैं। गिरस्तीमें अगर कुछ साधारण होंगे भी तो, ढूंढ़कर देखना होगा। उसका अवसर तो है नहीं।"

शारदा छुटपुट कामोंके लिए आ-जा रही थी। बात सुनकर उसने पास आकर कहा—मेरे पास दस रुपए हैं। ला दूं?

क्षणभर उसके मुंहकी ओर ताककर राखालने कहा—तुम दोगी! अच्छा, दो।

शारदाने कहा—मीनूकी नानीके पास रुपए हैं। चीज बन्धक रखकर उधार देती हैं।

"उनके पास मुझे ले जा सकती हो शारदा ?"

"क्यों न ले जा सकूगी—वह तो बूढी हैं। लेकिन मेरे पास तो कोई चीज नहीं है—"

"तो भी चलो न, चलकर देखें।"

"चलिए।"

राखालके जाते समय सविताने कहा—लेकिन भोजन किये विना नीचेहीसे न चले जाना राजू।

राखाल घूमकर खड़ा हो गया। बोला—आज बहुत बेवक्त भोजन किया है नई-मा, तनिक भी भूख नहीं है। आज मुझे क्षमा करना होगा। यह कहकर वह शारदाके पीछे पीछे नीचे उतर गया। सविताने फिर खानेके लिए अनुरोध नहीं किया।

राखाल चला गया है। शारदा अपने घरके बाकी दो एक काम कर चुकनेके बाद ऊपर जा ही रही थी, इतनेमें सविता आ गई। शारदाके बिछौनेपर ही बैठकर कहा—एक पान तो लगा दे बेटी, खाऊँगी।

यह सौभाग्य शारदाको कभी प्राप्त नहीं हुआ था। वह निहाल हो गई। चटपट हाथ धोकर पान लगाने बैठ रही थी कि सविताने कहा—राजू आज नाराज होकर विना भोजन किये चला गया।

इतने कामके बीच भी यह बात भीतर ही भीतर उसे खटक रही थी। वह मनसे दूर नहीं कर सकी।

शारदाने सिर उठाकर कहा—नहीं मा, नाराज होकर तो नही गये।

"नाराज तो था ही। सवेरेसे ही वह कुछ चिढ़ा हुआ था, उसपर मैं रुपए नहीं दे सकी—तुमने क्या उसे दस रुपए दिये हैं ?"

"नहीं मा, मुझसे उन्होंने नहीं लिये। मीनूकी दादीसे सौ रुपए ला दिये हैं।"

"यों ही ? खाली हाथ उसने दे दिये ?"

शारदाने कहा—ना, यों ही तो नहीं दिये। उन्होंने अपने हाथकी घड़ी उतारकर मुझे दी और कहा, इसका मूल्य तीन सौ रुपया है। वह जितने दे उतने

ले आओ। उनके चाय-बागानके कुछ शेयर हैं, उन्हें बेचकर इसी महीनेमें रूपए अदा कर देनेको कहा है।

सविताने पूछा—एकाएक उसे रूपयोंकी जरूरत कैसे हुई?

शारदाने कहा—कोई लड़की बहुत बीमार है, उसके इलाजके लिए।

"लड़की कौन है जिसके लिए रातोंरात उसे अपनी घड़ी रखकर रुपए लेने पड़े।"

"यह तो मैं नहीं जानती मा। लेकिन जान पड़ता है, उसकी बीमारी बहुत कठिन है। भय है कि रुपयोंके अभावसे कहीं वह मर न जाय। कहते थे कि इस लड़कीके बापने उन्हें बचपनमें पाला-पोसा है।"

सविताने आश्चर्यके साथ कहा—बचपनमें उसे पाला-पोसा था, ऐसा कहा? नहीं, यह बात उसकी बनाई हुई है। राजूको किसने पाला-पोसा है, मैं जानती हूँ। उनकी लड़कीके इलाजके लिए किसी दूसरेको घड़ी रेहन रखनेकी जरूरत नहीं हो सकती।

शारदाने उनके मुँहकी ओर ताककर कहा—बनावटी गप तो नहीं जान पड़ती मा। कहते समय उनकी आँखोंमें आँसू आ गये थे। बोले—उन लागोंके पास भी बहुत जायदाद थी, लेकिन एकाएक रोजगार गड़बड़ा गया और देना चुकानेके लिए घर-द्वार तक बेचना पड़ा। अथ च, दिल्ली जानेके पहले ऐसा नहीं था। आज जाकर देखा, लड़की बीमार पड़ी है और उसे देखने-सुननेवाला कोई नहीं है। बूढ़ा बाप आप ही रसोई बनाने बैठा है—लेकिन जानता कुछ नहीं—हाथ जल गया है, भात लग गया है, तरकारी जल गई है—उससे जलनेकी गंध आ रही है। राखाल बाबूको फिरसे सब बनाना पड़ा, तब सबका खाना पीना हुआ। इसीसे यहाँ आनेमें इतनी देर हो गई। मुझसे इस बुरे समयमें उनकी सहायता करने कह रहे थे। लड़कीके तो मा नहीं है, जो उसकी देखभाल करती। मने राजी होकर कह दिया है कि आप जो आज्ञा देंगे, वही मैं करूंगी।

शारदाने पानका बीड़ा बनाकर दिया। उसे सविता वैसे ही हाथमें लिये रही। पूछा—राजू कहता था कि एकाएक रोजगार नष्ट हो जानेसे देना चुकानेके लिए उनका घरतक बिक गया? दिल्ली जानेके पहले भी ऐसा नहीं देखा था?

"हाँ, यही तो उन्होंने कहा।"

"यह असंभव है।"

शारदा चुप रही। सविताने फिर प्रश्न किया—राजूने कहा कि लड़कीके मा नहीं है—शायद मर गई?

शारदाने कहा—मा जब नहीं है तब निश्चय ही मर गई होगी। और क्या हो सकता है मा?

सविता उठकर चली गई। इसके पाँच-छः मिनट बाद शारदा दिया बुझाकर दर्वाजा बद कर रही थी, कि वह फिर लौट आई। शरीरपर वे कपड़े नहीं थे, गहने भी नहीं। मुख उद्वेगसे म्लान हो रहा था। बोली—तुमको मेरे साथ जरा बाहर चलना होगा।

"कहा मा?"

"राजूके डेरेपर।"

"इतनी रातको? मैं निश्चयसे कहती हूँ मा, उनको थोड़ा-सा दुःख जरूर हुआ है, लेकिन वह नाराज होकर नहीं गये। इसके सिवा घरमें काम है, कितने ही लोग आये हैं, सभी आपको खोजेंगे मा!"

"कोई न जान पावेगा शारदा। हम जायेंगे और लौट आयेंगे।"

शारदाने सन्देहके स्वरमें कहा—अच्छा नहीं होगा मा। शायद बड़ी गड़बड़ी मचेगी। बल्कि कल दोपहरको खाने-पीनेके बाद चला जाय, तब कोई जान भी नहीं पावेगा।

कुछ देर तक उसके मुँहकी ओर ताकते रहकर सविताने कहा—आज रात बीतेगी, कल सवेरा बीतेगा, उसके बाद दोपहरके वक्त खाना-पीनेसे निबटकर तब जाऊगी? तब तक तो मैं पागल हो जाऊँगी शारदा!

इस उत्कण्ठाका कारण शारदाकी समझमें नहीं आया, लेकिन उसने फिर आपत्ति भी नहीं की—चुप हो रही।

जिस दरवाजेसे किराएदार लोग जाते-आते हैं, वहाँ दोनों आ गईं और दो मिनटके बाद एक खाली टैक्सीको बुलाकर उसपर बैठ गईं। दोनोंकी नजर ठीक ऊपरकी तरफ ही पड़ी—प्रकाशसे जगमगा रहा—लम्बा-चौड़ा बड़ा कमरा उस समय संगीत, हँसी और आनन्द-कलरवसे गूंज रहा था। एक रूमालमें बँधी छोटी-सी पोटली शारदाके हाथमें देकर सविताने कहा—इसे आँचलमें बाँध लो बेटी। राजू शायद मेरे हाथसे इसे नहीं लेगा—तुम ही दे देना।

दस मिनट बाद दोनोंने पैदल चलकर राखालके घरके सामने पहुँचकर देखा, बाहरसे किवाड़े बन्द हैं, भीतर कोई नहीं है। दोनों जनी वहाँसे चुपचाप लौट आकर फिर गाड़ीपर सवार हुईं। और भी चार-पाँच मिनटके बाद बहूबाजारके एक भारी मकानके सामने आकर उनकी गाड़ी रुकी। उतरना नहीं पड़ा। देखा गया, उस मकानका भी दरवाजा बन्द है। रास्तेकी लालटेनकी रोशनी ऊपरकी बन्द खिड़कीके ऊपर पड़ रही थी। बड़े बड़े लाल अक्षरोंमें लिखा नोटिस लटक रहा था—"घर किराएपर दिया जायगा।"

घोर विपत्ति सामने होनेपर क्षणभरमें ही अपनेको सँभाल लेनेकी शक्ति सवितामें असाधारण है। उसके मुखसे एक लम्बी साँस तक नहीं निकली। घर लौटनेकी आज्ञा देकर गाड़ीके कोनेमें सिर रखकर पत्थरकी मूर्ति बनी बैठी रही।

क्या हुआ है, इसका ठीक ठीक अनुमान करना शारदाके लिए कठिन था, किन्तु उसने यह समझ लिया कि राखाल झूठ नहीं कह आया और सचमुच ही कोई एक भयानक बात हो गई है।

लौटनेके समय राहमें सविताके शिथिल हाथको खींचकर और अपने हाथमें लेकर शारदाने पूछा—यह किसका घर है मा? यही घर क्या बिक गया है?

"हाँ।"

"इन्हींकी लड़कीकी बीमारीकी बात क्या वह कर रहे थे?"

जवाब न पाकर उसने फिर धीरे-धीरे कहा—वे लोग कहाँ है, इसका पता तो लगाना चाहिए।

"कहाँ, किससे पता लगाऊँ शारदा?"

"कल निश्चय ही राखाल बाबू मुझे लेने आवेंगे।"

"लेकिन वह अगर न आवे—मेरे घरमें अगर वह पैर न रखना चाहे?"

शारदा चुप हो रही। राखालने रुपए माँगे, वह दे नहीं सकी, केवल इतनी-सी बातको उपलक्ष्य करके नई-माकी इतनी बड़ी उत्कण्ठा, आवेग और आत्मग्लानि देखकर वह बड़े चक्करमें पड़ गई। उसको सन्देह हुआ कि यह मामला वास्तवमें यहीं नहीं है, उसके भीतर कोई निष्ठुर रहस्य है। सविता रमणी बाबूकी पत्नी नहीं है, यह बात न जाननेका दिखावा करनेपर भी उस मकानके सभी लोग

मन ही मन समझते थे। लोग डरके मारे नहीं, श्रद्धाके कारण दिखावा करते थे। सभी जानते थे कि यह किसी बड़े घरकी बेटी और बड़े घरकी बहू है—आचारसे आचरणमें बड़ी, हृदयसे बड़ी, दया-दाक्षिण्यमें और सौजन्यमें और भी बड़ी। इसीसे उसका यह दुर्भाग्य किसीके भी उल्लासकी वस्तु न था, था परिताप और गहरी लज्जाका विषय। बहुत दिनोंतक एक ही जगह रहकर सभी उसको बहुत प्यार करते थे।

गलीके मोड़पर घूमते ही एक दूकानकी तेज रोशनीकी रेखा आकर दम भरके लिए सविताके चेहरेपर आ पड़ी। शारदाने देखा, उसमें जैसे प्राण नहीं हैं। हथेली जान पड़ी, बहुत ही ठण्डी है। उसने डरकर हिलाकर पुकारा—मा!

"क्या है बेटी?"

बहुत देर तक और कोई आहट नहीं। अँधेरेमें भी शारदाको जान पड़ा कि उसकी आँखोंसे आँसू गिर रहे हैं। उसने साहस करके हाथ बढ़ाकर देखा सचमुच आँसू हैं। यत्नपूर्वक अपने आँचलसे आँसू पोंछकर कहा—मा, आपकी बेटी हूँ, मेरे अपना कहनेको संसारमें कोई नहीं है। आप मुझे जो करनेको कहेंगी, मैं वही करूंगी।

बात साधारण ही थी। सविताने इसके उत्तरमें कुछ नहीं कहा, केवल हाथ बढ़ाकर उसे खींचकर छातीसे लगा लिया। आँसुओंके रोके हुए वेगसे उसकी देह कई बार काँप उठी। इसके बाद बड़ी बड़ी आँसुओंकी बूँदें एक एक करके शारदाके सिरपर गिरने लगीं।

दोनों जनी जब लौटकर आईं, उस समय भी मालती-मालाका गाना हो रहा था—दोनोंकी इस थोड़ेसे समयकी अनुपस्थितिको किसीने लख न पाया। सविता नीचेसे स्नान करके जब ऊपर जाने लगी तब नौकरानीने विस्मयके साथ पूछा—मा, इस समय नहा आईं? जान पड़ता है, सिर घूम रहा था?

"हाँ।"

"तो फिर कपड़े बदलकर जरा सो रहो मा। दिनभर कितनी मेहनत की है।"

शारदाने कहा—इधर मैं हूँ मा, कोई चिन्ता न कीजिए। जरूरत होगी तो आपको बुला लाऊँगी।

"अच्छी बात है शारदा, मैं जरा सोऊँगी।"

उस रातका खाना-पीना किसी तरह समाप्त हुआ। मेहमान लोग एक एक करके विदा हो गये। पलँगके सिरहाने बैठकर शारदा धीरे-धीरे सविताके सिरपर, हाथ फेर रही थी। क्रोधसे पैर पटकते हुए रमणी बाबूने वहाँ प्रवेश करके तीखे स्वरमें कहा—खूब खेल खेला! घरमें कोई काम होनेपर तुमको भी एक ढोंग करना चाहिए। यह तुम्हारी आदत है। सब लोग चले गये—अब लो, ये नाज-नखरे छोड़कर जरा उठकर बैठो। कमसे कम कोई अच्छी-सी सारी पहन लो—विमल बाबू मिलनेके लिए आ रहे हैं।

ऐसा कहना अभावित नहीं, नया भी नहीं। वास्तवमें सविता मन-ही-मन ऐसी ही किसी बातकी आशंका करती थी। थके हुए स्वरमें बोली—मिलना किस लिए?

"किस लिए! क्यों, वह क्या भिखारी हैं कि उन्हें खानेको नहीं मिलता? घरमें न्योता है, लेकिन घरकी मालिकिनसे ही मुलाकात नहीं। खूब!"

सविताने कहा—न्योता होनेपर क्या घरकी मालिकिनसे मुलाकात करनेकी भी रीति है?

रमणी बाबूने व्यंग करके कहा—रीति है? रीति नहीं है, यह मैं जानता हूँ। घरकी स्त्री हो तो कोई आलाप-परिचय करना नहीं चाहता। लेकिन वे सब जानते हैं।

शारदाके सामने सविता लज्जासे जैसे मर गई। शारदाने खुद भी वहाँसे भाग जानेकी चेष्टा की, लेकिन उठ नहीं सकी। इधर सविताको यह भय सबसे अधिक था कि यह उत्तेजना कहीं चिल्लानेका रूप न धारण कर ले, इसीसे नम्र भावसे ही कहा—मैं बहुत अस्वस्थ हूँ। उनसे कह दो, आज मुलाकात न होगी।

किन्तु इसका फल उल्टा ही हुआ। इस सहज कंठके अस्वीकारसे रमणी बाबू पागल हो उठे। बोले—अलबत्त मुलाकात होगी। जानती हो, वह करोड़पती आदमी है। खबर है कि सालमें वह कितने रुपयोंका माल मुझसे खरीदता है? मैं कहता हूँ—

दरवाजेके बाहर जूतोंकी आहट सुनाई दी और नौकरने सामने आकर हाथसे दिखा दिया।

सविता आँचल माथे त आगे खींचकर उठ बैठी। विमल बाबू भीतर आकर नमस्कार करके आप ही एक कुर्सी खींचकर बोले—मैंने सुना, आप एकाएक

बहुत अस्वस्थ हो गई है। लेकिन मुझे कल ही कानपुर जाना है, शायद फिर लौटकर न आ सकूँ, उसी तरफ़से बम्बई होकर जहाजसे सीधे अपने कारोबारकी जगह रवाना हो जाना पड़े। सोचा, कुछ मिनटके लिए ही सही, एक बार मिलकर यह जता जाऊँ कि आपके आतिथ्यसे आज बड़ी तृप्ति हुई।

सविताने धीरेसे कहा—यह मेरा सौभाग्य है।

इस आदमीकी अवस्था चालीस वर्षके लगभग होगी, बाल पकना शुरू हो गये हैं किन्तु सयत्न सतर्कताके कारण देहमें स्वास्थ्य और रूप भरपूर है। कहा—मालूम हुआ कि रमणी बाबू आजकल प्रायः अस्वस्थ रहते हैं और आपका शरीर भी अच्छा नहीं रहता, सो तो अपनी आँखोंसे ही देख रहा हूँ। आपके एक साल पहलेके फोटोके साथ आजका कोई मेल नहीं, कैसा चेहरा हो गया है!

सुनकर सविताको मन-ही-मन लज्जा मालूम पड़ी। "मेरी फोटो क्या आपने देखी है?"

"देखी क्यों नहीं! आपकी एक साथ ली गई फोटो रमणी बाबूने भेजी थी। तभीसे सोच रक्खा है कि फोटोके मालिकको एक बार अपनी आँखोंसे देखूगा। वह साध आज मिटी। चलिए न एक बार हमारे सिंगापुर। कुछ दिन समुद्रयात्रा भी होगी, और शरीर भी कुछ सुधरेगा। क्रास स्ट्रीटमें हमारा एक छोटा-सा घर है। उसके ऊपरके खंड पर दिन-रात समुद्री हवा चलती है। सवेरे-शाम सूर्यका उदय और अस्त होना भी देखनेको मिलता है। रमणी बाबू जानेको राजी हो गये हैं, सिर्फ आपकी सम्मति अगर ले जा सकूँ तो जानूँगा कि अबकी मेरा देशमें आना सार्थक हो गया।

रमणी बाबू उल्लासके साथ कह उठे—मैं तो आपको वचन दे चुका हूँ कि अगले सप्ताह ही यहाँसे रवाना हो सकूँगा। समुद्रके जल-वायुकी मुझे विशेष आवश्यकता है। शरीरका स्वास्थ्य—आप कहते क्या हैं!—वही तो सबसे पहले है।

विमल बाबूने कहा—यह सौभाग्य हो तो हम लोग शायद एक ही जहाजसे यात्रा कर सकेंगे। फिर सविताको लक्ष्य करके मुसकाते हुए बोले—अनुमति हो तो मैं तैयारी करूँ—अपने आफिसको भी एक तार भेज दूँ कि घरमें कहीं किसी बातकी कमी न रहे। क्या कहती हैं आप?

सविताने सिर हिलाकर मृदु कण्ठसे कहा—ना, इस समय मुझे कहीं जानेकी सुविधा न होगी।

सुनकर रमणी बाबू और गरम हो उठे। बोले—क्यों सुविधा न होगी, सुनूँ भला? लिखा-पढ़ी कल-परसों खतम हो जायगी। दरवान-चाकर घरमें हैं, किराएदार भी हैं। फिर जानेमें बाधा क्या है? ना, यह न होगा विमल बाबू, मैं साथ ही ले कर जाऊँगा। 'नहीं' कहनेसे ही हो जायगा! मेरी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं है। मेरी देखभाल कौन करेगा? आप वेखटके टेलीग्राम कर दीजिए।

विमल बाबूने फिर सविताको ही लक्ष्य करके पूछा—क्यों, एक तार भेज दूँ?

जवाब देते समय अबकी दोनोंकी चार आँखें हो गईं। सविताने शर्माकर फौरन् नजर नीची करके कहा—नहीं। मैं नहीं जा सकूँगी।

रमणी बाबू बहुत खफा हो उठे। बोले—'नहीं' क्यों? मैं कहता हूँ, तुमको जाना होगा। मैं जरूर साथ ले जाऊंगा।

विमल बाबूका मुख अप्रसन्न हो उठा। बोले—किस तरह ले जाइएगा रमणी बाबू? बाँधकर?

"हाँ, जरूरत हुई तो यही करूँगा।"

"तो फिर और कहीं ले जाइए, मैं इस अन्यायका बोझ अपने ऊपर नहीं ले सकूँगा।"

क्या जानें, भीतर प्रवेश करते समय ही इस आदमीका जोरसे बोलना और बिगड़ना विमल बाबूने सुन लिया था कि नहीं। उन्होंने कहा—अच्छा तो आज मैं जाता हूँ—आप विश्राम कीजिए। शायद आपके अस्वस्थ शरीरपर अत्याचार किये जा रहा हूँ—तो भी जानेके पहले मेरा यह अनुरोध रहा कि मैं हर महीने आपको प्री-पेड टेलीग्राम करूंगा इसी आनेकी प्रार्थनाके साथ। देखूँ, कितनी बार 'नहीं' करके उसका जवाब आप दे सकती हैं। यह कहकर वह जरा हँसे। फिर बोले—नमस्कार।—नमस्कार रमणी बाबू, मैं चल दिया।

वह बाहर हो गये। उनके पीछे-पीछे रमणी बाबू भी नीचे उतर गये। रमणी बाबूके मित्र और अशिक्षित व्यापारी समझकर इस आदमीके सम्बन्धमें जो धारणा सविताके मनमें उत्पन्न हुई थी, उनके चले जानेपर जान पड़ा कि वह शायद सत्य नहीं है।

७

शारदाने पूछा—मा, कुछ खाओगी नहीं?

"नहीं।"

"एक गिलास पानी और एक पान दे जानेके लिए कह दूं?"

"ना, जरूरत नहीं है।"

"तो रोशनी बुझाकर दर्वाजा बन्द करती जाऊँ?"

"हाँ, यही करो शारदा। तुम्हें रात हुई जा रही है।"

तथापि उठूं-उठूं करके भी शारदाको देर हो रही थी। इसी बीच रमणी बाबू आकर खड़े हो गये, एक सांस छोड़कर बोले—अच्छा हुआ, आज तो किसी तरह इज्जत बच गई, बहुत भले आदमी हैं। इतने ऊंचे दर्जेके आदमी हैं, मगर जरा भी दिमाग, जरा भी अहंकार नहीं है। तुम्हारे लिए तो बड़ी ही चिन्ता है। सैकड़ों बार अनुरोध कर गये हैं कि कल सवेरे ही उन्हें खबर भेज दूं। क्या जाने, कल सवेरे ही कहीं किसी बड़े डाक्टरको लेकर हाजिर न हो जायँ—कुछ कहा नहीं जा सकता। उन्हें तो हम लोगोंकी तरह रुपए-पैसेका माया-मोह नहीं है—दस-बीस हजार रहे तो क्या और गये तो क्या! रायमोर कंपनीके डाइरेक्टर कहो या शेयर होल्डर कहो, सब कुछ यही मिस्टर विमल घोषाल हैं। तुमसे मैंने कहा नहीं कि यह आदमी करोड़पती है! करोड़ रुपए! जर्मनी और हालैंडके साथ बहुत बड़ा कारोबार है। सालमें दो-चार बार यों ही योरपका चक्कर लगा आते हैं। इनके जनरल मैनेजर शाप साहब ही तीन हजार रुपए मासिक वेतन पाते हैं। बहुत बड़े आदमी हैं। जावाकी चीनीके चालानमें ही पार साल—

वे मुनाफेके रोएँ खड़े कर देनेवाले अंक नहीं बता पाये, और बीचहीमें बाधा आ पड़ी। सविताने पूछा—तुम फिर कैसे लौट आये? घर नहीं गये?

कौन-सा प्रसंग और कौन-सी बात! इस प्रश्नसे उन्हें आनन्द नहीं हुआ; और समझ लिया कि उनके 'बहुत बड़े आदमी' का विवरण सुननेमें सविताने तनिक भी मन नहीं लगाया। कुछ सिटपिटाकर रमणी बाबूने कहा—घर! नाः, आज अब न जाऊँगा।

"क्यों?"

"ना., आज अब—"

सविताने क्षण-भर उनके मुँहकी ओर ताककर कहा—शराबकी गंध आ रही है—तुमने क्या शराब पी है?

"शराब? मैंने! (इशारेसे) सिर्फ इतनी-सी, एक बूँद—समझीं न—"

"कहाँ पी? इसी घरमें!"

"जरा इनकी बात सुनो! घरमें नहीं तो क्या कलवरियामें खड़े होकर पी आया?"

"यहाँ शराब लानेके लिए किसने कहा!"

"किसने कहा? ऐसी बात भी कभी नहीं सुनी। घरमें दस-पाँच भले आदमियोंको बुलाओ तो थोड़ी-सी शराब रखे बिना काम चल सकता है?—इसीसे—"

"सभीने पी?"

"पी नहीं! अच्छी चीज आफर करनेसे कौन साला नहीं पीता, जरा सुनूँ तो? तुमने तो आश्चर्यमें डाल दिया!"

"विमल बाबूने भी पी?"

रमणी बाबूने अबकी बार जरा इधर उधर किया, बोले—नहीं। आज वह एक चाल खेल गया। नहीं तो उसकी कीर्ति-कहानी सुननेको कुछ बाकी नहीं है। मैं सब जानता हूँ।

सविताने जरा चुप रहकर कहा—जानोगे क्यों नहीं। अच्छा, अब जाओ। रात हो गई है, उस कमरेमें जाकर सो रहो।

कहनेका ढंग केवल कर्कश ही नहीं, रूढ़ भी था। वह शारदाके कानोंको भी अपमानकर मालूम पड़ा। आज सन्ध्याके बादसे ही सविताके नीरस कण्ठस्वरका छिपा हुआ रूखापन रमणी बाबूको खटक रहा था। इस समय इस बातसे—वे एका-एक बारूदके गोलेकी तरह फट पड़े। बोले—आज तुम्हें हुआ क्या है, बताओ तो? मिजाज बहुत गरम देख रहा हूँ। इतना बढ़ना अच्छा नहीं है नई-बहू!

शारदा डरी कि शायद अब लज्जाजनक झगड़ा शुरू हो जायगा। लेकिन सविता चुपचाप आँखें मूँदे वैसे ही लेटी रही, एक शब्द भी जवाबमें नहीं कहा।

रमणी बाबू कहते गये—वह जो मैंने कहा कि तुम मेरी स्त्री नहीं हो—इसीसे तुम्हारे बदनमें आग लग गई है। लेकिन यह कौन नहीं जानता? शारदा नहीं

जानती या इस बाड़ीके और सब लोग नहीं जानते ? एक झूठी बात कितने दिन दबी रहेगी ? इससे मैंने तुम्हारा क्या अपमान किया, सुनूं !

सविता उठकर बैठ गई। उसकी आँखोंकी दृष्टि बर्छेकी नोककी तरह तीक्ष्ण और कठिन हो गई। बोली—इस बातको तुम्हें छोड़कर कोई भी मर्द, केवल मर्द होनेके कारण ही जबानपर लानेमें लज्जित होता; किन्तु तुमसे कहना वृथा है। तुम्हारी बातसे मेरा अपमान हुआ है, यह मैंने एक बार भी नहीं कहा।

शारदा भयसे घबरा उठी। बोली—क्या कर रही हो मा, ठहरो।

रमणी बाबूने कहा—यह सच है कि मुहसे कुछ नहीं कहा; किन्तु मनमें तो यही सोचती हो ?

सविताने उत्तर दिया—ना। मुँहसे भी नहीं कहा और मनमें भी नहीं सोचा। तुम्हारी स्त्री हूँ, इस परिचयसे मेरी मर्यादा नहीं बढ़ती सँझले बाबू। उससे केवल चक्षुलज्जा बचती है, नहीं तो सचमुचकी लज्जासे मेरा हृदय जलकर स्याह हो उठता है।

"क्यों ? किस लिए—सुनूँ ?"

"सुननेसे क्या होगा ? तुम क्या समझोगे कि मैं जिनकी स्त्री हूँ, उनके पैरोंकी धूलके बराबर भी तुम नहीं हो।"

शारदा फिर भयसे व्याकुल हो उठी। "इतनी रातको आप लोग यह क्या करते हैं ! दोहाई है मा, चुप करिए।"

किन्तु किसीने उसकी बात नहीं सुनी। रमणी बाबूने चिल्लाकर कहा—सच ? सच कहती हो ?

सविताने कहा—सच है कि नहीं, यह तुम खुद नहीं जानते ? सब भूल गये ? उस दिन उनके सिवा संसारमें कोई था जो हम लोगोंकी रक्षा कर सकता ? केवल हमारे हाड़-मासको ही नहीं बचाया—मान इज्जतकी भी रक्षा की। मनुष्य स्वयं कितना बड़ा होने पर इतनी बड़ी भिक्षा दे सकता है तुम सोच सकते हो ? मैं उनकी स्त्री हू। वह क्षति मैंने सह ली, इतनी-सी क्षति न सह सकूंगी ?

रमणी बाबूको इसका कोई उत्तर न सूझा। उनके मुँहमें जो आया वही कह बैठे।—तो फिर तुम बुरा क्यों मानती हो ?

सविताने कहा—तुमने यह केवल आज ही तो नहीं कहा, अक्सर कहा करते हो। बात कड़वी है, इसीसे सुननेपर एकाएक कानोंको खटकती है, किन्तु हृदय

उसी दम स्वस्तिकी साँस लेकर कह उठता है कि मेरे लिए यही अच्छा है कि यह आदमी मेरा कोई नहीं है, इसके साथ मेरा कोई सचमुचका सम्बन्ध नहीं है।

शारदा अवाक् होकर सविताके मुँहकी ओर ताकती रही। किन्तु अशिक्षित रमणी बाबूके लिए सविताके इस कथनका गभीर अर्थ समझना कठिन था। उन्होंने केवल इतना ही समझा कि यह कथन अत्यत रूद और अपमानकर है। इसीसे दंभके साथ प्रश्न किया—तो फिर उनके पास लौट न जाकर मेरे ही पास किस लिए पड़ी रहती हो?

सविता इसका कुछ जवाब देने जा रही थी, किन्तु शारदाने जल्दीसे उसके मुँहपर हाथ रखकर कहा—गुस्सेमें आप भूल रही हैं कि किसके साथ झगड़ा कर रही हैं?

सविताने उसका हाथ हटाकर कहा—नहीं शारदा, अबमें झगड़ा नहीं करूंगी। उनके मुँहमें जो आवे वह कहें, मैं चुप रहूँगी।

रमणी बाबूने कहा—अच्छा, कल मैं इसकी समुचित व्यवस्था करूँगा। इतना कहकर रमणी बाबू कमरेसे निकल आये और इसके दो-तीन मिनट बाद ही सदर रास्तेमें उनकी मोटरके शब्दसे मालूम पड़ा कि वह यह घर छोड़कर चले गये।

शारदाने डरकर पूछा—समुचित व्यवस्था क्या करेंगे मा?

"मैं नहीं जानती शारदा। यह बात मैं अनेक बार सुन चुकी हूँ, लेकिन इसके माने आज भी समझ नहीं पाई।"

"लेकिन बेकार यह कैसा अनर्थ छिड़ गया, बताइए तो?

सविता चुप रही। शारदा खुद भी क्षण भर चुप रहनेके बाद बोली—रात हुई, अब जाती हू मा।

"जाओ बेटी।"

× × × ×

सवेरा हुआ ही था कि शारदाका दर्वाजा किसीने खटखटाया। उसने उठकर दर्वाजा खोला। सविताने प्रवेश करके कहा—राजूके आते ही मुझे खबर देना, भूलना नहीं शारदा।

उसके मुँहकी ओर देखकर शारदा शंकित हो उठी। बोली—नहीं मा, भूलूँगी क्यों, आते ही खबर दूँगी।

सविताने कहा—दरबानने खबर दी है कि रातको राजू डेरेपर नहीं लौटा। किन्तु वह चाहे जहाँ हो, आज तुमको ले जानेके लिए अवश्य ही आवेगा।

" यही तो कहा था। "

" आज ही तो आनेको कहा था न ? "

" नहीं, यह तो नहीं कहा, सिर्फ उस लड़कीकी बीमारीमें सहायता करनेको कहा था। "

" तुमने मंजूर तो किया था ? "

" किया क्यों नहीं था! "

" कोई आपत्ति तो नहीं की थी बेटी ? "

" नहीं मा, कोई आपत्ति नहीं की। "

सविताने कहा—तो अब मैं जाऊँ, तुम घरका काम-काज कर डालो। उसके आते ही मुझे मालूम हो जाना चाहिए शारदा। यह कहकर वह चली गई।

शारदाके घरका कामकाज साधारण-सा था। चटपट करके वह तैयार हो रही, जिसमें राखाल बुलाने आवे तो देर न हो। पिटारा खोलकर जो दो-एक कपड़े-धोती वगैरह अच्छे थे, उन्हे बाँध रखा—साथ ले जाना होगा। अविनाश-बाबूकी स्त्रीसे उसका अधिक मेल-जोल और मित्रता थी। उसको जता रखा कि घरकी चाबी वह उसके पास रख जायगी—जिससे सध्या समय वह दीपक जला दे। दूरकी नातेकी एक बहिन बहुत बीमार है, उसकी सेवाशुश्रूषाके लिए वह जा रही है।

लगभग दस बजेके समय सविताने फिर घरके भीतर आकर पूछा—राजू नहीं आया शारदा ?

" नहीं मा। "

" तुम शायद नहीं जा सकोगी, ऐसा सन्देह तो उसे नहीं हुआ ? "

" होना तो नहीं चाहिए मा। मैंने तो तनिक भी अनिच्छा नहीं दिखाई—फौरन राजी हो गई थी। "

" तो फिर क्यों नहीं आ रहा है ! सवेरे ही तो आनेकी बात थी। " थोड़ा

सोचकर कहा—दरवानको भेज दूँ, फिर एक बार देख आवे कि वह डेरेपर लौटा है कि नहीं। इतना कहकर ही वह चली गई।

कलसे शारदा बराबर सोच रही है कि यह बीमार लड़की कौन है। उसके कुतूहलकी सीमा नहीं, तो भी इस अत्यन्त दुश्चिन्ताग्रस्त उद्भ्रान्त-चित्त स्त्रीसे प्रश्न करके वह निःसंशय नहीं हो सकी। कल राखालसे पूछती तो शायद उत्तर मिल जाता। किन्तु उस समय उसे इससे कुछ मतलब न था, उसे इसका खयाल भी नहीं आया।

इसी तरह सवेरा बीता, दोपहर बीती, तीसरा पहर बीतकर रात लौट आई; किन्तु राखाल नहीं आया। और भी कुछ देर बाद उसके आनेकी आशा जब नहीं रही, तब सविता आकर शारदाके बिस्तरपर पड़ रही, एक शब्द भी मुँहसे नहीं कहा। केवल आँखोंसे अविरल जल बहने लगा। शारदाने उसे पोंछ देना चाहा, तो उसने उसका हाथ हटा दिया।

दासीने आकर खबर दी कि विमल बाबू देखने आये हैं।

सविताने कहा—उनसे जाकर कह दे, बाबू घरमें नहीं हैं।

दासीने कहा—यह उन्हें मालूम है। कहा है कि वह आपसे मिलने आये हैं, बाबूसे नहीं।

सविताकी आँखोंमें खीज और क्रोध प्रकट हुआ किन्तु कुछ सोचकर, क्षणभर इधर-उधर करके वह उठ गई। रस्तेमें दासीने कहा—भीतर जाकर धोती बदल डालिए, यह कुछ मैली देख पड़ती है।

आज इस तरफ सविताकी नजर नहीं थी, दासीके कहनेसे उसे होश आया, धोती सचमुच ही किसीसे मुलाकात करनेके लायक नहीं है।

दस-पन्द्रह मिनटके बाद जब बैठकमें जाकर पहुँची तब कोई त्रुटि नहीं रह गई। हरे रंगकी धीमी रोशनीमें मुँहकी शुष्कता भी ढँक गई।

विमल बाबूने खड़े होकर नमस्कार किया। बोले—शायद आपको कष्ट दिया; लेकिन कल आपको बहुत अस्वस्थ देख गया था, इससे आज आये बिना नहीं रह सका।

सविताने कहा—मैं अच्छी हूँ। आपका कानपुर जाना नहीं हुआ?

"नहीं। यहाँसे जाकर सुना, मेरे बड़े चाचा बहुत बीमार हैं, इसीसे—"

"आपके सगे चाचा?"

"नहीं, ठीक सगे तो नहीं—पिताजीके चचेरे भाई, लेकिन—"

"एक ही घरमें आपका सम्मिलित परिवार है?"

"ना, सो नहीं। पहले सब एकत्र थे—किन्तु—"

"यहाँसे जाते ही एकाएक बीमार होनेकी खबर मिली?"

"ना, एकाएक तो नहीं। बीमार तो बहुत दिनोंसे हैं, मगर—"

"तो शायद कल भी न जा सकेंगे—तब तो बहुत नुकसान होगा!"

विमल बाबूने कहा—नुकसान थोड़ा-बहुत हो सकता है, लेकिन मनुष्य क्या केवल रोजगार-धंधेके नफा-नुकसानका हिसाब लगानेमें ही जीवन बिता देगा? रमणी बाबू खुद भी तो एक रोजगारी आदमी हैं; किन्तु वह क्या कारोबारके बाहर कुछ नहीं करते?"

सविताने कहा—करते क्यों नहीं, लेकिन न करते, तो अच्छा था।

विमल बाबूने हँसकर कहा—कलका क्रोध आज भी शान्त नहीं हुआ आपका। रमणी बाबू आवेंगे कब?

सविताने कहा—मुझे मालूम नहीं। न आना ही सम्भव है।

"न आना ही सम्भव है? कब गये, आज?"

"आज नहीं, कल रातका आप लोगोंके जानेके बाद ही चले गये थे।"

विमल बाबूने कुछ देर चुप रहकर कहा—आशा है, अधिक नाराज होकर नहीं गये। कल वह कुछ अप्रकृतिस्थ-से थे। जान पड़ता है, इसीसे उस तरह अकारण जोर-जबर्दस्ती की थी। आज निश्चय ही उन्हें अपनी गलती महसूस हुई है। सवितासे कोई उत्तर न पाकर वह कहने लगे—कल मुझसे भी कुछ कम अपराध नहीं हुआ। सिंगापुर जाना अस्वीकार करनेके बाद भी उसके लिए मेरा बार-बार अनुरोध करना अनुचित हुआ। नहीं तो यह सब कुछ न होता। उसीके लिए क्षमा माँगने आज आया हूँ। कल तो आप बहुत अस्वस्थ थीं; आज सचमुच अच्छी हैं या एक जनेपर नाराज होकर और एकको दण्ड दे रही हैं—सच सच बताइए तो?

उत्तर देते समय दोनोंकी आँखें चार हो गईं। सविताने आँखें नीची करके कहा—मैं अच्छी ही हूँ। लेकिन न होऊँ तो आप उसका क्या उपाय करेंगे विमल बाबू?

सोचकर कहा—दरबानको भेज दूँ, फिर एक बार देख आवे कि वह डेरेपर लौटा है कि नहीं। इतना कहकर ही वह चली गई।

कलसे शारदा बराबर सोच रही है कि यह बीमार लड़की कौन है। उसके कुतूहलकी सीमा नहीं, तो भी इस अत्यन्त दुश्चिन्ताग्रस्त उद्भ्रान्त-चित्त स्त्रीसे प्रश्न करके वह निःसंशय नहीं हो सकी। कल राखालसे पूछती तो शायद उत्तर मिल जाता। किन्तु उस समय उसे इससे कुछ मतलब न था, उसे इसका खयाल भी नहीं आया।

इसी तरह सवेरा बीता, दोपहर बीती, तीसरा पहर बीतकर रात लौट आई, किन्तु राखाल नहीं आया। और भी कुछ देर बाद उसके आनेकी आशा जब नहीं रही, तब सविता आकर शारदाके बिस्तरपर पड़ रही, एक शब्द भी मुँहसे नहीं कहा। केवल आँखोंसे अविरल जल बहने लगा। शारदाने उसे पोंछ देना चाहा, तो उसने उसका हाथ हटा दिया।

दासीने आकर खबर दी कि विमल बाबू देखने आये हैं।

सविताने कहा—उनसे जाकर कह दे, बाबू घरमें नहीं हैं।

दासीने कहा—यह उन्हें मालूम है। कहा है कि वह आपसे मिलने आये हैं, बाबूसे नहीं।

सविताकी आँखोंमें खीज और क्रोध प्रकट हुआ किन्तु कुछ सोचकर, क्षणभर इधर-उधर करके वह उठ गई। रास्तेमें दासीने कहा—भीतर जाकर धोती बदल डालिए, यह कुछ मैली देख पड़ती है।

आज इस तरफ सविताकी नजर नहीं थी, दासीके कहनेसे उसे होश आया, धोती सचमुच ही किसीसे मुलाकात करनेके लायक नहीं है।

दस-पन्द्रह मिनटके बाद जब बैठकमें जाकर पहुँची तब कोई त्रुटि नहीं रह गई। हरे रंगकी धीमी रोशनीमें मुँहकी शुष्कता भी ढक गई।

विमल बाबूने खड़े होकर नमस्कार किया। बोले—शायद आपको कष्ट दिया; लेकिन कल आपको बहुत अस्वस्थ देख गया था, इससे आज आये बिना नहीं रह सका।

सविताने कहा—मैं अच्छी हूँ। आपका कानपुर जाना नहीं हुआ?

"नहीं। यहाँसे जाकर सुना, मेरे बड़े चाचा बहुत बीमार हैं, इसीसे—"

"आपके सगे चाचा?"

"नहीं, ठीक सगे तो नहीं—पिताजीके चचेरे भाई, लेकिन—"

"एक ही घरमें आपका सम्मिलित परिवार है ?"

"ना, सो नहीं। पहले सब एकत्र थे—किन्तु—"

"यहाँसे जाते ही एकाएक बीमार होनेकी खबर मिली ?"

"ना, एकाएक तो नहीं। बीमार तो बहुत दिनोंसे हैं, मगर—"

"तो शायद कल भी न जा सकेंगे—तब तो बहुत नुकसान होगा ?"

विमल बाबूने कहा—नुकसान थोड़ा-बहुत हो सकता है, लेकिन मनुष्य क्या केवल रोजगार-धंधेके नफा-नुकसानका हिसाब लगानेमें ही जीवन बिता देगा ? रमणी बाबू खुद भी तो एक रोजगारी आदमी हैं; किन्तु वह क्या कारोबारके बाहर कुछ नहीं करते ?"

सविताने कहा—करते क्यों नहीं; लेकिन न करते, तो अच्छा था।

विमल बाबूने हँसकर कहा—कलका क्रोध आज भी शान्त नहीं हुआ आपका। रमणी बाबू आवेंगे कब ?

सविताने कहा—मुझे मालूम नहीं। न आना ही सम्भव है।

"न आना ही सम्भव है ? कब गये, आज ?"

"आज नहीं, कल रातको आप लोगोंके जानेके बाद ही चले गये थे।"

विमल बाबूने कुछ देर चुप रहकर कहा—आशा है, अधिक नाराज होकर नहीं गये। कल वह कुछ अप्रकृतिस्थ-से थे। जान पड़ता है, इसीसे उस तरह अकारण जोर-जबर्दस्ती की थी। आज निश्चय ही उन्हें अपनी गलती महसूस हुई है। सवितासे कोई उत्तर न पाकर वह कहने लगे—कल मुझसे भी कुछ कम अपराध नहीं हुआ। सिंगापुर जाना अस्वीकार करनेके बाद भी उसके लिए मेरा बार-बार अनुरोध करना अनुचित हुआ। नहीं तो यह सब कुछ न होता। उसीके लिए क्षमा माँगने आज आया हूँ। कल तो आप बहुत अस्वस्थ थीं; आज सचमुच अच्छी हैं या एक जनेपर नाराज होकर और एकको दण्ड दे रही हैं—सच सच बताइए तो ?

उत्तर देते समय दोनोंकी आँखें चार हो गईं। सविताने आँखें नीची करके कहा—मैं अच्छी ही हूँ। लेकिन न होऊँ तो आप उसका क्या उपाय करेंगे विमल बाबू ?

विमल वावूने कहा—उपाय करना तो कठिन नहीं है, कठिन है अनुमति पाना। वही पाना चाहता हूँ।

"ना, वह आप नहीं पावेंगे।"

"न सही। कमसे कम रमणी वावूको फोन करके जतानेका हुक्म दीजिए। आप खुद तो जतावेंगी नहीं।"

"ना, जताऊँगी नहीं। लेकिन आप ही क्यों जतानेके लिए इतने व्यस्त हैं—वताइए?"

विमल वावू कई सेकिंड तक स्तब्ध होकर वैठे रहे। इसके वाद धीरे-धीरे वोले—आज आप कलकी अपेक्षा कहीं ज्यादा अस्वस्थ हैं, यह मैंने घरके भीतर पैर रखते ही आँखोंसे देख लिया था। चेष्टा करके भी आप छिपा नहीं पाईं। इससे व्यस्त हूं।

उत्तर देनेमें सविताको क्षण-भरकी देरी हुई। उसके वाद उसने कहा—अपनी आँखोंके ऊपर इतना भरोसा न करना चाहिए विमल वावू, इससे भारी धोखा होता है।

विमल वावूने कहा—धोखा नहीं होता, यह मैं नहीं कहता; लेकिन क्या दूसरेकी आखोंसे भूल नहीं होती? ससारमें जव धोखा खाना या ठगा जाना मौजूद है, तव अपनी आँखोंके कारण ही ठगाया जाना अच्छा है। इससे फिर भी एक सान्त्वना मिलती है।

सविताके मनकी दशा—हसने जैसी नहीं थी, हँसीकी वात भी न थी, अनिश्चित अज्ञात आतङ्कसे जी ठिकाने नहीं था, तो भी वहुत वड़ा आश्चर्य यह कि उसके मुँह-में हँसी दिखाई दी। यह हँसी मनुष्यकी आँखोंको साधारणतः नहीं दीखती—जव देख पड़ती है तव खूनमें एक नशा पैदा हो जाता है। विमल वावू वातको भूलकर एकटक ताकने लगे—इस हँसीकी भाषा ही जुदी है—परिपूर्ण मदिराके पात्रने शराबकी प्याससे पीड़ित शरावीकी सहजताको जैसे दम-भरमें ही विकृत कर दिया और उस चितवनका निगूढ़ अर्थ नारीकी दृष्टिसे छिपा नहीं रहा। सविताके जरा देर पहलेके सन्देह और सम्भावनाने अव सशयहीन विश्वासके साथ सारी देहपर जैसे लज्जाकी स्याही ढाल दी। उसे याद आया, यह आदमी जानता है कि यह स्त्री नहीं है, वेश्या है। इसी लिए अपमानसे उसका हृदय चाहे जितना जल उठा हो, ऊँची आवाजसे प्रतिवाद करके सामने ही मर्यादा हानिका

अभिनय करनेको जी न चाहा। विगत रात्रिकी घटना याद आ गई। उस समय अपमानके जवाबमें उसने भी कम अपमान नहीं किया था। किन्तु यह आदमी अमार्जित-रुचि, अल्प-शिक्षित रमणी बाबू नहीं है—दोनोंमें बहुत बड़ा अन्तर है। यह शायद अपमानके बदलेमें एक शब्द भी नहीं कहेगा, हो सकता है, केवल अवज्ञाकी दबी हँसी होठोंमें लिये, विनम्र नमस्कारके साथ, क्षमा माँगकर चुपचाप चला जायगा।

दो-तीन मिनट चुपचाप बीते। विमल बाबूने कहा—कहाँ, अपने मेरी बातका जवाब तो नहीं दिया?

सविताने सिर उठाकर कहा—आप क्या पूछ रहे थे, मुझे याद नहीं।

विमल बाबूने कहा—आज आप ऐसी अन्यमनस्क हैं?

किन्तु इसका भी उत्तर न मिलनेपर बोले—मैं कह रहा था कि आपकी तबियत सचमुच ही ठीक नहीं है। क्या हुआ है, मैं नहीं जान सकता?

"ना।"

"मुझे न बताइए, डाक्टरसे तो किसी रुकावटके बिना कह सकती हैं।"

"ना, यह भी नहीं कर सकती।"

"लेकिन यह आपका बड़ा अन्याय है। कारण, जो दोषी है, वह दण्ड नहीं पा रहा है—दण्ड पा रहा है वह आदमी जो बिल्कुल ही निर्दोष है।"

इस अभियोगका भी उत्तर नहीं मिला। विमल बाबू कहने लगे—कल जो देख गया हूँ, उससे कहीं ज्यादह आज आप अस्वस्थ हैं। शायद आज भी जवाब देंगी कि मुझसे देखनेमें भूल हुई है, शायद कहेंगी अपनी आँखोंपर अविश्वास करनेको। किन्तु एक बात आज मैं आपसे कहूँगा। ग्रह-चक्रने मुझे बचपनसे बहुत घुमाया है, इन दोनों आँखोंसे मुझे संसारका बहुत कुछ देखनेको मिला है। पर इन आँखोंसे विशेष भूल नहीं हुई। होती तो बीच नदीमें ही मेरे भाग्यकी नौका डूब जाती, किनारे आकर न भिड़ती। मेरी वे ही दोनों आँखें आज शपथ करके बतला रही हैं कि आज आप स्वस्थ नहीं हैं। तो भी मैं कुछ भी न कर पाऊँगा—मुँह बन्द किये चला जाऊँगा, यह सहन करना तो बहुत कठिन है।

फिर दोनोंकी आँखें मिल गईं। किन्तु अबकी सविताने नजर नीची नहीं की, सिर्फ चुप रह कर ताकती रही। सामने विमल बाबू भी वैसे ही चुप बैठे थे। उनके लालसासे चमक रहे नेत्रोंमें असीम उद्वेग था, जो निषेध मानना नहीं चाहता—

डाक्टरको बुलानेके लिए दौड़ना चाहता है। और वहाँ? धन नहीं आदमी नहीं, किसी अज्ञात घरके कोनेमें उनकी सन्तान रोगशय्यापर पड़ी है। निरुपाय माताका हृदय गहरे अन्तस्तलमें हाहाकर कर उठा। केवल अव्यक्त वेदनासे नहीं, लज्जासे और दुस्सह पश्चात्तापसे। अब वह किसी तरह बैठी नहीं रह सकी। उमड़े हुए आँसुओंको किसी तरह रोककर जल्दीसे उठ पड़ी। बोली—अब और मुझे कष्ट न दीजिएगा विमल बाबू। मुझे कुछ न चाहिए, मैं अच्छी हूँ। इतना कहकर ही नमस्कार करके चली गई। विमल बाबूको विस्मय अवश्य हुआ, किन्तु क्रोध नहीं आया। समझ गये कि यह कठिन मान-अभिमानका मामला है—ठीक होनेमें दो चार दिन लगेंगे।

* * * *

दूसरे दिन दस बजे बहुत दूरपर गाड़ी छोड़कर दरबानके पीछे पीछे सविता १७ नबरके घरके द्वारपर आ खड़ी हुई। फटिककी मा बाहर जा रही थी, ठिठककर खड़ी हो गई। पूछा—आप कौन हैं?

"तुम कौन हो मा?"

"मैं फटिककी मा हूँ—इस घरकी बहुत दिनोंकी टहलनी।

"कहाँ जा रही हो फटिककी मा?"

दासीने हाथकी कटोरी दिखाकर कहा—दूकानसे तेल लेने। मालिकका पैर लग जानेसे अचानक सब तेल गिर गया, इससे फिर लेने जा रही हूँ।

"जान पड़ता है, रसोइया नहीं आया?"

"नहीं माजी, अभीतक नहीं आया। सुनती हूँ, कल आवेगा। आज भी मालिक ही खाना बना रहे हैं।"

"क्या राजू घरमें नहीं है?"

"उन्हें जानती हैं? नहीं माजी, वह घरमें नहीं हैं—लड़के पढ़ाने गये हैं। अब आते ही होंगे।"

"और रेणु कैसी है फटिककी मा?"

"वैसी ही है। क्या जाने क्यों बुखार नहीं छोड़ता माजी। सबको बड़ी चिन्ता है।"

"देखता कौन है?"

"हमारे विनोद डाक्टर, वे अभी आवेंगे।—आप कौन हैं माजी ?"

"मैं इन लोगोंके गाँवकी बहू हूँ फटिककी मा, बहुत दूरके नातेकी। कलकत्तेमें रहती हूँ। सुना कि रेणु बीमार है। उसीकी खबर लेने आई हूँ। बाबूजी मुझे जानते हैं।"

"उन्हें खबर दे आऊँ क्या ?"

"नहीं, इसकी जरूरत नहीं है फटिककी मा। मैं आप ही ऊपर जा रही हूँ। तुम तेल लेकर आओ।"

दरबान खड़ा था। उससे कहा—तुम मोड़पर जाकर खड़े रहो महादेव, जानेका समय होनेपर बुला भेजूँगी। गाड़ी उसी जगह खड़ी रहे।

"बहुत अच्छा माजी," कहकर महादेव चला गया।

सविता ऊपर चढ़कर बरामदेमें जिस ओर ब्रजबाबू रसोई बनानेमें लगे हुए थे, वहाँ जाकर खड़ी हो गई। पैरोंकी आहट ब्रज बाबूके कानोंमें पहुँची, पर घूमकर देखनेकी फुरसत नहीं मिली। बोले, तेल ले आई ? पानी खौलने लगा है फटिककी मा, आलू और पर्वल एकसाथ चढ़ा दूँ या पर्वल पहले पका लूँ ?

सविताने कहा—एक साथ ही चढ़ा दो मँझले बाबू, कुछ-न-कुछ तैयार हो ही जायगा।

ब्रज बाबूने घूमकर देखा। बोले, कौन—नई बहू ? कब आई ? बैठो।—ना ना, जमीनपर नहीं, बड़ी धूल है। मैं आसन देता हूँ। कहकर हाथका बर्तन चटपट उतार ही रहे थे कि सविताने हाथ बढ़ाकर उसमें बाधा दी। करते क्या हो ? तुम अपने हाथसे उठाकर आसन दोगे, तो मैं कैसे बैठूँगी ?

"यह ठीक है। लेकिन अब कुछ दोष नहीं है। उस घरसे एक आसन ला न दूँ ?"

"ना ?"

सविता उसी जगह जमीनपर बैठकर बोली—दोष तब भी था अब भी है और मरनेके बाद भी रहेगा मँझले बाबू। लेकिन वह बात आज रहने दो। रसोई बनानेवाला क्या मिल नहीं रहा है ?

"मिलते तो बहुत हैं नई-बहू, लेकिन गलेमें एक जनेऊ रहनेसे ही तो उनके हाथका नहीं खाया जा सकता। राखाल कल एक आदमीको पकड़ लाया था,

लेकिन विश्वास नहीं कर सका। कल फिर किसी औरको पकड़ लानेके लिए कह गया है।"

"लेकिन वह आदमी भी तुम्हारी जिरहके सामने टिक न सकेगा मँझले बाबू।

ब्रज बाबू हँसे। बोले—अचरज नहीं है। अन्ततः इसीसे डर रहा हूँ। लेकिन उपाय क्या है?

सविताने कहा—मैं अगर किसीको इस कामके लिए पकड़कर ले आऊँ तो उसे रख लोगे मँझले बाबू?

ब्रज बाबूने कहा—जरूर रख लूँगा।

"जिरह नहीं करोगे?"

ब्रज बाबू फिर हँसे। बोले—नहीं जी नहीं, नहीं करूँगा। इतना जानता हूँ कि तुम्हारी जिरहसे पास होकर ही वह यहाँ आवेगा। और वह और भी कठिन है। खैर वह चाहे जो करे, तुम बूढ़े ब्राह्मणकी जाति नष्ट न करोगी, इसमें संदेह नहीं है।

"मैं क्या धोखा नहीं दे सकती?"

"ना, नहीं दे सकतीं। आदमीको ठगना या धोखा देना तुम्हारा स्वभाव नहीं है।"

सविताने दोनों आँखोंमें आँसू भर आनेसे चटपट मुँह फेर लिया—पीछे कहीं आँसू गिर न पड़ें और ब्रज बाबू उन्हें देख न लें।

रासाल आ गया। उसके दोनों हाथोंमें एक एक पोटली थी। एकमें तरकारी थी और दूसरीमें साबूदाना, बार्ली, मिसरी, फल-मूल आदि रोगीके लिए। नई-माको देखकर पहले उसे आश्चर्य हुआ, इसके बाद हाथका बोझ रखकर पैरोंकी धूल माथेसे लगाकर उसने प्रणाम किया। ब्रज बाबूसे कहा—आज बहुत देर हो गई काका बाबू, आप ठाकुरजीकी पूजा करने जाइए। पूजाका उद्योग आयोजन कर लीजिए। मैं नहाकर बाकी रसोई बनाये डालता हूँ। इतना कहकर उसने क्षणभर भोजन-सामग्री जो बन रही थी उसकी ओर नजर डालकर कहा,—कड़ाहीमें वह क्या पक रहा है?

ब्रज बाबूने कहा—रसेदार आलू-परवल।

"और?"

"और? और भात बनेगा—और क्या है राजू?"

राखालने कहा—इतने सब लोग क्या सिर्फ इसीसे खा सकते हैं काका बाबू ? पानी कहाँ है, सिल-लोढा मसाला कहाँ है, कुछ भी तो दिखाई नहीं पड़ता। बरामदेमें झाड़ू तक नहीं लगी—धूल जमा हो रही है। इतनी देर तक आप लोग कर क्या रहे थे ? फटिककी मा कहाँ गई ?

व्रज बाबूने अप्रतिभ होकर कहा—अचानक पैर लगनेसे तेल गिर गया था न—वह दूकानसे तेल लेने गई है—आती ही होगी।

"और मधुआ ?"

"मधुआ पेटमें दर्दके मारे सवेरेसे ही पड़ा है, उठतक नहीं सका। रोगीका काम, घरका काम, अकेली फटिककी मा—

"बहुत अच्छा है" कहकर राखालने मुँह फुला लिया। इतनेमें उसकी नजर कड़ाही-भर मट्ठेके ऊपर पड़ी। उसने पूछा—इतना मट्ठा किसने खरीदा ?

व्रज बाबूने कहा—यह मट्ठा नहीं, छानेका पानी है *। अच्छी तरह फटा क्यों नहीं, रेणुने तो पिया ही नहीं।

सुनकर राखाल जल उठा। "पिया नहीं सो बुद्धिमानीका काम किया।"

सारा भार उसके ऊपर है। रातको जागकर, धनकी चिन्ता करके, दौड़-धूप परिश्रम करके राखाल बहुत ही क्लान्त था, मिजाज रूखा पड़ गया था। क्रोधमें आकर बोला—आपका काम ही ऐसा होता है। आपसे यह भी नहीं हो सकता कि इतनी-सी तैयारी करके रोगीको खिला सकें।

सविताके सामने अपने अनाड़ीपनके लिए तिरस्कृत होकर व्रज बाबू ऐसे कुण्ठित हो उठे कि मुँह देखकर दया आवे। कोई कैफियत उनकी जबानसे न निकली। किन्तु यह सब देखनेकी राखालको फुर्सत नहीं। उसने कहा—आप ठाकुरघरमें जाइए; जो करना है, मैं ही करता हूं।

व्रज बाबू लज्जित मुखसे उठ खड़े हुए। ठाकुरघरका कोई काम—अभी तक नहीं हुआ था—सब उन्हींको करना होगा। व्रज बाबू और एक बार स्नान करनेके लिए नीचे जा रहे थे, सविता सामने आकर खड़ी हो गई। बोली—आज लेकिन पूजा-आह्निक सब सब जल्दी जल्दी कर लेना होगा मँझले बाबू। देर करनेसे काम न चलेगा।

---

* छाना फाड़े गये दूधके खोझड़को कहते हैं। इसकी बंगाली मिठाइयाँ बनाते हैं। पानी रोगीको दिया जाता है।

"क्यों ?"

सविताने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। मुँह घुमाकर राखालसे कहा, अपने काका बाबूके लिए पहले थोड़ी-सी मिसरी तो भिगो दो राजू। कल वह एकादशीका व्रत रहे हैं। और आज अभी तक जलका स्पर्श नहीं किया।

राखाल और व्रज बाबू, दोनोंने ही विस्मयसे उसके मुँहकी ओर ताका। व्रज बाबूने कहा—यह बात भी तुम तुम्हें याद है नई-बहू ?

सविताने कहा—आश्चर्य ही तो है। किन्तु तुम देर न लगा सकोगे—यह मैं कहे देती हूँ। देर लगाओगे तो गोविन्दजीके दरवाजेपर जाकर ऐसा हंगामा शुरू कर दूंगी कि ठाकुरजीकी पूजाके मन्त्रतक तुम भूल जाओगे। जाओ, शान्त होकर पूजन-भजन करो। अब कोई चिन्ता तुम्हें न करनी होगी।

फटिककी मा तेल लेकर हाजिर हुई। राखालने स्टोव जलाकर बार्ली चढ़ा दी। पूछा—और दूध नहीं है फटिककी मा ?

"नहीं है बाबू, मालिकने सब नष्ट कर डाला।"

"तो अब क्या उपाय होगा ? रेणु क्या पियेगी ?"

अबकी नई-मा जरा हँसी। बोली—दूध नहीं है भैया तो उसमें डरनेकी क्या बात है ? दस बेला बार्लीसे काम चल जायगा। लेकिन देखो, तुम खुद भी मालिककी तरह बार्लीको भी बर्बाद न कर डालना।

"नहीं मा, मैं इतना लापर्वाह नहीं हूं। मेरे हाथसे कुछ नष्ट नहीं होता।"

सुनकर नई-मा फिर जरा हँसी, लेकिन कुछ कहा नहीं। जरा देर बाद वह वहांसे उठकर नीचे उतरी। आंगनमें एक किनारे पानीका नल है। पानीके शब्दसे ही पता चल गया, खोजना नहीं पड़ा। नलकी कोठरीके किवाड़े भिड़े हुए थे, ठेलते ही खुल गये। भीतर व्रज बाबू स्नान कर रहे थे। वह हड़बड़ा उठे। सविताने भीतर घुसकर दरवाजा बंद कर लिया। फिर बोली—मझले बाबू, तुमसे कुछ बात करनी है।

"अच्छी बात है, अच्छी बात है, चलो बाहर चलें।"

"ना, बाहर लोग देख सकते हैं। यहाँ तुम्हारे आगे मुझे लज्जा नहीं है।"

व्रज बाबू खिटपिटाकर उठ खड़े हुए। बोले—क्या बात है नई-बहू ?

सविताने कहा—मैं इस घरसे अगर न जाऊं तो तुम मेरा क्या कर सकते हो

व्रज बाबू उसके मुँहकी ओर देख हतबुद्धिसे होकर बोले—इसके माने ?

सविताने कहा—अगर न जाऊं तो तुम्हारे सामने मेरी देहमें कोई हाथ न लगा सकेगा। पुलीसको बुलाकर तुम मुझे गिरफ्तार करा न सकोगे। किसी दूसरेके आगे शिकायत करना भी असंभव है। न जाने पर मेरा क्या कर सकते हो ?

व्रज बाबूने भयसे कठेठी हँसी हँसकर कहा—तुम भी कैसा ठट्ठा कर रही हो नई-बहू, जिसका सिर-पैर नहीं। लो हटो, दरवाजा खोलो—देर हो रही है।

सविताने जवाब दिया—मैं ठट्ठा नहीं करती मँझले बाबू। मैं सत्य ही कह रही हूँ। जब तक जवाब न दोगे, किसी तरह दरवाजा न खोलूँगी।

व्रज बाबू और अधिक डर गये। बोले—ठट्ठा नहीं तो यह तुम्हारा पागल-पन है। पागलपनका क्या कोई जवाब है ?

"जवाब नहीं है तो रहो इसी जगह पागलके साथ एक जगह बंद। दरवाजा नहीं खोलूँगी।"

"लोग क्या कहेंगे ?"

"उनका जो जी चाहे, कहे।"

व्रज बाबूने कहा—अच्छी आफत है! दुनियामें कहीं कभी किसीने जबर्दस्ती रहनेकी बात सुनी है ? तब तो आईन-कानून विचार-आचार नहीं रहनेका। संसारमें जिसका जो जी चाहे वही वह कर सकता है।

सविताने कहा—कर तो सकता ही है। तुम क्या करोगे, बताओ ?

"यहाँ रहोगी, अपने घर भी न जाओगी ?"

सविताने कहा—ना। मेरा अपना घर यही है, जहाँ स्वामी है, सन्तान है। इतने दिन पराये घरमें थी, अब वहाँ नहीं जाऊंगी।

"यहां रहोगी कहाँ ?"

"नीचे इतनी कोठरियाँ हैं, उन्हींमेंसे एकमें रहूँगी। लोगोंको दासी कहकर मेरा परिचय देना—तुमको झूठ भी न कहना होगा।

"तुम पागल हो गई हो नई-बहू ? यह कहीं कर सकता हूँ ?"

"यह न कर सकोगे; किन्तु यहाँसे निकालना इससे कहीं अधिक कठिन काम है। वह कैसे कर सकोगे ? मैं किसी तरह नहीं जाऊंगी मँझले बाबू, यह मैंने निश्चयसे कह दिया।"

"पागल हो! पागल!"

"पागल काहेसे हूँ? जोर-जबर्दस्तीके कारण? तुम्हारे ऊपर जोर-जबदस्ती नहीं करूँगी तो और किसके ऊपर करूँगी? और जोरकी आजमाइश ही अगर करना चाहो तो मुझसे पार नहीं पाओगे।"

"पार क्यों न पाऊँगा?"

"कैसे पाओगे? तुम्हारे तो अब रुपया-पैसा नहीं है—गरीब हो गये हो—मामला-मुकदमा काहेसे चलाओगे?"

ब्रज बाबू हँस पड़े। सविता घुटने टेककर उनके दोनों पैरोंके ऊपर सिर रखकर चुप हो रही। आज तीन दिन हुए, ह सभी विषयोंमें उदासीन, विभ्रान्त-चित्त, अनिर्दिष्ट, शून्य मार्गमें हरघड़ी सिड़ीकी तरह चक्कर मारती फिर रही है। अपनी ओर ध्यान देनेका घड़ी भर भी उसे समय नहीं मिला। उसके असयत रूखे केशोंकी राशि वर्षाके दिगन्ततक फैले हुए मेघकी तरह स्वामीके पैरोंको ढककर चारों ओर भीगी मिट्टीके ऊपर पल भरमें फैल गई। झुककर उसी ओर देखकर ब्रज बाबू सहसा चचल हो उठे। किन्तु उसी दम अपनेको सँभालकर बोले—तुम्हें अपनी बेटीके लिए ही तो चिन्ता है न नई-बहू? अच्छा देखूँ अगर—

सविताने वक्तव्य पूरा नहीं करने दिया—सिर उठाकर उनकी ओर देखा। आँखोंमें आसू भरे हुए थे। कहा—नहीं मँझले बाबू, लड़कीके लिए अब म चिन्ता नहीं करती। उसे देखनेको आदमी है। लेकिन तुम? यह भार मेरे सिर पर डालकर एकदिन मुझे इस घरमें तुम लाये थे—

सहसा रुकावट पड़ गई। उनकी बात भी पूरी नहीं होने पाई। बाहरसे पुकार आई—राखाल बाबू!

राखालने ऊपरसे जवाब दिया—आइए डाक्टर साहब।

सविता उठकर खड़ी हो गई, दरवाजा खोलकर एक तरफ हटकर खड़ी हो गई। ब्रज बाबू बाहर निकल आये।

८

ठाकुर-घरके भीतर ब्रज बाबू थे और बाहर खुले दरवाजेके पास बैठी सविता गुमटकर स्वामीके कामोंको देख रही थी। एक दिन इन ठाकुरजीकी पूजाकी सारी

जिम्मेदारी उसीके ऊपर थी। उसके किये विना स्वामीको काम पसन्द न आता था। तव समयाभावके कारण घरके और और वहुत-से कामोंकी उपेक्षा करनी पड़ती थी। इसीसे फुफिया सास अनेक वहानोंसे उनकी त्रुटि निकालकर अपने छिपे हुए विद्वेषकी जलन शान्त करना चाहती थी। आश्रित ननदें भी आडी-तिर्छी वातें कहकर, मनका क्षोभ मिटाती थीं। कहती थीं कि वे क्या ब्राह्मणके घरकी वेटी नहीं हैं? देवी-देवताके काम-काजको क्या वे नहीं जानतीं? पूजा अर्चना, ठाकुर-देवता क्या नई वहूके घरकी वपौती है कि वही यह सव सीख आई है? किन्तु सविताने किसी दिन इन सव वातोंका जवाव नहीं दिया। अगर कभी लाचारीसे ठाकुर-घरका काम किसी औरको देना पड़ता था, तो दिन भर उसका मन न जाने कैसा होता रहता था। चुपके-चुपके आकर ठाकुरजीसे क्षमाकी भिक्षा माँगती हुई कहती थी—गोविंदजी, लापरवाही हो रही है, यह मैं जानती हूँ, लेकिन कोई उपाय नहीं है।

उन दिनों सपूर्ण शुचिता और निर्विघ्न अनुष्ठान पर उसकी कैसी तीक्ष्ण दृष्टि थी। और आज? वही गोपालकी मूर्ति वैसे ही प्रशान्त सौम्य मुखसे आज भी ताक रही है, उसकी आँखोंमें तनिक भी रुठनेका भाव नहीं है।

इस परिवारमे इतना वड़ा जो प्रलयकाण्ड हो गया, इस घरमें टूटने गढ़नेसे जो उलट-पलट हो गया—इतने वड़े परिवर्तनको क्या ठाकुरजीको खवर ही नहीं हुई? एकदम निर्विकार और उदासीन वनें रहे। इनके अभावका दाग क्या कहीं नहीं पड़ा? उनकी इतने दिनोंकी देशसेवा क्या सूखी जल-रेखाकी तरह निश्चिह्न हो गई!

व्याहके वाद उसे गुरु-मन्त्रकी दीक्षा दी गई। परिजनोंने आपत्ति करके उस समय कहा था कि इतनी छोटी अवस्थामें यह दीक्षा देना उचित नहीं है; कारण, अवहेलाका अपराध स्पर्श कर सकता है। किन्तु व्रज वावूने इसे नहीं सुना था। कहा था—अवस्थामें छोटी होनेपर भी यह इस घरकी गृहिणी है। मेरे गोविन्दजीकी सेवा-पूजाका भार ग्रहण करेगी, इसीलिए मैंने व्याह किया है, नहीं तो प्रयोजन नहीं था। वह प्रयोजन अभी समाप्त नहीं हुआ, इष्टमंत्रको भी वह नहीं भूली, तो भी सव मिट गया—गोविन्दजीके उसी घरमे प्रवेशका अधिकार भी आज उसे नहीं है, दूर वाहर वैठना पड़ा है।

डाक्टरको विदा करके राखाल हँसते हुए मुँहसे उछलता हुआ आकर उपस्थित हुआ। वोला—माताके आशीर्वादसे वढकर कौन औषध है नई-मा? घरमे

आपने पदार्पण किया है, यह देखकर ही मैंने जान लिया था कि अब कोई डर नहीं है—रेणु अच्छी हो गई।

नई-मा उसकी ओर ताकने लगी। व्रज बाबू दर्वाजेके पास आकर खड़े हुए। राखालने कहा—बुखार नहीं है, एकदम नार्मल है। विनोद बाबू आप भी बहुत खुश हुँ। बोले—उस वक्त अगर कुछ हुआ भी तो कल फिर न होगा। अब कोई चिन्ता नहीं है। दो एक दिनोंमें ही पूरी तरहसे आरोग्य हो जायगी। नई मा, यह केवल आपके आशीर्वादका फल है, नहीं तो ऐसा कभी नहीं होता। आज रातको निश्चिन्त होकर जरा सोया जायगा। काका बाबू, जान बची।

खबर सचमुच ही ऐसी थी जिसे किसीने सोचा भी न था। रेणुकी पीड़ा सहज न थी, धीरे धीरे हालत बिगड़ती ही जा रही थी और यह खतरेकी बात थी। जीवन मरणकी कठिन राहमें एक लम्बे समय तक अनिश्चित संग्राम करके चलनेके लिए ही जब सब तैयार हो रहे थे—उसी समय यह आशातीत सुसमाचार आया। सविता गलेमें आँचल डालकर बहुत देर तक जमीनमें सिर टेके प्रणाम करके उठकर खड़ी हुई और बोली—राजू, चिरजीवी होओ भैया,—सुखी रहो।

राखालका आनन्द हृदयमें समाता न था। सिरसे भारी बोझा उतर गया। बोला—मा, पहलेके जमानेमें राजा-रानी गलेका हार उतारकर पुरस्कार देते थे।

सुनकर सविता हँसी। बोली—हार तो तुम्हारे गलेमें अच्छा नहीं लगेगा भैया, अगर जीती रही तो बहूके आने पर उसीके गलेमें पहना दूँगी।

राखाल बोला, इस जन्ममें तो वह गला ढूँढ़े मिलेगा नहीं मा—बीचमें मैं पुरस्कारसे वञ्चित हुआ। आप जानती तो हैं, मेरे भाग्यसे मुहका अन्न धूलमें गिर जाता है, उसे भोग नहीं पाता।

सविता समझ गई, उसने उस दिनके उस घरके निमंत्रणके मामलेकी ही ओर इशारा किया है। राखाल कहने लगा—रेणु अच्छी हो ले, हार न पाऊं न सही, लेकिन मुंह मीठा करनेकी माँग तो छोड़ूगा नहीं मा। लेकिन वह भी और दिनकी बात है, आज चलिए, रसोईघरकी ओर। इधर कई दिन खाली भात खाकर हमारे दिन कटे हैं, किसीने पर्वाह नहीं की। लेकिन आज उससे नहीं चलेगा—अच्छी तरह भोजन करना चाहिए। आइए, उसकी व्यवस्था कर दीजिए।

" चलो भैया " कहकर सविता उठ गई फिर दूर बैठकर राखालके हाथों सब कुछ कराया और यथासमय सभीने अच्छी तरह रुचिके साथ भोजन किया। सभी जानते थे कि सविताने यहां कुछ नहीं खाया-पिया, किन्तु खानेका प्रस्ताव जबान पर लानेका किसीने साहस नहीं किया। केवल फटिककी माने नई अतिथि होनेके कारण और न जाननेसे ही कहना चाहा, किन्तु राखालने आंखके इशारेसे मना कर दिया।

सबोंके चेहरोंपर आज निरुद्वेग हँसी-खुशीका भाव था, जैसे एकाएक किसी जादूमतरसे इस घरके ऊपरसे भूतका उत्पात दूर हो गया है। रेणुको ज्वर नहीं है। वह आरामसे सो रही है। फर्शपर एक चटाई बिछाकर थके हुए राखालने आँखें मूदी है। मधुआ कहीं सनकता ही नहीं। सम्भवतः उसके पेटका दर्द थम गया है। नीचेसे खन-खन आवाज आ रही है। जान पड़ता है फटिककी मा आज समय पर ही जूठे बर्तन मांजे डालती है। सविता आकर ब्रज बाबूकी कोठरीका दरवाजा ठेलकर चौखटके पास आ बैठी। बोली—अजी, जाग रहे हो ?

ब्रज बाबू जागते ही थे, बिछौनेपर उठकर बैठ गये।

सविताने कहा—कहाँ, मेरी बातका जवाब नहीं दिया ?

ब्रज बाबू बोले—राखाल उस समय तुम्हें बुला ले गया, जवाब जान लेनेको समय नहीं मिला।

" किससे जान लोगे ? मुझसे ? "

ब्रज बाबूने कहा—आश्चर्य क्यों हो रहा है नई-बहू, हमेशासे यही व्यवस्था तो चली आ रही है। अभी उस दिन तो राखालके घर बहुत दिनोंकी मुलतवी समस्याका समाधान तुमसे कर लिया। पता लगानेसे सुन लोगी कि उसकी एक बात भी अन्यथा नहीं हुई।

सविताको सिर झुकाये बैठे देखकर वह कहने लगे—प्रश्न चाहे जिधरसे आवे, उसका उत्तर तुम्हीं देती आई हो—मैं नहीं। उसके बाद अचानक एक दिन मेरी लक्ष्मी और सरस्वती, दोनों ही अन्तर्धान हो गई, बुद्धिकी थैली मेरी खो गई। तबसे जवाब देनेका भार आया खुद मेरे ऊपर। जवाब देता भी आया हूं, किन्तु उसकी कैसी दुर्गति है सो तो तुम अपनी आँखोंसे ही देख पा रही हो नई-बहू।

सविताने सिर उठाकर कहा—लेकिन यह तो मेरा अपना ही प्रश्न है मँझले बाबू ?

व्रज बाबूने कहा—लेकिन प्रश्न तो सहज नहीं है। इसके बीच है संसार, समाज, परिवार, सामाजिक रीति-नीति, है लौकिक और पारलौकिक धर्म संस्कार, है तुम्हारी लड़कीका कल्याण-अकल्याण, मान-मर्यादा, उसके जीवनका सुख-दुख। इतने बड़े भयानक प्रश्नका उत्तर स्वय तुम्हारे सिवा कौन देगा, बोलो! मेरी बुद्धिसे कैसे पूरा पड़ेगा! तुमने कहा, अगर तुम न जाओ, अगर जोर करके यहाँ रहो तो मैं क्या कर सकता हूँ? क्या करना उचित है, सो मै तो नहीं जानता नई-बहू, तुम ही बता दो।

सविता कोई उत्तर न देकर बहुत देर तक बैठी हुई न जाने क्या क्या सोचने लगी। इसके बाद पूछा—मँझले बाबू, तुम्हारा कारोबार क्या सचमुच ही सब नष्ट हो गया है?

"हाँ, सचमुच सब नष्ट हो गया है।"

"मै अपने रुपए न निकाल लेती तो क्या होता?"

"तो भी न बचता—सिर्फ उसके डूबनेमें एकाध सालकी देर होती।"

"तुम्हारे हाथमें इस समय रुपया-पैसा कितना है?"

"कुछ भी नहीं। अपनी वही हीरेकी अगूठी पाँचसौमें बेचकर काम चला रहा हूँ।"

"कौन अँगूठी? मैंने अपने व्रतके उद्यापनमें खरीदकर दक्षिणामें जो दी थी वही? तुमने उसे बेच डाला?"

"उसके सिवा और कुछ मेरे पास न था, सो तो तुम्हें मालूम है नई-बहू।"

सविताने फिर कुछ देर चुप रहकर पूछा—जो दो ताल्लुके थे, वे भी क्या गये?

व्रज बाबूने कहा—गये नहीं, लेकिन जायँगे। रेहन हैं, उन्हें छुड़ा नहीं सकूगा।

कई मिनट चुप रहकर सविताने फिर प्रश्न किया—तुम्हारी दूसरे ब्याहकी स्त्रीके पास क्या रहा?

व्रज बाबूने कहा—उसके नाम पटलडाँगाके दो मकान खरीदे गये थे, वह है। और है गहना, है पचीस-तीस हजारके प्रामिसरी नोट। उसकी और उसकी बेटीकी जिन्दगी कट जायगी, कष्ट न होगा।

"रेणुके लिए क्या है मँझले बाबू?"

"कुछ नहीं। साधारण कुछ गहने थे, वह भी शायद भूलसे वे लोग लेकर चले गये।"

सुनकर रेणुकी मा अधोमुख स्तब्ध हो रही।

व्रज बाबूने कहा—सोचता हूँ, रेणुके अच्छे हो जानेके बाद हम दोनों अपने गाव चले जायँ। वहाँ सिर्फ दया करके लड़कीको अगर कोई ग्रहण कर ले तो उसे ब्याह दूँ और उसके बाद भी अगर जीता रहा तो गोविन्दजीकी सेवा करते हुए वहीं देहातमें किसी तरह मेरे दिन कट जायँगे। यही भरोसा है।

किन्तु सविताके पाससे कोई उत्तर न पाकर वह फिर कहने लगे—एक मुश्किल हुई रेणुको लेकर, उसे मैं राजी नहीं कर पाया। उसे तुम नहीं जानती, लेकिन वह तुम्हारे ही समान स्वाभिमानी हुई है। सहजमें कुछ कहती नहीं; लेकिन जब कुछ कहती है, तो फिर उसे अन्यथा नहीं कराया जा सकता। जिस दिन इस घरमें आया, उस दिन रेणुने कहा—चलो बाबूजी, हम अपने गाँव चलें। लेकिन, मेरा ब्याह करनेकी तुम चेष्टा न करो। अपने पिताको अकेला छोड़कर मैं कहीं न जा सकूँगी। मैंने कहा—मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ बेटी, कितने दिन और जियूगा। मेरे न रहने पर तेरा क्या होगा, बता?' उसने कहा—बाबूजी, तुम तो मेरे भाग्यको बदल नहीं सकोगे। बचपनमें मा जिसे छोड़कर चली जाती है, जिसके ब्याहके दिन अचानक अनजानी बाधासे सब छिन्न-भिन्न हो जाता है, जिसके पिताकी राजसी सम्पदा इन्द्रजालकी तरह हवामें उड़ जाती है, उसे भगवान सुख भोगनेके लिए ससारमें नहीं भेजते—उसका दु:खका जीवन दुःखमे ही समाप्त होता है। यही मेरे भाग्यका लिखा है बाबूजी, मेरे लिए सोच सोचकर तुम कष्ट न पाओ।—कहते-कहते व्रज बाबूका गला भर आया, किन्तु सभलकर उन्होंने फिर कहना शुरू किया—रेणुने ये बातें खीजकर नहीं कहीं, दुःखके धक्केसे व्याकुल होकर भी नहीं। वह जानती है कि उसके भाग्यमें यह अवश्य होगा। उसके चेहरेपर विषादकी काली छाया नहीं थी। उसने कहा भी खूब सहजमें। किन्तु यह जो मुँहमें आया वही कह देना नहीं है—यह खूब सोच-समझकर मुँहसे निकाली गई बात है। इसीसे भय होता है कि उसे सहजमें डिगाया न जा सकेगा। तो भी मैं सोचता हूँ नई बहू, इस दुर्भाग्यमे भी यह मुझे बहुत बड़ी सान्त्वना है कि मेरी रेणु शोक करने नहीं बैठी—मनमें भी एक बार उसने मेरा तिरस्कार नहीं किया।

स्वामीके मुखकी ओर एकटक देखकर सविताकी दोनों आँखोंमें आँसू भर आये। बोली—मँझले बाबू, जीती रहकर सभी आँखोंसे देखूँगी, कानोंसे सुनूँगी, लेकिन कर कुछ न पाऊँगी?

व्रज बाबूने कहा—क्या करना चाहती हो नई-बहू? रेणु तो किसी तरह तुम्हारी सहायता लेगी नहीं। और मैं—

सविताकी जिह्वाने कहा नहीं माना। वह अकस्मात् पूछ बैठी—रेणु जानती है कि मैं अभी जीवित हूँ मॅझले बाबू?

बात साधारण ही थी, किन्तु यह प्रश्न उसका कितनी ओरसे, कितनी तरहसे, कितने भावोंसे रातके स्वप्न और दिनकी कल्पनाओंको छाये हुए है, इसे उसके सिवा और कौन जानता है? उतरे हुए मुखसे ताकती हुई सविताके हृदयमें उत्तरके लिए उथल-पुथल होने लगी। व्रज बाबू क्षणभर चुप रहकर सोचते रहे, फिर बोले—हाँ, वह जानती है।

"जानती है, मैं जिंदा हूँ?"

"जानती है। वह जानती है कि तुम कलकत्तेमें हो। वह जानती है कि तुम अथाह ऐश्वर्यमें सुखसे हो।"

सविताने मन ही मन कहा—धरती तू फट जा।

व्रज बाबू कहने लगे—वह तुम्हारी सहायता नहीं लेगी। और मैं—मैंने गोविंदजीकी अन्तसमयकी पुकार कानोंमें सुन ली है नई-बहू। मेरे गिनतीके दिन पूरे हो आये हैं। तो भी अगर तुमको मुझे कुछ देकर तृप्ति मिले तो मैं लूँगा। प्रयोजन है, इसलिए नहीं—अपने धर्मका अनुशासन—अपने ठाकुरजीका आदेश समझकर लूँगा। तुम्हारा दान हाथ फैलाकर लेकर मैं मर्दके अंतिम अभिमानको भी बिल्कुल मिटाकर, तृणसे भी हीन हल्का होकर इस संसारसे विदा होऊँगा। देखूँ, तब यदि उनके भी चरणोंमें स्थान पा जाऊँ।

सविता अपने स्वामीके मुखकी ओर देख न सकी, किन्तु वह स्पष्ट समझ गई कि उनकी आँखोंसे दो बूँद आसू ढुलक पड़े हैं। उसी जगह स्तब्ध नतमुख होकर बैठ गई।—उसे सवेरेकी बातें याद आने लगीं। याद आया, तब स्वामीकी नहानेकी कोठरीमें घुसकर दरवाजा बंद करके उसने उनसे जोर करके कहा था कि अगर न जाऊँ तो क्या कर सकते हो? पैरोंपर सिर रखकर कहा था कि यही तो मेरा घर है जहाँ मेरी कन्या है, जहाँ मेरे स्वामी हैं। किसकी ताकत है कि मुझे यहाँसे निकाले?

किन्तु अब उसकी समझमें आ गया कि उसकी ये बातें कितनी अर्थहीन हैं, कितनी असंभव हैं। आज कितना हास्यकर है, उसका जोर करनेका अधिकार,

उसका शून्यगर्भ आस्फालन। आज एक सिरेपर खड़ी है एक कुलत्यागिनी नारी और दूसरे सिरे पर खड़े हैं उसके स्वामी। उसकी बीमार सन्तान ही केवल नहीं खड़ी है; बीचमें धर्म, नीति और समाज-बंधनके असंख्य विधि-विधान भी हैं। केवल आँसुओंके जलसे धोकर स्वामीके पैरोंपर माथा पटककर इतना बड़ा बोझा उठायगी वह कैसे?

वह फिर कुछ नहीं बोली, स्वामीको और एक बार चुपचाप धरतीपर माथा टेककर प्रणाम किया और उठ खड़ी हुई।

राखालकी नींद खुल गई थी। उसने आकर कहा—मैं समझा था, शायद नई-मा चली गईं।

"नहीं भैया, अब जाऊँगी। रेणु कैसी है?"

"अच्छी है मा, अभीतक सो रही है।"

"मँझले बाबू, तो अब मैं जाऊँ?"

"हाँ, जाओ।"

राखालने कहा—मा, चलिए आपको गाडीपर सवार करा आऊँ। कल फिर आयेंगी न?

"आऊँगी क्यों नहीं भैया" कहकर वह आगे बढ़ी, पीछे पीछे राखाल चला।

लौटते समय राहमें गाड़ीके भीतर बैठी हुई सविता मन ही मन आजकी सब बातों और घटनाओंकी आलोचना कर रही थी। उसका तेरह वर्ष पहलेका जीवन जिनके साथ गुँथा हुआ था, आज फिर उन्हींके बीचमें सारा दिन बीता। स्वामी, कन्या, राखालराज और कुल-देवता गोविन्दजी। गृह-त्यागके बादसे हरघड़ी अपनेको छिपाये रहकर ही उसका इतना समय बीता है। कभी तीर्थयात्राके लिए बाहर नहीं निकली, किसी देवमन्दिरमें प्रवेश नहीं किया, कभी गंगा नहाने नहीं गई—कितने ही पर्वके दिन, कितने ही शुभ-क्षण, कितने ही स्नानके योग निकल गये—साहस करके किसी दिन राहके बरामदे तकमें आकर खड़ी नहीं हुई, पीछे कहीं किसी परिचितकी नजर न पड़ जाय। उस दिन राखालके घर अकस्मात् जरा-सा आवरण उठा है—आज सभीसे उसका भय दूर हो गया, लज्जा मिट गई। रेणुने अभीतक नहीं सुना, लेकिन उसके सुननेको बाकी नहीं रहेगा। तब वह भी शायद यों ही चुपचाप क्षमा कर देगी। उसपर किसीकी नाराजी नहीं, अभिमान नहीं; व्यथा देनेको जरा-सा कटाक्ष तक किसीने नहीं

किया। दुःखके दिनमे वह जो दया करके उन लोगोंकी खबर लेने आई है, इसीसे सब लोग कृतज्ञ हैं। व्यस्त होकर व्रज बाबू अपने हाथसे उसे बैठनेके लिए आसन देने आये थे, जिससे अतिथिके आदर-सत्कारमे कहीं कोई त्रुटि न हो। अर्थात् परिपूर्ण विच्छेदमें अब और कुछ बाकी नहीं है। वहाँसे लौटते समय सविता इसी बातको निःसशय होकर जान आई।

रेणु जानती है कि उसके पिता निर्धन हैं। वह जानती है कि भविष्यके सभी सुख-सौभाग्यकी आशा निर्मूल हो गई है। किन्तु इसके लिए वह शोक करने नहीं बैठी, दुर्दशाको उसने अटल धैर्यके साथ स्वीकार किया है। उसने सकल्प कर लिया है कि अच्छी होकर गरीब पिताको साथ लेकर एकान्त गाँवके घरमें चली जायगी। पिताकी सेवा करके वहीं जीवन बिता देगी।

व्रज बाबूने कहा है कि रेणु जानती है कि उसकी मा जीती है—मा उसकी अथाह ऐश्वर्यके साथ सुखसे है। स्वामीकी यह बात जितनी बार उसे याद आई उतनी ही बार सारे शरीरमे लज्जासे रोएँ खड़े हो गये। यह मिथ्या नहीं है—किन्तु यही क्या सत्य है? लड़कीको उसने देखा नहीं। राखालके मुखके आभाससे कन्याके रूपका विवरण उसने सुना है—सुना है, वह देखनेमें अपनी माकी तरह ही है। अपने मुखको याद करके उस चित्रके अंकित करनेकी चेष्टा की, किन्तु वह वैसा स्पष्ट नहीं हुआ। तो भी उसका अपना रोग-तप्त मुख ही जैसे मानसपटपर बारबार खिंचने लगा।

देहातकी दुःख-दुर्दशाकी कितनी ही सम्भव-असम्भव मूर्तियाँ उसकी कल्पनामे आने-जाने लगीं, जिनकी कुछ सख्या नहीं, और सभी जैसे केवल उसी एक पीले रुग्ण मुखको सब ओरसे घेरे हुए हैं। ससारमें अनासक्त गरीब पिता ईश्वरके ध्यानमें निमग्न है, और कुछ भी उसे दिखाई नहीं पड़ता। वहाँ रेणु एकदम अकेली है। दुर्दिनमें सान्त्वना देनेके लिए कोई बन्धु नहीं है, विपत्तिमें आश्वासन या भरोसा देनेके लिए कोई आत्मीय नहीं है। वहाँ दिनके बाद दिन उसके कैसे कटेंगे? अगर फिर कभी ऐसी ही बीमारीमें पड़ जाय, तब क्या होगा! एकाएक अगर वृद्ध पिताके लिए परलोककी पुकार आ जाय तब? लेकिन कोई उपाय नहीं है। उपाय नहीं है। उसे जान पड़ने लगा, जैसे कोई उसकी सन्तानको पिंजड़ेमें डालकर उसीकी आँखोंके सामने हत्या कर रहा।

सविताको होश तब हुआ, जब गाड़ी उसके दरवाजेपर आ खड़ी हुई। ऊपर चढ़ते समय दासीने आकर चुपकेसे कहा—माजी, बाबू बहुत खफा हैं।

" वह कब आये ? "

" बहुत देर हुई। बड़े कमरेमें बैठे विमल बाबूसे बातें कर रहे हैं। "

" विमल बाबू कब आये ? "

" जरा पहले। अब एकाएक वहां जानेकी जरूरत नहीं है माजी जरा गुस्सा ठंडा हो जाय। "

सविताने भौंह चढ़ाकर कहा—तू जा, अपना काम कर।

फिर नहाकर, कपड़े बदल कर जब सविता कमरेमें पहुंची, उस समय सध्याके दीप जले ही थे। विमल बाबूने खड़े होकर नमस्कार करके पूछा—आज तबियत कैसी है ?

" अच्छी है। बैठिए। "

उनके बैठनेपर सविता आप भी एक कुर्सी खींचकर बैठ गई। विमल बाबूने कहा—सुना, आप दोपहरके पहले ही गई थीं—आज आपने कुछ खाया तक नहीं।

" नहीं, उसके लिए समय नहीं मिला। "

रमणी बाबू मुख मेघाच्छन्न किये बैठे थे। बोले—कहाँ जाना हुआ था आज ?

सविताने कहा—एक काम था।

" दिन-भर काम था ? "

" नहीं तो दिन-भर क्यों ठहरती ? "

रमणी बाबूने क्रुद्ध कंठसे कहा—सुनता हूं, आजकल अक्सर तुम घर नहीं रहतीं। क्या काम था, जरा सुन नहीं सकता क्या ?

सविताने कहा—नहीं। वह तुम्हारे सुननेका नहीं है।—विमल बाबू, आज भी आपका जाना नहीं हुआ ?

विमल बाबूने कहा—ना, नहीं हुआ। चाचाजीके कुछ अच्छे हुए बिना शायद जा नहीं सकूंगा।

उनकी बात समाप्त होते ही रमणी बाबू तावके साथ कह उठे—क्या तुम मुझसे पूछकर बाहर गई थीं ?

सविताने शान्त भावसे उत्तर दिया—तुम तो उस समय थे नहीं।

जवाब क्रोध उत्पन्न करनेवाला नहीं था, लेकिन वह तो क्रोधित थे ही, इसीसे एकाएक चिल्ला उठे—रहूँ या न रहूँ, यह मैं समझूँगा, लेकिन आज मैं साफ कहे देता हूँ कि मेरे हुक्मके बिना घरके बाहर एक पैर भी नहीं निकाल सकोगी। सुन लिया !

सुन पाया सभीने। विमल बाबू सकोचसे व्याकुल होकर बोले--रमणी बाबू, अब मै चलता हूँ—काम है।

रमणी बाबूने कहा—ना ना, आप बैठिए। मैंने सिर्फ यही जता दिया कि यह सब आवारापन मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता।

सविताने पूछा—आवारापन किसे कहते है ?

"यही जो तुम करती फिरती हो, जब-तब जहाँ-तहाँ घूमने फिरनेको।"

"काम होनेपर भी न जाऊँगी ?"

"नहीं। मैं जो कहूंगा वही तुम्हारा काम है। और काम नहीं।"

"वही तो इतने दिनसे करती आई हू सँझले बाबू। लेकिन अब क्या मुझपर अविश्वास हो रहा है ?"

अविश्वास सविताके ऊपर उन्हें किसी दिन नहीं हुआ, तो भी क्रोधके तावमें रमणी बाबू कह उठे—होता है, सौ बार होता है। तुम क्या कोई सीता-सावित्री हो जो अविश्वास नहीं हो सकता ? एक आदमीको धोखा दे सकी हो, मुझे नहीं दे सकतीं ?

विमल बाबू लज्जासे व्यतिव्यस्त हो उठे। इन लोगोंके कलहके बीचमें बोला भी नहीं जा सकता। किन्तु सविता स्थिर होकर बहुत देर तक चुपचाप रमणी बाबूके मुहकी ओर ताकती रही। इसके बाद बोली—सँझले बाबू, तुम जानते हो, मै झूठ नहीं बोलती। हम लोगोंका सबध आजसे समाप्त हो गया। अब तुम मेरे घर न आना।

लड़ाई-झगड़ा इसके पहले भी हुआ है, लेकिन वह सब एकतरफा था। हंगामा और चीख-पुकारके डरसे सविता हमेशा चुप ही रही है, कहीं गुप्त बात कोई सुन न ले। उसी नई-बहूके मुखसे खासकर एक तीसरे आदमीके सामने इतनी बड़ी कड़ी बात सुनकर रमणी बाबू पागल हो उठे। मुख विकृत करके बोले—यह घर किसका है तुम्हारा ? यह कहते जरा लज्जा भी नहीं आई ?

सविता उनके मुहकी ओर ताककर बहुत देर तक चुप रही। उसके बाद धीरे-धीरे बोली—हाँ, मुझे लज्जा आनी चाहिए सँझले बाबू, तुमने यह सच कहा। ना, यह घर मेरा नहीं, तुम्हारा है। तुम्हींने दिया था। कल मैं और कहीं चली जाऊंगी, तब सभी तुम्हारा रहेगा। तेरह वर्षके बाद चले जानेके दिन तुम्हारी एक कौड़ी भी अपने साथ नहीं ले जाऊँगी—सब तुमको लौटाये देती हू।

इस कण्ठस्वरसे रमणी बाबूको होश आया। हतबुद्धि होकर बोले—कल चली जाओगी कैसे?

"हाँ, मैं कल ही चली जाऊँगी।"

"चली जाऊँगी कहनेसे ही मैं तुमको जाने दूँगा?"

"मुझे रोकनेकी वृथा चेष्टा न करो सँझले बाबू। हमारा सब कुछ समाप्त हो गया, वह अब नहीं लौटेगा।"

इतनी देरमें रमणी बाबूको होश हुआ कि मामला सचमुच बेढब हो उठा है। डरकर बोले—क्रोधमें क्या कोई बात मुँहसे नहीं निकल जाती?

सविताने कहा—क्रोधके लिए नहीं। क्रोध जब ठंडा पड़ जायगा, तब समझोगे कि इतना बड़ा घर दान करनेकी हानि तुमसे सही न जायगी। हमेशा काँटेकी तरह तुम्हारे मनमें यह बात खटका करेगी कि हम दोनोंके देने-पावनेमें अकेले तुम्हीं ठगाये गये हो। तराजूका एक पलड़ा जब शून्य देखोगे, तब दूसरी ओर बटखरोंका बोझ तुम्हारी छातीपर चक्कीके पाटकी तरह चढ बैठेगा। उसे सहन करनेकी शिक्षा तुमने नहीं पाई। लेकिन और बहस करनेकी ताकत मुझमे नहीं है—मैं बहुत क्लान्त हूँ।—विमल बाबू, अब शायद हम लोगोंकी भेंटका सुयोग या अवकाश नहीं होगा—मैं कल ही चली जाऊँगी।

"कहाँ जायेंगी।"

"यह अभी नहीं जानती।"

"लेकिन जानेके पहले मुलाकात होगी ही। मैं फिर आऊँगा।"

"समय मिले तो आइए। लेकिन अब मैं चलती हूँ।" यह कहकर सविता दोनोंको नमस्कार करके चली गई।

विमल बाबू बोले—रमणी बाबू, मेरा भी नमस्कार लीजिए। जाता हूँ।

९

इतनी बड़ी बात छिपी नहीं रही, सब लोग जान गये। सवेरा होनेके पहले ही सभी किराएदारोंने सुना कि कल रातको बाबू और गृहिणीमें भारी झगड़ा हो गया है और नई माने प्रतिज्ञा कर ली है कि कल ही यह घर छोड़कर चली जायँगी। और कोई होता तो वे केवल थोड़ा-सा हँसकर अपने अपने कामोंमें लग जाते, लेकिन इनके बारेमें वे ऐसा नहीं कर सके। पर यह बात भी न थी कि वे इसपर ठीक विश्वास कर सके हों। किन्तु बात ऐसी बड़ी थी कि अगर सच हो तो बड़ी चिन्ताकी है। उन्हें शहरमें इतने कम किराएपर ऐसी रहनेकी जगह नहीं मिलेगी—यही डर न था; उनके ऊपर कितने ही महीनोंका बहुत-सा किराया भी बाकी पड़ा है और कितनी ही तरहसे वे इस घरकी मालिकिनके निकट ऋणी हैं अनेक तो यह भूल ही गये हैं कि यह घर उनका अपना नहीं है। उन्होंने आकर शारदाको पकड़ा। शारदाने जाकर मुरझाये हुए मुखसे कहा—आज यह सब लोग क्या कह रहे हैं मा?

"क्या कह रहे हैं?"

"कहते हैं कि इस घरसे आप चली जा रही हैं।"

"सच ही तो कह रहे हैं शारदा।"

"सच कह रहे हैं? सचमुच ही आप चली जायँगी?"

"सचमुच चली जाऊँगी शारदा।"

सुनकर शारदा स्तब्ध हो रही। इसके बाद धीरे धीरे पूछा—लेकिन कहाँ जायँगी?

सविताने कहा—यह अभीतक कुछ ठीक नहीं किया। जाना होगा, सिर्फ इतना ही स्थिर किया है।

शारदाकी आखोंमें आँसू भर आये। उसने कहा—वे कोई विश्वास नहीं कर पा रहे हैं मा। सोचते हैं, यह केवल आपकी क्रोधमें कही हुई बात है। क्रोध शान्त होनेपर आप न जायँगी। मैं भी सोच नहीं सकती मा, कि हमारी आशाओंपर बिना मेघके इतना बड़ा वज्रपात होगा—निराश्रय होकर हम सब किधर कहाँ बह जायँगे। तो भी लोग जो नहीं जानते, वह मैं जानती हूँ। मैं समझ पाई हूँ मा कि इस समय यह घर इतना कड़वा या अरुचिकर हो उठा है कि अब इसमें

रहना आपके लिए असह्य हो रहा है। लेकिन जानेकी कहते ही तो जाना नहीं हो सकता?

नई-माने कहा—क्यों नहीं हो सकता शारदा? यह घर मुझे आजसे ही नहीं बारह वर्ष पहले जब मैंने इसमें पहले पहल पैर रखा था, उसी दिनसे कड़वा लग रहा है। लेकिन बारह वर्ष तक जो भूल की है वही भूल और बारह साल करनी होगी, यह अब नहीं मानूगी—इस दुर्गतिसे अपनेको अवश्य ही मुक्त करूँगी।

शारदाने कहा—मा, मेरे तो कोई नहीं है। मुझे किसके पास छोड़ जायेंगी?

नई-माने कहा—जिसके स्वामी है उसके सब कुछ है शारदा। तुमने कोई अन्याय, कोई अपराध नहीं किया। जीवनको पछताकर एक दिन लौटना ही पड़ेगा। दुःखकी ज्वालासे हतबुद्धि होकर वह चाहे जहाँ भाग गया हो, उसे फिर तुम्हारे पास आना ही होगा। लेकिन मेरे साथ जानेसे तो वह तुमको सहजमे न खोज पावेगा।

शारदाने सिर झुकाकर कहा—नहीं मा, वह अब नहीं आवेंगे।

"ऐसा कभी नही होता शारदा, वह आवेगा ही।"

"नहीं मा, नहीं आवेगे। इसका कारण मैं आपसे कहूँगी, लेकिन आज नहीं, और किसी दिन।"

जाननेके लिए सविताने जोर नहीं दिया, अत्यन्त विस्मयसे चुप हो रही।

शारदा कहने लगी—आप चाहे जहाँ जायँ, मैं साथ चलूँगी। आप बड़े घरकी बेटी, बड़े घरकी बहू हैं। आपका कहीं अकेला जाना नहीं हो सकता, साथमे एक दासी चाहिए ही। मैं आपकी वही दासी हू मा।

"यह तुमने कैसे जाना शारदा, कि मैं बड़े घरकी बेटी हू, बड़े घरकी बहू हूँ? किसने तुमसे यह कहा?"

शारदाने कहा—किसीने नहीं। लेकिन क्या यह बात मै अकेली ही जानती हू? सभी जानते हैं। यह बात आपकी आँखकी पुतलियोंमे लिखी है, यह बात आपके सब अगोंमे लिखी है। आप जिधरसे निकल जाती है, सबको खबर हो जाती है। बाबूने किसी जरासे सदेहका इशारा किया था, कुछ थोड़ी-सी अपमानकी बात कही थी—ऐसा कितने ही घरोंमे तो हुआ करता है—लेकिन वह आपसे सही नहीं गई, सब छोड़ छाड़कर चले जाना चाहती हैं। बड़े घरकी लड़कीके सिवा क्या इतना स्वाभिमान और किसीमे हो सकता है मा?

क्षणभर मौन रहकर वह फिर कहने लगी—भीतरी बात सभी जानते हैं। तो भी जो कोई कभी उसे जबानपर नहीं ला सकता, सो इसका कारण न तो भय है और न आपके अनुग्रहका लोभ। ऐसा होता तो यह छलना किसी न किसी दिन प्रकट हो पड़ती। जो कोई इंगित आभाससे भी असम्मान नहीं कर सकता, सो केवल इसीलिए मा।

सविताने कृतज्ञ कण्ठसे स्वीकार करके कहा—तुम सभी मुझे प्यार करते हो, यह मैं जानती हूँ।

शारदाने कहा—केवल प्यार ही नहीं, हम सब आपकी बड़ी इज्जत करते हैं। आप अच्छी हैं, इसीलिए नहीं, आप बड़ी हैं, इसलिए करते हैं। इसीलिए चर्चा करनेकी कौन कहे, इस बातको सोचनेमें भी हम लज्जित होते हैं। उन्हीं हम लोगोंको छोड़कर आप कैसे चली जायँगी?

"लेकिन बिना गये भी तो कोई उपाय नहीं है।"

"अगर आपके लिए बिना गये उपाय नहीं है, तो मेरे लिए भी आपके साथ गये बिना उपाय नहीं है। मैं न रहूँगी तो आपका काम-काज कौन कर देगा मा?"

सविताने कहा—कौन करेगा, यह नहीं जानती, लेकिन अगर मैं बड़े घरसे ही आई होऊँ शारदा, तो तुम भी वैसे घरसे नहीं आई हो जिसके लोग पराई टहल करते फिरते हैं। तुम्हें मैं ही क्यों दासीका काम करने दूँगी?

शारदाने जवाब दिया—तो दासीका काम नहीं करूँगी, मैं माकी सेवा करूँगी। आप अपमानकी लज्जासे अकेली जाकर राहमें खड़ी होंगी, इसका दुःख कितना बड़ा है, यह मैं जानती हूँ। वह मुझसे न सहा जायगा, इसलिए साथ अवश्य ही जाऊँगी। यह कहकर उसने आँचलसे आँसू पोंछ लीं।

वह स्पष्ट करके कहना नहीं चाहती, केवल इशारेसे ही समझाना चाहती है कि निराश्रयको कितना दुःख है। सविताको खुद भी याद आ गई उस दिनकी बात, जिस दिन गहरी रातको स्वामीका घर छोड़कर वह बाहर आई थी। आज भी उस दुःखकी तुलना करनेके लिए उसे संसारका कोई भी दुःख ढूँढे नहीं मिला। उसके बहुत लम्बे बारह वर्ष इसी घरमें कटे। इस नरक-कुण्डमें भी जीनेके प्रयोजनसे फिर उसे धीरे धीरे बहुत कुछ संचय करना पड़ा है। वह सब क्या आज सचमुच ही खोना है? सचमुच ही क्या प्रयोजन निर्लुप्त

नहीं रहा? क्या उसने अपनेको फिरसे पा लिया है? शारदाकी सतर्क वाणीने उसे सचेतन किया। उसके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ कि निर्विघ्न आश्रयके त्यागका घोर दुस्साहस शायद अब आज वह नहीं कर सकती। पुण्यमय स्वामी-गृह-वासकी बहुत-सी स्मृतियाँ उसके मानस-पटपर उभर आईं। भय हुआ कि उस दिनकी वह देह, वह मन, वह शान्त ग्राम-भवनका सरल सामान्य प्रयोजन इस विक्षुब्ध नगरीकी अपवित्र जीवन-यात्राके बवंडरमें चक्कर खाकर न जाने कहाँ डूब गये हैं। आज किसी तरह उनका पता नहीं मिलेगा। उसे मन ही मन मानना ही पड़ा कि अब वह वही नई-बहू नहीं है। उसकी उम्र हो गई है; अभ्यास भी बहुत बदल गये हैं। यह आश्रय जिसने दिया है, उसकी दी हुई लांछना और अपमान चाहे जितना बड़ा क्यों न हो, उस आश्रयको छोड़कर खाली हाथ राहमें निकल पड़ना आज उसकी अपेक्षा भी कठिन है। किन्तु एकाएक खयाल आया कि रहा ही किस तरह जाय? इस आदमीके विरुद्ध उसका विद्वेष और घृणा दिन-दिन जमा होते होते कितने बड़े पर्वताकार हो उठे हैं, यह इतने दिन उसने आप भी इस तरह हिसाब करके नहीं देखा था। उसे जान पड़ा, जैसे वह आया है, पलँगपर बैठकर पान-तमाखूसे एक गाल बतौड़ीकी तरह फुलाकर और बारबार उच्चारित उन्हीं सब अत्यन्त अरुचिकर सम्भाषणों और मजाकोंसे उसके मनोरंजनका प्रयत्न कर रहा है—उसकी लालसा-लिप्त वह गंदी चितवन, उसकी बिलकुल निर्लज्ज अति उग्र अधीरता—उसी कामार्त्त अधेड़ व्यक्तिकी शय्याके पास जाकर फिर उसे रात बितानी होगी—यह सोचकर क्षणभरके लिए सविता जैसे हतचेतन हो रही।

"मा?"

"क्यों शारदा?"

"आज सचमुच ही तो नहीं चली जायँगी?"

"आज नहीं तो एक दिन तो जाना ही होगा।"

"क्यों जाना होगा? यह घर तो आपका है।"

"नहीं, मेरा नहीं, रमणी बाबूका है।"

इतने दिन वह यह नाम नहीं लेती थी, जैसे सत्य ही यह नाम लेना उसके लिए निषिद्ध है। आज छलनाकी यह नकाब उसने उतार दी। शारदाने इस-पर लक्ष्य किया। कारण, हिन्दू-नारीके कानोंमें यह बात खटकती ही है। इसका

कारण भी समझ लिया। बोली—हम सब तो जानते हैं कि यह घर उन्होंने आपको दिया था। अब तो इसपर उनका अधिकार नहीं है मा।

सविताने कहा—सो मैं नहीं जानती शारदा। वह आईन अदालतकी बात है। मैं नहीं जानती कि मौखिक दानका कितना स्वत्व है।

शारदाने डरकर कहा—सिर्फ जबानी? लिखत-पढ़त नहीं हुई? ऐसा कच्चा काम क्यों किया था मा?

सविता चुप हो रही। उसे उसी दम याद आया कि स्वामीके पास उसका जो रुपया जमा था, वह उन्होंने सर्वस्व चला जानेपर भी उस दिन सूद और असल सहित सब लौटा दिया है।

शारदाने कहा—आपने रमणी बाबूको आनेके लिए मना कर दिया है। अब अगर वह गुस्सेके मारे इस बातको अस्वीकार कर दें?

सविताने अविचलित कण्ठसे कहा—वह यही करें शारदा, मैं उन्हें तनिक भी दोष न दूँगी। केवल उनके निकट मेरी यही प्रार्थना है कि लड़ने-झगड़ने और चीखने-चिल्लानेके लिए अब वह मेरे सामने न आवें।

सुनकर शारदा अवाक् हो रही। अन्तको सूखे हुए मुखसे बोली—मा, एक बात कहती हूं आपसे। रमणी बाबूको विदा कर दिया, रहनेका घर भी जानेको जान पड़ता है। सचमुच ही क्या आपको कोई चिन्ता नहीं होती? उस दिन मुझे छोड़कर जब वह चले गये, तब अकेली मैं भयसे जैसे पागल हो गई। ज्ञान या समझ न होनेसे ही तो तब विष खाकर मरने चली थी मा, नहीं तो इतना बड़ा पाप करनेको मेरा साहस न होता। लेकिन आपको तो सम्पूर्ण निर्भय देखती हूं, किसी बातकी चिन्ता नहीं करतीं—आपको किसीकी पर्वाह नहीं है। ऐसा किस तरह सम्भव है मा? जान पड़ता है, हम लोगोंसे बड़ी होनेके कारण ही आपके लिए यह सम्भव है।

सविताने कहा—बड़ी नहीं बेटी। तुम्हारी और मेरी हालत एक नहीं है। तुम थीं सम्पूर्ण निरुपाय—लेकिन मैं ऐसी नहीं हूं। अभी उस दिन जो बड़ी जायदाद—खरीदी गई है, वह मेरी है शारदा।

शारदाने आश्वस्त होकर पूछा—उसमें तो कोई गड़बड़ नहीं होगी मा?

सविता गर्वके साथ कह उठीं—वह मेरे स्वामीकी है शारदा—वह मेरा रुपया है। उसमें किसकी मजाल है जो गड़बड़ करे !

बारह वर्षसे सविता अकेली है। आत्मीय-स्वजनहीन होकर पराये घरमें उसके बारह वर्ष बीते हैं। मनकी बात जिससे कही जाय, इतने दिन ऐसा एक भी आदमी नहीं था। रुपयोंका ब्योरा बतानेमें अकस्मात् इस लड़कीके सामने उसका इतने दिनके रुंधे हुए हृदयके स्रोतका मुंह खुल गया। एकाएक किस तरह स्वामीसे भेंट हो गई, अंधकारप्राय घरके कोनेमें केवल छाया देखकर किस तरह स्वामीने उसको पहचान लिया, तब किस तरह उसने अपनेको सँभाला, तब उसने क्या कहा, क्या किया, यह सब बिना किसी रुकावटके बकते-बकते कुछ देरके लिए सविता जैसे अपनेको भूल बैठी। शारदाके विस्मयकी सीमा नहीं—नई-माका अपनेको इतना भूल जाना उसकी कल्पनासे भी परे था।

नीचेसे आवाज आई—माजी ?

सविताने सचेत होकर उत्तर दिया—कौन, महादेव ?

दरवानने ऊपर आकर जताया कि उनकी आज्ञाके अनुसार शोफर गाड़ी ले आया है।

आध घंटे बाद तैयार होकर नीचे उतरकर उसने देखा, दर्वाजेके पास शारदा खड़ी है। उसने कहा—मा, मैं साथ चलूँगी। वहाँ राखाल बाबू हैं। वह कभी नाराज न होंगे।

कोई साथ जाय, यह सविताकी इच्छा नहीं थी। उसने कहा—नाराज तो शायद कोई न होगा। लेकिन वहाँ जाकर तुम क्या करोगी शारदा ? शारदाने कहा—मैं सब जानती हूं मा। रेणु बीमार है, मैं उसे एक बार देख आऊँगी। इससे भी अधिक मुझे साध है रेणुके बापको देखनेकी। प्रणाम करके पैरोंकी धूल माथेसे लगाऊँगी। यह कहकर सम्मतिकी अपेक्षा बिना किये ही वह गाड़ीमें बैठ गई।

रास्तेमें जाते समय उसने धीरे धीरे पूछा—रेणुके बाप देखनेमें कैसे हैं मा ?

सविताने कौतुक करके कहा—तुमको कैसे जान पड़ते हैं शारदा ? ठाठबाट-वाले बहुत जबर्दस्त आदमी—क्यों ?

शारदाने कहा—नहीं मा, ऐसा नहीं जान पड़ता। लेकिन मैं तभीसे तो सोच रही हूँ, कोई भी चेहरा जैसे पसन्द नहीं आता।

"क्यों नहीं पसन्द आता शारदा ?"

"जान पड़ता है, इसलिए पसन्द नहीं आता मा, कि वह केवल रेणुके पिता ही नहीं हैं, आपके भी स्वामी हैं। मन-ही-मन जैसे किसी तरह दोनों जनोंको एक साथ मिला नहीं पा रही हूँ।

सविताने हँसकर कहा—मान लो ऐसे हैं—एक बूढ़े वैष्णव—मुझसे अवस्थामें बहुत बड़े—सिरपर शिखा है, बाल प्रायः सब पक गये हैं, गोरा रंग, लम्बा शरीर, पूजा-व्रत-उपवास आचार-नियमोंसे दुबले पतले—ऐसा आदमी तुमको पसन्द आता है शारदा ?

"ना ना, नहीं पसन्द आता। आपको आता है ?"

"पसन्द किये बिना उपाय क्या है शारदा ? स्वामी पसन्द-नापसन्दकी चीज नहीं है। उसे बिना कुछ विचारे मान लेना होता है। तुम कहोगी, यह तो हुई शास्त्रकी विधि, मनुष्यके मनकी विधि नहीं है। लेकिन यह तर्क कौन करते हैं जानती हो बेटी ? वे ही करते हैं, जिन्होंने आज भी मनुष्यके मनका सच्चा हाल नहीं जाना, जिनको दुर्गतिकी आग जलाकर जीवनकी राह टटोलते घूमना नहीं पड़ा। संसार-यात्रामें स्वामीके रूप-यौवनका प्रश्न स्त्रियोंके लिए तुच्छ बात है बेटी, यह दो दिनमें ही हिसाबके बाहर पड़ जाती है।

शारदा अशिक्षित होनपर भी इस बातको ठीक सत्य मानकर ग्रहण नहीं कर सकी। समझी, यह सविताके पश्चात्तापकी ग्लानि है—प्रतिक्रियासे मथे जा रहे हृदयकी एकान्तिक क्षमाकी भिक्षा है। इच्छा न हुई कि प्रतिवाद करके उसकी वेदनाको बढ़ावे, किन्तु चुप भी नहीं रहा गया। बोली—एक बात जाननेको बड़ा जी हो रहा है मा, लेकिन—

सविताने कहा—लेकिन क्या बेटी ? यही तो कि प्रश्न करके मुझे और लज्जित नहीं करना चाहती हो ? लेकिन अब लज्जा और नहीं बढ़ेगी, तुम बेखटके पूछो।

तो भी शारदाका संकोच दूर न हो रहा था। उसे चुप देखकर सविताने आप ही कहा—शायद तुम यह जानना चाहती हो कि अगर यही बात सच है तो मेरी इतनी बड़ी दुर्गति क्यों हुई ? इसका उत्तर मैंने अनेक बार अनेक प्रकारसे सोचकर देखा है, किन्तु अपने पूर्वजन्मके कर्म-फलके सिवा इस प्रश्नका उत्तर आज भी मैंने नहीं पाया बेटी।

यद्यपि शारदा आप भी कर्मफलको मानती है, तथापि उसका मन नई-माके इस उत्तरका साथ नहीं दे सका। वह चुप हो रही। सविताने उसके मुखको ओर देखकर यह समझ लिया। बोली—और किसी जन्मके अज्ञात कर्मफलके सिर दोष मढकर इस जन्मके टूटे बेड़ेसे निकलनेकी संधि खोजती फिरूँ, इतनी बड़ी अबूझ मैं नहीं हूँ बेटी, किन्तु इस गोरखधंधेसे बाहर निकलनेकी राह ही कौन निकाल पाया है, बताओ तो? जिस आदमीको मैंने कल विदा कर दिया, उसे मैंने अपने स्वामीकी अपेक्षा बड़ा कभी नहीं समझा, उसे कभी श्रद्धा नहीं की, कभी प्यार नहीं किया, तो भी उसीके घरमें मेरा एक युग किस तरह कट गया?

अबकी शारदा बोली। उसने कुछ लजाते हुए कहा—आज न हो, किन्तु उस दिन भी क्या रमणी बाबूको अपने प्यार नहीं किया मा?

सविताने कहा—नहीं बेटी, उस दिन भी नहीं—किसी दिन भी नहीं।

शारदाने कहा—तो फिर पदस्खलन क्यों हुआ?

सविताने क्षणभर चुप रहकर मलिन हँसी हँसकर कहा—पदस्खलनमें क्या कोई 'क्यों' रहता है शारदा? वह अकस्मात् संपूर्ण अकारण निरर्थकतामें हो जाता है। इन बारह-तेरह वर्षोंमें कितनी ही औरतोंको तो मैंने देखा है—आज शायद वे सर्वनाशकी कीचड़के तलेमें न जाने कहाँ डूब गई हैं, लेकिन उस दिन मेरी एक भी बातका वे जवाब नहीं दे सकीं। मेरी ओर आखे फैलाये ताकने लगीं, उनमें आसू भर आये। मैं तो सोच ही नहीं पाई कि अपने भाग्यके सिवा वे और किसे कोसेंगी। देखकर उन्हें तिरस्कार क्या करती, अपना ही माथा पीटकर रोकर कहा—निष्ठुर देवता! अपने रहस्यमय ससारमें तुमने बिना दोषके दु.खके गीत गानेका भार क्या अतको इन सब अभागिनोंके ही ऊपर डाला है! क्यों होता है, यह मैं नहीं जानती शारदा, किन्तु ऐसा ही होता है।

शारदाने अबकी भी साथ नहीं दिया, सिर हिलाकर बँधे रास्तेके पक्के सिद्धान्तको अनुसरण करके बोली—उनका दोष न था, ऐसी बात आप कैसे कह रही हैं मा?

सविताने उत्तर नहीं दिया। फिर उसे और समझानेकी भी चेष्टा नहीं की। केवल एक साँस छोड़कर खिड़कीके बाहर शून्य दृष्टिसे राहकी ओर ताकने लगी।

गाड़ी आकर यथास्थान खड़ी हुई। महादेवके दरवाजा खोल देनेपर दोनों उतर पड़ीं। गाड़ी कलकी तरह अपेक्षा करनेके लिए अन्यत्र चली गई।

१७ नंबरके घरका दरवाजा खुला था। दोनोंने भीतर प्रवेश करके देखा, नीचे कोई नहीं है। सीढ़ीसे ऊपर चढ़ते ही एक सोलह-सत्रह वर्षकी लड़की देख पड़ी जो बरामदेमें बैठी तरकारी काट रही थी। लड़कीने खड़े होकर और 'आइए' कहकर दोनोंकी अभ्यर्थना की। जंगलेके ऊपर आसन पड़ा था, उसे उतारकर बिछा दिया और सविताके पैरोंकी रज माथेसे लगाई।

यह लड़की आज इतनी बड़ी हो गई है! आसनपर बैठकर सविता किसी तरह अपनेको सँभाल न सकी। उमड़े हुए आँसुओंके वेगसे उसकी सारी देह बार-बार काँप उठी और तुरन्त ही दोनों आँखोंसे लगातार आँसुओंकी धारा बह चली। सविताने समझा कि यह लज्जाकी बात है, शायद इन आँसुओंकी कोई मर्यादा इस लड़कीके निकट नहीं है। किन्तु संयमका बाँध टूट गया था, किसी तरह कुछ न हुआ—आँसू रोके नहीं रुके। केवल जोरसे दोनों आँखोंके ऊपर आँचल दबाकर वह मुँह छिपाये बैठी रही।

१०

सविताने रुलाईको जितना दबाना चाहा, उतना ही वह बेकाबू होती गई। तूफानसे क्षोभको प्राप्त, किनारे तक हलचलसे भरा सागरका जल जैसे शान्त ही नहीं होने आता। लेकिन उस लड़कीने सांत्वना देनेकी चेष्टा नहीं की। दुर्बल थके हुए हाथोंसे जैसे धीरे धीरे तरकारी काट रही थी वैसे ही चुपचाप काटती रही। अन्तको रोनेका प्रचंड वेग यद्यपि शान्त हो आया, किन्तु अपने मुखका आवरण सविता किसी तरह हटा नहीं सकी, वह जैसे चेहरेसे कसकर चिपक गया था। किन्तु इस तरह कब तक चलता, सबकी ही अस्वस्ति भीतर-भीतर दुस्सह हो जाती है। जान पड़ता है, इसीसे शारदा ही पहले बात कर बैठी, जान पड़ता है जो मनमें आया वही। बोली,—आज तुम्हारी तबियत कैसी है दीदी?

"अच्छी हूँ।"

"बुखार तो फिर नहीं आया?"

"ना, मुझे तो नहीं मालूम पड़ा।"

"डाक्टर अभी नहीं आये?"

"नहीं, वह शायद उस वक्त आवेंगे।"

नहीं है मा, शारदा दीदीका है। हाँ मा, आपके बाल काले रेशम जैसे हैं, लेकिन मेरे क्यों इतने कड़ हुए ? जान पड़ता है, बचपनमें खूब कसकर मुड़वा दिये थे ? गँवई गाँवमें यही तो बड़ा दोष है।

सविताने हाथ बढ़ाकर लड़कीके सिरपर रखा—कई दिनोंके ज्वरसे उसके अस्तव्यस्त केश रूखे हो गये थे। बहुत देर तक अँगुलियोंसे केशोंको सुलझाती रही। अनेक बार कुछ बोलनको हुई किन्तु आवाज गलेसे न निकल पाई। अन्तको उसका सिर खींचकर अपनी छातीपर रख लिया—और लगातार आँसू बरसाने लगी। जो बात गलेमें अटक गई थी वह वहीं रह गई। बात बाहर भले ही न निकले, लेकिन यह अनुच्चारित भाषा समझना किसीके लिए बाकी नहीं रहा। लड़कीने समझा, शारदाने समझा और उन्होंने समझा जिनके लिए संसारमें कुछ भी अज्ञात नहीं है।

इसी तरह कुछ देर रहकर सविता उठ बैठी। लड़की उन्हें नीचे नहानकी जगह ले गई और फिर स्नान करा लाई। जोर करके आह्निक जप करनेको बिठा दिया और उसके समाप्त होने पर वैसे ही जोरसे उसे मिसरीका शर्बत पिलाया।

रेणुने कहा—मा, अब जाऊँ, रसोई बनाऊँ ? आपको खाना होगा।

"अगर न खाऊँ ?"

रेणुने मुसकाकर कहा, तो आपके पैरोंमें सिर पटकूगी। बिना खाये छुटकारा न होगा।

"छुटकारा पाना नहीं चाहती बेटी, लेकिन तुम बड़ी कमजोर हो, अभी पथ्य भी नहीं किया—"

रेणुने कहा—सवेरे थोड़ी-सी मिसरी खाकर पानी पी चुकी हूं। अब और कुछ न खाऊंगी। कुछ कमजोर जरूर हूँ, लेकिन रसोई बनाये बिना कैसे काम चलेगा मा ? राजू दादाके आनेमें देरी होगी, बाबूजी भी बड़ी देरमें लौटेंगे। रसोई न करनेसे इतने लोग खानेको जो न पावेंगे। इसके सिवा मुझे ठाकुरजीका भोग तो बनाना ही पड़ेगा। यह कहकर जगलेके ऊपरसे अँगोछा लेकर उसके कंधेपर डालते ही सविताने चौंककर पूछा—तुम क्या नहाने जाती हो रेणु ?

रेणुने हँसकर कहा—मा, भूल गई। आपने क्या कभी बिना स्नान किये भोग तैयार किया था ?

सविताको इसका जवाब नहीं सूझा। शारदाने कहा—लेकिन फिर अगर तो आ सकता है रेणु!

रेणुने सिर हिलाकर कहा—ना, जान पड़ता है नहीं आवेगा—मैं अच्छी हो गई हूँ। और अगर आवें ही तो क्या इसकी शारदा दीदी, अब तक अच्छी हूँ तबतक तो करना ही होगा। हमारे यहाँ करनेवाला तो और कोई नहीं है।

उत्तर सुनकर दोनों चुप हो रहीं।

रसोई मामूली ही थी, लेकिन उसे बनानेमें भी रेणुको कितना कष्ट हो रहा था, यह बहुत ही स्पष्ट था। ज्वरसे शिथिल, सात-आठ दिनके उपवाससे अशक्त दुर्बल लड़की मर-मरकर आँखोंके सामने काम करने लगी, मा चुपचाप बैठे बैठे देखती रही; किन्तु कुछ भी नहीं कर सकी। इस जीवनका पारिवारिक बन्धन किस तरह टूट गया है, बीचका अन्तर कितना बड़ा है, इस बातको ऐसा प्रत्यक्ष देखने-समझनेका अवसर शायद सविताको और किसी तरह नहीं मिलता, जैसा आज मिला।

रसोई समाप्त हो गई। शारदाको लक्ष्य करके रेणुने कहा—बाबूजीको लौटनेमें, पूजा-पाठ समाप्त करनेमें आज दिन ढल जायगा। आप क्यों बेकार कष्ट पावेंगी शारदा दीदी, खा लीजिए। बाबूजी कहते हैं, ऐसी हालतमें घरके एक आदमीके भूखे रहनेसे फिर कुछ दोष नहीं रहता। सच है न मा? यह कहकर वह माताका मुख देखती हुई उत्तरकी राह देखने लगी।

सविता जानती है कि इन लोगोंके बड़े परिवारमें बाध्य होकर ही एक दिन यह नियम प्रचलित हुआ था। ठाकुरका पुजारी ब्राह्मण रहनेपर भी ब्रज बाबू सहजमें यह काम किसीके ऊपर छोड़ना नहीं चाहते थे, अथ च हमेशाके ढीले स्वभावके होनेके कारण पूजामें अक्सर उन्हें अयथा देर हो जाती थी। किन्तु लड़कीके प्रश्नके उत्तरमें उसे क्या कहना चाहिए, यह वह सोच न पाई।

जवाब न पाकर रेणु कहने लगी—लेकिन मेरी नई-मासे देर सही नहीं जाती, खानेमें जरा-सी भी देर होनेसे वह बेहद खफा हो उठती हैं। इसीसे बाबूजीने मुझसे एक दिन दुःखके साथ कहा था कि गावके घरमें कितने ही दिन आपका इस वेला भोजन नहीं होता था, उपास करके दिन काटने पड़ते थे। किन्तु किसी दिन आपने खफा होकर ठाकुरको किसीको दे डालनेके लिए नहीं कहा।

शारदाने आश्चर्यके साथ पूछा—वह क्या ठाकुरजीको दे डालनेके लिए कहती है ?

" हाँ, कितनी ही बार कहती है—गंगाजीमें डाल आओ।"

" तुम्हारे बाबूजी क्या कहते हैं ?"

शारदा के प्रश्नके उत्तरमें रेणुने मासे ही कहा—मेरी अवस्था उस समय नौ वर्षकी थी। बाबूजीने बुला भेजा। कोठरीमें जाकर देखा, उनकी आँखोंसे आँसू गिर रहे हैं। मुझे पास बिठाकर, प्यार करके कहा—मेरे गोविन्दजीकी सेवा-पूजा-भोगका भार एक दिन तुम्हारी माके ऊपर था। आजसे तुम ही उसका काम करोगी। कर सकोगी न बेटी ? मैंने कहा—कर सकूँगी बाबूजी। तबसे मैं ही ठाकुरका सब काम करती हूँ। पूजा न होने तक मैं ही घरमें बिना खाये रहती हूँ। लेकिन आज न रहती। ज्वरका डर न होता तो आपको बिठा रखकर हम सभी मिलकर आज भोजन कर लेते। यह कहकर वह हँसने लगी। यह सोचकर भी नहीं देखा कि यह कितना असंभव है और इसने कितनी मर्मभेदी चोट माको पहुँचाई है।

सविता दूसरी ओर मुँह किये चुपकी बैठी रही, एक बातका भी उत्तर नहीं दे सकी। लड़की चाहे जो कहे, मा जानती है कि अब वह इस घरकी कोई नहीं है, पारिवारिक नियम-पालनमें आज उसका खाना-न-खाना बिल्कुल अर्थहीन है।

रेणु शारदाको गोविन्दकी दिखाने ले गई। सविता उसी जगह चुप बैठी रही। लड़कीने कहा ही कितना है ! अपनी विमाताके बिगड़नेका सामान्य थोड़ा-सा विवरण, ठाकुर-देवतापर अश्रद्धाका एक तुच्छ उदाहरण। यही तो ! ऐसा कितने ही घरोंमें होता है। यह कुछ अचिन्तित भी नहीं है, और शायद विशेष दोषकी भी बात नहीं, तथापि इस साधारण बातने ही उसकी कल्पनामें बारह वर्षका अज्ञात इतिहास पलभरमें ही अंकित कर दिया। यह स्त्री शायद अपने स्वामीको घड़ी भरके लिए भी समझ नहीं पाई। उसका कितने दिनोंका कितना ही मुँह फुलाना, कितनी दबी हुई कलह, कितने ही छोटे छोटे संघर्षके काँटोंसे बिंधे हुए शान्तिहीन दिन, कितनी ही वेदनासे घायल दुःख मय स्मृतियाँ—इसी तरह इस स्नेह और श्रद्धासे हीन क्रोधी स्वभावकी नारीके सान्निध्य और शासनमें इन दोनों प्राणियोंके—स्वामी और कन्याके—दिन पर दिन बीतकर आज दुर्दशा-की शेष सीमामें आ लगे हैं।

आप ही किसके कारण? यह प्रश्न ही उस समय सबसे अधिक सविताको पीड़ा देने लगा। जो भार स्वभावतः उसका अपना था, उसके बोझको अगर दूसरा उठा न सके तो क्या उसे दोष दिया जा सकता है? अपने सिवा यह किसका अपराध है? अधर्मकी मार ऐसी निर्दय है, एकाकी इतना दुःख भी इस संसारमें सृष्ट किया जा सकता है, उसकी मूर्ति इतनी कुरूप है, इसकी इससे पहले इस तरह उसे कभी उपलब्धि नहीं हुई थी। ग्लानि और व्यथाके भारी बोझसे उसका दम घुटने लगा। तथापि प्राणपण बलसे वह मन-ही-मन केवल यही कहने लगी कि इसका क्या कोई प्रतिकार नहीं है?—संसारमें चिरस्थायी तो कुछ भी नहीं है, केवल क्या उसका यह दुष्कर्म ही जगत्‌में अविनश्वर है? कल्याणकी सभी राहोंको सदाके लिए रोककर क्या केवल यही बना रहेगा? कभी इसका लय न होगा?

"मा, बाबूजी आ गये।"

सविताने सिर उठाकर देखा, सामने ब्रज बाबू खड़े हैं। पलभरके लिए सब बाधा और व्यवधान भूलकर वह उठ खड़ी हुई और बोली—इतनी देर कर दी? बाहर निकलनेपर क्या तुम घर-द्वारकी बात हमेशा ही भूल जाते रहोगे? देखो तो कितना दिन रह गया है!

ब्रज बाबू बहुत ही अप्रतिभ होकर विलम्बकी कैफियत देने लगे। सविताने कहा—लेकिन अब और देर न करने पाओगे। ठाकुरजीकी पूजा आज तुमको संक्षेपमें ही कर डालनी होगी।

"यही होगा नई बहू, यही होगा। रेणु, दे तो बेटी मेरा गमछा, चटसे नहा आऊँ।"

"नहीं बाबूजी, तुम जरा आराम कर लो। देर जो होनेको थी तो वह हो गई, मैं तमाखू भरे लाती हूँ।"

मा और पिता, दोनोंने कन्याके मुखकी ओर देखा। ब्रज बाबूने कहा—लड़की न हो तो बापका इतना दर्द और किसको होता है नई-बहू। इससे तुम भी हार गई। यह कहकर वह हँसे।

सविताने कहा—हारनेमें मुझे आपत्ति नहीं है मझले बाबू, किन्तु यही एकमात्र सत्य नहीं है। संसारमें और भी एक आदमी है, जिसके मुकाबलेमें लड़की भी नहीं ठहरती, मा भी नहीं। यह कहकर वह भी हँसी। यह हँसी देखकर

व्रज बाबू अकस्मात् जैसे चौंक गये। किन्तु और कोई बात न कहकर धोती-कुर्ता उतारनेको कमरेके भीतर चले गये।

उस दिन खाने-पीनेमें प्राय शाम हो गई। व्रज बाबू बिछौनेपर बैठे तमाखू पी रहे थे, सविता भीतर प्रवेश करके फर्शके ऊपर एकदम दीवालसे पीठ लगाकर बैठ गई।

"भोजन हो गया?"

"हाँ।"

"लड़कीने अयत्न-अनादर तो नहीं किया?"

"नहीं।"

व्रज बाबूने बहुत देर स्थिर रहकर कहा—गरीबका घर है, कुछ भी नहीं है। शायद तुमको कष्ट हुआ नई बहू।

सविताने स्वामीके मुखकी ओर ताककर कहा—यह न होगा मँझले बाबू, तुम मुझे कटु बात न कह पाओगे। मेरा यही तो इतना-सा आखिरी सम्बल है—पूँजी है। मरते समय अगर ज्ञान रहा तो केवल यही बात सोचूँगी कि मेरा जैसा स्वामी संसारमें कभी किसीने नहीं पाया।

व्रज बाबूके मुँहसे एक लम्बी साँस निकल गई। बोले—तुम्हारे अपने खाने-पीनेके कष्टकी बात मने नहीं कही नई-बहू। कहा था यह कि आज यह भी तुम्हें अपनी आँखोंसे देखना पड़ा। तुम क्यों आईं!

सविताने कहा—देखनेकी जरूरत थी मँझले बाबू, नहीं तो दण्ड असम्पूर्ण रह जाता। तुम्हारे गोविन्दकी एक दिन सेवा की थी—जान पड़ता है, वही यहाँ खींच लाये हैं। एकदम परित्याग नहीं कर सके हैं।—कहते कहते उसकी आँखोंमें आँसू भर आये। उन्हें आँचलसे पोंछकर कहा—एकनिष्ठ मनसे अगर मैं उनको भजूँ, उनसे प्रार्थना करूँ, मनमें कहीं कुछ भी छल न रखूँ, तो क्या वह मुझे क्षमा नहीं करेंगे मँझले बाबू?

व्रज बाबूने मुश्किलसे आँसू रोककर कहा—निश्चय ही करेंगे!

"लेकिन यह मैं कैसे जान पाऊँगी?"

"यह तो नहीं जानता नई बहू। जान पड़ता है, इस प्रकारकी दृष्टि वही देते हैं।"

सविताने बड़ी देर तक सिर झुकाये रहकर मुँह उठाकर पूछा—आज तुम कहाँ गये थे?

ब्रज बाबूने कहा—नन्दू साहसे कुछ रुपए पाने हैं—

"उसने दिये?"

"क्या तुम जानती हो—"

"यह मैं सुनना नहीं चाहती। दिये कि नहीं, यह बताओ?"

ब्रज बाबू न देनेका कारण प्रकट करनेमें जैसे बहुत ही कुण्ठित हो उठे। बोले—आनन्दपुरके साहा-घरानेको तो जानती ही हो, वे लोग बड़े सज्जन और धर्मभीरु हैं। किन्तु समय कुछ ऐसा आ पड़ा है कि आदमी इच्छा रहनेपर भी कुछ कर नहीं पाता। इसके सिवा नन्दू साहा अब अंधे हो गये हैं, कारोबार सब भतीजोंके हाथमें चला गया है—लेकिन देंगे एक दिन निश्चय ही।

"सो मैं जानती हूँ। लेकिन उन्हें मैं चकमा नहीं देने दूँगी। नन्दू साहाको मैं भूली नहीं।"

"क्या करोगी? नालिश?"

"हाँ, और कोई उपाय अगर न हुआ तो।"

ब्रज बाबूने हँसकर कहा—देखता हूँ तुम्हारा मिजाज रत्ती भर नहीं बदला।

"क्यों बदलेगा? मिजाज तुम्हारा ही क्या बदल गया है? तुमसे अधिक बुरा समय किसपर पड़ा है? लेकिन तुम किसे चकमा दे सके? मुझ जैसी कृतघ्नका ऋण भी आखिरी कौड़ी तक देकर अदा कर दिया। उन लोगोंको भी यही करना होगा, आखिरी कौड़ी तक अदा कर देंगे तब छुटकारा पावेंगे।"

"उन लोगोंके ऊपर तुम्हें इतना क्रोध क्यों है?"

"क्रोध नहीं—मुझे जलन है। तुमको भाईने ठगा। बन्धुओंने ठगा। आत्मीय-स्वजन, कर्मचारी, यहाँ तक कि स्त्री तकने धोखा दिया, ठगे बिना नहीं छोड़ा। अबकी मेरे साथ उनका मुकाबला है—मैं उनसे समझ लूँगी। तुम्हारे नये नातेदार तो मुझे नहीं पहचानते, लेकिन वे लोग अच्छी तरह जानते हैं।"

ब्रज बाबूको बहुत दिन पहलेकी बात याद आ गई। उस समय भी वे बिल्कुल डूबनेको बैठे थे। तब इसी रमणीने हाथ पकड़कर उन्हें डूबतेसे बचाकर डोंगीपर बिठाया था। बोले, हाँ, वे तुमको खूब जानते हैं। नई-बहूको मरा जानकर जो

लोग चैनसे हैं, वे जरा डरेंगे। सोचेंगे, यह कोई भूतका उत्पात उठ खड़ा हुआ है। शायद गयामें पिण्डदान करने दौड़ेंगे।

सविताने कहा—वे जो जी चाहे करें, मैं नहीं डरती। सिर्फ तुम पिण्ड देने न दौड़ो तो काफी है। इसीकी मुझे चिन्ता है। तुम खुद तो यह काम न करोगे?

ब्रज बाबू चुप बैठे रहे।

"कुछ जवाब नहीं दिया?"

ब्रज बाबू और भी कुछ देर तक चुपचाप ताकते रहे। तीसरे पहरके सूर्यका कुछ कुछ प्रकाश खिड़कीमेंसे होकर फर्शके ऊपर फैला हुआ था। उसकी ओर सविताकी दृष्टि आकृष्ट करके उन्होंने धीरे धीरे कहा—इसी तरह मेरे भी दिन ढल आये हैं नई-बहू। अपना पावना वसूल करनेका अब समय नहीं है। लेकिन तुम्हारे सिवा संसारमें शायद और कोई नहीं है जो यह समझे कि मैं कितना क्लान्त-अवसन्न हूँ। छुट्टीकी अर्जी पेश किये बैठा हूँ, मंजूरी आती ही होगी। मैंने जो लिया-दिया है, उसका हिसाब हो गया है। जानता हूँ, हिसाब ठीक नहीं हुआ, उसमें गलतियाँ रह गई हैं, लेकिन तो भी उसे लेकर मैं झगड़ा नहीं कर सकूँगा। तुम अपना यह अनुरोध वापस ले लो।

सविता एक-टक ताकती हुई सुन रही थी स्वामीकी बातें। स्वामीकी बात समाप्त होनेपर उसने केवल इतना पूछा कि सचमुच क्या अब कुछ कर न सकोगे मँझले बाबू? सचमुच क्या बहुत ही क्लान्त हो पड़े हो?

"सचमुच ही बहुत क्लान्त हूँ नई-बहू, सचमुच ही अब मुझसे कुछ न होगा। वे कहेंगे यह आलस्य है, कहेंगे यह जड़ता है, सोचेंगे यह मेरी निराशाकी हाय हाय है। वे बहस करेंगे, युक्तियाँ पेश करेंगे, मार-मारकर अब भी दौड़ाना चाहेंगे। उन्होंने केवल यही बात जान रखी है कि कलमें कूक भरनेसे ही वह चलती है। किन्तु उसका भी अन्त है, इसपर वे विश्वास नहीं कर सकते।

"मेरे विश्वास करनेसे तुम खुश होगे?"

"खुश हूँगा कि नहीं, यह नहीं जानता, किन्तु शान्ति पाऊँगा।"

"अच्छा, अब क्या करोगे?"

"रेणुको साथ लेकर गाँव जाऊँगा। वहाँ सब कुछ चले जाने पर जो बाकी रहा है, उससे किसी तरह हमारा गुजर हो जायगा। और जो लोग हम लोगोंको

त्याग करके कलकत्तेमें रह गये उन्हें कोई चिन्ता नहीं है, सो तो तुम पहले ही सुन चुकी हो।"

"रेणुका भार किसे दे जाओगे मँझले मालिक?"

"दे जाऊँगा भगवानको। उनसे बड़ा आश्रय और नहीं है, यह मैं जान चुका हूँ।"

सविता स्तब्धभावसे बैठी रही। भगवानपर उसे अविश्वास नहीं; किन्तु अपनी लड़कीके बारेमें इतनी बड़ी निर्भरतासे वह निश्चिन्त भी नहीं हो सकी। शंकासे कलेजेके भीतर उथल-पुथल-सी मच गई। लेकिन इसका उत्तर क्या है, सो भी सोच न पाई। जो बात दिन-रात उसके मनमें काँटेकी तरह खटका करती थी, सिर्फ वही इस समय उसके मुखसे निकल पड़ी। बोली—मँझले बाबू, तुमने क्या मेरे अपराधका दण्ड देनेके लिए ही मुझे रुपए फेर दिये थे? बदला लेनेकी क्या कोई और राह तुम्हें खोजे नहीं मिली?

ब्रज बाबूने कहा—न हो तुम्हीं खुद राह बता दो। हमारे रतन चाचा और चाचीकी बात तुम्हें याद है? उस अवस्थाके लिए राजी हो क्या?

इतने दुःखमें भी सविता हँस पड़ी। बोली—छी छी, तुम कैसी बात करते हो!

ब्रज बाबूने कहा—तो फिर क्या करनेको कहती हो? नई-बहू गहने चुराकर भाग गई है, यह कहकर क्या पुलीसमें पकड़ा दूँ?

प्रस्ताव इतना हास्यजनक था कि कहते ही दोनों हँस पड़े। सविताने कहा—तुम्हारी भी बस सब उद्भट कल्पनाएँ हुआ करती हैं!

बहुत दिनोंके बाद दोनोंकी रहस्यसे उज्ज्वल हँसीकी तनिक-सी किरणने घरमें जमे हुए अंधकारका अधिकांश जैसे दूर कर दिया। ब्रज बाबूने कहा—दण्ड-विधान सबका एक नहीं है नई-बहू। यदि देना ही हो, तो तुमको और क्या दण्ड दे सकता हूँ? जिस दिन रातको तुम अपनी घर-गिरस्तीको पैरोंसे ठेलकर चली गईं, उसी दिन मैंने निश्चय कर लिया था कि अगर कभी भेंट होगी, तो तुम्हारा जो कुछ पड़ा रह गया है, वह सब तुम्हें लौटाकर ऋण-मुक्त हो जाऊँगा।

सविताको बिजलीकी तेजीसे स्वामीकी एक बात याद आ गई जो वह प्रायः कहा करते थे—ऋण अपने ऊपर रखकर न मरना चाहिए नई-बहू, ऋणदाता दूसरे जन्ममें आकर भी दावा करता है। यही उन्हें डर है। किसी जरियेसे भी दोनोंकी

भेंट न हो—सब सम्बन्ध यहीं हमेशाके लिए विच्छिन्न हो जायँ। सविताने कहा—मैं समझ गई मँझले बाबू। इस लोक और परलोकमें अब कोई दावा न रहे, सब यहीं समाप्त हो जाय—यही तो?

ब्रज बाबू चुप ही रहे। जो अंधकार अभी अभी थोड़ा-सा हट गया था वह फिर इस चुप्पीके भीतरसे हजार गुना होकर लौट आया। फिर वह स्वामीके मुँहकी ओर आँख उठाकर नहीं देख सकी। आँखें नीची किये धीरेसे बोली—तुम कब गाँवको जाओगे मँझले बाबू?

"जितनी जल्दी हो सके।"

"तो अब मैं जाऊँ?"

"जाओ।"

सविता उठ खड़ी हुई। समझ गई कि सब समाप्त हो गया। उस भूचालकी रातको रसातलके गर्भको चीरकर जो पत्थरका स्तूप ऊपर उठकर दोनोंके बीचमें दुर्लंघ्य व्यवधान बन गया था, आज भी वह वैसा ही अक्षय है, तिलभर भी नहीं हटा। आजसे पहले उसने कब सोचा था कि यह निरीह शान्त मनुष्य इतना कठिन हो सकता है!

घरके बाहर पैर बढ़ाकर भी सविता सहसा ठिठककर खड़ी हो गई। बोली—मुक्ति नहीं पाओगे मँझले बाबू। तुम वैष्णव हो। जीवनमें तुमने कितने मनुष्योंके अपराध क्षमा कर दिये हैं, किन्तु मुझे क्षमा नहीं कर सके। यह ऋण तुमपर बना रहा। एक दिन शायद जान पाओगे।

ब्रज बाबू वैसे ही स्तब्ध हो रहे। शाम हो रही थी। जाते समय रेणुने प्रणाम किया, किन्तु कुछ कहा नहीं। यह चुप रहनेका मन्त्र उसने भी शायद अपने पिताके निकट ही सीखा है।

शारदाको साथ लेकर सविता बाहर आई। गाड़ीपर सवार होते ही देखा, राखाल तारकको लेकर तेजीसे इसी तरफ आ रहा है। तारकने कहा—नई-मा, एक बार उतरना होगा, मैं प्रणाम करूँगा।

उस समय मुँहसे कुछ कहना कठिन था। सविताने इशारेसे गाड़ीपर आनेको कहकर किसी तरह इतना ही कहा—आओ भैया, मेरे साथ तुम लोग घर चलो।

११

एक सप्ताह पहले राखालने आकर कहा था—नई-मा १७ नं० के घरमें आप तो आयेंगी नहीं, आज सन्ध्याको मेरे डेरेपर आपके पैरोंकी धूल पड़े।

"क्यों राजू ?"

"काका बाबूके लिए कुछ फल-मूल खरीद लाया हूँ—इच्छा है कि उनको थोड़ा-सा जल-पान कराऊँ। वह आनेको राजी हो गये हैं।"

"लेकिन क्या मुझे उन्होंने बुलाया है ?"

"वह न बुलावें, मैं तो बुला रहा हूँ मा। कल वे अपने गाँव चले जायेंगे। कहा है कि तैयारी कराकर ट्रेनमें सवार करा दूँ।"

सविता जानती है, व्रज बाबू कहीं कुछ नहीं खाते। उन्हें इसके लिए राजी करनेमें राखालको बड़ी कोशिश करनी पड़ी है। जान पड़ता है, सोचा है कि इसी कौशलसे दोनों जनोंकी फिर भेंट हो जाय। राखालके इस आवेदनके उत्तरमें सविताको उस दिन बहुत सोचना-विचारना पड़ा था। स्नेहसे गीली आँखोंसे उसकी ओर बहुत देर तक चुपचाप ताकते रहकर अन्तको कहा था—नहीं भैया, मैं न जाऊँगी। मुझे देखकर वह केवल दुखी ही होते हैं। मैं उन्हें और दुख नहीं देना चाहती।

तबसे और एक सप्ताह बीत गया है। राखालसे खबर मिली है कि व्रज बाबू रेणुको लेकर गाँव चले गये। उनकी तीसरे विवाहकी स्त्री अपनी कन्याके साथ कलकत्तेमें अपने भाईकी देखरेखमें रह गई है। राखालने कहा है कि उन लोगोंको कोई शोक नहीं है, क्योंकि अर्थकष्ट नहीं है। मकानके किरायेकी आमदनीसे गुजर मजेसे हो जायगा। गहनोंकी पूँजी तो है ही।

सन्ध्याके बाद अकेली बैठी सविता इन्हीं सब बातोंपर विचार कर रही थी कि बारह वर्षका प्रतिदिनका सबंध कितनी जल्दी, कितने सहजमें समाप्त हो गया। उसका अपना भाग्य जिस दिन फूटा उस दिन सबेरे तक वह नहीं जानती थी कि रात भी नहीं बीतेगी, सब छोड़कर राहमें बाहर होना होगा। घोर दुखमें भी सविता क्या कल्पना कर सकती थी कि इतनी बड़ी क्षतिको कोई सह सकता है ? तो भी सह तो लिया और उसने ही सहा। बारह वर्ष बीत गये, आज

भी वह वैसे ही जीवित है—वैसे ही दिन-पर-दिन विना किसी वाधाके वीतते गये, कहीं भी कुछ अटका नहीं। यह विडंवना क्यों घटित हुई, इसका कारण आज भी वह स्वयं नहीं जानती। आत्मधिक्कारसे जलकर—खाक होकर जितनी दफे वह अपना विचार आप करने वैठी है, उतनी ही दफे जान पड़ा है कि इसका कोई अर्थ नहीं है, कारण नहीं है—इसके मूलकी खोज-करने जाना वृथा है। अथवा, यह जगत् ऐसा ही है—अघटन इसी तरह अकारण घटित होकर ही जीवन-स्रोतको और एक ओर प्रवाहित कर देता है। मनुष्यकी मति मनुष्यकी वुद्धि न जाने कहाँ अंधी होकर मरती है, नालिश करने चलो तो असामीका पता ही नहीं चलता।

इधर रमणी वावू भी अव नहीं आते। वह आवें, यह इच्छा भी सविता नहीं करती, किन्तु विस्मित होकर सोचती है कि मना करते ही क्या सव सवध सत्य ही समाप्त हो गया। निरन्तर एकत्र-वासके वारह वर्ष क्या कोई चिह्न ही कहीं वाकी नहीं रख गये—सव एकदम पुंछ गये। शायद यह दुनिया ऐसी ही है! लेकिन यहाँ क्या केवल अपचय ही है? उपचय कहीं नहीं है? केवल क्षति ही है! तो फिर क्यों शारदा उसके पास आ पड़ी? उसकी लड़कीकी तरह—माकी तरह। घरके अनेक किराएदारोंमें वह भी एक थी। केवल नाम जाना हुआ था, चेहरा पहचाना हुआ था। कभी उसे सीढ़ियोंपर देखा था, कभी आँगनमें और कभी चलते-फिरते राहमें। वह सकोचके साथ हट गई है, आँखोंमें आँखें डालकर ताकनेका साहस नहीं किया। अकस्मात् ऐसी क्या वात हुई, किसने सविताके हृदयके अन्तस्तलमें उसका घर वना दिया! किन्तु यही क्या चिरस्थायी है? कौन जाने कव वह घर मिटाकर इसी तरह सहसा अदृश्य हो जायगी?

और भी एक आदमी आये हैं विमल वावू। मृदुभाषी धीर प्रकृतिके आदमी हैं। थोड़ी देरके लिए आकर रोज खवर ले जाते हैं कि कहाँ कौन जरूरत है। हित चाहनेकी अत्यन्त अधिकतासे उपदेशकी धूमधाम नहीं है, वक्तृताके आडम्वरके-साथ वैठकर वातचीत करनेका आग्रह नहीं है, कुतूहलकी कटुताके साथ वालकी खाल निकालनेवाले प्रश्न करनेकी प्रवृत्ति नहीं है। दो-चार साधारण वातें करके ही चले जाते हैं। समय जैसे उनका वधा हुआ है। नियम और सयमके शासनने जैसे इस मनुष्यके सभी कामोंको, सभी व्यवहारोंको वड़ी मर्यादा दे रखी है। तथापि उनकी आँखोंकी दृष्टिसे सविता डरती है। वह दृष्टि भूखे शिकारी

पशुकी नहीं है, वह दृष्टि भले आदमी की है, इसीसे भय है। उन आँखोंमें है आर्त की प्रार्थना, उन्मादका व्यभिचार नहीं है—केवल इसी कारण उसे शंका है—कहीं असावधानीमें इसी राहसे कभी पराभव न आ जाय।

उनके आनेपर दोनोंमें इस तरह बात होती है—

पूर्वकी ओरके ढके हुए बरामदेमें एक बेतकी कुर्सी खींचकर बैठकर विमल बाबू कहते हैं—आज कैसी तबीयत है?

सविता कहती है—अच्छी ही तो है।

"लेकिन वैसी अच्छी तो दिखाई नहीं देती! मुह कैसा सूखा-सूखा है।"

"कहाँ? नहीं तो।"

"'नहीं' कहनेसे नहीं मानूँगा। खाने-पीनेका कभी यत्न नहीं करतीं। अवहेला करनेसे भला शरीर कैसे टिकेगा? दो ही दिनमें टूट जायगा।"

"नहीं, टूटेगा। मेरा शरीर खूब मजबूत है।"

विमल बाबू इसके उत्तरमें थोड़ा हँसकर कहते हैं—शरीर मजबूत होनेसे ही मानो एक आफत बन गया है। उसे तोड़ डालनेकी इस समय जरूरत है—क्यों? कहिए तो सच है न? सविता बड़ी मुश्किलसे आँसू रोककर चुप हो जाती है। विमल बाबू कहते हैं, मोटर यों ही पड़ी है, बेकार ड्राइवरको तनख्वाह देती हैं। तीसरे पहर जरा हवा खाने, घूमने क्यों नहीं निकल जातीं?

"खाली घूमने तो मैं कभी नहीं जाती विमल बाबू।"

सुनकर विमल बाबू फिर जरा हँसकर कहते हैं—यह ठीक है। बिना कामके घूमनेका अभ्यास मुझे भी नहीं है। आज रासाल बाबू आये थे?

"नहीं।"

"कल भी तो नहीं आये थे?"

"ना, चार-पाँच दिनसे उसे नहीं देखा। शायद किसी फालतू काममें फँसा है।"

"फालतू काममें? यही उसका स्वभाव है क्या?"

"हाँ, यही उसका स्वभाव है। बिना किसी स्वार्थके पराई बेगार भुगतनेमें वह बेजोड़ है।"

विमल बाबू अन्यमनस्क भावसे कुछ देर चुप बैठे रहते हैं। दूरपर शारदा

देख पड़ती है। वह हाथके इशारेसे बुलाते हैं। कहते हैं—आज तुमने मुझे पीनेके लिए पानी नहीं दिया बेटी? तुम्हारे हाथके पानी और पानके बिना मुझे तृप्ति नहीं होती।

शारदा पानी और पान ला कर देती है। वह एक गिलास पानी समाप्त करके और पान मुँहमें देकर उठ खड़े होते हैं। कहते हैं—अच्छा तो आज चलता हूँ।

सविता आप भी उठ खड़ी होती है। कहती है--अच्छा।

तीन-चार दिन इसी तरहकी बातचीत चलनेके बाद उस दिन विमल बाबू जब उठने लगे तो सविताने कहा—आज मैं आपके कामका थोड़ा हर्ज करूँगी। अभी न जा सकेंगे, जरा बैठना होगा।

विमल बाबू बैठ गये। बोले—यह आपसे किसने कहा कि जरा बैठनेसे मेरे काममें हर्ज होगा?

सविताने कहा—किसीने कहा नहीं, मेरा अनुमान है। आपको कितने ही काम हैं— व्यर्थ समय तो नष्ट होगा ही?

विमल बाबूने कहा—यह मैं नहीं जानता। लेकिन क्या इसी लिए आप मुझसे किसी दिन बैठनेके लिए नहीं कहतीं? सच बताइएगा?

यह बात सच नहीं है, किन्तु सविताने इसके लिए बहस नहीं की। बोली— रमणी बाबूसे आपकी मुलाकात होती है?

"हाँ, अक्सर होती है।"

"वह अब यहाँ नहीं आते—आप जानते हैं?"

"जानता क्यों नहीं।"

"अब क्या वह इस घरमें नहीं आवेंगे?"

"यह मुझे नहीं मालूम। जान पड़ता है, आप बुला भेजें तो आ सकते हैं।"

सविताने क्षणभर चुप रहकर कहा—आज सवेरेकी डाकसे एक दस्तावेज आई है। यह घर रमणी बाबूने मेरे हाथ बेचकर बिक्री-कबालाकी रजिस्ट्री कर दी है। आप जानते हैं?

"जानता हूँ।"

"किन्तु देनेकी इच्छा ही अगर थी तो सीधे दान-पत्र न करके बिक्री करनेका बहाना क्यों किया? दाम तो मैंने दिये नहीं।"

"किन्तु दान-पत्र अच्छी चीज नहीं है।"

सविताने कहा—तो मैं जानती हूँ विमल बाबू। मेरे स्वामी थे कारोबारी आदमी—उस समय उनके सभी कामोंमें मेरी पुकार होती थी। यह मुझे मालूम है कि मुझे दान करनेका कारण दिखानेमें ऐसी सब बातें लिखनी होतीं जो किसी स्त्रीके लिए गौरवकी नहीं हैं। तो भी मैं कहती हूँ कि उस मिथ्यासे वही अच्छा था।

इसके पहले ऐसा कोई कारण भी नहीं हुआ था और इस तरह सविताने बात-चीत भी नहीं की थी। विमल बाबू मन ही मन चंचल हो उठे। बोले—बात एकदम झूठ भी नहीं है नई-बहू।

यह 'नई-बहू' सम्बोधन नया था। सविताका मुख देखकर यह नहीं जान पड़ा कि वह प्रसन्न हुई, किन्तु कण्ठस्वरके सहज भावको वैसा ही बनाये रखकर कहा—ठीक इसी बातका मैंने सन्देह किया था विमल बाबू। दाम आपने दिये हैं, लेकिन क्यों दिये? उनका दान लेनेमें तो एक सान्त्वना भी थी, किन्तु आपका देना तो खालिस भीख देना है। यह मैं क्यों लूँगी, बताइए?

विमल बाबू चुपके सिर झुकाए बैठे रहे।

सविताने कहा—उत्तर न देंगे तो मैं दस्तावेज लौटाकर चली जाऊँगी विमल बाबू!

अबकी सिर उठाकर विमल बाबूने देखा। बोले—इसी डरसे दाम दिये हैं कि आप कहीं चली न जावें। बिना दिये रह नहीं सका, इसीसे आपका घर खरीद लिया है।

"रुपए उन्होंने ले लिये?"

"हाँ, भीतर-ही-भीतर रमणी बाबूको रुपयोंकी तंगी हो गई थी। जैसे और सँभाल नहीं पा रहे थे।"

सविता कुछ देर चुप रहकर बोली—मुझको भी कुछ सन्देह हो रहा था, लेकिन इतना नहीं सोचा था। फिर जरा चुप रहकर बोली—सुना है, आपके बहुत रुपए हैं। उतने रुपए शायद आपके लेखे कुछ नहीं हैं। तो भी असल बात तो बाकी ही रह गई विमल बाबू! दे आप सकते हैं, लेकिन मैं लूँगी कैसे? ना, यह न होगा—बार-बार चुप रहकर जवाब टाल जानेसे मैं नहीं मानूँगी। बताइए।

देख पड़ती है। वह हाथके इशारेसे बुलाते हैं। कहते हैं—आज तुमने मुझे पीनेके लिए पानी नहीं दिया बेटी? तुम्हारे हाथके पानी और पानके बिना मुझे तृप्ति नहीं होती।

शारदा पानी और पान ला कर देती है। वह एक गिलास पानी समाप्त करके और पान मुँहमें देकर उठ खड़े होते हैं। कहते हैं—अच्छा तो आज चलता हूँ।

सविता आप भी उठ खड़ी होती है। कहती है—अच्छा।

तीन-चार दिन इसी तरहकी बातचीत चलनेके बाद उस दिन विमल बाबू जब उठने लगे तो सविताने कहा—आज मैं आपके कामका थोड़ा हर्ज करूँगी। अभी न जा सकेंगे, जरा बैठना होगा।

विमल बाबू बैठ गये। बोले—यह आपसे किसने कहा कि जरा बैठनेसे मेरे काममें हर्ज होगा?

सविताने कहा—किसीने कहा नहीं, मेरा अनुमान है। आपको कितने ही काम हैं—व्यर्थ समय तो नष्ट होगा ही!

विमल बाबूने कहा—यह मैं नहीं जानता। लेकिन क्या इसी लिए आप मुझसे किसी दिन बैठनेके लिए नहीं कहतीं? सच बताइएगा?

यह बात सच नहीं है, किन्तु सविताने इसके लिए बहस नहीं की। बोली—रमणी बाबूसे आपकी मुलाकात होती है?

"हाँ, अक्सर होती है।"

"वह अब यहाँ नहीं आते—आप जानते हैं?"

"जानता क्यों नहीं।"

"अब क्या वह इस घरमें नहीं आवेंगे?"

"यह मुझे नहीं मालूम। जान पड़ता है, आप बुला भेजें तो आ सकते हैं।"

सविताने क्षणभर चुप रहकर कहा—आज सवेरेकी डाकसे एक दस्तावेज आई है। यह घर रमणी बाबूने मेरे हाथ बेचकर बिक्री-कबालाकी रजिस्ट्री कर दी है। आप जानते हैं?

"जानता हूँ।"

"किन्तु देनेकी इच्छा ही अगर थी तो सीधे दान-पत्र न करके बिक्री करनेका बहाना क्यों किया? दाम तो मैंने दिये नहीं।"

"किन्तु दान-पत्र अच्छी चीज नहीं है।"

विमल बाबूने कहा—नहीं। यद्यपि उसने आना चाहा था पर उसी समय हटा भी दिया है।

"क्यों?"

सुनकर, विमल बाबूने हँसकर कहा—यह प्रश्न तो बच्चोंका-सा हुआ। उसने यह किया है, अतएव उसे यही करना चाहिए, यह जवाब आपको बच्चोंके पढ़नेकी पुस्तकोंमें मिलेगा। मैंने उससे अधिक पढ़ा है नई-बहू।

"पढ़ाया किसने?"

"पढ़ानेवाला कोई एक नहीं है। क्लासमें घंटे-घंटेमें मास्टर बदले हैं। उनमेंसे कोई याद है और कोई याद नहीं है। लेकिन जो हेडमास्टर हैं, जिन्होंने आदरसे इन सब मास्टरोंको नियुक्त किया था, उनको तो देखा नहीं, फिर आपके आगे उनका नाम कैसे लूँ—बताइए?

सविताने क्षणभर सोचकर कहा—जान पड़ता है, आप खूब धार्मिक मनुष्य हैं, क्यों विमल बाबू?

विमल बाबूने पूछा—धार्मिक मनुष्य आप किसे कहती हैं? आपके स्वामीकी तरह?

सविताने चकित होकर प्रश्न किया—उन्हें क्या आप पहिचानते हैं? उनके साथ परिचय है क्या?

विमल बाबूने उसके उद्वेगको लक्ष्य किया; किन्तु पहलेकी ही तरह शान्त स्वरमें कहा—हाँ जानता हूँ। एक दिन किसी तरह कुतूहलको दबा न सका—उनके पास गया। बड़ी कोशिश करने पर मुलाकात हुई, बातचीत भी बहुत कुछ हुई।—नहीं नई बहू, उन्होंने जिस भावसे धर्मको लिया है, मैंने उस भावसे नहीं लिया, उन्होंने जैसा समझा है, वैसा मैंने नहीं समझा। उस बारेमें हम लोगोंका कोई मेल नहीं है। मैं धार्मिक मनुष्य नहीं हूँ।

आवेग और उत्तेजनासे सविताके हृदयमें हलचल मच गई। यह समझना बाकी नहीं रहा कि सारे कुतूहलका मूल कारण वह आप है। वह रुक नहीं सकी, पूछ-बैठी—वहाँपर मेल न हो, किन्तु क्या कहींपर आप दोनों मेल नहीं खाते? दोनोंका स्वभाव क्या बिल्कुल जुदा है?

विमल बाबूने कहा—इसका उत्तर आपको नहीं दूँगा—उत्तर देनेका समय अभी नहीं आया।

विमल बाबूने धीरे-धीरे कहा—एक सच्चे मित्रका उपहार मानकर भी तो ले सकती हैं।

सविताने उनके मुखपर नजर टिकाकर जरा हँसकर कहा—लेना हो तो कैफियतकी कमी नहीं होती, यह मैं जानती हूँ। आप मेरे मित्र नहीं हैं, यह भी मैं नहीं कहती। किन्तु इस बातको छोड़िए। यहाँपर और कोई नहीं है, सिर्फ आप हैं और मैं हूँ। मुझसे कहनेमें संकोच हो, यह अधिकार पुरुषके निकट अब मेरा नहीं है। बताइए तो यह क्या सच है? यही क्या आपके मनकी बात है?

विमल बाबू सिर उठाकर क्षणभर ताकते रहे। इसके बाद बोले—मनकी बात आपको क्यों जताऊँगा? जतानेमें तो लाभ नहीं है।

"लाभ नहीं है, यह भी जानते हैं?"

"हाँ, यह भी जानता हूँ।"

सविताने निकलती हुई साँसको दबा लिया। इस स्वल्पभाषी शान्त मनुष्यके प्रतिदिनके आचरणको स्मरण करके उसकी आँखोंमें आँसू भर आने लगे। उन्हें रोककर उसने कहा—मेरे जीवनके इतिहासको आप जानते हैं विमल बाबू?

"ना, नहीं जानता। सिर्फ जो कुछ हुआ, जिसे अनेक लोग जानते हैं, मैं भी केवल उतना ही जानता हूँ नई-बहू—उससे अधिक नहीं।"

सुनकर सविता जैसे चौंक उठी। बोली—तो क्या जो हुआ है, वह मेरे जीवनका इतिहास नहीं है विमल बाबू? ये दोनों चीजें क्या एकदम अलग हैं? सच सच बताइए तो।

उसके प्रश्नकी व्याकुलतासे विमल बाबू दुविधामें पड़ गये, किन्तु वैसे ही बिना किसी सकोचके कह उठे—हाँ, ये दोनों चीजें एक नहीं हैं नई-बहू। कमसे कम अपने जीवनके द्वारा यही बात आज बिना किसी सशयके जान पाया हूँ कि ये दोनों एक नहीं हैं।

इसका अर्थ यद्यपि स्पष्ट नहीं हुआ, तथापि इस बातने सविताके हृदयमें गहरी चोट की। चुपचाप मन-ही-मन बड़ी देर तक आन्दोलन करके अन्तको कहा—सुना तो है आपने कि मैं स्वामीको छोड़कर रमणी बाबूके साथ चली आई थी—फिर उस दिन उनको भी त्याग कर दिया है। मैं तो अच्छी औरत नहीं हूँ—फिर एक दिन अन्य पुरुषको ग्रहण कर सकती हूँ, यह बात क्या आपके मनमें नहीं आती?

विमल बाबूने कहा—नहीं। यद्यपि उनने आना चाहा था पर उसी समय हटा भी दिया है।

"क्यों?"

सुनकर, विमल बाबूने हँसकर कहा—यह प्रश्न तो बच्चोंका-सा हुआ। उसने यह किया है, अतएव उसे यही करना चाहिए, यह जवाब आपको बच्चोंके पढ़नेकी पुस्तकोंमें मिलेगा। मैंने उनसे अधिक पढ़ा है नई-बहू।

"पढ़ाया किसने?"

"पढ़ानेवाला कोई एक नहीं है। क्लासमें घंटे-घंटेमें मास्टर बदले हैं। उनमेंसे कोई याद है और कोई याद नहीं है। लेकिन जो हेडमास्टर हैं, जिन्होंने आपसे इन सब मास्टरोंको नियुक्त किया था, उनको तो देखा नहीं, फिर आपके आगे उनका नाम कैसे लूँ—बताइए?

सविताने क्षणभर सोचकर कहा—जान पड़ता है, आप खूब धार्मिक मनुष्य हैं, क्यों विमल बाबू?

विमल बाबूने पूछा—धार्मिक मनुष्य आप किसे कहती हैं? आपके स्वामीकी तरह?

सविताने चकित होकर प्रश्न किया—उन्हें क्या आप पहिचानते हैं? उनके साथ परिचय है क्या?

विमल बाबूने उसके उद्वेगको लक्ष्य किया; किन्तु पहलेकी ही तरह शान्त स्वरमें कहा—हाँ जानता हूँ। एक दिन किसी तरह कुतूहलको दबा न सका—उनके पास गया। बड़ी कोशिश करने पर मुलाकात हुई, बातचीत भी बहुत कुछ हुई।—नहीं नई बहू, उन्होंने जिस भावसे धर्मको लिया है, मैंने उस भावसे नहीं लिया, उन्होंने जैसा समझा है, वैसा मैंने नहीं समझा। उस बारेमें हम लोगोंका कोई मेल नहीं है। मैं धार्मिक मनुष्य नहीं हूँ।

आवेग और उत्तेजनासे सविताके हृदयमें हलचल मच गई। यह समझना बाकी नहीं रहा कि सारे कुतूहलका मूल कारण वह आप है। वह रुक नहीं सकी, पूछ-बैठी—वहाँपर मेल न हो, किन्तु क्या कहींपर आप दोनों मेल नहीं खाते? दोनोंका स्वभाव क्या बिल्कुल जुदा है?

विमल बाबूने कहा—इसका उत्तर आपको नहीं दूँगा—उत्तर देनेका समय अभी नहीं आया।

" कमसे कम यह तो बताइए कि यह बात भी तब मनमें नहीं आई कि इस आदमीको कोई छोड़कर कैसे चला गया ? "

विमल बाबूने हँसकर कहा—' कोई ' माने आप ही तो ? किंतु आप तो छोड़कर नहीं चली आईं। सभीने मिलकर आपको चले आनेके लिए लाचार किया था।

" यह भी आपने सुना ? "

" सुना क्यों नहीं। "

" सभी कुछ ? "

विमल—हाँ, सभी कुछ सुना है।

सविताकी दोनों आँखोंमें आँसू भर आये। बोली, उन लोगोंको मैं दोष नहीं देती, उन्होंने अच्छा ही किया था। स्वामीके संसारको अपवित्र न करके मुझे आप ही चले जाना चाहिए था। इतना कहकर उसने आँचलसे आँसू पोंछ डाले, फिर थोड़ी देर बाद कहा, लेकिन इतना सब जानकर भी प्यार मुझे कैसे करते है—बताइए तो ?

" प्यार करता हूँ, यह बात तो अभीतक मैंने नहीं कही नई-बहू ? "

" नहीं। आपने कहा नहीं, इसीसे तो इस बातको इस तरह सच्चे रूपमें जान पाई हूँ विमल बाबू। किन्तु सोचती हूँ कि जिस आदमीने इतना देखा है, मेरी सभी बातें जो सुन चुका है, उसने मुझे क्या समझकर प्यार किया ? अवस्था मेरी टल चुकी है, रूप भी नहीं रहा—जो कुछ बाकी है, वह भी दो दिनमें समाप्त हो जायगा—उसको आदमी क्या सोचकर प्यार कर सका ?

विमल बाबूने उसके मुँहकी ओर देखकर कहा—अगर मैंने प्यार ही किया हो नई-बहू, तो वह शायद संसारमें बहुत कुछ देख चुकनेके कारण ही संभव हुआ है। पुस्तकमें पढ़े हुए पराये उपदेशको मानकर चलता होता तो शायद न कर सकता। किन्तु वह रूप और जवानीका लोभ नहीं है, यह बात अगर आपने सचमुच समझ ली हो, तो मैं कृतज्ञ हूँ।

सविताने सिर हिलाकर कहा—हाँ, यह बात मैं सचमुच समझ गई हूँ। किन्तु मैं पूछती हूँ, मुझे पाकर आपको क्या लाभ होगा ? मुझे लेकर क्या करेंगे ?

विमल बाबूने कुछ उत्तर नहीं दिया, केवल चुपचाप उसकी ओर ताकते रहे। क्रमशः वह दृष्टि उसे व्यथासे भर गई। सविता अधीर होकर कह उठी—इस तरह क्या विमल ताकते ही रहेंगे, मेरी बातका जवाब न देंगे ?

"इसका कोई जवाब मेरे पास नहीं है नई-बहू। मैं केवल यह जानता हूँ कि आपको मैं नहीं पाऊँगा—मेरे लिए पानेकी राह नहीं है।"

"क्यों नहीं है? आपने यह बात कैसे समझी?"

"समझा हूँ अनेक दुःख पाकर। मैं भी निष्कलंक या वैराग नहीं हूँ नई बहू। एक दिन अनेक औरतोंको ही मैंने जाना था। उस दिन ऐश्वर्यके जोरसे उन्हें छोटा करके लाया था—वे खुद भी छोटी हो गईं और मुझे भी वही बना दिया। वे अब नहीं हैं—कौन कहाँ बह गईं, उसकी भी खबर आज नहीं है।"

जरा रुककर बोले—तब उस खेलमें उतरनेमें मुझे कुछ रुकावट नहीं हुई, लेकिन आज पग-पगपर बाधा है।

सविताने सिहरकर प्रश्न किया—सिर्फ ऐश्वर्यने ही उनको फुसलाया था? किसीको प्यार नहीं किया?

विमल बाबूने कहा—किया था क्यों नहीं। एक स्त्री आप की ही तरह घर छोड़कर पास आई थी, लेकिन खेल समाप्त हो गया—उसे नहीं रख सका। मैं उसे दोष नहीं देता। किन्तु आज यह मुझे समझानेको बाकी नहीं है कि प्यारके धनको छोटा करके नहीं रखा जा सकता, उसे खोना ही पड़ता है। उस दिन रमणी बाबूको भी तो इसी तरह खोते देखा है।

सविताने प्रश्न किया—यही क्या आपको डर है?

विमल बाबू बोले, डर नहीं है नई-बहू, अब यही मेरा मत है—उस मतसे डिगूँ नहीं, यही मेरी साधना है। आपकी लड़कीको, मैंने देखा है, आपके स्वामीको देख आया हूँ। किस तरह सर्वस्व देकर कर्जा चुकाकर वह चले गये हैं, यह भी जान चुका हूँ, सुननेको मुझे कुछ बाकी नहीं है। इसके बाद मैं आपको कैसे पाऊँगा? दर्वाजा जो बन्द है। मैं जानता हूँ, छोटा करके आपको मैं किसी दिन पा न सकूँगा। और इससे भी बढ़कर यह जानता हूँ कि छोटा न करके भी आपको पानेकी तनिक भी राह मेरे लिए खुली नहीं है। इसीसे तो मैंने कहा था नई-बहू, कि आप मुझे अपना सच्चा मित्र मानकर ग्रहण कीजिए। यह घर उसी मित्रका दिया उपहार है। यह आपको छोटा करनेका कौशल नहीं है।

सविता सिर झुकाये चुप बैठी रही। कितनी बातें उसके मनमें आईं-गईं, इसका कुछ ठिकाना नहीं। अन्तको सिर उठाकर उसने कहा—यह मित्रता कितने दिन टिकेगी विमल बाबू? यह मिथ्याका आवरण क्यों टिकने लगा?

नर-नारीके मूल-सम्बन्धमें यह एक दिन हम लोगोंको खींचकर नीचे उतार ही देगा। इसे कौन रोकेगा ?

विमल बाबूने कहा—मैं रोकूँगा नई-बहू। आपकी अपेक्षा करता रहूँगा। किन्तु आपके मनको भुलानेका आयोजन नहीं करूँगा। अगर कभी अपना परिचय पाइए, मेरी तरह दोनों आँखोंसे देखकर दृष्टि अगर कभी बदले, तो मुझे अपने पास बुलाइएगा—जीता रहा तो दौड़ा आऊँगा—छोटा करके लेनेके लिए नहीं—आऊंगा सिरपर उठाकर बिठानेके लिए।

सविताकी आँखें छलछलाने लगीं। बोली—आपका परिचय पानेको अब बाकी नहीं है विमल बाबू। आँखोंकी यह दृष्टि इस जीवनमें नहीं बदलेगी। केवल आशीर्वाद कीजिए कि जो दु:ख खुद ही बुलाकर लाई हूँ, उसे सह सकूँ।

विमल बाबूके नेत्र भी सजल हो उठे। बोले—दुःख कौन देता है, किधरसे वह आता है, यह आज भी मुझे नहीं मालूम। इसीसे आपके अपराधका विचार करने नहीं बैठूंगा, केवल प्रार्थना करूँगा कि वह दु:ख चाहे जिस तरह आया हो, चिरस्थायी न हो।

"लेकिन चिरस्थायी ही तो हो गया है।"

"यह भी नहीं जानता नई-बहू। मेरी आशा यह है कि ससारमें अभी तुम्हें जाननेको कुछ बाकी है, अभी तुम्हारा सब कुछ देखना यहीं खतम नहीं हो गया। आशीर्वाद देता हूँ कि तुम उस दिन सहजमें ही इस दुःखका एक किनारा देख पाओ।

सविताने उत्तर नहीं दिया। फिर दोनों जने कई मिनट तक चुप रहे। सविताने जब सिर उठाया, तब उज्ज्वल दीपकके प्रकाशमें देखा गया कि उसकी पलकें आँसुओंसे भीगकर भारी हो उठी हैं। उसने धीमे स्वरमें कहा—तारक बर्दवानके किसी गाँवमें मास्टरी करता है। उसने मुझे वहाँ बुलाया है। कुछ दिनके लिए उसके पास चली जाऊं ?

"जाओ ?"

"तुम क्या कलकत्तेमें ही रहोगे ?"

"रहना ही होगा। यहाँ एक नया आफिस खोला है, उसका बहुत-सा काम बाकी है।"

सविताने जरा हँसकर कहा—रुपए तो बहुत जमा कर लिये हैं—अब और जमा करके क्या करोगे ?

प्रश्न सुनकर विमल बाबू हँसे, बोले—जमा नहीं किये, वे आप ही जमा हो उठे हैं नई-बहू, क्योंकि मैं उन्हें रोक नहीं सका। क्या करूँगा, यह नहीं जानता। सोचा है, समय होनेपर एक आदमीसे उनका प्रयोजन सीख लूँगा।

सविताने उठकर पासकी खिड़की खोल दी, फिर लौट आकर कहा—इस घरकी अब मुझे जरूरत नहीं थी।—सोचा था, अच्छा ही हुआ जो गया। एक झंझट मिटा। लेकिन तुमने यह नहीं होने दिया। ये किरायेदार रहे, इनको देखना।

"देखूँगा।"

"और एक अनुरोध रखोगे ?"

"क्या अनुरोध है नई-बहू ?"

"मेरी लड़की और मेरे स्वामी वन-वासमें हैं। अगर समय मिले तो उनकी कुछ खोज खबर लेना।"

विमल बाबूने हँसते हुए जरा गर्दन हिलाई, कुछ कहा नहीं। इसका क्या मतलब है, यह सविता ठीक समझी नहीं, किन्तु हृदयके भीतर जैसे आनन्दकी आँधी दौड़ गई। दोनों हाथ जोड़कर माथेसे लगाये—यह स्वामीके लिए या विमल बाबूको सो शायद वह आप भी नहीं जान पाई। घड़ीभर चुप रहकर उनके मुखकी ओर ताककर कहा—अपने स्वामीकी बात एक दिन तुमको अपने मुँहसे ही सुनाऊँगी—उसे केवल मैं ही जानती हूँ और कोई नहीं। लेकिन मैं तुमसे पूछती हूँ, मैं जब आपके घर छोटी थी, तब तुम क्यों नहीं आये, बताओ तो ?

विमल बाबूने हँसकर कहा—इसका कारण यह कि जिन्होंने आज मुझे भेजा है, उन्हें उस दिन इसका खयाल न था। उसी भूलका महसूल चुकानेमें हम लोगोंके प्राणोंके ऊपर बीत रही है, किन्तु जान पड़ता है, इसी तरह उस बूढ़े विधाताके विचित्र खयालका रस जम उठता है—कभी उससे भेंट हो तो हम दोनों नालिश पेश कर देंगे। क्यों, ठीक है न ?

दूरपर शारदाको कई बार आते-जाते देखकर, उसे पास बुलाकर कहा—तुम्हारी माके भोजनमें देर हो गई है—क्यों बेटी ? अब उठना चाहिए।

शारदा अत्यन्त अप्रतिभ होकर बार-बार प्रतिवाद करके कहने लगी—नहीं, कभी नहीं। देर हो गई है आपको। आप आज भोजन करके जाने पावेंगे।

विमल बाबू हँसकर उठ खड़े हुए। बोले—तुम्हारी केवल यही बात मैं न रख सकूँगा बेटी। मुझे बिना खाये ही जाना होगा। जाता हू।

सविताने उठकर नमस्कार किया, किन्तु शारदाके भोजन करनेके अनुरोधमें सम्मिलित नहीं हुई।

विमल बाबू रोजकी तरह आज भी प्रतिनमस्कार करके धीरे-धीरे नीचे उतर गये।

१२

रमणी बाबू अब नहीं आते, शायद छूटाछूटी हो गई। किराएदार सोच नहीं पाते कि दोनोंके बीच अकस्मात् क्या बात हो गई। वे आग्रहसे सविताके शान्त विषादयुक्त मुखको देखते हैं। पहलेकी तुलनामें अब वह कितना बदल गया है। ज्येष्ठका सूना आकाश आषाढ़के सजल बादलोंके बोझसे जैसे झुककर उसके पास आ गया है। वैसे ही लताओंमें-पत्रोंमें, तृणमें-घासमें, वृक्ष वृक्षमें अश्रु-बाष्पकी करुण स्निग्धता छा गई है, वैसे ही जलमें, स्थलमें, गगनमें, पवनमें, सर्वत्र उसकी गोपन वेदनाका स्तब्ध इंगित दिखाई देता है। उसकी बातचीतमें, आचरणमें कभी किसी दिन भी उग्रता नहीं थी, तथापि किसी तरहका अज्ञात व्यवधान इतने दिन तक केवल दूर ही दूर रखता था। अब वह दूरी दूर हो गई है और इससे वह सबके हृदयके पास खिंच आई है। घरमें रहनेवाली और सब औरतें उस दिन शारदासे यही बात कर रही थीं। सोचा था, शायद सम्बन्ध-विच्छेदके दु:खने ही उसे इस तरहसे बदल दिया है।

रमणी बाबू साधारणत भले आदमी थे। रहते थे एक गैरकी तरह। न किसीकी भलाईमें थे, न बुराईमें। बीच बीचमें किराया बढ़ानेकी प्रयोजनीयताकी घोषणा करनेके सिवा उन्होंने और कोई बुरा सलूक किसीसे नहीं किया। उनका चला जाना बहुतोंको खटका, तो भी वे सोचते हैं कि इस जानेसे अगर नई-माकी कलंकित मार्गपर पैर रखनेकी कालिमा इतने दिन पर धुल जाय तो शोकके बदले वे उल्लासका ही अनुभव करेंगे। यह जैसे उनकी अपनी ही ग्लानि मिट गई,

उसमें उन्होंने ही निर्मल होकर स्वस्तिकी साम ली। केवल यही एक भय था कि जब वह खुद यहाँ न रहेगी, तब वे लोग कहाँ रहते होंगे। आज शारदाने इसी बारेमें उन्हें निश्चिन्त कर दिया। उसने कहा—बुआ, घरकी एक व्यवस्था हो गई। तुम सब जैसे हो वैसे ही रहो। माने कह दिया है कि तुम लोगोंको और कहीं रहनेके लिए घर न ढूढ़ना पड़ेगा।

"तो जान पड़ता है, मा और कहीं नहीं जायँगी शारदा?"

"जायगी, लेकिन फिर लौट आयेंगी, घर छोड़कर अधिक दिन कहीं नहीं रहेंगी।"

आनन्दसे बुआकी आँखोंमें आँसू झलक आये। शारदाको आशीर्वाद देकर वह यह सुसमाचार और सबको देने चल पड़ीं।

प्रति दिन विमल बाबूके विदा हो जानेके बाद सविता अपनी पूजाकी कोठरीमें प्रवेश करती है। पहले उसे पूजा-पाठ समाप्त करनेमें अधिक समय नहीं लगता था; लेकिन अब दो-तीन घंटे लगते हैं। किसी-किसी दिन रातके दस बज जाते हैं, किसी दिन ग्यारह। इस समय शारदाकी छुट्टी रहती है। वह नीचे उतरकर अपने घरके काम करती है। आज कमरेमें आकर उसने देखा, राखाल बिछौनेपर बैठा रोशनीमें उसकी कापी देख रहा है। पूछा—कब आये? उसके बाद कुण्ठित स्वरमें बोली—न जाने कितनी गल्तियाँ हुई हैं! क्यों, है न?

राखालने सिर उठाकर कहा—होनेपर भी गल्तियोंको मैं सुधार ले सकूँगा। लेकिन देखता हूँ, लिखना तो कुछ भी आगे नहीं बढ़ा।

"हाँ। क्योंकि समय ही नहीं मिलता।"

"क्यों, समय क्यों नहीं मिलता?"

"किस तरह मिले, आप ही बताइए? माका सब काम तो मुझे ही करना पड़ता है।"

"नई-माके तो नौकर-नौकरानियोंकी कमी नहीं है। उनसे क्यों नहीं कहती कि तुम्हें भी समय चाहिए, तुम्हारे भी काम-काज है। यह तो बड़ा अन्याय है शारदा!

राखालके कण्ठस्वरमें तिरस्कारका आभास था; किन्तु शारदाका मुख देखकर यह नहीं जान पड़ा कि वह कुछ लज्जित हुई है। उसने कहा—आपका ही क्या कुछ कम अन्याय है देवता? भिक्षाका दान ढकनेके लिए बेकारके कामका बोझ मेरे

सिरपर डाल दिया है। दूसरेको अकारण पीड़ा देनेसे खुदको होता है, ज्वर और उसे घरके भीतर अकेले पड़कर भोगना पड़ता है, सेवा करनेको आदमी नहीं मिलता। इतने दुबले क्यों दिखाई पड़ रहे हैं, बताइए तो!

राखालने कहा—बीमार नहीं हूँ, खूब मजेमें हूँ। किन्तु यह लिखनेका काम बेकार कैसे हो गया?

शारदाने कहा—बेकार नहीं है तो क्या है! बुखार आया, वह भी 'हुआ नहीं' कहकर छिपाना पड़ा। ऐसी तो दशा है। अच्छा, न हो मैंने यह सब लिख ही डाला, लेकिन यह आपके किस काम आवेगा, जरा सुनूँ!

"काम न आवेगा? तुम कहती क्या हो शारदा?"

"यही कहती हूँ कि यह सब किसी काममें न आवेगा। और अगर काम आवे भी तो मेरा क्या? मरने आपने मुझे दिया नहीं, अब जिलाये रखनेकी गरज आपकी है। मैं एक पंक्ति भी अब नहीं लिखूँगी।"

राखालने हँसकर कहा—लिखोगी नहीं तो मेरा कर्जा कैसे चुकाओगी?

"कर्जा नहीं चुकाऊँगी—ऋणी ही रहूँगी।"

राखालका जी चाहा कि उसका हाथ अपने हाथमें खींचकर कहे, ऋणी ही रहो। लेकिन साहस नहीं हुआ। बल्कि जरा गंभीर होकर ही कहा—जितना लिखा है उससे क्या तुम यह नहीं समझ सकतीं कि इस सबकी सचमुच जरूरत है?

शारदाने कहा—जरूरत है केवल मुझे हैरान करनेकी, और कुछ नहीं। केवल कुछ रामायण महाभारतकी बातें—यहाँ-वहाँसे ली हुई—ठीक जैसे यात्रा-मण्डलीकी* वक्तृतायें। ये सब काहेके लिए मैं लिखूँ?

उसकी बात सुनकर राखाल जितना विस्मित हुआ, उससे कहीं अधिक मुश्किलमें पड़ गया। वास्तवमें उसने जो कुछ लिखनेको दिया था वह यही था। वह यात्रा-मण्डलीके लिए पात्रोंके संवाद और वक्तृताओंकी रचना करता है और उनकी नकल कराकर मण्डलीके मालिकोंको देता है। यही उसकी असल जीविका है। किन्तु उपहासके डरसे मित्रमण्डलीमें इस बातको प्रकट नहीं करता। कहता है, कि

---

* कुछ कुछ उत्तरप्रदेशकी रास मंडली, नौटंकी आदिकी तरहकी अभिनेताओंकी मण्डली। ये मंडलियाँ खुले मैदानमें रामायण, महाभारत आदिके अभिनय करती हैं।

लड़के पढ़ाता हूँ। लड़के पढ़ाता न हो, यह बात नहीं है, किन्तु उस आमदनीसे तो ट्रामका किराया भी पूरा नहीं पड़ता। उसकी इच्छा नहीं है कि उसकी जीविकाका यह रहस्य किसीको मालूम हो; जैसे यह बहुत ही अगौरव और लज्जाकी बात है। उसे ऐसा सन्देह भी उत्पन्न हुआ कि शारदाने अपनेको जितनी अशिक्षित बतलाया था, वह शायद सत्य नहीं है, शायद सम्पूर्ण मिथ्या है,—क्या जाने, शायद उससे भी अधिक। क्रोधसे उसका मन न जाने कैसा जल उठा। कारण, वह अपनी पल्लवग्राही विद्याकी हकीकत जानता है—वह जितना आइन्स्टीनकी रिलेविटिको जानता है, उतना ही मार्कोल्किमकी एंटीगान ऐजक्सको। अँधेरेमें चलनेकी तरह हर पगपर उसे भय होता है, कहीं गड्ढेमें पैर न पड़ जाय। यात्रा-मण्डलीके 'तमाशे' लिखनेकी उसकी लज्जा भी उसी तरहकी है। शारदाके प्रश्नके उत्तरमें उसे कोई बात सूझ न पड़ी।

वह कह उठा—पहले तो तुम बहुत भली मानुस थीं शारदा, एकाएक ऐसी दुष्ट कैसे हो उठीं?

शारदाने हँसकर कहा—मैं दुष्ट हो उठी हूँ!

"दुष्ट नहीं हो उठीं? अच्छा, तुम्हारी रायमें दरकारी काम क्या है, जरा सुनूँ?"

"बताती हूँ। पहले आप यह बताइए कि छः सात दिनसे आये क्यों नहीं?"

"शरीर कुछ अस्वस्थ हो गया था।"

"झूठ बात है।" कहकर शारदा कुछ देर राखालके मुँहकी ओर चुपचाप ताकती रही, फिर बोली—हुआ था ज्वर, और वह भी बड़े जोरोंका। इसे शरीर कुछ अस्वस्थ था कहकर उड़ा देनेसे वह होती है झूठी बात। आपकी बुढ़िया नौकरानी, जिसे आप नानी कहकर पुकारते हैं, वह भी चारपाई पकड़े हुए थी। स्टोव जलाकर आपको खुद अपने हाथसे सागूदाना बार्ली तैयार करनी पड़ी। सुनती हूँ, आपके बन्धु-बान्धव अनेक हैं। उनमेंसे किसीको खबर क्यों नहीं दी?"

यह प्रश्न राखालके लिए नया नहीं है। गत वर्ष भी प्रायः ऐसी ही अवस्था हो गई थी। किन्तु वह चुप ही रहा। यह स्वीकार न कर सका कि संसारमें जिसके मित्रोंकी संख्या बेशुमार है, उसके लिए दुःख-कष्टके दिनोंमें ऐसे मित्रका सबसे अधिक अभाव होता है जिसे वह पुकारे या सहायताके लिए बुलावे।

शारदाने कहा—खैर मित्रोंको छोड़ो, किन्तु नई-माको क्यों खबर नहीं दी?

इसके जवाबमें राखाल विस्मयके साथ कह उठा—नई-मा ! नई-मा जायेगी मेरे उस सीलनवाले गंदे घरमें सेवा करने ? तुम भी शारदा, ऐसी बातें करती हो जिनका कोई ठीक ठिकाना नहीं। लेकिन मेरी बीमारीकी खबर तुमको भी किसने दी ?

शारदाने कहा—किसीने भी दी, लेकिन दुःख यही है कि समयपर नहीं दी। सुनकर नई-माने कहा—राजूने मेरी रेणुकी जान बचाई, दिनको रसोई बनाकर सबके मुँहमें अन्न डालकर और रातको सारी रात जागकर सेवा करके, साथ ही अपनी सारी पूँजीसे डाक्टर-वैद्यकी फीस और दवाका ऋण चुकाकर ! और वह जब बीमार पड़ा, तब आप ही बुखारमें प्यासा होने पर पीनेका पानी लेने नलपर गया, भूख लगनेपर चूल्हा जलाकर अपने हाथसे पथ्य तैयार किया, और कोई लानेवाला न था—इसलिए दवा भी नहीं पा सका। लेकिन वह मुझे क्यों खबर देता बेटी ?—मेरा तो उसे विश्वास नहीं है। बेटीकी बीमारीमें जब वह दूसरेका नाम करके सहायता लेने आया, तो मैंने दी नहीं।—कहते-कहते शारदाकी ही आँखोंमें आँसू उमड़ आये। बोली—खैर वह न सही, वह नई-मा है, पर मैंने क्या दोष किया था देवता ? लिखाई करके अभीतक रुपए नहीं अदा किये, इसी लिए खफा हो रहे हो क्या ?

राखाल हँस पड़ा। बोला—यह तो तुमने चायके प्यालेमें तूफान उठा दिया। तुच्छ बातका इतना तूमार खड़ा कर दिया। ज्वर क्या किसीको होता नहीं ? दो ही दिनमें तो चला गया।

शारदाने कहा—चला गया, यह हम लोगोंपर भगवानकी दया है—आपपर नहीं। असलमें आप बहुत खराब आदमी हैं। विष खाकर मरनेको थी, आपने मरने नहीं दिया, अस्पतालमें दिन-रात पीछे लगे रहे। लौट आकर भूखों मरनेको तैयार थी, उसमें भी आपने टाँग अड़ाई। एक तरफ तो यह है, और दूसरी तरफ आपकी बीमारीमें थोड़ी-सी सेवा करूँ—वह भी आपसे सहा नहीं गया। हमेशा क्या इसी तरह शत्रुता करेंगे—किसी तरह छुटकारा न देंगे ? मैंने आपका क्या बिगाड़ा था ? इस जन्मका तो दोष मैं कुछ देखती नहीं, यह पूर्व जन्मका दण्ड है क्या ?

राखाल कुछ उत्तर नहीं दे सका। उसने अवाक् होकर सोचा कि यह मुँहचोर शान्त स्त्री एकाएक कैसे इतनी प्रगल्भ हो उठी !

शारदा थमी नहीं। अगर दिन होता तो उजालेमें इतनी बातें इस तरह बिल्कुल सकोचहीन होकर किसी तरह न कह पाती; किन्तु यह था रात्रिका समय— निर्जन अँधेरे घरके भीतर केवल वह थी और अन्य एक आदमी था।—आज बुद्धि शिथिल थी, उसपर एक तंद्रा-सी छाई थी। इसीसे भीतरकी छिपी भावना उसके वाक्योंके स्रोत-पथसे बेरोक बाहर निकल आई, हिताहितकी तर्जनीके शासनकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। कहती गई—मैं जानती हूं देवता, कि आपने अभी तक ब्याह क्यों नहीं किया। असलमें औरतोंपर आपको बड़ी घृणा है। लेकिन यह भी जान रखिए, कि जिन्हें आपने अब तक देखा है, जिनकी फर्माइशें पूरी करनेमें दौड़-धूप की है, पीछे पीछे घूमे हैं, वे ही सारी स्त्री-जातिकी कसौटी नहीं हैं। दुनियामें और भी औरतें हैं।

अबकी राखाल हँस दिया। पूछा—आज तुमको हुआ क्या है, बताओ तो?

"सचमुच आज मुझे बड़ा क्रोध है।"

"क्यों?"

"पूछते हैं क्यों! किसलिए आपने मुझे अपनी बीमारीकी खबर नहीं दी, बताइए!"

"देनेसे ही क्या होता? वहां कोई और औरत नहीं है। तुम क्या अकेली मेरी सेवा करने जातीं?"

शारदाने आँखोंमें दर्प भरकर कहा—जाती नहीं तो क्या सुनकर चुप होकर बैठी रहती?

"तुम्हारे स्वामी जब लौटकर यह सुनते तो क्या कहते?"

"वह लौटकर नहीं आवेंगे, यह मैं आपसे अनेक बार कह चुकी हूं। आप कहेंगे कि तुमने यह कैसे जाना? इसका जवाब यह है कि मैं नहीं जानूंगी तो संसारमें और कौन जानेगा?" यह कहकर क्षणभर चुप रहनेके बाद बोली— इसके सिवा और एक बात है। अकेले सूने घरमें आपकी सेवा करने जाना मेरे-लिए दोषकी बात हो, लेकिन इस कमरेमें वह किसके भरोसे मुझे अकेला डाल गये हैं? यह जो आप मेरे कमरेमें आकर बैठते हैं—अगर मैं आपको न जाने दूं, पकड़ रखूं, तो भला मुझे कौन रोकेगा, बताइए तो सही?

यह कैसा तमाशा है! कैसी दिल्लगी है! राखालने ऐसी बात कभी किसी भी स्त्रीके मुँहसे नहीं सुनी, खासकर शारदाके। गहरी लज्जासे राखालका मुँह

लाल हो उठा, लेकिन जाहिर होनेपर यह लज्जा बढ़नेके सिवा कम न होगी, इसीसे जोर करके किसी तरह हँसनेका प्रयास करके उसने कहा—अकेला पाकर तुमने मुझे तो बहुत-सी बातें सुना दीं; किन्तु अगर तुम्हारे वे होते तो क्या यह सब कह सकतीं ?

शारदाने कहा—तब तो कहनेकी कोई जरूरत ही न होती। किन्तु आज तो मैं और ही बात कहती। कहती—जो शारदा तुमको प्राणोंसे बढ़कर प्यार करती थी—उसने कितना सहा है, इसके साक्षी केवल भगवान् हैं—जिसे ब्याह करनेका वादा करके लाकर धोखा दिया, जूठी पत्तलकी तरह फेंककर चले गये, जरा भी नहीं हिचके, जिसके लौटनेका रास्ता कहीं भी खुला नहीं रखा, वह शारदा अब नहीं है, वह विष खाकर मर गई। अपने पापोंका नहीं, तुम्हारे पापका प्रायश्चित्त करनेको। यह शारदा दूसरी है। उसके इस पुनर्जन्ममें अब किसीका दावा नहीं है।

सुनकर राखाल स्तब्ध हो रहा।

शारदा कहती गई—आपको क्या याद नहीं है देवता, अस्पतालमें खीझकर, नाराज होकर, आपने बार-बार मुझसे पूछा था कि तुम कहाँ जाना चाहती हो ? इसके जवाबमें मैंने रोकर कहा था कि मेरे जानेकी जगह कहीं नहीं है। सिर्फ एक जगह थी, जहाँ जा रही थी, किन्तु बीचमें आकर आपने वह रास्ता बंद कर दिया।

कुछ देर तक दोनों ही चुप रहे। राखालने कहा—जीवन बाबूको मैंने आँखसे नहीं देखा, केवल इस घरके लोगोंके मुँहसे उनका नाम-भर सुना है। वह क्या तुम्हारे स्वामी नहीं हैं ? सभी झूठ है ?

"हाँ, सभी झूठ है। वह मेरे स्वामी नहीं हैं।"

"तो क्या तुम विधवा हो ?"

"हाँ, मैं विधवा हूँ।"

फिर कुछ देर चुप बीती। शारदाने पूछा—मेरी कहानी सुनकर क्या आपके मनमें मुझपर घृणा हो गई है !

राखालने कहा—नहीं शारदा, मैं इतना नासमझ नहीं हूँ। तुमसे कहीं बढ़कर अपराध नई-माने किया था। मैंने उन्हें भी घृणा नहीं की। किन्तु इतना कह डालकर ही वह अत्यन्त लज्जाके साथ चुप हो गया। तभी वह समझा कि

यह उसकी अनधिकार-चर्चा है, यह उसका अपना ही अपमान है। यह कभी मोटी कड़वी बात उसके मुँहसे अकस्मात् निकल गई।

शारदाने कहा—नई-माने आपको माकी तरह पाला-पोसा है—

राखालने कहा—हाँ, वह मेरी मा ही तो है। इतना कहकर उसने उस प्रसंग-को चटपट दवा कर कहा—तुम्हारे मा-बाप आत्मीय-स्वजन हैं या नहीं, यह तुम नहीं बताना चाहतीं, कमसे कम उनके पास अब नहीं जाओगी, यह मैं निश्चित समझ गया हूँ किन्तु अब क्या करोगी?

शारदाने कहा—जो कहती हूँ वही करूँगी। नई-माका काम करूँगी।

"लेकिन यह क्या तुमको हमेशा अच्छा लगेगा?"

शारदाने कहा—यह दासीवृत्ति तो नहीं है, माकी सेवा है। कमसे कम यह जानती हूँ कि बहुत दिनोंतक अच्छी लगेगी।

राखालने कहा—किन्तु बहुत समयके बाद भी एक समय बाकी रहता है, तब अपने पैरों खड़ा होना होता है—उसके लिए रुपयोंकी जरूरत है। खालिस सेवा करके उस समस्याका समाधान नहीं होता।

शारदाने कहा—रुपयोंकी चाहे जितनी जरूरत क्यों न हो, मैं आपकी यह किरानीगिरी नहीं कर सकूँगी। बल्कि एक चिट्ठी लिखकर बिछौनेपर डाल रखूँगी, कोई न कोई आदमी उसे पढ़कर चुपकेसे छिपाकर रुपए मेरे तकियेके नीचे रख जायगा। उसीसे मेरा अभाव मिट जायगा।

राखालने हँसकर कहा—वह तो भिक्षा लेना होगा।

शारदा भी हँसी, बोली—भिक्षा ही लूँगी। कोई उसे न जानेगा—घूस देकर लोग किसीसे कहते नहीं—मुझे लज्जा काहेकी है?

राखालका फिर जी चाहा कि हाथ पकड़कर उसे अपने पास खींच ले और इस ढिठाईके लिए उसे दण्ड दे किन्तु फिर साहस नहीं हुआ, समय निकल गया।

दासीने बाहरसे पुकारकर कहा—दीदी, मा आपको बुला रही हैं।

"माका पूजा-पाठ क्या समाप्त हो गया?"

"हाँ, हो गया।" कहकर वह चली गई।

शारदाने कहा—आप मासे मिलने न जायेंगे?

राखालने कहा—तुम जाओ, मैं बादको आऊँगा।

"बादको क्यों? चलिए न दोनों जने साथ चलें। यह कहकर वह दबी हुई हँसीकी एक लहर बिखेरकर दर्वाजा खोलकर तेजीके साथ चली गई।

राखाल आँखें मूँदकर बिछौनेपर पड़ गया। उसे जान पड़ा, यह घर जिस माधुर्यसे भर गया है, वह सजीव मनुष्यके हाथकी तरह उसके सब अंगोंको स्पर्श कर रहा है। कितने दिनोंका परिचित यह साधारण कमरा आज उसे जान पड़ा, अनन्त रहस्यसे परिपूर्ण है।

उसके देह और मनमें आज यह काहेकी आकुलता, काहेका स्पन्दन है! वक्षःस्थलके निगूढ़ अन्तस्तलमें यह कौन बोल रहा है? क्या कह रहा है? स्वर अस्पष्ट सुन पड़ता है, पर भाषा समझमें क्यों नहीं आती? कितनी ही, सैकड़ों, औरतोंको वह जानता-पहचानता है। कितने ही दिनोंके कितने ही आनन्दोत्सव उनके साथमें, बातचीतमें, गानेमें, हँसी दिल्लगीमें बीते हैं। उनकी याद आज भी बनी हुई है—मनके कोनेमें खोजनेसे आज भी दिखाई पड़ती है। किन्तु शारदाकी—इस एकमात्र नारीकी बातसे जो विस्मय आज मूर्तिमान होकर उद्‌भासित हो उठा, उसकी तुलना इस जीवनकी अभिज्ञतामें कहाँ है? यही क्या नारीके प्रणयका रूप है? उसकी तीस वर्षकी उम्रमें क्या आज ही इस अज्ञात प्रणयके प्रथम दर्शन उसे मिले हैं? क्या इसीके जय-गानका अन्त नहीं है—क्या इसीके कलकको गाकर अब भी समाप्त नहीं किया जा सका?

किन्तु भूल नहीं है, भूल नहीं है—शारदाने जो बातें कहीं हैं, उन्हें गलत समझनेका अवकाश नहीं है। इस तरह सुनिश्चित और निःसंशय भावसे जो आप आकर पास खड़ी हो गई है उसे वह 'ना' कहकर किस संकोचसे, किस वृहत्तरकी आशासे लौटा देगा? तो भी दुविधा जगती है, मन पीछे हटना चाहता है। संस्कार कुण्ठा जतलाकर कहते हैं—शारदा विधवा है, शारदा निन्दिता है, वह स्वैराचारके कलंकके प्रलेपसे मलिन है। वह अपनी मित्र-मण्डलीमें, बन्धु-समाजमें उसका 'स्त्री' कहकर परिचय किस दुस्साहससे देगा? फिर वैसे ही मनमें आती है पहले दिनकी बात—वह अस्पतालमें जाना। मृतकल्प नारीका वह पांशु-पांडुर मुख, मृत्युकी काली छाया उसके होठोंमें, कपोलोंमें, मुँदी हुई आँखोंकी पलकोंमें। गाड़ीकी बन्द खिड़कीकी खड़खड़ियोंसे आपड़ता है रास्तेका प्रकाश। उसके बाद यमराज और मनुष्यकी वह लड़ाई!—छीना-झपटी! कैसी मुश्किलसे वह प्राण लौटे! इन सब बातोंको राखाल कैसे भूल सकता है? वह कैसे भूलेगा अपने

हाथोंमें शारदाका सम्पूर्ण समर्पण? दोनों आँखोंके आँसू पोंछकर उसका यह कहना—अब मैं आपकी आज्ञा लिये बिना नहीं नहेंगी देखता। उस दिन राखालने नावमें कहा था—देखो, यह अंगीकार हमेशा याद रखना।

उसी दासीने आकर कहा—राजू बाबू, आपको मा बुला रही हैं।

"मुझे!" चौंककर राखाल उठ बैठा। हाथ लगाकर देखा, आँसू बहनेसे तकियेका बहुत-सा हिस्सा भीग गया है। चटपट उसे उलटा रखकर वह ऊपर गया, नई माके पैरोंकी धूल माथेसे लगाकर पाँवोंके पास बैठ गया। इतने दिन न आनेकी बात, उसकी बीमारीकी बात, कुछ भी नई-माने नहीं की, केवल स्नेहार्द्र स्निग्ध कण्ठसे पूछा—अच्छे हो बेटा?

राखालने सिर हिलाकर हामी भरते हुए कहा—मुझसे एक बहुत बड़ा अपराध हो गया है मा, मुझे क्षमा करना होगा। कई दिन इधर बुखारमें पड़ा रहा, पर आपको खबर नहीं दे सका।

नई-मा कोई उत्तर न देकर चुप हो रही। राखाल कहने लगा—यह इच्छा करके नहीं और आप लोगोंको आघात देनेके लिए भी नहीं। याद आ रहा है मा, एक समय आपको जितना दिक मैंने किया है उतना आपकी रेणुने भी नहीं। इसके बाद एकाएक एक दिन दुनिया बदल गई—सिर्फ तभी मुझे यह पता चला कि संसारमें इतना आँधी-पानी, तूफान रखा छोड़ा गया था। मैं ठाकुरजीकी कोठरीमें जाकर रोकर कहता था—गोविन्दजी, अब तो और सहा नहीं जाता, हमारी माको लौटा दो। मेरी यह प्रार्थना इतने दिनोंमें ठाकुरजीने मंजूर की है। अपनी उसी माका असम्मान करूँगा, ऐसी बात आप किस तरह सोच सकीं मा!

अबकी नई-मा धीरे-धीरे बोली—तो फिर किस लिए रूठकर मुझे खबर नहीं दी भैया? दरबानको भेजकर जब खोज-खबर लेनी चाही तब कुछ करनेकी राह ही तुमने नहीं रखी।

राखालने हँसकर कहा—यह केवल भूलके कारण। अभ्यास तो है नहीं, दुःखके दिनमें खयाल ही नहीं आता मा कि तीनों लोकमें कहीं कोई मेरा है।

नई-माने कुछ उत्तर नहीं दिया; केवल उसका एक हाथ पकड़कर और पास खींचकर गहरे स्नेहसे उसकी पीठपर हाथ फेर दिया।

जान पड़ता है, शारदा आड़से सब सुन रही थी, सामने आकर बोली—देवतासे खाकर जानेके लिए कहो न मा। उन्हें डेरेपर जाकर अपने ही हाथसे तो खाना बनाना पड़ेगा।

नई-माने कहा—मैं क्यों, तुम आप ही तो कह सकती हो बेटी। इसके बाद मुसकाकर बोली—यह बात तो वह प्रायः कहती है राजू। अपने हाथसे तुम्हारा खाना पकाना जैसे यह सह नहीं सकती—इसको चोट लगती है। तुमने इसके प्राण बचाये हैं—इस बातको एक दिन भी यह कभी नहीं भूली।

पल-भरके लिए राखाल लज्जासे लाल हो उठा। सविता कहने लगी—म सोचा करती हूँ कि ऐसी स्त्रीको उसका स्वामी कैसे छोड़ गया! जितनी अघटन घटनाएँ हैं सो सब क्या विधाताने स्त्रियोंके ही भाग्यमें लिख दी हैं? यह कहनेके साथ-साथ उनके मुँहसे लम्बी साँस निकल गई।

शारदाने कहा—अब इनसे ब्याह कर डालनेके लिए कहिए न मा। आपके हुक्मको यह कभी नहीं टाल सकेंगे।

सविता कुछ कहनेवाली ही थी कि राखालने चटपट उसमें बाधा दी। बोला—तुमने मुझे सिर्फ दो ही चार दिनसे देखा है शारदा, किन्तु इन्होंने मुझे इतना बड़ा किया है—यह मेरी बात पहचानती हैं। खूब जानती हैं कि न मेरे घर-द्वार है, न कोई आत्मीय-स्वजन हैं, न कमाई करनेकी क्षमता है। किसी तरह लड़कोंको पढ़ाकर दो बेला दो मुट्ठी अन्न जुटा लेता हूँ। मुझे लड़की देना उसके गलेपर छुरी फेरनेके समान है। ऐसी अन्याय आज्ञा मा कभी नहीं देंगी।

"लेकिन अगर दें?"

"दें तो समझूँगा मेरी प्रारब्ध।"

महाराजने आकर खबर दी कि खाना तैयार है। राखाल समझ गया कि शारदाने ही ऊपर आकर यह आयोजन किया है।

बहुत दिनोंके बाद सविता उसे खिलाने बैठी। बोली—राजू, तारक जहाँ नौकर है, वह गाँव सुनती हूँ, एकदम दामोदरके किनारे है। मुझसे आग्रह किया है कि मैं कुछ दिन उसके यहाँ जाकर रहूँ। मैंने तय किया है कि जाऊँ।

"उसने क्या चिट्ठी लिखकर यह प्रस्ताव किया है?"

सविताने कहा—चिट्ठीसे नहीं, दो-तीन दिनकी छुट्टी लेकर वह आप ही कहने आया था। बहुत अच्छा लड़का है। जैसा विनयी है वैसा ही विद्वान्। संसारमें वह उन्नति अवश्य करेगा।

राखालने विस्मयसे सिर उठाकर प्रश्न किया—तारक आया था कलकत्ते ! कहाँ, मुझे तो खबर नहीं !

सविताने कहा—तुम्हें खबर नहीं ! तो जान पड़ता है, तुमसे मिलनेका समय नहीं मिला। केवल दो ही दिनकी तो छुट्टी थी।

राखालने और कुछ नहीं कहा,—सिर झुकाकर भातका कौर खाने लगा। उसे याद आया कि बीमार पड़नेके पहले दिन ही उसने तारकको एक पत्र लिखा है, कि आजकल शरीर कुछ अच्छा नहीं रहता—स्वास्थ्य ठीक नहीं है। जी चाहता है कि कुछ दिनोंकी छुट्टी लेकर देहातमें जाकर मित्रके घरमें रह आवे। पर उस चिट्ठीका जवाब अभी तक नहीं आया।

१३

उस दिन रातको खाना-पीना हो जानेके बाद डेरेको लौटते समय शारदा राखालके साथ साथ नीचे उतर आई और बहुत अनुरोध करके बोली—मेरा बहुत जी चाहता है कि एक दिन अपने हाथसे रसोई बनाकर आपको खिलाऊँ। खाइएगा क्या किसी दिन देवता ?

" खाऊँगा क्यों नहीं। जब कहो तभी। "

" तो परसों, इसी समय। चुपके चुपके मेरे घरमें आइएगा, चुपकेसे खाकर चले जाइएगा। कोई नहीं जानेगा, नहीं सुनेगा। "

राखालने हँसकर पूछा—चुपके चुपके क्यों ? तुम मुझे खिलाओगी तो इसमें दोष क्या है ?

शारदाने हँसकर जवाब दिया था—दोष तो खानेमें नहीं है, दोष है चुपके चुपके खिलानेमें। अथ च अपने सिवा और किसीको न जानने देनेका लोभ मैं छोड़ नहीं पाती।

" सचमुच छोड़ नहीं पातीं, या कहना चाहिए, इसीसे कहती हो ? "

" जवाब मैं नहीं दे सकूँगी, " कहकर शारदाने हँसकर मुँह घुमा लिया।

राखालका कलेजा सिहर उठा। बोला—अच्छी बात है, वही होगा—परसों ही आऊँगा और वह तेजीसे पैर बढ़ाता हुआ चल दिया।

वह परसों आज आया है। रात अधिक नहीं हुई। शायद आठ बजे होंगे। सभी काममें लगे हैं, राखालकी ओर शायद किसीने लक्ष्य नहीं किया। रसोईका काम समाप्त करके शारदा चुपचाप बैठी थी। राखालको कोठरीमें आते देखकर चटपट उठकर बड़े आदरसे अभ्यर्थना की और बिछौनेपर बिठाकर बोली—मैंने सोचा था, शायद आपको आनेमें रात हो जायगी, या शायद भूल जायँगे, आयेंगे ही नहीं।

"भूल जाऊँगा, यह तुमने कभी नहीं सोचा शारदा। यह झूठ है।"

शारदाने हँसते हुए सिर हिलाकर कहा—हाँ, मैंने यह झूठ कहा। मैंने एक बार भी नहीं सोचा कि आप भूल जायँगे। अच्छा, खाना लाऊँ?

"लाओ।"

सब पास ही तैयार रखा था। आसन बिछाकर उसने खानेको परोसा परिमित आयोजन था, बाहुल्य कहीं भी नहीं। राखालने खुश होकर कहा—ठीक यही और ऐसा ही मैंने मन-ही-मन चाहा था शारदा, किन्तु इसकी आशा नहीं की थी। सोचा था, और भी चार जनोंकी तरह आदर-यत्नके आतिशय्यसे बहुत अधिक आडम्बर करोगी। कितनी ही चीजें शायद पड़ी ही रहेंगी—फेंकी जायेंगी। लेकिन वह चेष्टा तुमने नहीं की।

शारदाने कहा—सामान तो मेरा नहीं है देवता, आपहीका है। अपना होता तो ज्यादती करनेमें डर न लगता, शायद करती भी और सामान बर्बाद भी होता।

"अच्छी बुद्धि है तुम्हारी!"

"अच्छी ही तो है। नहीं तो आप सोचते कि इस औरतका अन्याय तो कम नहीं है। देना तो चुकाती नहीं और पराये रुपयों पर रईसी दिखाती है।"

राखालने हँसकर कहा—रुपयोंका दावा मैंने छोड़ दिया शारदा। अब तुम्हें रुपए अदा न करने होंगे, उनके लिए चिन्ता भी न करनी होगी। केवल वह कापी दे दो, मैं लौटा ले जाऊँ।

शारदाने मुँहपर बनावटी गंभीरता लाकर कहा—तो यह कहिए कि छोटा-

होती हो गई ! अब आप भी अपने खाए न माँग सकेंगे, और मैं भी कुछ न माँग सकूँगी। [illegible] बिना अगर जाऊँ तो भी नहीं, क्यों !

राखालने कहा—तुम बड़ी दुष्ट हो शारदा। सोचता हूँ, जीवन तुमको छोड़कर चला कैसे गया ? वह क्या तुम्हें पहचान नहीं पाया ?

शारदाने सिर हिलाकर कहा—ना। वह मेरे भाग्यका दोष है देवता। स्वामीने नहीं पहचाना, जो फुसलाकर निकाल लाये उन्होंने नहीं पहचाना और जिन्होंने यमराजके हाथसे छीन लिया वह भी नहीं पहचान पाये। क्या जाने मैं क्या हूँ, जो कोई पहचान ही नहीं पाता। जरा रुककर फिर कहा—मेरे स्वामीकी बात छोड़िए, लेकिन जीवन बाबूकी बात कहती हूँ। सचमुच ही वह मुझे पहचान नहीं सके। वह बुद्धि ही उनमें न थी।

राखालने कुतूहलके साथ प्रश्न किया—बुद्धि होती तो उन्हें क्या करना चाहिए था ?

"भागना नहीं चाहिए था। मुझसे कहना चाहिए था कि अब मेरे चलाये नहीं चलता, यह भार तुम ले लो।"

"वह कहते तो तुम यह भार अपने ऊपर ले लेतीं ?"

"लेती क्यों नहीं। आपने क्या यह सोचा है कि भार केवल मर्द ही ले सकते हैं, स्त्रियाँ नहीं ले सकतीं ? स्त्रियाँ भी ले सकती हैं। मैं दिखा देती कि किस तरह घर-गिरस्तीका भार ढोना होता है।"

"इतना अगर जानती हो, तो आत्महत्या करने क्यों चली थीं ?"

"आपने सोचा है कि औरतें शायद इसीके लिए आत्महत्या करती हैं ! मर्दोंकी ऐसी ही समझ होती है।"—यह कहकर उसने उसी दम हँसकर कहा—मैंने आत्महत्या इसीलिए की थी कि आपको देख पाऊँगी, नहीं तो आपको नहीं पाती—आज भी आप मेरे लिए वैसे ही अज्ञात अपरिचित रहते।

राखालके मुँह तक एक बात आ रही थी, किन्तु वह उसे दबा गया। उसे और कोई शिक्षा भले ही न मिली हो, किन्तु औरतोंके आगे सावधान होकर बात करनेकी शिक्षा प्राप्त थी।

शारदाने कहा—देवता, आपने ब्याह क्यों नहीं किया ? सच बताइए न।

राखालने मुहका कौर गलेके नीचे उतारकर कहा—तुमको इस खबरके जाननेसे क्या लाभ है ?

शारदाने कहा—क्या जानें क्यों, जाननेको मेरा बहुत जी चाह रहा है। मैं कुछ न सुनूँगी, आपको बताना ही होगा।

राखालने कहा—शारदा, हमारे समाजमें किसीका ब्याह होता है और कोई आप स्वयं ब्याह करता है। मेरा ब्याह इस लिए नहीं हुआ कि कोई देनेवाला नहीं था। और खुद मैंने ब्याह करनेका साहस इस लिए नहीं किया कि मैं गरीब था। जानती तो हो, संसारमें अपना कहनेको मेरे कुछ भी नहीं है।

शारदाने बिगड़कर कहा—आपका यह कहना अन्याय है देवता। गरीब होनेसे क्या आदमीका ब्याह नहीं होता? उसे क्या ब्याह करनेका अधिकार नहीं है? गरीब लोग क्या दुनियामें यों ही आवेंगे और चले जायँगे, कहीं घर नहीं बाँधेंगे? किन्तु यह बात नहीं है, असलमें आप बड़े डरपोक आदमी हैं—जरा भी हिम्मत नहीं है।

उसकी गर्मी देखकर राखालने हँसकर इस अभियोगको स्वीकार कर लिया। कहा—हो सकता है, तुम्हारा ही कहना सच हो, शायद सचमुच ही मैं कायर आदमी हूँ—अनिश्चित भाग्यके ऊपर निर्भर होकर खड़े होते डरता हूँ।

"किन्तु भाग्य तो सदा ही अनिश्चित रहता है देवता। वह छोटे-बड़ेका विचार नहीं करता—अपने नियमसे आप चला जाता है।"

"यह भी जानता हूँ, लेकिन मैं जो हूँ—वही हूँ। मैं अपनेको तो बदल नहीं सकूँगा शारदा!"

"भले ही न बदल सकें। जो स्त्री होकर आपके पास आवेगी, वह आपको बदलनेका भार लेगी-नहीं तो वह स्त्री काहेकी? ब्याह आपको करना ही होगा।"

"करना ही होगा क्या?"

शारदाने अबकी कण्ठस्वरमें पहलेसे अधिक जोर देकर कहा—हाँ करना ही होगा, नहीं तो मैं किसी तरह न छोड़ूँगी। अभी आप कह रहे थे कि कोई ब्याह करानेवाला आदमी न था, इसीसे ब्याह नहीं हुआ। इतने दिन बाद आपका वह आदमी मैं आई हूँ। मैं सिखा दूँगी कि किस तरह गरीबका घर चलता है, किस तरह वहाँ भी जो कुछ पानेका है सब पाया जाता है। कंगालकी तरह आकाशमें हाथ फैलाकर केवल हाय हाय करके मरनेके लिए ही भगवान्‌ने गरीबोंको नहीं उत्पन्न किया है—यह विद्या मैं उसे दे आऊँगी!

उसकी बातें सुनकर राखालको सचमुच बड़ा विस्मय हुआ; किन्तु मुँहसे बोला—अगर वह यह विद्या न सीख पावे—सीखना अगर न चाहे, तो दुःखका भार कौन बढ़ावेगा शारदा! किसके पास आकर शिकायत करेगा!

शारदा अवाक् होकर कुछ देर तक राखालके मुँहकी ओर ताकती रहकर बोली—किसीके पास नहीं। ऐसा हो ही नहीं सकता देवता, कि स्त्री होकर वह इस बातको न समझे, स्वामीके दुःखमें हिस्सा न ले, बल्कि उस दुःखको और बढ़ावे। यह मैं किसी तरह विश्वास नहीं करूँगी।

और एक बार राखालने अपनी जीभको रोका। यह नहीं कहा कि मैंने कुछ कम औरतें नहीं देखी हैं शारदा; किन्तु वे तुम नहीं हो—शारदाको सभी नहीं पाते।

जवाब न देकर राखाल चुपचाप खानेमें लग गया। यह देखकर शारदाने फिर पूछा—क्यों, आपने तो कुछ नहीं कहा देवता।

अबकी राखालने सिर उठाकर हँसकर कहा—सब प्रश्नोंका उत्तर क्या तत्काल ही मिल जाता है? सोचनेमें समय भी तो लगता है?

“समय तो लगता है, किन्तु कितना, जरा सुनूँ?

“यह आज ही मैं कैसे बताऊँ शारदा? जिस दिन मैं स्वयं इस प्रश्नका उत्तर पाऊँगा, उस दिन तुमको भी बता दूँगा।”

“यही अच्छा है,” कहकर शारदा चुप हो रही। कोठरीके भीतर एक आदमी चुपचाप भोजन कर रहा है और अन्य आदमी वैसे ही चुपचाप उसकी ओर ताक रहा है। खाना लगभग समाप्त होनेको था, इसी समय एक लम्बी साँसके शब्दसे चौंककर राखालने आँख उठाकर कहा—यह क्या? क्या बात है?

शारदाने सलज्ज मृदु हँसी हँसकर कहा—कुछ भी तो नहीं। फिर कहा—परसों शायद हम लोग हरिनपुर जा रहे हैं देवता।

“परसों? तारकके पास?”

“हाँ। कल शनिवार है। तारक बाबू रातकी गाड़ीसे आवेंगे, दूसरे दिन रविवारको हम लोगोंको ले जायँगे।”

“जाना ठीक कैसे हुआ?”

“कल वह खुद ही आये थे।”

" तारक कलकत्ते आया था ? कहाँ, मुझसे तो मिला नहीं ।"

" एक ही दिनकी तो छुट्टी थी—दोपहरको आये और शामकी ही गाड़ीसे लौट गये ।"

कुछ देर बाद कहा, अच्छे आदमी हैं । वे खूब विद्वान् हैं न ?

राखालने कहा—हाँ ।

" उनकी तरह विद्वान् आप भी क्यों नहीं हुए देवता ?"

राखालने हाथसे अपना माथा दिखाकर कहा—यहाँ ऐसा ही लिखा था' इस लिए ।

शारदा कहने लगी—और केवल विद्या ही नहीं, जैसा चेहरा मोहरा है वैसा ही शरीरमें जोर है । बाजारसे बहुत-सी चीजें कल खरीदी थीं—बहुत भारी बोझ था—जाते समय आपही उसे उठाकर गाड़ीमें रख आये । आप कभी उठा न सकते देवता ।

राखालने स्वीकार किया—ना, मैं नहीं उठा सकता शारदा, मेरे शरीरमें जोर नहीं है—मैं बहुत कमजोर हूं ।

" लेकिन यह भी क्या तकदीरका लिखा है ? इसके माने यह हैं कि आपने कभी चेष्टा नहीं की । तारक बाबू कहते थे कि चेष्टासे सब होता है, ससारमें सब कुछ मिलता है ।"

इस बातसे हँसकर राखालने कहा—किन्तु वह चेष्टा ही किस चेष्टासे मिलती है, यह उससे तुमने क्यों नहीं पूछा ? उसका जवाब शायद मेरे काम आता ।

सुनकर शारदा भी हँस दी । बोली—अच्छी बात है, अब मैं उनसे पूछूंगी । लेकिन यह सब आपका बातोंका घुमाव-फिराव है । असलमें सच भी नहीं है और उनका जवाब भी आपके किसी काम न आवेगा । मुझे मालूम पड़ता है, आप तारक बाबूसे नाराज हैं—क्यों ?

राखाल विस्मयके साथ कह उठा—मैं तारकके ऊपर नाराज हूं । यह सन्देह तुमको कैसे हुआ !

" क्या जाने किस तरह हुआ, लेकिन हुआ जरूर, इसीसे कह दिया ।"

राखाल चुप हो रहा, फिर प्रतिवाद नहीं किया ।

शारदा कहने लगी—उनकी इच्छा अब गाँवमें रहनेकी नहीं है । एक छोटी-सी

जगहमें छोटे से स्कूलमें लड़कोंको पढ़ाकर जीवनको बिता देना वह नहीं चाहते। वहाँ बड़े होनेका सुयोग नहीं है, वहाँ उनकी शक्ति संकुचित हो गई है, बुद्धि सिर नीचा किये हुए है। इसीसे शहरमें लौट आना चाहते हैं। वहां ऊंचा होकर खड़े होना उनके लिए कुछ कठिन नहीं है।

राखालने विस्मित होकर पूछा—ये बातें तुम्हारी हैं या तारकके मुँहकी? शारदाने कहा—ना, मेरी नहीं है, उन्हींके मुँहकी है। मासे कह रहे थे, मैंने सुनी हैं।

"सुनकर नई-माने क्या कहा?"

"सुनकर मा खुश ही हुईं। बोलीं—उस जैसे लड़केका गाँवमें पड़े रहना अन्याय है। उन्हें वहाँ न पड़े रहना पड़े, इसका उपाय वह करेंगी।"

"कैसे करेंगी?"

शारदाने कहा—यह कुछ कठिन तो नहीं है देवता। मा विमल बाबूसे कह दें तो कोई ऐसी बात नहीं जो न हो सके।

सुनकर राखाल उसकी ओर ताकने लगा। अर्थात् उसने पूछना चाहा कि इसका मतलब क्या है?

शारदा समझ गई, राखाल अभी तक कुछ नहीं जानता। बोली—आप खा चुके, अब हाथ-मुँह धोकर आकर बैठिए—बतलाती हूं।

राखाल कई मिनट बाद हाथ-मुँह धोकर बिछौनेपर आकर बैठा। शारदाने उसे पानी दिया, पान दिया। इसके बाद कुछ फासलेसे फर्शपर बैठकर कहा—आप जानते हैं, रमणी बाबू चले गये?

"चले गये? कहाँ मुझे तो खबर नहीं। कहाँ गये?"

"कहाँ गये, यह वही जानें, लेकिन यहाँ अब नहीं आते। जाना उन्हें पड़ता ही—यह बोझ उठानेकी शक्ति अब उनमें नहीं थी—किन्तु गये झूठा बहाना करके। इतने छोटे होकर शायद मेरे पाससे जीवन बाबू भी नहीं गये। इतना कहकर वह उस दिनसे आज तककी सारी घटना ब्योरेवार बतलाकर बोली—यह तो होता ही, किन्तु उपलक्ष हुए आप। वह जो आप रेणुकी बीमारीमें दूसरेके नामसे रुपए माँगने आये और न पाकर बिना भोजन किये ही चले गये, सो इस अन्यायने माका हृदय तोड़ दिया। इस व्यथाको वह आज भी भूल नहीं

सकी है। मुझे बुलाकर बोलीं·—शारदा, राजू आज मुझे मिलना ही चाहिए, नहीं तो मैं मर जाऊँगी। चलो तुम मेरे साथ। जो कुछ माके पास था, सब पोटलीमें बाधकर हम दोनों जनी छिपके आपके डेरेपर गईं। उसके बाद ब्रज बाबूके घर गईं, किन्तु सब खाली था, सब शून्य। मकान किराये पर देनेका नोटिस लटक रहा था। मालूम तो कुछ नहीं हुआ, समझमें सिर्फ यह आया कि कहीं किसी घरमे, जिसका पता नहीं, उनकी लड़की बीमार पड़ी है, दवाके लिए पैसा नहीं है, सेवा करनेको कोई आदमी नहीं है, शायद जीती है, शायद मर गई। अथ च वहाँ पहुँचनेका उपाय नहीं—रास्तेका चिह्न पूरी तौरसे मिट गया है।

माको लौटा लाई। उस समय बाहरके घरमें खाना-पीना, नाच-गाना और आनन्द-कलरव हो रहा था। करनेको कुछ था ही नहीं, केवल बिछौनेपर पड़कर दोनों आखोंसे वह लगातार आँसू बरसाने लगीं। मैं सिरहाने बैठकर चुपचाप उनके माथेपर हाथ फेरने लगी। इसके सिवा उन्हें सान्त्वना देनेका मेरे पास था ही क्या?

उस दिन विमल बाबू थे साधारण परिचित आमंत्रित अतिथि। उन्हींके सम्मानके लिए था वह आनन्दोत्सव। रमणी बाबू भीतर झपटते आये और बोले—चलो महफिलमें। माने कहा—नहीं, मैं अस्वस्थ हू। वे बोले—विमल बाबू करोड़पती धनी हैं, मेरे मालिक हैं। वह खुद आवेंगे इस कमरेमें मुलाकात करने। माने कहा—ना, यह न होगा। इससे अतिथिका असम्मान होगा, मा यह बात न जानती हों, ऐसा न था; किन्तु पछतावेसे, व्यथासे, भीतरके गोपन धिक्कारसे शायद उस समय उनके लिए किसीको मुह दिखाना असभव था। लेकिन दिखाना ही पड़ा। विमल बाबू खुद आ पहुचे। प्रशान्त सौम्य मूर्ति, बातें कोमल। बोले—शायद

माने जवाबमें केवल यही कहा—नहीं।

" नहीं क्यों? मेरी प्रार्थना स्वीकार न कीजिएगा? "

मा चुप रहीं। जा कैसे सकती थीं, लड़की बीमार और स्वामी गृहहीन!

उस दिन रमणी बाबू शराब पीकर प्रकृतिस्थ न थे। एकदम आग-बबूला होकर कह उठे—जाना ही होगा। मैं हुक्म देता हूँ, तुम्हें जाना ही पड़ेगा।

" ना, मैं नहीं जा सकूँगी। "

इसके बाद शुरू हुआ अपमान और कटु बातोंका तूफान। वे बातें कितनी कटु थीं, यह मैं कह नहीं सकती देवता। बवंडरने घूमघूम कर भूतलपर जहाँ जितना गंदगीका कूड़ा था, सब वहाँ जमा कर दिया—यह प्रकट होनेमें देर नहीं लगी कि मा उस आदमीकी स्त्री नहीं, रखैल है। सतीका नकाब डाले छद्मवेषमें केवल एक गणिका हैं। तब एक किनारे खड़े-खड़े मैंने अपनी बात सोचकर मन ही मन कहा—धरती, तू फट जा! औरतोंकी यह कितनी बड़ी दुर्गति है, उसके पहले यह कौन जानता था!

राखाल एकटक अबतक शारदाके मुँहकी ओर देख रहा था, क्षण-भरके लिए उसने उधरसे आँख फेरी।

शारदा कहने लगी—मा पत्थरकी मूर्तिकी तरह स्तब्ध होकर बैठी रहीं।

रमणी बाबू चिल्ला उठे—जाओगी कि नहीं, बताओ? बैठी सोच क्या रही हो?

माका कण्ठस्वर पहलेकी अपेक्षा भी मृदु हो आया। बोलीं, क्या सोचती हूँ जानते हो सँझले बाबू? केवल यही सोचती हू कि तुम्हारे पास मेरे ये बारह साल कैसे कट गये? सोते सोते क्या सपना देखती रही? लेकिन बस, अब और नहीं, मेरी नींद खुल गई है। अब तुम मेरे घर न आना, जिससे अब हम, दोनों एक दूसरेका मुँह न देख पावें। कहते-कहते उनका सारा शरीर जैसे घृणासे बार बार सिहर उठा।

अबकी रमणी बाबू पागल हो उठे। बोले—यह घर किसका है? मेरा है। मैंने तुमको दिया नहीं।

माने कहा—यही अच्छा है, तुमने दिया नहीं। यह घर मेरा नहीं, तुम्हारा ही है। मैं कल ही इसे छोड़कर चली जाऊँगी। किन्तु रमणी बाबूने इस उत्तरकी

आशा नहीं की थी। एकाएक माका मुँह देखकर उन्हें होश आया—तब डरकर तरह तरहसे समझाना चाहा कि यह केवल उन्होंने क्रोधमें कह डाला है; इसका कोई अर्थ नहीं।

माने कहा—अर्थ है सँझले बाबू। हमारा संबंध समाप्त हो गया, अब किसी तरह न जुड़ेगा।

रात हो गई, रमणी बाबू चले गये। जो उत्सव सवेरे इतनी धूम-धामसे आरम्भ हुआ था, वह इस तरह समाप्त होगा, यह किसने सोचा था!

राखालने कहा—इसके बाद?

शारदाने कहा—ये बातें तो छोटी हैं, इसके बादकी ही बात बड़ी है देवता। विमल बाबूकी अभ्यर्थना उस दिन बाहरसे भरमड अवश्य हो गई, किन्तु भीतरकी ओरसे और रूपमें लौट आई। माका यह अपमान उन्हें कुछ ऐसा लगा कि—वह गैर थे, सो बिल्कुल आत्मीय हो गये। आज उनसे बढ़कर मित्र हम लोगोंका कोई नहीं है। रमणी बाबूको दाम देकर उन्होंने यह घर खरीदकर माको लौटा दिया, नहीं तो कौन जाने, हम लोग कहाँ जाते।

लेकिन यह खबर राखालको खुश नहीं कर सकी, उसका मन जैसे बैठ गया। बोला—विमल बाबूके पास बहुत रुपए हैं, वह दे सकते हैं। यह शायद उनके लेखे कुछ भी नहीं है, लेकिन नई-माने इसे लिया कैसे? दूसरेसे दान लेना तो उनका स्वभाव नहीं है।

शारदा बोली—शायद अब वह गैर नहीं हैं—शायद लेनेकी अपेक्षा न लेनेमें कहीं अधिक अन्याय होता।

राखालने कहा—इस भावसे समझना सीखनेसे सुविधा अवश्य होती है, किन्तु समझना मेरे लिए कठिन है।

इतना कहकर वह जबर्दस्तीकी हँसी हँसते-हँसते उठ खड़ा हुआ। बोला—रात हो गई, मैं जाता हूँ। तुम लोगोंके लौट आनेपर शायद फिर भेंट हो।

शारदाने बिजलीकी तेजीसे उठकर रास्ता रोक लिया। बोली—ना, मैं इस तरह आपको अकस्मात् कभी न जाने दूँगी।

"तुम 'अकस्मात्' किसे कहती हो? रात हो गई है—जाऊँगा नहीं?"

"जायँगे, जानती हूँ, लेकिन क्या मासे मिलकर भी नहीं जायँगे?"

"मेरी उन्हें क्या जरूरत है? मुलाकात करनेकी शर्त भी तो नहीं थी। चुपके चुपके आकर चुपकेसे चला जाऊँगा, यही तो तुमसे बात हुई थी।"

शारदाने कहा—ना, वह शर्त अब मैं नहीं मानूगी। मिलनेकी जरूरत नहीं है—आप कहते हैं? माको अपनी जरूरत न हो, क्या आपकी भी नहीं है?

राखालने कहा—मेरा जो प्रयोजन है वह हृदयके भीतर है—वह कभी न मिटेगा—किन्तु बाहरका प्रयोजन तो अब मैं कुछ देख नहीं पाता शारदा।

दबानेकी चेष्टा करके भी राखाल अपनी गूढ़ वेदनाको छिपा नहीं सका, कण्ठ-स्वरसे वह प्रकट हो गई। उसके मुखपर दृष्टि टिकाकर शारदा बड़ी देर तक चुप रही। उसके बाद धीरे-धीरे बोली—एक प्रार्थना करती हूँ देवता, क्षुद्रता और ईर्ष्या और चाहे जहाँ रहे, आपके मनमें न रहे। देवता कहकर पुकारती हूँ, देवता ही आपको सदा मान सकूँ। चलिए माके पास, आपके बिना कहे उनका जाना नहीं होगा।

"मेरे कहे बिना जाना न होगा? इसके माने?"

"माने मैंने भी पूछे थे। उत्तरमें माने कहा—लड़का जब बड़ा हो जाता है तब उसकी राय लेनी होती है। मैं जानती हूँ कि राजू मना नहीं करेगा, लेकिन अगर वह हुक्म न देगा तो न जा सकूँगी शारदा।"

यह सुनकर राखाल चुपचाप स्तब्ध हो रहा। हृदयके भीतर जो आग जल उठी थी, उसने बुझना नहीं चाहा, तथापि दोनों आखोंमें आँसू भर आये।

उनके पास सहज भावसे जा सकूँ, वह साहस आज मैं मनके भीतर ढूँढे नहीं पाता शारदा। किन्तु उनसे कहो, कल मैं चरणरज लेने आऊगा। कहकर वह चटपट बाहर निकल गया, उत्तरके लिए राह नहीं देखी।

१४

तारक लेनेके लिए आया है। आज शनिवारकी रात यहाँ रहकर कल दोपहरकी ट्रेनसे नई-माको लेकर यात्रा करेगा। साथमें जायगे एक नौकर, एक दासी और शारदा। अपने हरिनपुरके डेरेको तारक भरसक सुव्यवस्थासे ठीक कर आया है। देहातमें नगरकी सब सुविधाएँ मिल नहीं सकतीं, तथापि आमंत्रित अतिथियोंको जिसमें क्लेश न हो, यहाँ आकर उनकी अभ्यस्त जीवनचर्यामें कुछ उलट फेर न

हो, इसकी ओर उसकी प्रखर दृष्टि थी। जबसे वह आया है, यही आलोचना बारबार हो रही थी। नई-मा जितना ही कहती हैं—मैं गृहस्थ घरकी औरत हू भैया, देहातमें ही पैदा हुई हूँ, मेरे लिए चिन्ता न करो, उतना ही तारक सन्देह प्रकट करके कहता है—मेरा मन विश्वास करना नहीं चाहता मा कि जो कष्ट साधारण दस आदमी सह लेते हैं, उसे आप भी सहन कर लेंगी। डर है कि आप मुँहसे कुछ नहीं कहेंगी, लेकिन भीतर-ही-भीतर शरीर टूट जायगा।

"टूटेगा नहीं तारक, टूटेगा नहीं। मैं अच्छी ही रहूँगी।"

"यही हो मा। किन्तु अगर टूटा, तो मैं क्षमा नहीं करूँगा, यह कहे रखता हूँ।"

"यही सही। तुम देखना, मैं मोटी होकर लौटूँगी।"

तथापि गँवई गाँवकी छोटी-मोटी असुविधाओंकी बात तारकके मनमें आती है। तरह तरहकी खाने-पीनेकी सामग्री उसने यथाशक्ति अच्छी ही संग्रह कर रखी है, किन्तु खाना-पीना ही तो सब नहीं है। दो जोरदार लालटेनें चाहिए—रातको चलने-फिरनेमें ऑंगन-भरमें कहीं जरा-सा भी अँधेरा जिसमें न पड़े। एक अच्छे फिल्टरकी जरूरत है, खानेके बर्तनोंमें कुछ अदल-बदल करना जरूरी है। खिड़कियोंके पर्दे उसने धुला जरूर रखे हैं, तो भी कुछ नये खरीदनेकी जरूरत है। नई-मा चाय नहीं पीतीं, यह सच है, लेकिन किसी दिन उनका जी चाह भी सकता है। तब ये दाग लगे काने टूटे प्याले क्या काम देंगे। एक नया सेट चाहिए। पूजा-आह्निकका सामान तो खरीदना ही होगा। अच्छी धूप देहातमें नहीं मिलती, उसे भूलनेसे काम न चलेगा। इसी तरह कितनी ही प्रयोजनीय-अप्रयोजनीय छोटी-मोटी चीजें खरीदनेके लिए वह बाजार चला गया है, अभी तक नहीं लौटा।

बक्स-बिछौने वगैरह बाँधे जा रहे हैं। शारदा कलपर छोड़ रखनेवाली नहीं है। विमल बाबू मुलाकात करनेके लिए आये। रोज जैसे आते हैं वैसे ही। पूछा—नई-बहू, वहां कितने दिन रहोगी?

सविताने कहा—जितने दिन रहनेको तुम कहोगे उतने दिन। उससे एक मिनट ज्यादा नहीं।

"लेकिन यह बात कोई सुनेगा तो उसके और अर्थ लगावेगा नई-बहू।"

"अर्थात् नई-बहूको नया कलंक लगेगा, यही तुम्हें डर है—क्यों?"

यह कहकर सविता जरा हँस दी।

सुनकर विमल बाबू भी हँसे। बोले—डर तो है ही। लेकिन मैं वह होने क्यों दूँगा!

"होने न दोगे, यही तो जानती हूँ और यही मेरा भरोसा है। इतने दिन अपने खयाल और बुद्धिसे चलकर देख लिया; अब सोचा है, उन्हें छुट्टी देकर देखूँ, क्या मिलता है, और कहाँ जाकर खड़ी होती हूँ।

विमल बाबू चुप हो रहे। सविता कहने लगी—तुम शायद सोच रहे हो कि एकाएक यह बुद्धि किसने दी? किसीने नहीं दी। उस दिन तुम चले गये, बरामदेमें खड़ी होकर देखा, रास्तेकी मोड़पर तुम्हारी मोटर अदृश्य हो गई। आँखोंका काम समाप्त हुआ, लेकिन मनने तुम्हारा पीछा पकड़ा। साथ कितनी दूर तक गया, कुछ ठिकाना नहीं। लौटकर घरमें बैठी—अकेले बैठे बैठे अपने मनमें बचपनसे लेकर उस दिन तककी न जाने कितनी भावनाएँ आईं-गईं, एकाएक मेरा मन क्या कह उठा, जानते हो? बोला—सविता, जवानी गई, रूप तो अब है नहीं। तो भी अगर वह प्यार करते हों तो वह उनका मोह नहीं है, वह सत्य है। सत्य कभी वंचना नहीं करता, उसे तुम्हारा भय नहीं है। जो आप मिथ्या नहीं है, वह किसी तरह तुम्हारे माथेपर मिथ्या अकल्याण नहीं लादेगा—उसका विश्वास करो।

विमल बाबू बोले—तुमको सत्य ही प्यार कर सकता हूँ, यह तुम विश्वास करती हो नई-बहू?

"हाँ, करती हूँ। नहीं तो तुम्हें कोई दरकार नहीं थी। मेरे तो अब रूप नहीं है।"

विमल बाबूने हँसकर कहा—ऐसा भी तो हो सकता है कि मेरी नजरमें तुम्हारे रूपकी सीमा न हो। अथ च, मैंने संसारमें रूप कुछ कम नहीं देखे हैं नई-बहू!

सुनकर सविता भी हँसी। बोली—अद्भुत मनुष्य हो तुम, इसके सिवा और क्या कहूँ तुमसे?

विमल बाबूने कहा—तुम खुद भी तो कुछ कम अद्भुत नहीं हो नई-बहू। अभी उस दिन इस तरह ठगी गईं, इतना बड़ा आघात पाया, तो भी इतनी जल्दी कैसे मुझपर विश्वास कर लिया, मैं केवल यही सोचता हूँ!

सविताने कहा—आघात सचमुच पाया है, किन्तु ठगी नहीं गई। कुहासेकी आड़में एक ही तरहसे दिन विना बाधाके बीतते चले जा रहे थे, यही तुम लोगोंने देखा है—शायद इसी तरह चिरकाल बीत जाता—जैसे जन्म-कैदकी सजा पाये हुए आदमीका जीवन जेलके भीतर कट जाता है, किन्तु सहसा आँधी आई, कुहासा फट गया, जेलकी दीवार गिर पड़ी। निकल आई अज्ञात रास्तेपर। लेकिन कहाँ थे अपरिचित वन्धु तुम, तुमने हाथ बढा दिया। इसे क्या ठगा जाना कहते हैं? लेकिन तुम्हें क्या कहकर पुकारूँ, बताओ तो!

"जान पड़ता है, मेरा नाम नहीं लेना चाहतीं?"

"ना, मुँहमें अटकता है।"

विमल बाबूने कहा—लड़कपनमें मेरा और एक नाम था, जो मेरी दादीने रखा था। उसका एक इतिहास है। लेकिन वह नाम तो और भी तुम्हारे मुँहमें अटकेगा नई-बहू!

"क्या नाम है, कहो तो। देखूँ, शायद पसन्द आ जाय!"

"विमल बाबूने हँसकर कहा—मुहल्लेके लोग मुझे दयामय कहते थे। यही मेरा दादीका दिया नाम है।

सविताने कहा—नामका इतिहास मैं नहीं जानना चाहती, वह मैं बना लूँगी। यह नाम मुझे बहुत पसन्द आया। अब मैं भी दयामय ही कहूंगी।

विमल बाबू बोले, अच्छी बात है। इसी नामसे पुकारो। लेकिन जो पूछा था वह तो तुमने नहीं बताया।

"क्या पूछ रहे थे दयामय?"

"इतनी जल्दी मुझे कैसे प्यार करने लगीं।"

सविता क्षणभर उनके मुँहकी ओर ताकती रही, फिर बोली—प्यार करती हूं—यह बात तो नहीं कही। कहा यह कि तुम बधु हो, तुमपर विश्वास करती हूँ। कहा यह कि जो प्यार करता है, उसके हाथसे कभी अकल्याण नहीं होता।

दोनों ही क्षणभर स्तब्ध हो रहे। सविताने कुंठित स्वरसे कहा—लेकिन मेरी बात सुनकर चुप कैसे हो रहे? कुछ कहा तो नहीं?

विमल बाबूने प्रत्युत्तरमें जरा-सी सूखी हँसी हँसकर कहा—कहनेको कुछ भी नहीं है नई-बहू। तुमने ठीक ही कहा। प्यारके धनका सचमुच ही कोई अपने

हाथसे अमगल नहीं कर सकता। उसका निजका दुःख चाहे जितना हो, वह सहना ही होगा।

सविताने कहा—केवल सह सकना ही तो नहीं है। तुम दुःख पाओगे तो मैं भी पाऊँगी।

विमल बाबूने फिर जरा हँसकर कहा—दुःख पाना उचित नहीं है नई-बहू। तो भी अगर पाओ तो यह बात सोचो कि अकल्याणका दुःख इस दुःखसे भी अधिक है।

"यह बात तो तुम्हारे पक्षमें भी लागू होती है दयामय ?"

"नहीं, लागू नहीं होती। कारण, मेरे मनमें तुम कल्याणकी प्रतिमूर्ति हो, लेकिन तुम्हारे निकट मैं वह नहीं हूँ। हो भी नहीं सकता। लेकिन उसके लिए मैं तुमको दोष भी नहीं देता, रूठता भी नहीं। मैं जानता हूँ, नाना कारणोंसे दुनिया ऐसी ही है। तुम आतीं तो मेरी विगत दिनोंकी भूल-चूक मिट जाती, भविष्य उज्ज्वल मधुर शान्त होता—और मुझे बहुत बड़ा बना देता—"

"किन्तु मैं सदी कहाँ होऊँगी ?"

"तुम खुद कहाँ खड़ी होगी ?"

विमल बाबू एकदम स्तब्ध हो गये। कई सेकिंड तक स्थिर रहकर धीरे धीरे बोले—यह भी समझ सकता हूँ नई-बहू। तुम हो जाओगी औरोंकी नजरमें छोटी, वे कहेंगे तुम्हें लोभी,—और भी जो सब बातें कहेंगे, उन्हें सोचनेमें भी मुझे लज्जा मालूम होती है। अथ च, पूर्ण विश्वासके साथ जानता हूँ कि उनकी एक बात भी सच नहीं है। उससे तुम बहुत दूर हो—बहुत ऊपर हो।

सविताकी आँखोंमें आसू भर आये। ऐसे समयमें भी जो आदमी मिथ्या भाषण नहीं कर सका, उसके प्रति श्रद्धा और कृतज्ञतासे परिपूर्ण होकर पूछा—दयामय, ऐसी विपरीत घटना कैसे सत्य हो सकती है कि मैं तुम्हारे जीवनमें परिपूर्ण कल्याण लाऊगी और तुम मुझे उसी तरह परिपूर्ण अकल्याण ला दोगे ? इसका उत्तर क्या है ?

विमल बाबूने कहा—इसका उत्तर मेरे देनेका नहीं है नई-बहू। मेरे निकट यही मेरा विश्वास है। तुमको भी अगर कभी ऐसा विश्वास सत्य बनकर दिखाई दे, तभी मनकी दुविधा दूर होगी, मनका द्वन्द्व मिटेगा। तभी तुम इसका उत्तर पाओगी। उसके पहले नहीं।

सविताने कहा—आघात सचमुच पाया है, किन्तु ठगी नहीं गई। कुहासेकी आड़में एक ही तरहसे दिन विना वाधाके बीतते चले जा रहे थे, यही तुम लोगोंने देखा है—शायद इसी तरह चिरकाल बीत जाता—जैसे जन्म-कैदकी सजा पाये हुए आदमीका जीवन जेलके भीतर कट जाता है, किन्तु सहसा आँधी आई, कुहासा फट गया, जेलकी दीवार गिर पड़ी। निकल आई अज्ञात रास्तेपर। लेकिन कहाँ थे अपरिचित वन्धु तुम, तुमने हाथ बढा दिया। इसे क्या ठगा जाना कहते हैं? लेकिन तुम्हें क्या कहकर पुकारूँ, बताओ तो!

"जान पड़ता है, मेरा नाम नहीं लेना चाहतीं?"

"ना, मुँहमें अटकता है।"

विमल वाबूने कहा—लड़कपनमें मेरा और एक नाम था, जो मेरी दादीने रखा था। उसका एक इतिहास है। लेकिन वह नाम तो और भी तुम्हारे मुँहमें अटकेगा नई-वहू!

"क्या नाम है, कहो तो। देखूँ, शायद पसन्द आ जाय!"

"विमल वाबूने हँसकर कहा—मुहल्लेके लोग मुझे दयामय कहते थे। यही मेरा दादीका दिया नाम है।

सविताने कहा—नामका इतिहास मैं नहीं जानना चाहती, वह मैं बना लूँगी। यह नाम मुझे बहुत पसन्द आया। अब मैं भी दयामय ही कहूँगी।

विमल वाबू बोले, अच्छी बात है। इसी नामसे पुकारो। लेकिन जो पूछा था वह तो तुमने नहीं बताया।

"क्या पूछ रहे थे दयामय?"

"इतनी जल्दी मुझे कैसे प्यार करने लगीं।"

सविता क्षणभर उनके मुँहकी ओर ताकती रही, फिर बोली—प्यार करती—यह बात तो नहीं कही। कहा यह कि तुम वधु हो, तुमपर विश्वास करती हूँ। कहा यह कि जो प्यार करता है, उसके हाथसे कभी अकल्याण नहीं होता।

दोनों ही क्षणभर स्तब्ध हो रहे। सविताने कुठित स्वरसे कहा—लेकिन मेरी बात सुनकर चुप कसे हो रहे? कुछ कहा तो नहीं?

विमल वाबूने प्रत्युत्तरमें जरा-सी सूखी हँसी हँसकर कहा—कहनेको कुछ भी नहीं है नई-वहू। तुमने ठीक ही कहा । प्यारके धनका सचमुच ही कोई अपने

हाथसे अमंगल नहीं कर सकता। उसका निजका दुःख चाहे जितना हो, वह सहना ही होगा।

सविताने कहा—केवल सह सकना ही तो नहीं है। तुम दुःख पाओगे तो मैं भी पाऊँगी।

विमल बाबूने फिर जरा हँसकर कहा—दुःख पाना उचित नहीं है नई-बहू। तो भी अगर पाओ तो यह बात सोचो कि अकल्याणका दुःख इस दुःखसे भी अधिक है।

"यह बात तो तुम्हारे पक्षमें भी लागू होती है दयामय ?"

"नहीं, लागू नहीं होती। कारण, मेरे मनमें तुम कल्याणकी प्रतिमूर्ति हो, लेकिन तुम्हारे निकट मैं वह नहीं हूं। हो भी नहीं सकता। लेकिन इसके लिए मैं तुमको दोष भी नहीं देता, रूठता भी नहीं। मैं जानता हूँ, नाना कारणोंसे दुनिया ऐसी ही है। तुम आती तो मेरी विगत दिनोंकी भूल-चूक मिट जाती, भविष्य उज्ज्वल मधुर शान्त होता—और मुझे बहुत बड़ा बना देता—"

"किन्तु मैं खड़ी कहाँ होऊँगी !"

"तुम खुद कहाँ खड़ी होगी ?"

विमल बाबू एकदम स्तब्ध हो गये। कई सेकिंड तक स्थिर रहकर धीरे धीरे बोले—यह भी समझ सकता हूं नई-बहू। तुम हो जाओगी औरोंकी नजरमें छोटी, वे कहेंगे तुम्हें लोभी,—और भी जो सब बातें कहेंगे, उन्हें सोचनेमें भी मुझे लज्जा मालूम होती है। अथ च, पूर्ण विश्वासके साथ जानता हूं कि उनकी एक बात भी सच नहीं है। उससे तुम बहुत दूर हो—बहुत ऊपर हो।

सविताकी आँखोंमें आसू भर आये। ऐसे समयमें भी जो आदमी मिथ्या भाषण नहीं कर सका, उसके प्रति श्रद्धा और कृतज्ञतासे परिपूर्ण होकर पूछा—दयामय, ऐसी विपरीत घटना कैसे सत्य हो सकती है कि मैं तुम्हारे जीवनमें परिपूर्ण कल्याण लाऊँगी और तुम मुझे उसी तरह परिपूर्ण अकल्याण ला दोगे ? इसका उत्तर क्या है ?

विमल बाबूने कहा—इसका उत्तर मेरे देनेका नहीं है नई-बहू। मेरे निकट यही मेरा विश्वास है। तुमको भी अगर कभी ऐसा विश्वास सत्य बनकर दिखाई दे, तभी मनकी दुविधा दूर होगी, मनका द्वन्द्व मिटेगा। तभी तुम इसका उत्तर पाओगी। उसके पहले नहीं।

सविताने कहा—उत्तर अगर कभी न पाऊँ, संशय अगर कभी न मिटे, तुम्हारा विश्वास और मेरा विश्वास अगर चिरकाल तक अगर ऐसा ही एक दूसरेसे उल्टा बना रहे, तो भी क्या तुम मेरा बोझ लादे घूमोगे ?

विमल बाबूने कहा—अगर उलटा ही बना रहे, तो भी मैं तुमको दोष नहीं दूँगा। तुम्हारा भार आज मेरे ऐश्वर्यकी प्रचुरता है, मेरे आनन्दकी सेवा है। किन्तु यह ऐश्वर्य आदि कभी थकावट और क्लांतिका बोझ बनकर दिखाई दे तो उस दिन मैं तुमसे छुट्टी माँगूँगा। तुमसे प्रार्थना मंजूर कराकर बन्धुकी तरह ही विदाई ले जाऊँगा—कहीं मलिनताका चिह्न भी न छोड़ जाऊँगा। यह मैं तुम्हारे आगे कसम खाता हूँ नई-बहू।

सविता उनके मुँहकी ओर ताकती हुई स्थिर होकर बैठी रही। दो-तीन मिनटके बाद विमल बाबूने मलिन हँसी हँसकर कहा—क्या सोच रही हो, बताओ तो ?

"सोचती हूँ कि संसारमें ऐसी भयानक समस्याकी उत्पत्ति क्यों होती है ? एकका प्यार जहाँ असीम है, वहाँ दूसरा उसे ग्रहण करनेकी राह क्यों नहीं ढूँढ़ पाता ?"

विमल बाबूने हँसकर कहा—ढूँढ़ना सच्चा हो, तभी राह देख पड़ती है, उसके पहले नहीं। नहीं तो अन्धकारमें केवल टटोलते रहना होता है। संसारमें यह परीक्षा मुझे बहुत बार देनी पड़ी है।

"राहका पता पाया ?"

"हाँ। जहाँ प्रार्थनामें कपटता नहीं थी, वहीं राह मिल गई थी।"

"इसके माने ?"

"इसके माने यही कि जिस कामनामें दुविधा नहीं है, दुर्बलता नहीं है, उसे नामंजूर करनेकी शक्ति कहीं नहीं है। इसीका दूसरा नाम है विश्वास। सच्चा विश्वास जगत्में व्यर्थ नहीं होता नई बहू।"

सविताने कहा—मैं चाहे जो क्यों न करूँ दयामय, स्वयं तुम्हारे चाहनेमें तो छलना नहीं है, फिर वह क्यों मेरे निकट व्यर्थ हुआ ?

विमल बाबूने कहा—व्यर्थ नहीं हुआ नई-बहू। तुमको बड़ा करके पाना था, सो मैं पा गया हूँ। यह मैं मानता हूँ कि तुमको संपूर्ण करके नहीं पाया, किन्तु अपने जिस विश्वासको मैं आज भी मजबूतीके साथ पकड़े हूँ, उसे अगर

लोभके वश होकर, दुर्बलताके वश होकर छोटा न करूँ, तो एक दिन मेरी कामना पूर्ण होकर ही रहेगी। उस दिन तुमको परिपूर्ण रूपसे ही पाऊँगा। मुझे इससे कोई न वंचित कर सकेगा—तुम भी नहीं।

सविता चुपचाप विमल बाबूकी ओर ताकती रही। वह यह न सोच पाई कि जो असंभव है वह किस तरह किसी दिन संभव हो जायगा। दयामयके पास नीची होकर छातीके बल चलकर जानेका रास्ता तो है, किन्तु स्वच्छन्द भावसे सीधे होकर चलनेका मार्ग कहाँ है?

शारदाने आकर कहा—राखाल बाबू आये हैं मा।

"राजू? कहाँ है वह?"

"यह तो हूँ मा" कहकर राखालने प्रवेश किया। सविताके पैरोंकी रज माथेसे लगाकर उसने प्रणाम किया। फिर विमल बाबूको नमस्कार करके फर्शपर बिछे हुए गलीचेपर बैठ गया।

सविताने कहा—तारक मुझे लेने आया है, कल हम लोग हरिनपुर जायँगी। तुमने सुना है राजू?

राखालने कहा—अभी शारदाके मुँहसे एकाएक सुन पाया है मा।

"एकाएक तो नहीं भैया, मैंने उससे तुम्हारी राय लेनेको कहा था।"

"मेरी राय क्या शारदाने आपको बताई है?"

"ना। लेकिन मैं जानती हूँ कि वह तुम्हारा मित्र है। उसके पास जानेमें तुमको कोई आपत्ति न होगी।"

राखाल पहले चुप रहा, उसके बाद बोला—मेरे मतामतका प्रयोजन नहीं है मा। वह आप लोगोंका मुझसे भी बहुत बड़ा बन्धु है।

इस बातसे सविताने विस्मित होकर पूछा,—इसका क्या मतलब है राजू?

राखालने कहा—सभी बातोंका मतलब मुँहसे न कहना चाहिए मा। मुखकी भाषामें उसका अर्थ विकृत हो जाता है। वह मैं नहीं कहूँगा, किन्तु मेरे मतामतके ऊपर ही अगर आप लोगोंका जाना न जाना निर्भर है, तो आप लोगोंका जाना न होगा। मेरी राय नहीं है।

सविता अचंभेमें आकर बोली—सब ठीक जो हो गया है राजू। मेरे हामी भर लेने पर तारक सब चीज-वस्तु खरीदने गया है। हम लोगोंके लिए ही अपने

गाँवमें सब तरहकी व्यवस्था करके रख आया है, जिसमें हम लोगोंको किसी तरहका कोई कष्ट न हो। अब गये बिना उपाय क्या है बेटा?

राखालने सूखी हँसी हँसकर कहा—उपाय नहीं है, यह मैं जानता हूँ। मेरी राय लेकर आप अपना कर्त्तव्य ठीक करें, यह उचित भी नहीं है और इसका प्रयोजन भी नहीं है। कल शारदा कह रही थी, आपने कहा है कि लड़का जब सयाना हो जाय तब उससे पूछकर, उसकी रायसे काम किया जाता है। आपके मुखकी इस बातको मैं हमेशा कृतज्ञताके साथ स्मरण करूँगा; किन्तु जिस लड़केके दिन केवल दूसरोंकी बेगार करनेमें ही बीते हों वह उम्रसे कभी सयाना नहीं होता। दूसरोंके निकट भी नहीं और माके निकट भी नहीं। मैं आपका वही लड़का हूँ नई-मा।

सविता सिर झुकाये चुपकी बैठी रही। राखाल बोला—मनमें कुछ दुखी न होना नई-मा। मनुष्यकी अवज्ञाके नीचे मनुष्यका बोझा ढोते फिरना ही मेरे भाग्यमें लिखा है। आप लोगोंके चले जानेके बाद अगर कुछ मेरे करनेका हो तो उसके लिए आज्ञा करती जाइए। माताकी आज्ञाका अनादर मैं किसी भी बहानेसे नहीं करूँगा।

शारदा चुपचाप बैठी सुन रही थी। सहसा उससे जैसे और सहा नहीं गया। वह कह उठी—आप बहुत लोगोंके बहुत काम करते रहते हैं, किन्तु माको इस तरह खोंचा देना आपको उचित नहीं है।

सविताने उसे आँखके इशारेसे मना करके कहा—शारदा, राजू जो चाहे सो कहे, किन्तु मेरे मुँहसे ऐसी बात कभी नहीं निकलेगी।

राखालने कहा—इसके माने यह हैं कि आप शारदा नहीं हैं मा। शारदाओंको मैंने बहुत देखा है, वे कड़ी बात कहनेका मौका पानेपर कहे बिना नहीं छोड़ सकतीं। इससे उनकी कृतज्ञताका बोझ बहुत कुछ हलका हो जाता है। वे सोचती हैं कि देना-पावना चुकता हो गया।

सविताने सिर हिलाकर कहा—नहीं भैया, इसके साथ तुमने बड़ा अविचार किया। संसारमें शारदा एक ही है, अनेक नहीं हैं राजू।

शारदा सिर झुकाये बैठी थी, चुपचाप उठकर चली गई।

सविताने मृदु स्वरसे पूछा—तारकसे क्या तुम्हारा कुछ झगड़ा हो गया है राजू?

"नहीं मा, उससे मेरी मुलाकात ही नहीं हुई।"

"हम लोगोंको ले जानेकी बात क्या उसने तुमको नहीं बताई?"

"किसी दिन नहीं। शारदा कहती है कि मेरे डेरेपर जानेका समय ही उसे नहीं मिला। लेकिन बस, अब और नहीं। मेरे जानेका समय हो गया, अब मैं जाता हूँ। यह कहकर राखाल उठ खड़ा हुआ। विमल बाबूने अब तक एक बात भी नहीं की थी, अब वह बोले। सविताको लक्ष्य करके कहा—अपने लड़केके साथ मेरा परिचय नहीं करा दोगी नई-बहू? हम दोनों क्या इसी तरह अपरिचित बने रहेंगे?

सविताने कहा—यह मेरा लड़का है, यही इसका परिचय है। किन्तु तुम्हारा परिचय उसे क्या दूँ दयामय, यह मैं स्वयं ही तो अब तक नहीं जानती।

विमल—जब जान पाओगी तब दोगी?

"दूँगी। इससे मेरा कुछ भी छिपा नहीं है। अपने सब दोष-गुण लेकर ही मैं इसकी नई-मा हूँ।"

राखालने कहा—बचपनमें जब कोई मेरा अपना नहीं रहा, तब मुझे इन्होंने आश्रय दिया, पाल-पोस कर बड़ा किया, मा कहकर पुकारना सिखाया। तभीसे अपनी मा समझता हूँ और सदैव मा ही समझूँगा। इतना कहकर झुककर उसने और एक बार सविताके पैरोंकी धूल माथेसे लगाई।

विमल बाबूने कहा—तारकके यहाँ तुम्हारी मा कुछ दिनके लिए जाना चाहती हैं। यहाँ उनकी तबियत नहीं लगती है, इसलिए। मैं कहता हूँ, जाना ही अच्छा है। तुम्हारी राय है?

राखालने हँसकर कहा—है।

"सच कहते हो राजू? कारण, तुम्हारी सम्मतिके बिना इनका जाना नहीं होगा। मैं मना कर दूँगा।"

"आपका मना करना यह क्यों सुनेंगी?"

"नई-बहूने कमसे कम मुझसे यही प्रतिज्ञा की है।" कहकर विमल बाबू जरा हँस दिये।

सविताने तुरन्त स्वीकार करके कहा—हाँ, यही प्रतिज्ञा की है। तुम्हारे आदेशका उल्लंघन मैं नहीं करूँगी

सुनकर राखालकी आँखोंकी दृष्टि पल-भरके लिए सूखी हो उठी; किन्तु

अपनेको वैसे ही शान्त रख कर सहज गलेसे कहा—अच्छी बात है, आप लोग जो ठीक समझें वह कीजिए—मुझे कोई आपत्ति नहीं है नई-मा। यह कहकर और कोई प्रश्न किये जानेके पहले ही उठकर नीचे उतर गया।

नीचे रास्तेके एक किनारे शारदा खड़ी थी। उसने सामने आकर कहा—एक बार मेरे कमरेमें चलना होगा देवता।

"क्यों?"

"आपने शारदाओंको बहुत देखा है—यह अभी कहा है। मैं आपसे उनका परिचय प्राप्त करूँगी।"

"परिचयसे क्या होगा?"

"औरतोंके ऊपर आपको भारी घृणा है। वे कृतज्ञताके ऋणको काहेसे चुकाती हैं, इसकी बातें आपके पास बैठकर सुनूँगी।"

"बातें करनेका समय नहीं है। मुझे काम है।"

शारदाने कहा—काम मुझे भी है। किन्तु अगर आज आप मेरी कोठरीमें नहीं गये तो कल सुन पाइएगा कि शारदाएँ अनेक नहीं थीं, ससारमें केवल एक ही शारदा थी।

उसके कण्ठस्वरके आकस्मिक परिवर्तनसे राखाल स्तब्ध हो गया। उसे वही पहले दिनकी बात स्मरण हो आई, जिस दिन शारदा मरने बैठी थी।

शारदाने पूछा—कहिए, क्या करेंगे?

राखालने कहा—अच्छा, काम रहने दो। चलो, तुम्हारी कोठरीमें चलूँ।

१५

शारदाकी कोठरीमें आकर राखाल बिछौनेपर बैठ गया। पूछा—बताओ, क्यों बुलाकर लाई हो?

शारदाने कहा—जानेके पहले और एक बार मेरे कमरेमें आपकी चरण-रज पड़े, इसलिए।

"अच्छा चरण-रज तो पड़ चुकी। अब चलूँ?"

"इतनी जल्दी है? दो बातें कहनेका भी समय न देंगे?"

"वे दो बात तो अनेक बार कह चुकी हो शारदा। तुम कहोगी—देवता,

आपने मेरे प्राण बचाये हैं, बीस-पचीस रुपए दाल-चावल खरीदनेके लिए दिये हैं, नई-गाते कहकर किराया माफ करा दिया है। आपके निकट मैं कृतज्ञ हूं। जब तक जियूंगी, आपसे उरिण न हो सकूंगी। इसमें नई बात कुछ नहीं है। तो भी जानेसे पहले और एक बार कहना चाहती हो तो कह लो। लेकिन जरा चटपट कह डालो, अधिक समय नहीं है।"

शारदाने कहा—बातें नई न हों, लेकिन बहुत मीठी हैं। जितनी दफे सुनी जाती हैं, पुरानी नहीं होतीं। ठीक है न देवता?

"हां ठीक है। मीठी बातें तुम्हारे मुंहसे सुननेमें और भी मीठी लगती हैं। समय होता तो बैठे बैठे सुनता रहता। किन्तु हाथमें समय नहीं है। अभी जाना होगा।"

"जाकर खाना बनाना होगा?"

"हां।"

"उसके बाद खाकर सोना होगा"

"हां।"

"उसके बाद आंखोंमें नींद नहीं आवेगी, बिछौनेपर पड़े-पड़े सारी रात छट-पट करना होगा। क्यों न देवता?"

"यह तुमसे किसने कहा?"

"जानते हैं, किसने कहा? जो शारदा संसारमें केवल एक ही है, अनेक नहीं, उसने।"

"तो उस शारदाने भी तुमसे गलत कहा है। मैंने ऐसा कोई अपराध नहीं किया कि जिसके कारण दुश्चिन्तासे बिछौनेपर पड़े पड़े छट-पटाता रहूँ। मैं लेटता हू और सो जाता हूं। मेरे लिए तुम्हें चिन्ता न करनी होगी।"

"अच्छी बात है। अब चिन्ता न करूँगी। आपकी ही बात सुनूंगी। किन्तु मैंने ही भला कौन अपराध किया है, जिसके कारण मुझे नींद नहीं आती—सारी रात जागकर बिताती हूं?"

"सो तो तुम ही जानो।"

"आप नहीं जानते?"

"ना। दुनियामें कहाँ किसे नींद नहीं आती—किसकी निद्रामें व्याघात होता है, यह जानना संभव नहीं और इनके लिए समय भी नहीं।"

अपनेको वैसे ही शान्त रख कर सहज गलेसे कहा—अच्छी वात है, आप लोग जो ठीक समझें वह कीजिए—मुझे कोई आपत्ति नहीं है नई-मा। यह कहकर और कोई प्रश्न किये जानेके पहले ही उठकर नीचे उतर गया।

नीचे रास्तेके एक किनारे शारदा खड़ी थी। उसने सामने आकर कहा—एक वार मेरे कमरेमें चलना होगा देवता।

"क्यों?"

"आपने शारदाओंको वहुत देखा है—यह अभी कहा है। मैं आपसे उनका परिचय प्राप्त करूँगी।"

"परिचयसे क्या होगा?"

"औरतोंके ऊपर आपको भारी घृणा है। वे कृतज्ञताके ऋणको काहेसे चुकाती हैं, इसकी वातें आपके पास वैठकर सुनूँगी।"

"वातें करनेका समय नहीं है। मुझे काम है।"

शारदाने कहा—काम मुझे भी है। किन्तु अगर आज आप मेरी कोठरीमें नहीं गये तो कल सुन पाइएगा कि शारदाएँ अनेक नहीं थीं, ससारमें केवल एक ही शारदा थी।

उसके कण्ठस्वरके आकस्मिक परिवर्तनसे राखाल स्तब्ध हो गया। उसे वही पहले दिनकी वात स्मरण हो आई, जिस दिन शारदा मरने वैठी थी।

शारदाने पूछा—कहिए, क्या करेंगे?

राखालने कहा—अच्छा, काम रहने दो। चलो, तुम्हारी कोठरीमें चलूँ।

१५

शारदाकी कोठरीमें आकर राखाल विछौनेपर वैठ गया। पूछा—वताओ, क्यों वुलाकर लाई हो?

शारदाने कहा—जानेके पहले और एक वार मेरे कमरेमें आपकी चरण-रज पड़े, इसलिए।

"अच्छा चरण-रज तो पड़ चुकी। अव चलूँ?"

"इतनी जल्दी है? दो वातें कहनेका भी समय न देंगे?"

"वे दो वातें तो अनेक वार कह चुकी हो शारदा। तुम कहोगी—देवता,

आपने मेरे प्राण बचाये हैं, बीस-पचीस रुपए दाल-चावल खरीदनेके लिए दिये हैं, नई-माने कहकर किराया माफ करा दिया है। आपके निकट मैं कृतज्ञ हूँ। जब तक जियूँगी, आपसे उरिण न हो सकूँगी। इसमें नई बात कुछ नहीं है। तो भी जानेसे पहले और एक बार कहना चाहती हो तो कह लो। लेकिन जरा चटपट कह डालो, अधिक समय नहीं है।"

शारदाने कहा—बातें नई न हों, लेकिन बहुत मीठी हैं। जितनी दफे सुनी जाती हैं, पुरानी नहीं होतीं। ठीक है न देवता?

"हा ठीक है। मीठी बातें तुम्हारे मुँहसे सुननेमें और भी मीठी लगती हैं। समय होता तो बैठे बैठे सुनता रहता। किन्तु हाथमें समय नहीं है। अभी जाना होगा।"

"जाकर खाना बनाना होगा?"

"हाँ।"

"उसके बाद खाकर सोना होगा"

"हाँ।"

"उसके बाद आखोंमें नींद नहीं आवेगी, बिछौनेपर पड़े-पड़े सारी रात छट-पट करना होगा। क्यों न देवता?"

"यह तुमसे किसने कहा?"

"जानते हैं, किसने कहा? जो शारदा ससारमें केवल एक ही है, अनेक नहीं, उसने।"

"तो उस शारदाने भी तुमसे गलत कहा है। मैंने ऐसा कोई अपराध नहीं किया कि जिसके कारण दुश्चिन्तासे बिछौनेपर पड़े पड़े छट-पटाता रहूँ। मैं लेटता हूँ और सो जाता हूँ। मेरे लिए तुम्हें चिन्ता न करनी होगी।"

"अच्छी बात है। अब चिन्ता न करूँगी। आपकी ही बात सुनूँगी। किन्तु मैंने ही भला कौन अपराध किया है, जिसके कारण मुझे नींद नहीं आती—सारी रात जागकर बिताती हूँ!"

"सो तो तुम ही जानो।"

"आप नहीं जानते?"

"ना। दुनियामें कहाँ किसे नींद नहीं आती—किसकी निद्रामें व्याघात होता है, यह जानना सभव नहीं और इसके लिए समय भी नहीं।"

"समय नहीं है—क्यों ?" यह कहकर शारदा क्षण-भर चुप रही। फिर एकाएक हँस पड़ी। बोली—अच्छा देवता, आप इतने डरपोक क्यों हैं ? क्यों नहीं कहते कि शारदा, हरिनपुर तुम्हारा जाना न होगा। नई-माका जी चाहे तो वह चली जायँ, लेकिन तुम नहीं जाओ। मेरा निषेध है। इतना-सा कहना क्या इतना ही कठिन है ?

राखालको न सूझा कि इसके उत्तरमें क्या कहना चाहिए। इसीसे कुछ हत-बुद्धिकी तरह बोला—तुम लोगोंने जाना तय कर लिया है, तब मैं खाम-खा किस लिए रोकनेकी चेष्टा करूँ ?

शारदाने कहा—केवल इसी लिए कि आपकी इच्छा नहीं है कि मैं जाऊँ। यही तो सबसे बड़ा कारण है देवता।

"नहीं। किसी एक आदमीके खयालको ही 'कारण' नहीं कहते। तुम्हें मना करनेका मुझे अधिकार नहीं है।"

शारदाने कहा—भले ही खयाल हो, किन्तु वही आपका अधिकार है। मुँह फोड़कर कहिए कि शारदा, तुम हरिनपुर न जाने पाओगी।

राखालने सिर हिलाकर जवाब दिया—ना। अन्याय अधिकार मैं किसीपर नहीं लादता।

"नाराजीसे तो नहीं कह रहे हैं ?"

"नहीं। मैं सत्य ही कहता हूं।"

शारदा उसके मुखकी ओर ताकती रही। इसके बाद बोली—नहीं, यह सत्य नहीं है—किसी तरह सत्य नहीं है। मुझे मना कीजिए देवता, मैं मासे जाकर कह आऊँ कि मेरा हरिनपुर जाना न होगा, देवताने मना कर दिया है।

इसके भी प्रत्युत्तरमें राखालने किं-कर्त्तव्य-विमूढ़की तरह जवाब दिया—ना, तुम्हें मैं मना न कर सकूंगा। मुझे यह अधिकार नहीं है।

शारदाने कहा—अधिकार तो है; लेकिन अब मैं कहूंगी कि हमेशा केवल पराये हुकुम मानते-मानते आप खुद हुकुम देनेकी शक्ति खो बैठे हैं। विश्वास नष्ट हो गया है, भरोसा रहा नहीं। जो आदमी दावा करते डरता है, उसका सारा जीवन दूसरोंका दावा पूरा करते करते ही बीतता है। शुभाकांक्षिणी शारदाकी यह बात याद रखिएगा।

"यह तुम किससे कहती हो ? मुझसे ?"

"हाँ, आपसे ही।"

"हो सका तो याद रखूँगा। किन्तु मैं पूछता हूँ कि तुम्हें रोकने या मना करनेसे मुझे लाभ क्या है? यह अगर समझा सको तो शायद अब भी मैं सच-मुच तुम्हें मना कर सकता हूँ?"

"क्या यह सत्य जाननेको भी तुम्हारा जी नहीं चाहता कि अपनी इच्छासे तुम्हारी वश्यता स्वीकार करनेवाला एक आदमी भी इस संसारमें है?"

"जानकर क्या होगा?"

क्षणभर राखालके मुखकी ओर ताकते रहकर शारदाने कहा—शायद कुछ भी न होगा। शायद मेरे भी समझनेका समय आ गया है। तो भी एक बात कहती हूँ देवता, अकारण निर्दय हो सकना ही पुरुषका पौरुष नहीं है।

राखालने उत्तर दिया—सो मैं भी जानता हूँ। किन्तु अकारण अति कोमलता भी मेरी प्रकृतिमें नहीं है। यह कहकर, कुछ देर स्थिर रहकर, उसने पहलेसे भी अधिक रूखे स्वरमें कहा—देखो शारदा, अस्पतालमें जिस दिन तुम्हें होश लौट आया था, तुम सुस्थ हो उठी थीं, उस दिनकी बात तुम्हें कुछ याद आती है? तुमने छल करके बताया कि तुम अल्पशिक्षित सहज सरल देहातकी लड़की, गरीब भले घरकी बहू हो। तुमने कहा कि मैं न बचाऊं तो तुम्हारे बचनेका कोई उपाय नहीं है। मैंने तुमपर अविश्वास नहीं किया। उस दिन जितना या जो कुछ मैं कर सकता था उसे करना मैंने अस्वीकार भी नहीं किया। किन्तु आज वह सब तुम्हारे लिए हँसनेकी चीज है। उन सब बातोंको तुमने अवहेलनामें डाल दिया। आज आये हैं विमल बाबू—जिनके ऐश्वर्यकी सीमा नहीं है—आया है तारक, आई हैं नई-मा। उस दिनका अब कुछ बाकी नहीं है। इस छलनाका क्या प्रयोजन था, बताओ तो सही?

अभियोगको सुनकर शारदा विस्मयसे अभिभूत हो गई। उसके बाद धीरे-धीरे बोली—मेरे कहनेमें झूठ था, किन्तु किसी तरहकी छलना नहीं थी देवता। वह झूठ भी केवल इसलिए था कि मैं एक स्त्री हूँ। उसकी लज्जाको ढकनेके लिए। इसीको जब मेरा चरित्र समझकर आपने भूल की, तब मैं और भिक्षा नहीं माँगूँगी। कल माने मुझे कुछ रुपये दिये हैं चीजवस्तु खरीदनेके लिए। लेकिन मुझे उनकी कोई जरूरत नहीं है। जो रुपये आपने मुझे दिये थे, वह क्या लौटा दूँ?

राखालने और भी कठिन होकर कहा—तुम्हारी इच्छा। किन्तु रुपए मिलनेसे मुझे सुविधा होगी। मैं बड़ा आदमी नहीं हूँ शारदा, बहुत ही गरीब हूँ—यह तुम जानती हो।

शारदाने तकियेके नीचेसे रूमालमें बँधे रुपये निकालकर, गिनकर, राखालके हाथमें देकर कहा—तो ये लीजिए। लेकिन मैं इतनी नासमझ नहीं हूँ कि रुपयोंसे आपका ऋण उतर जायगा। तो भी बिना दोषके आपने जो दण्ड मुझे दिया, उसका अन्याय और एक दिन आपको खटकेगा—किसी तरह उससे आपका परित्राण न होगा।

"और कुछ कहोगी?"

"ना।"

"तो जाऊँ। रात हो गई है।"

प्रणाम करते समय शारदा राखालके पैरोंपर सिर रखकर रो पड़ी। इसके बाद आप ही आँखे पोंछकर उठ खड़ी हुई।

"जाता हूँ।"

"अच्छा।"

रास्तेमें बाहर निकलकर राखाल सोच न पाया कि अभी अभी वह जो पुरुषके अयोग्य सब मान-अभिमानका तमाशा समाप्त करके आया है, सो काहेके लिए? काहेके लिए यह सब नाराजी? शारदाने क्या किया है? उसके अपराधको बताना जैसे कठिन है, वैसे ही उसके अपने हृदयमें यह जलन किस जगह है, उसे उँगलीसे दिखाना भी मुश्किल है। राखालका हृदय चोट करके उससे बार-बार कहने लगा कि शारदा भली है, शारदा बुद्धिमती है, शारदा जैसा रूप सहज ही नहीं दिखाई पड़ता। शारदा उसके निकट कितनी कृतज्ञ है, इस बातको बहुत बार वह बहुत तरहसे जता चुकी है। आज भी पैरोंपर सिर रखकर इस बातको जतानेमें उसने त्रुटि नहीं की। और भी कुछ जैसे वह बारबार आभाससे जताती है, उसका अर्थ केवल कृतज्ञता ही नहीं है, वह शायद और भी गहरा, और भी बड़ा भाव है। शायद वह प्रेम है। राखालका मन भीतर ही भीतर संशयसे डोल उठा। वह बहुत दिन, बहुत-सी नारियोंके संसर्गमें, बहुत तरहसे आया है, किन्तु किसी स्त्रीने किसी दिन उसे प्यार किया हो—यह बात ऐसी अचिन्तित है कि वह आज प्राय असंभवही

जान पड़ती है। आज क्या वही चीज शारदा उसे देना चाहती है? लेकिन वह किस लज्जासे उसे ग्रहण करेगा? शारदा विधवा है, शारदा निन्दिता कुल-त्यागिनी है। इस प्रेममें न गौरव है, न सम्मान। राखाल अपनेको समझाकर कहने लगा—मैं गरीब हूँ, इस कारण कंगालकी वृत्ति और प्रवृत्ति तो नहीं ग्रहण कर सकता। अन्नका अभाव है, इससे राहकी जूठन उठाकर मुहमें डाल लूँगा? यह नहीं हो सकता—यह असंभव है।

तब भी हृदयके भीतर न जाने कैसा हुआ करता है। वहां जैसे कोई बारबार कहता है कि बाहरकी घटना जरूर ऐसी है, किन्तु भीतरका जो परिचय उस पहले दिनसे निरन्तर ही जो उसने पाया है, उसके विचारकी धारा क्या उस आईनकी किताब खोलनेसे उसमें मिलेगी? जिन स्त्रियोंके संसर्गमें अबतक उसके दिन बीते हैं, उनमें शारदाकी तुलना कहाँ है? निष्कपट नारीत्वकी इतनी बड़ी महिमा कहाँ ढूंढ़े मिलेगी! अथ च उसी शारदाका आज वह किस बुरी तरहसे अपमान कर आया!

डेरपर पहुँचकर उसने देखा कि बुढ़िया दासी मौजूद है। कुछ विस्मित होकर ही उसने पूछा—तुम अभी तक नहीं गई?

दासीने कहा—नहीं भैया, उस बेला तुमने कुछ खाया-पिया नहीं, इस बेला सब तैयारी कर रखी है। पाव-भर मांस भी खरीद लाई हूँ—सब ठीकठाक करके जाऊँगी।

सवेरे सचमुच ही उसने कुछ नहीं खाया था। खानेमें मक्खी पड़ जानेसे विघ्न पड़ गया था; किन्तु राखालको याद नहीं था। इसके पहले भी कितने ही दिन ऐसा हुआ है, तब इसी दासीने सवेरेके स्वल्प आहारको रातके भूरि भोजनकी तैयारी करके पूरा कर दिया है। यह कुछ नया नहीं है, तथापि उसकी बात सुनकर राखालकी आखोंमें आँसू भर आये। उसने कहा—तुम बूढ़ी हुई हो नानी, मर जाओगी तो मेरी कैसी दुर्दशा होगी, बताओ? जगत्में और कोई नहीं जो तुम्हारे दादा बाबूकी खबर ले।

इस स्नेहके आवेदनसे दासीकी आँखोंमें भी आँसू आ गये। उसने कहा—सच ही तो है। बूढ़ी हुई हूँ, मरूँगी नहीं? न जाने कितनी बार तुमसे कह चुकी हूँ, पर तुम सुनते ही नहीं—हँसकर टाल देते हो। अब मैं

कुछ नहीं सुनूँगी, ब्याह तुमको करना ही होगा। दो-चार दिन जीती हूँ, अपनी आँखों देख जाऊँगी। नहीं तो मरकर भी सुख नहीं पाऊँगी भैया।

राखालने हँसकर कहा—तब तो उस सुखकी आशा नहीं है नानी। मेरे घर-द्वार नहीं है, बाप-मा या अपना कोई नहीं है, मोटे महीनेकी नौकरी नहीं है। मुझे कौन भला अपनी लड़की देगा?

"वाह! लड़कीकी चिन्ता? एक बार तुम अपने मुँहसे कहो तो, कोड़ियों सम्बन्ध आकर हाजिर हो जायँगे।"

"तो फिर एक संबंध कर न दो नानी!"

"समझते हो कि कर नहीं सकती? मेरे हाथमें एक आदमी है, कल ही उसको इस काममें लगा दे सकती हूँ।"

राखाल हँसने लगा, बोला—सो तुमने जैसे लगा दिया, लेकिन बहू आकर खायगी क्या?—बताओ? गोते खायगी क्या?"

दासीने बिगड़कर जवाब दिया—गोते किस लिए खायगी दादाबाबू? गिरस्त-घरोंमें जो सब खाते हैं, वह भी वही खायगी। तुमको चिन्ता न करनी होगी। जिन्होंने जीवन दिया है वही आहार भी देंगे।

राखालने कहा—यह व्यवस्था कहलेके जमानेमें थी नानी, अब नहीं है। यह कहकर राखालने फिर हँसकर रसोईमें मन लगाया। वह कुकरमें खाना पकाता है। शौकीन आदमी है—उसके पास छोटे, बड़े, मँझोले, अनेक आकार-प्रकारके कुकर हैं। आज खाना पकाया बड़े कुकरमें। तीन-चार पात्रोंमें तरह-तरहकी तरकारियाँ और मांस दासीने पहले ही बनाकर रख दिया था। बहुत दिनोंसे इस काममें दासी पक्की हो गई है—उसे कुछ बताना नहीं पड़ता।

चौका लगाकर, थाली रखकर दासी जब घर जाने लगी तो पेट-भर खानेके लिए राखालको अपने सिरकी कसम देती गई। बोली—सवेरे आकर अगर देखूँगी कि तुमने सब नहीं खाया, बचा पड़ा है, तो नाराज होऊँगी।

राखालने कहा—ऐसा ही होगा नानी, पेट भरकर खाऊँगा। और जो चाहे करूँ, तुमको दुखी नहीं करूँगा।

दासीके जानेपर राखाल इजी-चेयरपर लेट रहा। खाना तैयार होनेमें लगभग दो घंटेकी देर थी। समय काटनेके लिए राखालने एक पुस्तक उठा ली। पर किसी तरह पढ़नेमें मन नहीं लगा सका—उसे बारबार शारदाका ही ख़याल

आने लगा। याद आने लगी, अपनी अकारण अधीरता। वह अपनेको सँभाल नहीं सका और भीतरके क्रोध और क्षोभकी ज्वाला कदर्य रूढ़ भावके साथ बारबार बाहर फूट निकली—वर्षाकी तरह। बुद्धिमती शारदाके समझनेको कुछ बाकी नहीं है। इस तरह अपनेको पकड़ा देनेकी क्या आवश्यकता थी? अपनेको शारदाकी नजरोंमें छोटा बनानेकी क्या जरूरत थी! मन-ही-मन उसकी लज्जाकी सीमा नहीं रही। जी चाहा कि अगर किसी तरह आजकी सारी घटनाको पोंछ दे सके!

अपने जीवनकी वह कहानी शारदा आज तक किसीसे नहीं कह सकी, केवल उसीको सुनाई है। उस निष्कपट विश्वासका प्रतिदान भला उसने क्या पाया? पाई केवल अश्रद्धा और अकारण लांछना। अथ च शारदाने उसकी क्या क्षति की थी? शारदाने उसकी एक भी बातका प्रतिवाद नहीं किया, केवल निरुत्तर रहकर सहती गई। निरुपाय रमणीके इस अपमानने इतनी देरसे लौटकर जैसे उसीका अपमान किया। उत्तेजनासे चंचल होकर राखाल कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ और बोला—रहने दो खाना। इसी रातको जाकर उससे क्षमा-प्रार्थना कर आऊं। उससे स्पष्ट करके कहूँगा कि कहाँ मेरे जलन है, कहा मेरे व्यथा है, यह मैं ठीक ठीक नहीं जानता शारदा, किन्तु जो सब बातें मैं तुमसे कह गया हूं, वे सब सच नहीं हैं, एकदम झूठ हैं।

कुकरमें खाना पकता रहा, घरकी रोशनी जलती रही। राखालने चादर उठाकर कंधेपर डाली, द्वारमें ताला लगाया और बाहर निकल पड़ा।

उसे पहुँचनेमें अधिक देर नहीं लगी। सीधे शारदाकी कोठरीके सामने आकर देखा, दरवाजेपर ताला लटक रहा है, वह घरमें नहीं है। तब वह ऊपर पहुँचा। वहाँ सामने ही देख पड़ा, दो कुर्सियोंपर आमने-सामने सविता और विमल बाबू बैठे हैं। बातें हो रही हैं। उसे देखकर कुछ विस्मित होकर सविताने ही प्रश्न किया—तुम क्या अबतक यहीं थे राजू?

"नहीं मा, डेरेपर चला गया था।"

"डेरेसे फिर लौट आये? क्यों?"

राखाल चटसे जवाब न दे सका। फिर बोला—कुछ काम है मा, सोचा, तारकसे बहुत दिनोंसे भेंट नहीं हुई, जरा एक बार मिल आऊँ। कल तो फिर समय मिलेगा नहीं।

" नहीं। हम लोग सवेरे ही रवाना हो जायँगे। "

विमल बाबूने पूछा—तारक क्या लौट आया है ?

सविताने कहा—नहीं। पर वह लड़का हमारे लिए इतना क्या क्या खरीदेगा, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आ रहा है।

इस बातका जवाब विमल बाबूने दिया। बोले—वह जानता है कि उसके अतिथि कोई साधारण आदमी नहीं हैं। उसे उनकी मर्यादाके उपयुक्त आयोजन करना चाहिए।

सविताने हँसकर कहा—उसे तुमसे सामानकी फर्द लिखा लेना चाहिए था!

सुनकर विमल बाबू हँसे। बोले—मेरी फर्द उसके साथ कैसे मेल खायगी नई-बहू ? वह तो अलग ही अलग हुआ करती है। तभी मन प्रसन्न होता है।

इस आलोचनामें राखाल योग न दे सका। एकाएक उसका मन भीतरसे जैसे जल उठा। दम-भर बाद अपनेको कुछ शान्त करके उसने पूछा—शारदाको तो मैंने उसकी कोठरीमें नहीं देखा नई-मा ?

सविताने कहा—आज क्या वह घरमें ठहर सकती है भैया! तारक भोजन करेगा। रसोई बनानेवाले महाराजको हटाकर वह दोपहरसे ही एक तरहसे राँधनेमें लग गई है। न जाने क्या क्या तैयारी की है, कुछ ठिकाना नहीं।

विमल बाबूने कहा—उसने मुझसे भी यहाँ भोजन करनेके लिए कहा है नई-बहू।

" तुम्हारा भी निमत्रण है क्या ? "

" हाँ। तुमने तो कभी खानेके लिए कहा नहीं। लेकिन उसने मुझे किसी तरह खाये बिना जाने नहीं दिया। "

" इसीसे शायद आज अब तक बैठे हुए हो ? मैं समझी थी, शायद मुझसे बातें करनेके लोभसे बैठे हो। " यह कहकर सविता होठोंमें मुसकरा दी।

विमल बाबूने भी हँसकर कहा—झूठ बात पकड़ ली जाय तो खोंचा नहीं देना चाहिए नई-बहू। बड़ा पाप होता है।

राखालने मुँह फेर लिया। इस हास-परिहाससे फिर एक बार उसका जी जल उठा।

सविताने पूछा—शारदाने तुमसे भोजन करनेके लिए नहीं कहा राजू ?

" नहीं मा।" सविताने अप्रतिभ होकर कहा—तो जान पड़ता है, वह भूल गई। यह कहकर वह तुरत ही शारदाको पुकारने लगी। उसके आनेपर पूछा—मेरे राजूसे खानेके लिए नहीं कहा शारदा?

" नहीं मा, नहीं कहा।"

" क्यों नहीं कहा? याद नहीं रहा शायद?"

शारदा चुप हो रही।

सविताने कहा—याद ही नहीं था राजू। किन्तु यह भूलना भी अन्याय है।

राखालने कहा—याद न रहना दुर्भाग्य हो सकता है नई-मा, किन्तु उसे अन्याय नहीं कहा जा सकता। शारदाने मुझसे पूछा था कि डेरेपर जाकर अब शायद आपको रसोई बनानी पड़ेगी? मैंने कहा—हाँ। फिर प्रश्न किया—उसके बाद खाना होगा? कहा—हाँ। किन्तु इसके बाद भी मुझसे खानेको कहनेकी बात उसे याद नहीं आई। मगर यह जान रखिएगा नई-मा कि याद न रहना न्याय-अन्यायके अन्तर्गत नहीं है, चिकित्साके अन्तर्गत है। इतना कहकर राखाल नीरव हँसीमें तीक्ष्ण विद्रूप मिलाकर जबर्दस्ती हँसने लगा।

सविता सोच न पाई कि क्या कहे। शारदा वैसी ही चुपचाप खड़ी रही।

राखालने मन-ही-मन समझा कि यह अन्याय हो रहा है, उसकी बात मिथ्या न होकर मिथ्यासे बढ़कर हो रही है, तो भी रुक न सका। बोला—तारक यहाँ आनेपर भी मुझसे मुलाकात नहीं करता। शारदा कहती है कि उनके पास समय नहीं है। यह सच भी हो सकता है, इसीसे समय निकालकर मैं ही उससे मिलने आया हूँ—खाने नहीं आया नई-मा।

जरा थमकर कहा—शारदाको शायद सन्देह है कि तारक मुझे पसन्द नहीं करता, मेरे साथ खानेके लिए बैठना उसे अच्छा नहीं लगेगा। मैं उसे दोष नहीं दे सकता मा। तारक यहाँ अतिथि है; उसकी सुख-सुविधाको ही पहले देखना जरूरी है।

शारदा वैसी ही चुप रही। सविताने व्याकुल होकर कहा—तारक अतिथि है, किन्तु तुम तो भैया मेरे घरके लड़के हो राजू। मैं असुविधामें किसीको डालना नहीं चाहती, जिसकी जो इच्छा हो वह करे; किन्तु मेरे घरमें मेरे पास बैठकर आज तुमको खाना होगा।

राखालने सिर हिलाकर अस्वीकार किया। बोला—ना, यह नहीं हो सकता।

फिर कहा—मेरी बूढ़ी नानी जीती रहे, मेरा कुकर बना रहे, उसका पका भोजन ही मेरे लिए अमृत है। वड़े घरके वढ़िया भोजनका मुझे लोभ नही है नई-मा।

सविताने कहा—लोभके लिए नहीं कहती राजू। किन्तु अगर विना खाये आज तुम चले आओगे तो मुझे असीम दुःख होगा। यह मैं तुमसे कहे देती हूँ।

मगर अपराध अधिक वढ़ गया। राखालने निर्मम होकर कहा—विश्वास नहीं होता नई-मा। जान पड़ता है, यह केवल वातकी वात है, कहना चाहिए, इसी लिए कही गई। मैं कौन हूँ जो मेरे विना खाये चले जानेसे आपको असीम दुःख होगा? आपको किसीके लिए भी दुःख वोध नहीं होता। यही आपकी प्रकृति है।

असह्य विस्मयसे सविताके मुखसे केवल इतना ही निकला कि कहते क्या हो राजू?

" कोई नहीं कहता, इसीसे मैंने कह दिया नई-मा। आपके सौजन्यकी, सहृदयताकी, आपकी विचार-वुद्धिकी तुलना नहीं है। आप आर्त्तकी परम हितैषिणी और वन्धु हैं, लेकिन आप दुखीकी मा नहीं हैं। दुःखका अनुभव केवल आपका वाहरका ऐश्वर्य है, अन्तरका धन नहीं है। इसीसे आप जैसे सहज ही किसीको ग्रहण करती हैं, वैसे ही अवहेलनाके साथ त्याग भी कर देती हैं। आपको हिचक नहीं होती।

विमल वावू विस्मयसे आखें फाड़े स्तब्ध भावसे ताकते रहे।

राखालने कहा—आपने मेरे लिए वहुत किया है, नई-मा, उसे मैं हमेशा याद रखूँगा। केवल जवानी वातोंसे नहीं, देह और मनकी सारी शक्तिसे। आपसे शायद अव फिर मेरी भेंट न होगी। हो, यह इच्छा भी मेरी नहीं है। किन्तु अगर मुझसे कुछ पुण्य वन पड़ा हो तो उसके वदले भगवान्से प्रार्थना करता हूँ कि अव-की। आपपर दया करें—'अनजाने'के वीचसे 'जाने'के भीतर वह आपको स्थान दें। अन्तिम शब्द कहते समय एकाएक उसका गला भर आया।

सविता एकटक उसकी ओर ताक रही थी, वात सुनकर क्रोध नहीं किया, वल्कि गहरे स्नेहके स्वरमें वोली—वही हो राजू, भगवान् तुम्हारी ही प्रार्थना मजूर करे—मेरे भाग्यमें वही घटित हो।

" चलता हूँ नई-मा। "

सविताने उठकर उसका हाथ पकड़कर कहा—राजू, क्या हो गया है वेटा?

"होगा क्या नई-मा ?"

"ऐसा कुछ जिसने तुम्हें ऐसा अस्थिर कर दिया है। तुम तो निष्ठुर नहीं हो—कटु बात कहना तो तुम्हारा स्वभाव नहीं है।"

प्रत्युत्तरमें राखालने झुककर केवल सविताके पैरोंकी रज माथेसे लगाई, कुछ मुहसे नहीं कहा। जब वह चलनेको उद्यत हुआ, तब विमल बाबूने कहा—राजू, हम दोनोंका विशेष परिचय नहीं है, किन्तु मुझे तुम अपना हितैषी बन्धु ही समझो।

राखालने इसका भी उत्तर नहीं दिया, धीरे धीरे नीचे उतर गया। कलकी तरह आज भी सीढ़ियोंके पास शारदा खड़ी थी। पास आते ही धीमी आवाजमें उसने कहा—देवता!

"क्या चाहती हो तुम?"

"आपने कहा था कि अनेक शारदाओंमें मैं भी एक हूँ। शायद आपकी बात ही सच है।"

"सो मैं जानता हूँ।"

"तरह तरहसे दया करके आपने मुझे बचाया था, इसीसे मैं बच गई। आप अनेक आदमियोंका बहुत कुछ करते हैं, मेरा भी उपकार किया, इससे आपकी कोई क्षति नहीं हुई। अगर जीती रही तो केवल इतना ही जान रखना चाहती हूँ।"

राखालने इसका उत्तर नहीं दिया। चुपचाप बाहर निकल गया।*

---

* इस उपन्यासको शरत् बाबूने यहीं तक लिखा था और यहीं तक ही 'भारतवर्ष' में यह प्रकाशित हुआ था। इसके आगेका अंश श्रीमती राधारानी देवीने लिखकर सम्पूर्ण किया है।

१६

दूसरे दिन सवेरे हरिनपुर जानेकी तैयारी जब सम्पूर्ण हो चुकी, सविताने शारदाको बुलाकर कहा—अपना बक्स-बिछौना ऊपर भेज दो शारदा, तारक सारे सामानकी लिस्ट बना रहा है।

शारदाने कुंठित भावसे कहा—मेरा बक्स-बिछौना नहीं जायगा मा।

नीचे-से स्टूलपर बैठा तारक नोट-बुकमें जल्दी जल्दी माल-असबाबकी लिस्ट तैयार कर रहा था। शारदाका उत्तर उसके कानोंमें पहुँचा। झुके हुए सिरको ऊपर उठाकर वह विस्मित स्वरमें बोला—बक्स-बिछौना न जायगा कैसे!

सविता भी शारदाकी बातसे विस्मित हुई थी। धीमे स्वरमें बोली—क्या साथ ले जाने लायक बक्स-बिछौना तुम्हारे पास नहीं है शारदा? तो पहले क्यों नहीं बताया—मैं उसका इंतिजाम कर देती।

मलिन हँसी हँसकर शारदाने कहा—बिछौना मेरा पुराना और फटा अवश्य है, तो भी उसे साथ ले जानेमें मुझे कोई लज्जा न थी। पर हरिनपुर मेरा जाना न होगा मा।

तारक और सविता प्रायः एक साथ ही कह उठे—यह क्या?

शारदाने सूखी हँसी हँसकर कहा—मैं यहाँसे कहीं हिल नहीं सकती, लाचार हूँ। नहीं तो माकी सेवासे अपनेको वञ्चित करके इस शून्य पुरीमें अकेले पड़े रहनेका दण्ड मैं कभी न भोगती।

अवाक् हो रही सविता तीव्र दृष्टिसे शारदाके मुँहकी तरफ ताककर जैसे कुछ खोजने लगी।

तारक उत्तेजित होकर कह उठा—कैसे! कल तो नई-माके साथ हरिनपुर जानेके लिए आप तैयार थीं, और आज सवेरे ही यह घर छोड़कर हिल नहीं सकतीं, यह तय कर डाला! ना, ये सब बेकारके उज्र नहीं चलेंगे। कोई औरत-लड़का

साथ न जानेसे उस गँवई गाँवमें अकेली नई-मा—ना ना, यह हो ही नहीं सकता।

शारदाने विषादके स्वरमें कहा—मैं सच ही कहती हूँ तारक बाबू, मेरे जानेका उपाय नहीं है। मेरा यह बेकार उज्र नहीं है।

अविश्वासपूर्ण स्वरमें तारकने प्रश्न किया—क्यों नहीं जा सकती हो, जरा सुनूँ? यहाँ आपको क्या काम है?

शारदा स्थिर नेत्रोंसे देखती हुई पत्थरकी प्रतिमाकी तरह खड़ी रही, उसने कुछ भी जवाब नहीं दिया।

कई सेकिंड तक जवाबकी राह देखकर तारकने कहा—जवाब क्यों नहीं देतीं?

शारदा फिर भी चुप रही।

तारकने हताश भावसे हाथकी नोटबुक कमरेके फर्शपर फेंककर कहा—तो फिर किस तरह दोपहरकी ट्रेनसे आपका जाना होगा नई-मा? कोई स्त्री-बच्चा साथ न रहनेसे उस बन्धुबान्धवहीन देहातमें, अकेली आप कैसे रह सकेंगी?

सविताने अब तक कुछ नहीं कहा था। जरा हँसकर कहा—तारक, गाँवमें मेरा जन्म हुआ है और जीवनका अधिकांश गाँवमें ही बीता है। वहाँ मुझे कोई कष्ट न होगा।

रूखी आँखोंसे शारदाकी ओर ताककर तारकने उपहासके स्वरमें कहा—क्या मैं जान सकता हूँ कि कौन वह मौतबर आदमी है, जिसके हुक्मके बिना आप नई-माके साथ भी यह घर छोड़कर नहीं जा सकतीं? राखाल बाबू तो निश्चय ही नहीं?

तारककी इस असंयत उक्तिसे शारदाका चेहरा अपमानसे लाल हो गया। दूसरी ओर स्थिर दृष्टिसे ताकते हुए उसने शान्त कण्ठसे कहा—जो मुझे इस घरमें रख गये हैं, उनकी आज्ञाके बिना मेरा दूसरी जगह जाना संभव नहीं है तारक बाबू! आप अकारण खफा हो रहे हैं।

शारदाके उत्तरसे सविता चौंक उठी। किन्तु तारकने गलेको बहुत कुछ नीचे उतारकर विस्मय-मिश्रित स्वरमें कहा—लेकिन वह तो बहुत दिनोंसे लापता हैं?

शारदाने तारककी ओर देखा भी नहीं, सविताके सामने झुककर प्रणाम करके

कहा—मा, और सब मुझे चाहे गलत समझें, लेकिन आप गलत न समझेंगी, यह मैं निश्चयसे जानती हूँ।

सविताने गहरे स्नेहसे शारदाके सिरपर हाथ फेरकर उँगलियाँ अपने होठोंसे छुआईं। फिर अत्यन्त गाढ़े अथ च कोमल स्वरमें कहा—सोनेको पीतल समझनेकी गलती कोई हमेशा नहीं कर सकता शारदा। आज न समझें बेटी, एक दिन सभी तुम्हें समझ सकेंगे।

शारदाकी आँखोंमें आँसू आ गये थे। उसने जैसे कुछ कहना चाहा, पर कह न पाई। सिर झुकाये प्रबल चेष्टासे चुपचाप अपने आँसुओंके वेगको सँभालने लगी।

सविताने शारदाको अपने पास खींचकर कहा—तुमको कुछ न कहना होगा शारदा। मेरे साथ न जा सकना तुम्हारे लिए कितना बड़ा दुःख है, सो मैं जानती हूँ।

ट्रेन छूटनेके लगभग डेढ़ घंटा पहले तारक सविताको लेकर स्टेशनपर जा पहुँचा। माल-असबाब गिनकर, कुली ठीक करके, पुराने दरबान महादेवसिंहकी हिफाजतमें दे दिया गया है। ब्रेकवानका सामान तौलानेके बाद रेलवे कंपनीके जिम्मे करके रसीदको सावधानीसे जेबमें डालकर तारकने निश्चिन्त चित्तसे सेकिंड क्लासके लेडीज वेटिंग रूमके सामने आकर पुकारा—नई-मा—

सविता भीतरसे उठकर दरवाजेके सामने आकर खड़ी हुई। तारकने रूमालसे माथेका पसीना पोंछते पोंछते कहा—माल-असबाब वजन कराकर ब्रेकवानमें रखकर रसीद ले आया। इस ओरका सब झमेला खतम हुआ, अब ट्रेन प्लेटफार्ममें आकर लगने-भरकी देर है। आपको बिछौना बिछाकर उसपर बिठा दूँ तो निश्चिन्त हो जाऊँ।

सविताने मुसकाकर कहा—नई-माका कहीं हरिनपुर जाना न हो, इस आशंकासे तुम्हारे भय और चिन्ताकी सीमा नहीं है, क्यों न तारक?

मुसकाते हुए तारकने उत्तर दिया—निश्चय ही। जबतक लड़केकी झोपड़ीमें माके चरणोंकी धूल नहीं पड़ती, तबतक म अपने भाग्यपर विश्वास नहीं करता मा।

गाड़ी छूटनेके निर्दिष्ट समयसे आध घंटा पहले गाड़ी प्लेटफार्मके भीतर आ खड़ी हुई।

व्यतिव्यस्त भावसे तारक वेटिंगरूमके दरवाजेपर दौड़ा हुआ आया और बोला—नई-मा, निकलिए जल्दी, ट्रेन आ गई।

दरबान महादेवसिंह वेटिंग-रूमके बाहर बक्स-बिछौनोंके ऊपर बैठा चूना-तमाखू मल रहा था। तमाखूको चटपट मुँहमें रखकर पगड़ी ठीक करते-करते हड़बड़ाकर खड़ा हो गया

सिरसे पैर तक रेशमी चादर ओढ़े सविताने शिबूकी माके साथ ट्रेनकी ओर तारकके पीछे पीछे चलते हुए कहा—मुझे तुम इंटर क्लासके जनाने डिब्बेमें चढ़ा दो तारक। शिबूकी मा भी मेरे साथ रहेगी।

तारक ठिठककर खड़ा हो गया। बोला—मैंने आपके लिए सेकिंड क्लासका टिकट खरीदा है नई-मा। इंटर क्लासके गंदे जनाने डिब्बेकी दुर्गन्धमें तुम टिक कैसे सकोगी?

सविताने कहा—लेकिन जनाने डिब्बेमें ही जाने-आनेका अभ्यास मुझे था भैया।

तारकने बारबार जिद करके अनेक असुविधायें और कष्टके कारण दिखाकर दूसरे दर्जेके डिब्बेमें ही सविताको चढ़ा दिया।

छोटा-सा डिब्बा है। तब तक कोई यात्री उसपर सवार नहीं हुआ था। तारक व्यस्त भावसे गाड़ीके भीतर चढ़ गया और उसने अपनी धोतीके छोरसे प्लेटफार्मकी तरफवाली बेंचकी धूल झाड़कर, यत्नपूर्वक साफ बिछौना बिछा दिया। हावड़ा स्टेशनसे सिर्फ वर्द्धमान तक जाना है, किन्तु तारकने यात्राके मार्गका आयोजन वैसा ही किया है, जैसा दिल्ली या लाहौर तक जानेमें करना चाहिए।

सविता अन्यमनस्क-सी बिछौनेके ऊपर जाकर बैठ गई। तारक शायद मन-ही-मन आशा कर रहा था कि नई-मा उसके इस सतर्क यत्न और सेवाके सम्बन्धमें निश्चय ही कुछ सस्नेह दोषारोप करेंगी। किन्तु धोबीके यहाँकी धुली हुई सफेद धोतीका छोर बेंचकी धूलसे मैला हो जानेपर भी नई-माने एक भी शब्द नहीं कहा, इससे तारकका मन बहुत कुछ क्षुण्ण हो गया। तथापि महा उत्साहसे उसने ऊपरकी बर्थपर ट्रंक, हाथ-बक्स, सूट-केस आदि कायदेसे जमा दिये। बेंचके नीचे फलोंकी टोकरी तथा और दूसरी चीजें सावधानीसे अच्छी तरह रख दीं। कुलियोंको बिदा करके तारकने सविताके सामने आकर क्लान्त कण्ठसे कहा—आप

जरा बैठिए नई-मा, मैं एक गिलास लेमोनेड बर्फ डालकर ले आऊँ आपके लिए, या एक प्लेट आइसक्रीम ले आऊँ—क्या कहती हैं ?

सविता अब तक बाहर जनाकीर्ण प्लेटफार्मकी ओर उद्देश्यहीन दृष्टिसे ताक रही थी। तारककी बातसे जैसे उसे होश आया।

उसने व्यस्त भावसे कहा—नहीं तारक, कुछ भी न लाना होगा। मुझे प्यास नहीं है।

तारकने इस निषेधको न सुनकर सिर हिलाकर कहा—वाह, यह भी कहीं हो सकता है! प्यास नहीं लगी—कहनेसे मैं क्यों सुनूँगा नई-मा? आपका मुँह कैसा सूख रहा है, सो तो देख ही रहा हू।

सविताने मृदु हास्यके साथ शान्त किन्तु दृढ़ स्वरमें कहा—लेमोनेड सोडा या आइसक्रीम, यह सब मैं कभी नहीं पीती खाती। ट्रेनमें जलका स्पर्श भी मैंने जीवनमें कभी नहीं किया। तुम व्यस्त होकर बेकार यह सब खरीद न लाना भैया।

सब विषयोंमें प्रतिवाद करना और अपनी इच्छाको दूसरेकी इच्छा या अनिच्छाके विरुद्ध तर्क-युक्तिद्वारा स्थापित करना तारककी प्रकृति है। किन्तु नई-माके इस कण्ठस्वरने उसे इनमेंसे कोई बात करनेमें प्रवृत्त नहीं होने दिया। अतएव वह मन ही मन दुःखकी अपेक्षा बेचनीका अधिक अनुभव करने लगा।

प्लेटफार्मकी कर्म-व्यस्त जनताकी ओर ताकती हुई सविताकी आँखें अकस्मात् चमक उठीं। दूरपर विमल बाबू आते देख पड़े। ट्रेनके डिब्बोंमें किसीको खोजनेवाली दृष्टि डालते हुए वह आगे बढ़ रहे थे। देखते देखते सविताका मुख और आँखें आनन्दकी स्निग्ध किरणोंसे उद्भासित हो उठीं।

विमल बाबू प्रसन्न हँसीके साथ सविताके डिब्बेके सामने आकर खड़े हो गये। तारकने चटपट प्लेटफार्मपर कूदकर पुलकित स्वरमें कहा—देखता हूँ आप स्टेशनपर ही आ गये, हम लोग तो आशा करते थे कि आप घरपर ही मिलने आवेंगे। किन्तु ट्रेनके टाइम तक आप नहीं आये, इससे चिन्ता हो रही थी।

विमल बाबूने सविताके मुखपर नजर टिकाकर शान्त कण्ठसे तारकसे प्रश्न किया—हम लोग—अर्थात्?

विमल बाबूके प्रश्नसे तारक सविताके मुँहकी ओर ताककर एकाएक लज्जासे अप्रतिभ हो गया। बहुवचनमें न करके एकवचनमें ही बात करना शायद शोभन होता। छि., नई-माने न जाने क्या खयाल किया होगा!

किन्तु तारकको इस लज्जासे बचाना नई-माने ही। वह स्निग्ध हास्यके साथ बोली—तारकने ठीक ही कहा। आज सवेरे हम लोगोंने यहां तुम्हारा आना सम्भव समझा था। शारदा भी कहती थी तुम्हारी बात।

विमल बाबूने सविताके डिब्बेके भीतर एक बार नजर डालकर कहा—शारदा कहां है?

सविताके उत्तर देनेके पहले ही तारक रूखे स्वरसे कह उठा—ए, वह क्या शहरका वम्बेका पानी और बिजलीकी रोशनी छोड़कर देहातमें रहने जायगी? मगर दया करके यह बात पहले ही कह देतीं तो अच्छा करतीं, हम लोग इतनी असुविधामें न पड़ते।

विमल बाबूने विस्मित होकर कहा—शारदा क्या तुम्हारे साथ हरिनपुर नहीं जा रही है?

सविताने उदास हँसीके साथ चुपचाप सिर हिलाकर इशारेसे बतलाया कि शारदा नहीं आ सकी।

विमल बाबू चिन्तित हो उठे। बायें हाथकी कलाई उलटकर उन्होंने कलाईमें बँधी अपनी सोनेकी रिस्ट-वाचको देखते हुए व्यस्त स्वरमें कहा—अभी गाड़ी छूटनेमें काफी समय है। मोटर ले जाकर शारदाको लिये आता हूं नई-बहू। मैं जाकर कहूंगा तो वह इनकार नहीं कर सकेगी।

सविताने रोककर कहा—तुम्हारे अनुरोध करनेपर भी वह नहीं आ सकेगी। केवल उसका दुःख बढ़ जायगा।

विमल बाबूने चलते-चलते रुककर विस्मित कंठसे प्रश्न किया—इसके माने?

सविताने कहा—और किसी दिन सुनना।

विमल बाबूने क्षणभर सविताके मुखकी ओर ताकते रहकर कहा—मामला क्या है नई-बहू?

सविताने कहा—उसके आनेका उपाय नहीं है दयामय, नहीं तो अपने साथ आनेसे उसे मैं खुद भी शायद न रोक पाती। खैर, वह कुछ भी हो, एक और अनुरोध तुमसे किये जाती हूं। शारदा अकेली रह गई, बीच-बीचमें उसकी खबर लेते रहना।

शारदाके व्यवहारसे तारक उसके ऊपर इतना अधिक असन्तुष्ट हो गया था कि नई-माने शारदाकी अकृतज्ञताका उल्लेख मात्र न करके उलटे विमल बाबूको

उसकी देख-रेखके लिए जो अनुरोध किया, उससे वह मन-ही-मन जल उठा। मनकी खीझ इन लोगोंके सामने प्रकट न हो पड़े, इस लिए वह वहाँसे हट जानेकी इच्छासे बोला—शिबूकी मा और वह दरवान ठीक तौरसे बैठ गये या नहीं, यह जरा देख आता हूँ नई-मा, यह कहकर वह अनावश्यक तेजीसे पग बढाता हुआ दूसरी ओर चला गया।

विमल बाबूने सविताकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टि डालकर कहा—क्या हुआ है, बताओ तो! तारक कुछ उत्तेजित-सा जान पड़ता है।

सविताने हलकी हँसीके साथ कहा—शारदा मेरे साथ नहीं आई, इसीसे तारक विशेष असन्तुष्ट है। उसकी धारणा है कि मैं देहातमें अनेक असुविधाओंके बीच जा रही हूँ, शारदा साथ रहती तो शायद मुझे बहुत सुविधा होती।

विमल बाबूने कहा—यह तो केवल तारक ही नही सोच रहा है मैं भी ठीक यही सोच रहा हूँ नई-बहू।

सविताने करुण हँसी हँसकर कहा—लेकिन मैं आज ठीक उल्टी बात सोच रही हूँ।

विमल बाबूने सविताके मुखमें इतनी करुण हँसी पहले कभी नहीं देखी थी। उसका हृदय वेदनासे जैसे ऐंठने लगा। सविताके मुखकी ओर स्थिर दृष्टिसे ताककर वह बोले—मैं क्या सुन नहीं सकता नई-बहू?

क्लान्त कण्ठसे सविताने कहा—सोचती हूँ कि सभी बातें एक दिन तुमसे कहूँगी। और कोई तो मेरे हृदयके भीतरके इस दाहको समझ नहीं पावेगा, शायद विश्वास भी नहीं करना चाहेगा। मेरा बहुत कुछ जाननेको है। इन तेरह वर्षोंसे दिन पर दिन और रात पर रात लगातार जो प्रश्न मेरे हृदयके भीतर सिर पटक पटककर प्राण दे रहा है, उसका जवाब अब भी मैंने नहीं पाया। भगवान्! तुमसे तो कुछ भी छिपा नहीं है। इतनी बड़ी निर्मम जिज्ञासा तुम्हींने मेरे जीवनमें पैदा की है। किन्तु मैं इसके लिए तुमसे शिकायत नहीं करूँगी, मैं केवल यही चाहती हूँ कि इस जिज्ञासाका सत्य उत्तर भी तुम इस जीवनमें मुझे दे दो। इसके सिवा प्रार्थनाको और कुछ तो तुमने रखा नहीं। चाहे जितना बड़ा दुःख तुम मुझे क्यों न दो, मैं उसे तुम्हारे हाथका दान मान कर सीधी होकर—सिर उठाकर ही चल सकती। किन्तु मेरे जीवनमें तो तुमने

दुःख नहीं भेजा, भेजा है केवल तीव्र परिहास। मनुष्यका परिहास सहना कठिन नहीं है, लेकिन तुम्हारा यह निष्ठुर परिहास तो सहा नहीं जाता प्रभु!

विमल बाबूके आनन्द-सौम्य मुखपर एक कठिन वेदनाकी अनुभूतिकी छाया गहरी हो उठी। उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा। वे दूसरी ओर नजर करके स्थिर भावसे खड़े रहे। वह दृष्टि जैसे इस लोकसे दूसरे लोकमें खो गई थी।

बहुत समय बीत गया। सविताने अस्फुट मृदु स्वरमें पुकारा—दयामय!

विमल बाबूने नजर घुमाकर स्नेह-स्निग्ध गाढ़ स्वरमें कहा—नई-बहू!

सविता एकाएक चौंक उठी। चेहरेपर उद्वेग और वेदनाके चिह्न फूट उठे। विमल बाबूके मुखकी ओर पूर्ण दृष्टिसे ताककर अनुनयपूर्ण स्वरमें बोली—एक बात कहूँ? बोलो, कुछ खयाल तो न करोगे?

विमल बाबू सविताकी बातका सहसा कोई उत्तर नहीं दे सके। जरा देर चुप रहकर धीरे धीरे बोले—नई-बहू, मैं नहीं जानता था कि अभी तुम "कुछ खयाल करने" की सीढ़ी तय करके उसके ऊपर नहीं चढ़ सकीं। किन्तु जाने दो वह बात, क्या कहना चाहती हो कहो, मैं कुछ खयाल न करूंगा।

नजर नीचे किये सविताने कहा—तुम मुझे नई-बहू कहकर न पुकारो।

विमल बाबू कुछ देर सविताकी ओर ताकते रहकर शान्त स्वरमें बोले—ऐसा ही होगा।

अबकी सिर उठाकर सविताने विमल बाबूकी ओर देखा। देख पड़ा कि सविताके दोनों सुन्दर नेत्र ओसकी बूंदोंसे भीगे कमल-दलकी तरह आंसुओंसे छलछला रहे हैं।

सविता विमल बाबूसे कुछ कहनेको हुई, पर कह न सकी, रुक गई। विमल बाबूने इसे लक्ष्य किया।

प्लेटफार्मसे डिब्बेके भीतर आकर विमल बाबू सविताके सामनेवाली बेंचपर बैठ गये। इसके बाद स्नेह-कोमल, साथ ही सम्मान-पूर्ण स्वरमें उन्होंने कहा—नाम लेकर पुकारनेका अधिकार क्या तुम मुझे दे सकोगी? संकोच मत करो। अगर कोई बाधा हो तो मैं जरा भी दुःखी न होऊँगा। केवल यह बता देना कि क्या कहकर पुकारना तुम्हारे मनमें खटकेगा नहीं—स्मृतिका दाह सुलग न उठेगा। मैं तो अधिक कुछ जानता नहीं। शायद बिना जाने तुमको चोट पहुँचा रहा हूँ।

अबकी सविता अपने उमड़े हुए आँसुओंको रोक नहीं सकी—आँसू झरझर करके झड़ पड़े। उसने चटपट आँसू पोंछकर दूसरी ओर मुँह घुमा लिया। जैसे कुछ कहनेकी बारबार चेष्टा करके भी लज्जा और दु:खसे कण्ठावरोध हो जाने लगा।

विमल बाबूने कहा—कुंठित न होना। बोलो, क्या कहनेसे तुम सहजमें जवाब दे सकोगी?

सविताने फिर भी कुछ उत्तर नहीं दिया। इसके बाद भारी सकोचको प्राणपणसे हटाकर धीमे स्वरमें कहा—मुझे 'रेणुकी मा' कहकर पुकारा करो।

विमल बाबूके चेहरेपर कोमल सहानुभूतिकी करुणा परिस्फुट हो उठी। उन्होंने स्निग्ध स्वरमें कहा—सचमुच बहुत सुन्दर है! मुझे यह सोचकर विस्मय होता है कि तुम्हारा इतना बड़ा परिचय इतने दिन क्यों नहीं सूझा!

सविता चुप रही।

विमल बाबू आनन्दसे भरे कण्ठसे कहने लगे—यह तुमने कितना बड़ा दान आज मुझे दिया, सो शायद तुम आप भी नहीं जानती हो रेणुकी मा! तुम्हारे दिये इस सम्मानकी, इस विश्वासकी मर्यादाको रख सकूँ, यही मैं चाहता हूँ। मेरी और कोई कामना नहीं है।

विमल बाबू और भी कुछ कहते, लेकिन तभी गाड़ी छोड़नेका घण्टा बज उठा। रिस्टवाचकी ओर देखकर वह उठ खड़े हुए। बोले—अब चलता हूँ। हरिनपुरमें रहना अगर अच्छा न लगे तो चले आनेमें कोई दुविधा या सकोच न करना। तारकको अगर पहुँचा जानेकी छुट्टी न मिले तो खबर देना। राजू जाकर ले आवेगा। प्रयोजन होनेपर मैं भी जा सकता हूँ।

विमल बाबू गाड़ीसे नीचे उतर गये। तारक तेज़ीसे चला आ रहा था। हाथमें एक गिलास बर्फ पड़े हुए पेयका था—जिंजरका शर्बत या ऐसा ही कुछ। विमल बाबूके हाथमें गिलास देते हुए उसने कहा—नई माको तो एक बूँद पानी भी मुँहमें नहीं डलवा सका। आप भी इसको रिफ्यूज न कर दीजिए।

विमल बाबूने हँसकर कहा—लाओ।

गिलास विमल बाबूके हाथमें देकर तारकने पाकेटसे केलेके पत्तेमें लिपटा पानका दोना निकाला।

अंतिम घण्टा बजनेके साथ ही गार्डकी सीटी सुनाई दी। सविता कह उठी—

गाड़ी अब छूट रही है तारक। जल्दी चढ़ आओ। तुम्हारे इस अतिथिवात्सल्यके मारे मैं किस तरह दिन बताऊँगी, यही सोचती हूँ।

विमल बाबू वह पेय अभीतक समाप्त नहीं कर पाये थे। हँसनेसे गलेमें फँदा लग गया। सविता व्यग्र होकर कह उठी—आहा—

विमल बाबू मुँहसे गिलास हटाकर, सविताकी ओर देखकर, अबकी जोरसे हँस पड़े। ट्रेन उस समय रेंग चली थी। "नमस्कार" कहकर तारक चलती हुई गाड़ीमें सवार हो गया।

१७

ब्रज बाबूके अपने भतीजे और चचेरे छोटे भाई नवीन बाबू जो इस लम्बे समयसे—बारह तेरह वर्षोंसे—गाँवके घर-द्वारका भोग-दखल निश्चिन्त भावसे कर रहे थे, इतने दिनों बाद कन्यासमेत ब्रज बाबूके लौटनेको प्रसन्न चित्तसे ग्रहण नहीं कर सके।

गाँवमें ब्रज बाबूके निजी दुमंजिले पक्के मकान, बाग, पोखर, जमीन-जायदाद सबपर अधिकार करके वे ही इतने दिन सपरिवार रह रहे थे। जो प्रधान हिस्सेदार, बल्कि कहना चाहिए असल मालिक हैं, वह आज एकाएक स्वयं आकर उपस्थित हो गये, अतएव उन लोगोंके विचलित होनेकी बात ही है। लेकिन तो भी ब्रजबाबूके भतीजे और चचेरे छोटे भाई नवीन बाबू ब्रज बाबूके गाँवमें आकर बसनेका प्रतिवाद करनेका साहस नहीं कर सके। इसका कारण यह था कि सिर्फ कुछ ही महीने पहले इन्हीं ब्रज बाबूने उनको एक मूल्यवान् जमीन लिखापढ़ी करके दान कर दी है, जिसकी सालाना आमदनी लगभग हजार रुपए है। किन्तु इसी लिए वे अपने परिवारमें, अपने घरके अन्तःपुरमें ब्रज बाबू और रेणुको स्थान तो नहीं दे सकते। इस कारण बहुत सोच-विचारकर, युक्ति-परामर्श करके उन्होंने ब्रजबाबूके रहनेके लिए घरका बाहरी हिस्सा छोड़ दिया।

बाहरका मकान एक मंजिलका पक्का था। उसमें दो बड़े बड़े कमरे थे। कमरेके एक ओर भीतरकी ओर दरदालान और बाहरकी ओर खुला बरांडा था। दालानके दोनो सिरोंपर एक-एक छोटी कोठरी थी। एक कोठरी नोकरोंके चिलम भरने और और दूसरी दिया-बत्ती रखनेके काम आती थी। यही सदर मकान था।

कमरे झाड़से साफ कराकर, धुलवाकर, दो तख्त डलवा दिये, मिट्टीकी नई कलसीमें पीनेका पानी भरवाकर रख दिया और इस तरह कर्तव्यनिष्ठ भतीजोंने भू-दान करनेवाले काकाके प्रति अपने कर्त्तव्यको पूरा किया।

गाँवमें पहुँचनेपर व्रज बाबू और रेणुके उस दिन एक वक्तके भोजन आदिकी व्यवस्था भी उन्हीं लोगोंके यहा हुई। किन्तु वह भोजनकी व्यवस्था घरके भीतर नहीं हुई। खानेकी सामग्री बाहर-घरमें पहुँचा दी गई।

व्रज बाबूके विशेष लक्ष्य न करनेपर भी इस व्यवस्थाका अर्थ समझनेमें बुद्धिमती रेणुको देर नहीं लगी। किन्तु वह जन्मकालसे ही कम बोलनेवाली और सहिष्णु प्रकृतिकी लड़की है। किसी मामलेमें मनको धक्का पहुँचने या अपमानका अनुभव करने पर भी उसे लेकर चचलता प्रकट करना उसकी प्रकृतिके विरुद्ध है।

काकाके गाँवमें पदार्पण करते ही भतीजोंने प्रणाम और कुशल-प्रश्न आदिके बाद पहले ही यह जानना चाहा कि किस कारणसे वह इतने दिनोंके बाद घर लौटे हैं। बातचीतके बाद जब यह जाना गया कि धनाढ्य काका बाबू सर्वस्व गँवाकर और गृहहीन होकर बिनब्याही सयानी कन्याके साथ गाँवको लौटे हैं, बाकी जीवनके दिन यहीं बितानेका इरादा करके, तब वे बदस्तूर डर गये। व्रज बाबूके शरीरकी जैसी अवस्था है, उससे कहीं ऐसा न हो कि अन्तको इस सयानी अविवाहिता कन्याका बोझ उन्हींके सिर आ पड़े। भू-दान करके काका बाबू क्या अन्तमें अपनी सयानी क्वाँरी लड़कीकी जिम्मेदारीका बोझ भी भतीजोंको ही दे जायँगे? कदाचित् इस भारको वे ले भी लेते, किन्तु कुल-त्यागिनी माताकी क्वाँरी कन्याको अपने परिवारमें आश्रय देकर कौन यह विपत्ति मोल ले?

व्रज बाबू अपने गृहदेवता गोविन्दजीको भी साथ लाये थे। पारिवारिक ठाकुरद्वारेमें जब व्रज बाबू गोविन्दजीको ले जाने लगे तब उनके छोटे भाई नवीन-चन्द्रने भतीजोंके मुखपात्रस्वरूप सामने आकर हाथ जोड़कर व्रज बाबूसे कहा—मँझले दादा, आपको एक बात बताये बिना काम नहीं चलेगा। यद्यपि मुँहपर लानेमें छाती फटी जा रही है, तो भी न बतानेका भी कोई उपाय नहीं है। अगर आप भरोसा दें, तो हम खोलकर कह सकते हैं।

निर्विरोधी व्रज बाबू भाईकी इस स-विनय भूमिकासे घबरा उठे। बोले—यह क्या कहते हो नवीन? भरोसा देनेकी क्या बात है। कहो अभी कह डालो—तुम

लोगोंको क्या सुविधा-असुविधा हो रही है? वही तो—कैसी मुश्किल है—तुम लोग अन्तको—

व्रज बाबूके पूरी बात भाषामें व्यक्त कर न कर पाने पर भी तीक्ष्णबुद्धि नवीनचन्द्र और भतीजोंने उनका मनोभाव समझ लिया। उत्साहित होकर नवीन बाबूने और भी आडंबरके साथ लम्बी भूमिका बाँध दी। बहुत-सी फिजूल बातें और अपनी निर्दोषिताके बहुतसे प्रमाण पेश करते हुए उन्होंने जो कुछ जताया उसका सारांश यह है कि व्रज बाबू और रेणुको अगर नवीन बाबू और भतीजे अपने परिवारमें—अपने घरमें स्थान देते हैं तो गाँवमें उन्हें पतित होना पड़ेगा। गाँव-भरके सभी लोग जानते हैं कि इस रेणुको ही तीन वर्षकी अवस्थामें छोड़कर उसकी माता एक दूरके नातेके ननदोई रमणी बाबूके साथ प्रकट रूपसे कुल त्याग कर गई थी। सिर्फ बारह तेरह वर्ष पहलेकी घटना है। गाँवका कोई भी इस बातको नहीं भूला है।

व्रज बाबू विवर्णमुख सिर झुकाये बैठे रहे। उनके मुखका वह असहाय भाव देखकर बहुत बड़ा कठिन-हृदय व्यक्ति भी व्यथित हुए बिना नहीं रह सकता। नवीनचन्द्रके हृदयको भी चोट पहुँची। किन्तु वह क्या कर सकते हैं! एकमात्र आशा यह थी कि व्रज बाबू बहुत बड़े धनी हैं—गाँवमें धन खर्च कर सकने पर बहुतोंका मुँह बंद किया जा सकता है। किन्तु व्रज बाबू आज कंगाल हैं, धनहीन हैं। अतएव सयानी लड़कीको इतने दिन अविवाहित रखनेका अपराध गाँवमें कोई भी क्षमा नहीं करेगा—खास कर जिस कन्याकी लगन चढ़ जाने पर भी ब्याह नहीं हुआ और जिसकी माता कलंकिनी है।

नई-बहूके गृह-त्याग करने पर गाँवके निन्दा-आन्दोलनके मारे ही व्रज बाबूको गाँवका घर छोड़कर गोविन्दजी और शिशु कन्याके साथ कलकत्तेमें जाकर रहनेके लिए लाचार होना पड़ा था। उसी गाँवमें लौटकर आनेके पहले इस बातका खयाल क्यों नहीं आया, यह सोचकर व्रज बाबूको सचमुच बड़ा विस्मय हुआ।

देशके इस अप्रिय आन्दोलनकी खबर रेणुको नहीं थी। होती, तो वह व्रज बाबूको गाँव आनेकी सलाह कभी न देती। किन्तु इस अवस्थामें यहाँ रहा भी तो नहीं जा सकता। अब जायँ तो कहाँ?

व्रज वाबूके चिन्ता-जालमें बाधा देकर नवीन बाबू और कृतज्ञ भतीजे बार-बार दुःख प्रकट करके कहने लगे—वे सम्पूर्ण निरपराध हैं, कन्यासहित व्रज बाबूको अपने बीच सम्मानके साथ ग्रहण करनेका अत्यन्त आग्रह रहने पर भी कोई उपाय नहीं है—यह हम लोगोंके दुर्भाग्यके सिवा और कुछ नहीं है।

कुंठित होकर व्रज बाबूने कहा—नबू, तुम लोग लज्जित न होना। मैं सब समझ गया हूँ। मुझे पहले ही यह सोच लेना चाहिए था भाई। चाहे जो हो, जन पड़ता है, यह भी गोविन्दजीकी ही परीक्षा है। देखूँ, उनकी इच्छा अब कहाँ ले जाती है।—

व्रज बाबूके ज्येष्ठ भतीजे बोले—लेकिन मँझले काका, सबसे अधिक चिन्ता हम लोगोंको रेणुके ब्याहके लिए है।

व्रज बाबूने धीर स्वरमें जवाब दिया—इसकी कुछ चिन्ता न करो भैया, मैं उसे और अपने गोविन्दजीको लेकर वृन्दावन चला जाऊँगा। गोविन्दजीके राज्यमें माताके अपराधके लिए लड़कीको कोई दोषी नहीं ठहराता। जब तक वृन्दावन जानेकी व्यवस्था न कर सकूँगा, तब तक यहीं, इस बैठक-खानेके कमरेमें ही, अलग रहूँगा। किसीको कोई असुविधा न होने दूँगा।

जातिवालोंकी बातचीतसे यह जाना गया कि भीतरी घरके ठाकुरद्वारेमें अपनी पहलेकी वेदीपर गोविन्दजीको स्थापित करनेमें कोई बाधा नहीं है। बाधा रेणुके ठाकुर-घरमें प्रवेश करने और ठाकुरजीका भोग तैयार करनेमें है।

* * *

मुँहसे कुछ भी क्यों न कहें, इस घटनासे व्रज बाबूको यथार्थ ही मर्म-पीड़ा हुई। उनके सारे जीवनके प्रधान लक्ष्य, परम प्रियतम गोविन्दजी भी अपनी पूजाके मन्दिरमें प्रवेश नहीं कर सके, बैठकखानेके घरमें पड़े रहे, इस क्षोभ और दुःखसे व्रजबाबू मुह्यमान हो गये। संसारकी अनेक उलट-फेर यहाँतक कि सर्वस्व चले जाने और गृहहीन होनेकी अवस्था भी उनके हृदयको इस तरह व्याकुल नहीं कर सकी थी।

गाँवमें जबसे आई, रेणुको बिल्कुल ही अवकाश नहीं रहा। गोविंदजीकी सेवा और पिताकी देखभाल सेवा-सुश्रूषामें ही उसे सर्वदा व्यस्त रहना पड़ता है। अन्य किसी भी बात या कामकी ओर देखनेका समय बहुत कम है, शायद और किसी ओर ध्यान देनेकी उसकी इच्छा भी नहीं है।

सदर-मकानके दोनों कमरोंमेंसे एक जगह गोविन्दजीके लिए और दूसरी पिताके लिए उसने ठीक कर ली है। पिताके शयनगृहके ही एक किनारे एक कम चौड़े तख्तपर ही उसने अपने सोनेकी व्यवस्था कर ली है। छोटी छोटी दो कोठरियोंमेंसे एकमें खाने-पीनेकी सामग्रीका भंडार है और दूसरीमें रसोई बनती है। आँगनके एक कोनेमें थोड़ी-सी जगह बेंदेसे घेरकर रेणुने स्नानकी जगह बना ली है।

व्रज बाबू व्याकुल चित्तसे सोचते हैं—गोविन्द, अन्तको मैंने तुमको ही तुम्हारे अपने मन्दिरके बाहर लाकर अपमानके बीच डाल दिया! यह क्या मुझसे उचित काम हुआ प्रभु? किन्तु मेरी रेणुका तुम्हारे सिवा और कोई जो नहीं है। उसे तुम्हारी सेवासे वंचित कर देता तो वह क्या लेकर जीवित रहती? पतित-पावन, अन्तको क्या तुम भी हम लोगोंके साथ पतित बन गये?

संध्या-आरतीके समय आरती करते-करते व्रज बाबू इसी तरहकी चिन्तासे आत्मविस्मृत हो पड़ते हैं। दाहिने हाथका पंचप्रदीप (आरती) और बाएं हाथका घंटा निश्चल हो जाता है। गालोंसे आंसू ढुलक पड़ते हैं, उनका खयाल ही नहीं रहता।

रेणु पुकारती है—बाबूजी!

व्रज बाबू चौंक उठते हैं। सलज्ज त्रस्त हाथसे फिर आरती करने लगते हैं।

कभी संशयसे उमड़ते हुए चित्तसे सोचते हैं—गोविन्द, सन्तानके स्नेहसे अंधे होकर तुम्हारे प्रति चूक करके अधर्मका—प्रत्यवायका भागी तो मैं नहीं हुआ प्रभु!

इस तरह अत्यधिक मानसिक संघातसे व्रज बाबूका चित्त जब अस्तव्यस्त हो रहा था, उसी समय एक दुर्घटना हो गई। एक दिन दोपहरको पूजाकी कोठरीसे बाहर निकलकर आते ही व्रज बाबूके सिरमें चक्कर आ गया। वह पृथ्वीपर गिरकर मूर्च्छित-से हो गये। रेणु यद्यपि भय, आशंका और उद्वेगसे कातर हो उठी, तथापि अपनी स्वाभाविक धीरताके साथ ही आधे बेहोश पितासे उसने पूछा—बाबूजी, नवू काकाको या दादाको बुलाऊं?

व्रज बाबूने बड़े कष्टसे केवल राजूका नाम लिया।

रेणुने उसी दिन राखालको आनेके लिए तार कर दिया।

गाँवके डाक्टर मेडिकल कालिजकी छठे सालकी एम्. बी. परीक्षा फेल थे। गाँवमें उनकी डाक्टरी कम नहीं चलती। व्रज बाबूको देखकर, परीक्षा करके

बोले—मस्तिष्कमें रक्तका दवाब बहुत अधिक बढ़ जानेसे ऐसा हुआ है। सावधानीके साथ सेवा और चिकित्सा की जाय तो अबकी बच जायँगे। किन्तु भविष्यमें फिर ऐसी घटना हुई तो फिर जीवनकी आशा कम ही है। अबसे विशेष सावधान रहनेकी जरूरत है।

.. ...राखाल अपने मित्र योगेशके मेससे उस दिन रातको साढ़े ग्यारह बजेके लगभग डेरेको लौटा। योगेशने किसी तरह भोजन कराये बिना नहीं छोड़ा।

दिल्लीमें कहीं एक जगह विवाहके योग्य क्वाँरी लड़कियाँ राखालको, उसके आपत्ति करनेपर भी, दिखाई गई थीं। उन्हींमेंसे एक लड़कीके काका कलकत्तेके एक दफ्तरमें नौकर हैं। दिल्लीसे कन्याके पिताकी ताकीदके माफिक कन्याके काकाने आकर योगेशको पकड़ा है—राखालराज बाबूके साथ उनकी भतीजीका ब्याह उसे करा ही देना होगा। उस भले आदमीने इस तरह योगेशका पीछा पकड़ा है, वह इस तरह अनुनय-विनय कर रहा है कि योगेश खुद अगर विवाहित और दूसरी जातिका न होता तो शायद इस अरक्षणीया कन्याकी रक्षाका भार ग्रहण करके उसके काकाके इस अनुनय-विनयके उत्पातसे आत्मरक्षा कर डालता।

कन्याका एक फोटो भी योगेशने राखालको दिखाया है। लड़कीका चेहरा राखालको कहीं ठीक याद न आ सके, इसलिए काका यह फोटो योगेशके पास छोड़ गये हैं।

राखालने इस प्रसगको हँसकर ही उड़ा दिया था; किन्तु योगेशचन्द्र नाछोड़ बन्दा है। उसने प्राणपणसे तर्क और युक्तिके द्वारा समझाना शुरू कर दिया कि अगर कन्याकी अवस्था, चेहरा, शिक्षा और उसके पिताके कुलके सम्बन्धमें कोई बात नापसन्द न हो तो वह यह ब्याह क्यों नहीं करेगा?

योगेश जानता है कि राखाल ब्याहमें दहेज लेनेकी प्रथाको हृदयसे घृणा करता है। संसारमें राखालकी अपेक्षा कम आमदनीवाले भी ब्याह करके स्त्री-पुत्र-कन्या आदिका पालन-पोषण करते हैं। स्वयं योगेशचन्द्र ही तो उन्हींमेंसे एक है। हाँ, मध्यवित्त विवाहित व्यक्तिकी जीवन-यात्रा-प्रणाली बड़े आदमियोंके अनुकरणपर शायद नहीं चल सकती जैसी कि उसकी अविवाहित अवस्थामें चलती है। किसी मित्रके विवाहमें या बान्धवीके जन्मदिनपर न्यूमार्केटके फूलोंके बास्केट अथवा मरक्कोे चमड़ेकी जिल्दवाले मूल्यवान् राजसंस्करणकी रवीन्द्र ग्रन्थावली या शेली और ब्राउनिंगके ग्रन्थ उपहार देनेमें बाधा पड़ सकती है-

विलायती सैलूनमें आठ आने देकर बाल कटानेके बदले देशी नाईसे दो आनेमें बाल कटानेके लिए तब शायद लाचार होना पड़ सकता है। किन्तु विवाहकी योग्यतासे सम्पन्न पुरुष अगर ब्याहके योग्य अवस्थामें केवल जिम्मेदारी उठानेके डरसे अथवा अपनी विलास और बाधाहीन स्वतन्त्रतामें बाधा पड़नेकी आशंकासे ब्याह न करना चाहे, तो कहना होगा कि उससे बढ़कर कायर संसारमें विरला ही होगा। हिसाब लगाकर देखा जाता है कि ब्याहके लिए अयोग्य व्यक्ति ब्याह करके जितना अपराध करते हैं उनसे अधिक दोषी और अश्रद्धाके पात्र वे हैं जो योग्यता रहनेपर भी अपनी स्वतन्त्रतामें विघ्न या बन्धनकी आशङ्कासे और जिम्मेदारीसे बचनेके लिए ही चिर-कुमार रहना चाहते हैं, इत्यादि।

राखाल निर्विकार भावसे हँसते हुए मुखसे अपने बंधुकी भर्त्सना और सब युक्तियोंको चुपचाप हजम कर गया। अन्तको भोजन आदिके लिए डेरेको लौटते समय योगेशके बारबार जोर देने पर जवाबमें उसने कहा—मुझे जरा सोचकर देखनेका समय दो भाई!

योगेशने उत्साहित होकर कहा—अच्छा अच्छा, यह तो अच्छी ही बात है। तो फिर अन्दाजन कब तक तुम्हारा उत्तर मिल जायगा, बता दो। अगले परसों? क्यों?

राखालने हँसकर कहा—इतना अधिक समय क्यों देते हो? कहो न अगले प्रातःकाल—

योगेशने कुछ लज्जित होकर कहा—ना ना, यह बात नहीं है। लेकिन जानते हो, उन्हें कन्याके ब्याहकी बड़ी चिन्ता है न! कुछ ज्यादा व्याकुल हो रहे हैं। तुम्हारा यह सोचकर देखनेका थोड़ा समय भी उनके लिए वैसी ही दम घोटनेवाली प्रतीक्षा होती है, जैसी खूनी असामीकी जजकी रायके लिए होती है। इसीसे कह रहा था।

राखालने कहा—तुम व्यस्त न होना। मैं कुछ दिनोंमें ही अपना निर्णय बता जाऊँगा।

योगेशको प्रसन्न करके राखाल उसके मेससे जब बाहर निकला तब रातके दस बज गये थे। मित्रके साग्रह अनुरोधकी बात सोचते सोचते वह रास्ता चलने लगा।

विवाहकी पात्रीको वह दिल्लीमें अपनी आखसे देख आया है। अवस्था यही अठारह-उन्नीस वर्षकी होगी। खूब मोटी-सोटी और गदबदी है। रंग गोरा न होनेपर भी उसे काला नहीं कहा जा सकता। चेहरेपर स्वास्थ्यका लावण्य है। मोटे तौरपर लिखी पढी भी है। सुईके शिल्प और रसोई बनाने आदि घरके कामोंमें अच्छी तरह निपुण कहकर कन्याके पिताने उच्छ्वसित सर्टीफिकेट अपने मुखसे बिना माँगे ही दाखिल कर दिया था।

लड़की राखाल और योगेशको नमस्कार करके बहुत ही गम्भीर मुखसे, और उससे भी अधिक सिर झुकाये निश्चेष्ट जड़-सी बैठी थी। यही लड़की अगर विधाताके कुचक्रसे—दैव-दुर्विपाकसे—उसकी पत्नी होकर घरमें आवे तो कैसी फबेगी? लड़कीका वह अति गम्भीर मुख और ऊँचा करके बाँधे गये टीले-जैसे बड़े-जूड़ेके साथ बहुत ही झुका हुआ सिर याद आ जानेसे राखालको अकस्मात् बड़ी हँसी आई।

जीवनकी सब अवस्थाओंमें, सब प्रकारके सुख-दु:खमें पास खड़े होकर हँसते हुए मुखसे आश्वासन दे सके—धीरज बँधा सके, आनन्द और तृप्ति दे सके, क्या ऐसी आशा की जा सकती है इस लड़कीसे? क्या ऐसा भरोसा किया जा सकता है इस लड़कीके ऊपर?—दुर-दुर।

दिल्लीमें और भी जो कई लड़कियाँ राखालको दिखाई गई थीं, वे भी कमोवेश ऐसी ही थीं। राखालके मानस-पटलमें सोचते-सोचते बहुत सी बालिका, किशोरी और तरुणी कन्याओंके रूपकी तरह तरहकी छवि प्रकट होने लगीं किन्तु उन सबमें एक भी ऐसी लड़की वह स्मरण नहीं कर सका, जिसके ऊपर हमेशाके लिए अपने जीवनके सुख-दुःखका सारा भार डालकर निश्चिन्त निर्भरता प्राप्त करना सम्भव हो।

सब चेहरोंकी आड़में एक कोमल शान्त और बुद्धिसे प्रदीप्त सुन्दर मुख बार बार उसके मानस-पटपर उदय होने लगा। अथ च विवाहकी पात्री चुननेके मामलेमें वह मुख याद पड़नेका कोई अर्थ नहीं होता—इस बातको और किसीकी अपेक्षा राखाल आप ही अच्छी तरह जानता है। किन्तु वह चाहे जो हो, राखालके प्रति गहरे विश्वास और श्रद्धासे उस मुखको कान्ति दी और उदारको है, जिसकी आज और किसीके साथ तुलना नहीं की जा सकती।

केवल विश्वास और श्रद्धा ही नहीं, बहुत ही निकटके आत्मीय जनकी-सी गहरी सहानुभूतिका माधुर्य, जो उन दोनों नेत्रोंकी स्निग्ध दृष्टि और निर्दोष स्वच्छ हँसीके ढंगसे आप ही आप बरस पड़ता था, उनके साथ संसारमें और किसीकी क्या तुलना की जा सकती है? राखाल उसीकी एकान्त श्रद्धासे युक्त अकुंठ निर्भरता प्राप्त करके ही तो आज अपनेको विवाहके दायित्वसे सम्पन्न व्यक्ति, क्षण भरके लिए भी, सोचनेमें समर्थ हुआ है।

सोचते-सोचते चिन्तनके मूलसूत्रको भूल कर राखाल शारदाके ही बारेमें सोचने लगा।

शारदाने उस दिन रातको कहा था—आप अनेक लोगोंका बहुत कुछ करते हैं, मेरा भी उपकार किया है, उससे आपकी हानि नहीं हुई। अगर मैं जीती रही तो केवल इतना ही जान रखना चाहती हूँ।

किन्तु सचमुच क्या यही बात है? राखाल बहुतोंका ही बहुत कुछ करता है, यह बात शायद सत्य है; शारदाका भी साधारण कुछ उपकार या सहायता की है; किन्तु उससे क्या राखालकी कोई क्षति नहीं हुई? यदि क्षति न होती तो क्यों वह उस दिन रातको इस तरह अपनेको रोकनेमें—आत्मसंवरणमें—असमर्थ हो गया? उसने केवल शारदाका ही रूढ़ तिरस्कार नहीं किया, अपनी मातृस्वरूपिणी नई-मा तकको कटु बात सुना दी, सो भी एक दूसरे आदमीके सामने ही!

शारदा अगर तारकका यत्न-आदर करती है, तो उसमें राखालके क्षुब्ध होनेकी क्या बात है? शारदाके लिए राखाल भी जो है, तारक भी वही है। बल्कि राखालकी अपेक्षा तारक विद्वान् है, बुद्धिमान् है, विचक्षण है। उसके इन सब गुणोंका ही उस दिन शारदाने उल्लेख किया था। इसमें उसने ऐसा क्या अपराध किया था जिसके लिए राखाल इस तरह जल उठा—आपेसे बाहर हो गया? उसने क्यों अपनेको अकस्मात् वंचित और क्षतिग्रस्त अनुभव किया?

सोचते-सोचते उसका मुख, आँखें और कान जलने लगे। पासके ही एक पार्कके भीतर प्रवेश करके एकान्त कोनेमें पड़ी हुई एक सूनी बेंचपर राखाल लम्बा होकर लेट गया।

आँखें मूँदकर वह सोचने लगा—दो-तीन दिन पहले एस्प्लनेड रोडके मोड़पर वह ट्रामकी प्रतीक्षामें खड़ा था। एक चलती हुई मोटरके भीतरसे झुककर विमल

वाबूने हाथ हिलाकर उसकी दृष्टिको अपनी ओर खींचा था। राखालने जब विमल बाबूकी ओर ताका, तब उन्होंने मोटर रोककर हाथके इशारेसे उसे अपने पास बुलाया और वे उतरकर राहमें खड़े हो गये। राखालके पास आनेपर विमल बाबूने सबसे पहले पूछा था—अपने काका बाबू और रेणुका क्या कोई पत्र तुमने पाया है राजू?

बहुत ही विस्मित होकर राखालने कहा था—क्यों, बताइए तो?

विमल बाबूने कहा था—उनके साथ मेरा परिचय है। वहाँ गाँवमें वे कैसे हैं, उसकी कोई खबर नहीं मिली, इसीलिए पूछता हूँ।

राखालने जवाब दिया था—वे लोग कुशलसे ही हैं।

विमल बाबूने कहा था— चिट्ठी कब आई?

उसने उत्तर दिया था—यही कोई तीन-चार दिन हुए।

इसके बाद मौखिक सौजन्यके रूपमें उसने विमल बाबूसे पूछा था कि आप कहाँ जा रहे हैं?

विमल बाबूने उत्तर दिया था—जरा शारदा बेटीके हालचाल लेने आ रहा हूँ।

इससे अत्यन्त विस्मित होकर वह अकस्मात् पूछ बैठा था—कौन शारदा?

विमल बाबूको कुछ आश्चर्य हुआ। उन्होंने जवाब दिया—शारदाको तो तुम जानते हो!

राखालने शुष्क कण्ठसे कहा था—वह तो यहाँ नहीं है। नई-माके साथ तारकके पास हरिनपुर गई है।

विमल बाबूने कहा था—यह क्या? तुम क्या नहीं जानते कि शारदा तुम्हारी नई-माके साथ हरिनपुर नहीं गई?

राखालने उत्तर दिया था—जी नहीं। मैं उनके जानेके पहले दिन रात तक शारदाका वहाँ जाना पक्का सुन आया था।

विमल बाबूने कहा था—पक्का जरूर था, लेकिन मैंने स्टेशन जाकर देखा, शारदा नहीं आई। तुम्हारी नई-माने कहा—उसके जानेका उपाय नहीं है। मुझसे जाते समय कह गईं, शारदा अकेली है, बीच बीचमें उसकी खबर लेते रहना। इसीसे बीच बीचमें मैं उसकी खबर लेने जाता हूँ।

राखाल फिर प्रश्न कर बैठा—आप जानते हैं कि शारदा हरिनपुर क्यों नहीं गई?

निमल बाबूने कहा—शारदासे पूछने पर सुना कि उसके लिए मालिकके हुक्मके बिना परसे हिल सकनेका कोई उपाय नहीं है।

राखालने विमूढ़ भावसे कह डाला—कौन मालिक?

विमल बाबूने उत्तर दिया था—यह तो मैं ठीक ठीक नहीं जानता। शायद उसका लापता स्वामी ही हो।

राखाल आँखें मूदे पार्ककी बेंचपर लेटे लेटे एस्प्लेनेडपर विमल बाबूके साथकी मुलाकात और बातचीतको परानुपरूपसे सोचने-विचारने लगा। शारदा हरिनपुर क्यों नहीं गई? उसने कहा है कि मालिकके हुक्मके बिना अन्यत्र जानेका उपाय नहीं। वह मालिक कौन है? विमल बाबू या और कोई शारदाके लापता स्वामी जीवन बाबूको वह व्यक्ति भले ही अनुमान कर ले, किन्तु एकमात्र राखाल स्वयं निश्चित रूपसे जानता है कि और चाहे जिसको शारदा अपना मालिक क्यों न बतलावे, पर भागे हुए विश्वासघाती जीवन चक्रवर्त्तीको उसने अपना मालिक कभी नहीं कहा।

उसे समझनेको कुछ बाकी नहीं रहा। तो भी राखालके मनके भीतर कहीं-पर जैसे कोई विरोध बाधा देने लगा।

ग्यारह बज जानेपर पार्कके चौकीदारने आकर राखालसे चले जानेके लिए कहा। उठकर बोझिल मनसे वह जब डेरेपर पहुँचा, तब साढ़े-ग्यारह बज चुके थे। बिस्तरपर लेटकर सोनेके पहले उसने मनमें पक्का कर लिया कि कल सबेरे उठते ही वह एक बार शारदासे मिल आवेगा। चाय डेरेपर नहीं पियेगा। शारदासे ही चाय तैयार कर देनेके लिए कहेगा।

इस सिद्धान्तपर पहुचनेकेबाद राखाल मन ही मन बहुत ही स्वच्छन्दताका अनुभव करने लगा। इसके बाद अनेक संभव-असंभव कल्पनाएं करते करते वह सो गया।

१८

दूसरे दिन जब राखालकी नींद खुली, तब दिन बहुत चढ़ आया था। फेरीवालोंकी ऊँची आवाजोंसे गली गूज रही थी। दीवालकी घड़ीकी ओर ताककर राखाल कुछ लज्जित भावसे उठ बैठा। मुँह-हाथ धो चुकनेके बाद बाल बनानेका सामान निकालकर खत बनाया। धुली धोती और कुर्ता निकालकर

उसने कपड़े बदले। मन लगाकर बालोंपर ब्रश फेरते-फेरते उसे चाय पीनेका तगादा करती हुई जम्हाई बार-बार आने लगी। हँसकर स्टोवकी ओर ताककर राखालने धीरेसे कहा—तुम्हें इस वक्त छुट्टी है।

छोटे-मोटे काम यथासम्भव फुर्तीसे वार्निश किये हुए चमचमाते जूतोंको पुराने रद्दी मैले रूमालसे अच्छी तरह झाड़-पोंछकर पैरोंमें पहननेका उद्योग कर ही रहा था कि बाहरसे डाक-पियूनने पुकारा—तार है।

राखालने जूते वहीं पड़े रहने दिये और उत्सुक आग्रहसे दौड़ पड़ा। दस्तखत करके तार खोलकर पढ़ते-पढ़ते दुश्चिन्तासे उसके चेहरेपर अँधेरा छा गया। ब्रज बाबू बहुत बीमार हैं, रेणुने शीघ्र आनेका अनुरोध किया है। तार हाथमें लिये, जरा देर वह द्विधाग्रस्त होकर कमरेमें खड़ा रहा। सोचने लगा, अब शारदासे मिलने जाय या नहीं। टाइमटेबिल निकालकर ट्रेनका समय देख डाला। नौ बजे एक ट्रेन है, लेकिन वह पकड़ी न जा सकेगी। साढ़े आठ हो चुके हैं। बेदाना, अंगूर, सन्तरे आदि फल और रोगीके लिए आवश्यक और और चीजें भी खरीदनी होंगी। अतएव नौ बजेकी गाड़ी मिलना असम्भव है। अगली ट्रेन साढ़े बारहकी है। उसके लिए काफी समय है। दरवाजेपर ताला लगाकर राखाल चिन्तित मुखसे शारदासे मिलनेके लिए चल पड़ा। कलकत्ता छोड़कर बाहर जानेके पहले एक बार उसे यह बता जाना उचित है। सोचा कि वहीं ही जल्दीसे चाय पीकर लौटते वक्त जरूरतकी चीजें खरीदकर साढ़े बारहकी गाड़ीसे रवाना हो जाऊँगा।

शारदाके डेरेपर पहुँचकर राखालने देखा, दरवाजेके सामनेके चबूतरेपर चटाई बिछाये शारदा चार-पाँच छोटे छोटे लड़की लड़कोंको पढ़ा रही है। कोई स्लेटपर लिख रहा है, कोई हिज्जे सीख रहा है, कोई पद्य रट रहा है। राखालको देखकर शारदा न तो व्यस्त हुई और न विस्मित। धीरे धीरे उठकर खड़ी हो गई और पढ़नेवाले बच्चोंसे बोली—जाओ, अब तुम लोगोंको छुट्टी है। आज दोपहरको पढ़ाई होगी।

बच्चोंके चले जानेपर शारदाने चबूतरेसे आँगनमें उतरकर राखालको प्रणाम किया और कहा—खड़े क्यों हैं, भीतर चलकर बैठिए।

राखालने शायद मन-ही-मन आशा की थी कि शारदा उसे इस तरह अचिन्तित रूपसे अचानक आया देखकर विस्मय और आनन्दसे अभिभूत हो

जायगी। किन्तु शारदाके व्यवहारसे जान पड़ा, जैसे वह पहलेहीसे जानती है कि वह इस समय आवेगा।

एक तो रेणुके टेलीग्रामसे मन उद्विग्न और चचल था, उसपर शारदाकी सहज शान्त अभ्यर्थनाने राखालके चित्तको विरूप कर दिया। मनके भीतर एक अकारण अभिमान घुमड़ने लगा, जिसके कारणका स्पष्ट निर्देश करना कठिन है।

राखालने कहा—सुना, तुम नई-माके साथ हरिनपुर नहीं गईं?

शारदा चुप रही।

उत्तर न पाकर राखालने फिर कहा—क्यों नहीं गईं जान सकता हूँ कि क्या?

शारदाने फिर भी कुछ उत्तर नहीं दिया।

राखालने कहा—नई-माको अकेली न भेजकर उनके साथ जाना क्या तुम्हें उचित न था?

शारदाको कोई उत्तर देते न देखकर राखालके मनकी गर्मी उत्तरोत्तर बढ़नी जा रही थी। चुप्पी तोड़नेके लिए ही जान पड़ता है, अबकी वह कह बैठा—मेरा ऋण तो उस दिन तुमने कौड़ी कौड़ी चुका दिया है, अतएव मेरी बातका उत्तर न देनेसे भी चल जायगा, किन्तु नई-माका ऋण भी क्या इसी बीचमें चुकता कर चुकी हो शारदा?

शारदाके मुखपर वेदनाके चिह्न साफ उभर आये। तो भी उसने इस कठिन उपहासका उत्तर नहीं दिया। धीमी आवाजसे कहा, आपको जो कुछ कहना है वह भीतर आकर कहिए। यहाँ खड़े होकर हाटके बीच न कहिए। घरमें चलकर बैठिए। मैं अभी आती हूँ। चले न जाइएगा, यह मेरा अनुरोध है।

कहते कहते ही शारदा दम भरमें दालानके दूसरे छोरपर बेड़ेसे घिरे हुए एक दूसरे किराएदारके हिस्सेमें प्रवेश करके अन्तर्धान हो गई। विरक्त राखाल उसके उद्देशसे व्यस्त स्वरमें कहने लगा—ना, ना, बैठनेकी मुझे बिल्कुल ही फुर्सत नहीं है। अभी जाना होगा। जो कहने आया हूँ उसे सुन जाओ—

किन्तु शारदा तब तक चली गई थी। राखाल दमभर आँगनमें खड़े रहकर इस दुविधामें पड़ गया कि और भी कुछ देर अपेक्षा करे या चला जाय। अन्तको विरक्त चित्तसे वह शारदाकी कोठरीमें जाकर बैठ गया। घरमें पाँच जनोंके मकानमें चिल्लाकर बारबार शारदाको पुकारा भी नहीं जा सकता और खड़े रहना और भी अशोभन है। राखाल कोठरीमें जाकर बैठा, उसके एक मिनट

चाद ही शारदा छोटी-सी अल्युमीनियमकी केटलीके हाथेको साड़ीके आँचलसे पकड़े हुए आई और उसने कोठरीके कोनेमें केटली रखकर जल्दीसे खिड़कीके ऊपरके आलेसे एक सफेद चमकती हुई कॉंचकी प्याली, तश्तरी और एक नया चम्मच उतारा। छोटा-सा चायका एक डिब्बा भी उतारा। चायका डिब्बा बिलकुल नया था, खोला नहीं गया था। शारदाने जल्दीसे लेबल फाड़कर और डिब्बा खोलकर चायकी पत्ती केटलीमें डाली और उसे ढक दिया। इसके बाद प्याली, तश्तरी और चम्मच बाहरसे धो लाई और उसीके साथ कागजकी पुड़ियामें चीनी और छोटेसे काँसेके गिलासमें ताजा दूध भी।

चौकीपर बैठकर राखाल चुपचाप यह सब देख रहा था। दिन अधिक चढ आया था, लेकिन अभी तक चाय नहीं पी गई थी। सिरमें अच्छी तरह दर्द होने ही वाला था। अतएव शारदाका यह चायका आयोजन देखकर उसकी विरक्ति और अभिमान बहुत कुछ कम हो गया। तथापि शान बनाये रखनेके लिए ही बोला—इतने समारोहसे यह किसके लिए चाय बना जा रही है?

शारदाने प्यालीमें चाय छानते हुए मुसकाकर गर्दन घुमाकर एक बार राखालकी ओर देखा। इसके बाद फिर अपने काममें लग गई।

मन-ही-मन लज्जित होनेपर भी राखाल यह नहीं कह सका कि मैं चाय नहीं पियूँगा। शारदाने इतनेमें दूध और चीनी मिली हुई सुनहले रंगकी गर्म चायकी प्याली चम्मच चलाते चलाते तश्तरीसमेत राखालके सामने रख दी।

लेनेमें थोड़ी आनाकानी करके राखालने कहा—इसके लिए इतनी देर मुझे बिठाये रखकर तुमने ठीक नहीं किया शारदा। इसकी कोई जरूरत नहीं थी।

शारदाने बहुत ही भोला मुँह बनाकर कहा—मैं यह नहीं जानती थी। अच्छा तो रहने दीजिए, लौटा ले जाती हूँ।

होठोंपर दबी हुई शरारतकी हँसी थी। राखाल इस हँसीको पहचानता है उसका हृदय भीतरसे काँप उठा। हाथ बढ़ाकर बोला—नाः, जब मेरा नाम करके बना ही ली है, तब लौटा ले जाना ठीक न होगा।

अबकी होठ दबाकर हँसते हँसते शारदाने चायका प्याला उसके हाथमें दे दिया और चुपचाप बाहर चली गई। थोड़ी देरके बाद सफेद काँचकी एक प्लेटमें कुछ गर्मागर्म सिंघाड़े और दो-तीन राजभोग रसगुल्ले लेकर लौट आई। राखालने प्लेटपर नजर डालकर कहा—यह सब और क्यों लाई शारदा?

शारदाने गम्भीर मुख बनाकर कहा—चायके साथ नाश्तेके लिए। लेकिन चायका प्याला अब खाली कर देना होगा। और एक प्याला चाय आपके लिए छान दूँ। मेरे यहाँ दूसरा प्याला नहीं है।

राखालने अबकी कोई आपत्ति नहीं उठाई। एक साँसमें बची हुई चाय पीकर प्याला फर्शपर रख दिया। इसके बाद बिना विवादके नाश्तेकी प्लेट उठा ली।

शारदा दूसरा चायका प्याला बनाकर सामने आकर जब खड़ी हुई तब सिर उठाये बिना ही राखालने प्रश्न किया—अच्छा शारदा, तुम आप तो चाय पीती नहीं। घरमें चायका सामान किसके लिए रखा है?

शारदाने भोली सूरत बनाकर कहा—यही मान लो तारक बाबू—आबू—

राखालने कहा—ओः—समझ गया। और हाथका आधा खाया हुआ सिंघाड़ा समाप्त करके मिष्टान्नसहित प्लेट नीचे रख दी।

शारदा व्यस्त होकर, रुककर, अकृत्रिम व्यग्रताके साथ कह उठी—यह क्या? रसगुल्ले तो आपने छुए भी नहीं। यह न होगा देवता। उठाइए रकाबी। सबके सब न खानेसे मैं सिर पटककर प्राण दे दूँगी, कहे देती हूँ।

अकस्मात् शारदाके इस आन्तरिक चांचल्यसे राखालने भौंचक्का होकर विमूढ़की तरह छोड़ी हुई प्लेट उठाकर कहा—लेकिन मेरा सचमुच खानेको जी नहीं चाह रहा है। सब न खानेसे क्या यथार्थ ही तुम्हें कष्ट होगा?

शारदाका चेहरा लाल हो गया। उसने कहा—हाँ, हाँ, होगा। आप खाइए, कहती हूँ। रसगुल्ले आपको कितने पसन्द हैं, यह क्या मैं जानती नहीं? सवेरे चायके साथ गर्म सिंघाड़े आप रोज ही तो दूकानसे मँगाकर खाते हैं। बताइए, खाते हैं कि नहीं?

राखालने विस्मित होकर कौतुकसे कहा—लेकिन तुमने ये सब गुप्त खबरें कैसे जानीं?

शारदाने शान्त भावसे कहा—मैं जानती हूँ। इसके बाद हँसते-हँसते कहा—अच्छा, सच सच तो बताइए एक कप चायसे कभी आपका जी भरता है? दो प्याली चाय न होनेसे आपका मन सन्तुष्ट होता है कभी?

राखालने गालमें रसगुल्ला भरे भारी गलेसे कहा—हूँ, समझ गया। किन्तु तारक क्या तुमको यह भी बता गया है कि मैं डेरेमें चाय पीता हूँ ठीक ऐसे ही बड़े प्यालेमें?

बाद ही शारदा छोटी-सी अल्युमीनियमकी केटलीके हाथेको साड़ीके आँचलसे पकड़े हुए आई और उसने कोठरीके कोनेमें केटली रखकर जल्दीसे खिड़कीके ऊपरके आलेसे एक सफेद चमकती हुई काँचकी प्याली, तश्तरी और एक नया चम्मच उतारा। छोटा-सा चायका एक डिब्बा भी उतारा। चायका डिब्बा बिलकुल नया था, खोला नहीं गया था। शारदाने जल्दीसे लेबल फाड़कर और डिब्बा खोलकर चायकी पत्ती केटलीमें डाली और उसे ढक दिया। इसके बाद प्याली, तश्तरी और चम्मच बाहरसे धो लाई और उसीके साथ कागजकी पुड़ियामें चीनी और छोटेसे काँसेके गिलासमें ताजा दूध भी।

चौकीपर बैठकर राखाल चुपचाप यह सब देख रहा था। दिन अधिक चढ़ आया था, लेकिन अभी तक चाय नहीं पी गई थी। सिरमें अच्छी तरह दर्द होने ही वाला था। अतएव शारदाका यह चायका आयोजन देखकर उसकी विरक्ति और अभिमान बहुत कुछ कम हो गया। तथापि शान बनाये रखनेके लिए ही बोला—इतने समारोहसे यह किसके लिए चाय बना जा रही है?

शारदाने प्यालीमें चाय छानते हुए मुसकाकर गर्दन घुमाकर एक बार राखालकी ओर देखा। इसके बाद फिर अपने काममें लग गई।

मन-ही-मन लज्जित होनेपर भी राखाल यह नहीं कह सका कि मैं चाय नहीं पिऊँगा। शारदाने इतनेमें दूध और चीनी मिली हुई सुनहले रंगकी गर्म चायकी प्याली चम्मच चलाते चलाते तश्तरीसमेत राखालके सामने रख दी।

लेनेमें थोड़ी आनाकानी करके राखालने कहा—इसके लिए इतनी देर मुझे बिठाये रखकर तुमने ठीक नहीं किया शारदा। इसकी कोई जरूरत नहीं थी।

शारदाने बहुत ही भोला मुँह बनाकर कहा—मैं यह नहीं जानती थी। अच्छा तो रहने दीजिए, लौटा ले जाती हूँ।

होठोंपर दबी हुई शरारतकी हँसी थी। राखाल इस हँसीको पहचानता है उसका हृदय भीतरसे काँप उठा। हाथ बढ़ाकर बोला—नाः, जब मेरा नाम करके बना ही ली है, तब लौटा ले जाना ठीक न होगा।

अबकी होठ दबाकर हँसते हँसते शारदाने चायका प्याला उसके हाथमें दे दिया और चुपचाप बाहर चली गई। थोड़ी देरके बाद सफेद काँचकी एक प्लेटमें कुछ गर्मागर्म सिंघाड़े और दो-तीन राजभोग रसगुल्ले लेकर लौट आई। राखालने प्लेटपर नजर डालकर कहा—यह सब और क्यों लाई शारदा?

शारदाने गम्भीर मुख बनाकर कहा—चायके साथ नाश्तेके लिए। लेकिन चायका प्याला अब खाली कर देना होगा। और एक प्याला चाय आपके लिए छान दूँ। मेरे यहाँ दूसरा प्याला नहीं है।

राखालने अबकी कोई आपत्ति नहीं उठाई। एक साँसमें बची हुई चाय पीकर प्याला फर्शपर रख दिया। इसके बाद बिना विवादके नाश्तेकी प्लेट उठा ली।

शारदा दूसरा चायका प्याला बनाकर सामने आकर जब खड़ी हुई तब सिर उठाये बिना ही राखालने प्रश्न किया—अच्छा शारदा, तुम आप तो चाय पीती नहीं। घरमें चायका सामान किसके लिए रखा है?

शारदाने भोली सूरत बनाकर कहा—यही मान लो तारक बाबू—आबू—

राखालने कहा—ओः—समझ गया। और हाथका आधा खाया हुआ सिंघाड़ा समाप्त करके मिष्टान्नसहित प्लेट नीचे रख दी।

शारदा व्यस्त होकर, रुककर, अकृत्रिम व्यग्रताके साथ कह उठी—यह क्या? रसगुल्ले तो आपने छुए भी नहीं। यह न होगा देवता। उठाइए रकाबी। सबके सब न खानेसे मैं सिर पटककर प्राण दे दूँगी, कहे देती हूँ।

अकस्मात् शारदाके इस आन्तरिक चाञ्चल्यसे राखालने भौंचक्का होकर विमूढ़की तरह छोड़ी हुई प्लेट उठाकर कहा—लेकिन मेरा सचमुच खानेकी जी नहीं चाह रहा है। सब न खानेसे क्या यथार्थ ही तुम्हें कष्ट होगा?

शारदाका चेहरा लाल हो गया। उसने कहा—हाँ, हाँ, होगा। आप खाइए, कहती हूँ। रसगुल्ले आपको कितने पसन्द हैं, यह क्या मैं जानती नहीं? सबेरे चायके साथ गर्म सिंघाड़े आप रोज ही तो दूकानसे मँगाकर खाते हैं। बताइए, खाते हैं कि नहीं?

राखालने विस्मित होकर कौतुकसे कहा—लेकिन तुमने ये सब गुप्त खबरें कैसे जानीं?

शारदाने शान्त भावसे कहा—मैं जानती हूँ। इसके बाद हँसते-हँसते कहा—अच्छा, सच सच तो बताइए एक कप चायसे कभी आपका जी भरता है? दो प्याली चाय न होनेसे आपका मन सन्तुष्ट होता है कभी?

राखालने गालमें रसगुल्ला भरे भारी गलेसे कहा—हूँ, समझ गया। किन्तु तारक क्या तुमको यह भी बता गया है कि मैं डेरेमें चाय पीता हूँ ठीक ऐसे ही बड़े प्यालेमें?

शारदाने जवाब नहीं दिया। राखाल जब नाश्ता करके चाय पी चुका तब शारदाने उसे कुल्ला करनेको जल और सुपारी इलायची लाकर दी।

हाथ-मुँह पोंछनेके लिए एक साफ गमछा हाथमें देकर शारदाने कहा—आँगनके बीचमें खड़े होकर ऊँचे गलेसे जो कहना चाहते थे वह अब आँगनसे उतरकर कहिएगा, चलिए।

राखालने लज्जित होकर कहा—शारदा, देखता हूँ, आजकल तुम हर बातमें मेरा उपहास करती हो।

दाँतोंसे जीभ काटकर शारदाने कहा—बापरे! कहते क्या हैं देवता? इतना बड़ा दुस्साहस मुझमें नहीं है! ब्रह्मतेजसे भस्म न हो जाऊँगी?

राखालने गम्भीर मुखसे कहा—मैं यह जानने आया था कि तुम नई-माको अकेली हरिनपुर भेजकर किस बड़े भारी प्रयोजनसे कलकत्तेमें रह गई? तुमको इसका सच सच जवाब देना होगा।

शारदा दमभर चुप रही। फिर बोली—पहले आप मेरी एक बातका सच-सच जवाब दीजिएगा—बताइए?

राखाल—दूँगा।

शारदा—आप जो प्रश्न मुझसे कर रहे हैं, उसका जवाब क्या सचमुच आपको नहीं मालूम है?

राखाल मुश्किलमें पड़ गया। अस्पष्ट स्वीकार करते हुए बोला—मैंने जो अनुमान किया है, वह ठीक है या नहीं, यही जाननेके लिए तो तुमसे पूछता हूँ शारदा?

शारदाने कहा—तो आप जान रखिए, अपने मनसे आपने जो जवाब पाया है, वही सत्य है। अपना मन कभी मनुष्यको धोखा नहीं देता।

राखाल चुप होकर बैठा रहा। शारदा जूठा प्याला, तश्तरी और चम्मच उठाकर बाहर जा रही थी, उसी ओर देखकर राखालने कहा—तो भी तुम अपने मुखसे शायद स्पष्ट नहीं कह सकीं कि क्यों नहीं गई।

शारदाने हँसकर अपने हाथके जूठे प्लेट और प्याला-चम्मच इशारेसे दिखाकर कहा—इसीके लिए नहीं गई। अब तो आपको स्पष्ट उत्तर मिल गया? यह कह-कर वह बाहर चली गई।

राखाल चुप होकर बैठा रहा। सोचने लगा—कुछ दिन पहले उसने कहा

था कि ससारमें उसने अनेक शारदायें देखी हैं। किन्तु सचमुच क्या यही बात है? इस शारदा जैसी क्या एक भी और स्त्री उसने जीवनमें देखी है? जीवन-दानके मूल्यमें इस तरह चुपचाप जीवनका उत्सर्ग और कौन कर सकती है?

धुले हुए पात्र लाकर ताखके ऊपर सजाकर रखते रखते शारदाने कहा—पहले पहल जिस दिन मेरे घरमें आपने पैरोंकी धूल डाली थी, उस दिन आपको चाय बनाकर पिलानी चाही थी। आपने कहा था कि बेवक्त चाय पीना आपको सहन नहीं होता। नाश्ता ला देना चाहा था तो मेरा आग्रह देखकर आपको दया हो आई थी। कहा था कि फिर जिस दिन समय मिलेगा, मैं स्वय माँगकर तुम्हारी चाय पी जाऊँगा और जलपान कर जाऊँगा। तभीसे मैंने घरमें चायका सामान जुटाकर रख लिया है। जानती थी, एक-न-एक दिन आप इस घरमें बैठकर मेरे हाथकी चाय और जल-पान ग्रहण करेंगे ही। किन्तु आपने खुद मागकर खानेको जो कहा था वह मेरे भाग्यमें नहीं बदा था।

राखाल स्तब्ध होकर बैठा रहा। उसे खयाल आया कि आज वह चाय और नाश्ता माँगकर खानेका इरादा लेकर ही डेरेसे चला था।

बहुत क्षण चुपचाप ही कट गये। राखालको एकाएक याद आया कि बाजारसे सामान खरीदकर जल्दी ही डेरेपर लौटनेकी जरूरत है। चौंककर वह उठ खड़ा हुआ, बोला—अब मैं जाऊँगा शारदा, मुझे साढे बारह बजेकी गाड़ी पकड़नी है।

शारदाने विस्मित होकर पूछा—कहा जाइएगा?

राखालने कहा—काका बाबू बहुत बीमार हैं। रेणुने आनेके लिए तार भेजा है।

शारदाने चिन्तित मुखसे कहा—नई-माको खबर दी है?

राखालने कहा—ना। नई-मा तो हरिनपुरमें हैं। तुमको उनकी चिट्ठी-पत्री मिलती है क्या?

शारदाने कहा—हाँ। वह हर चिट्ठीमें काका बाबू और रेणुकी खबर पूछा करती हैं। आपकी कुशल भी हर चिट्ठीमें पूछती हैं।

राखालने कहा—तो यह खबर तुम्हीं उन्हें लिख दो। मुझे वे चिट्ठी-पत्री नहीं देतीं।

शारदाने कहा—लिख दूँगी। लेकिन आप जरा ठहरिए देवता, मुझे लौटनेमें अधिक देर न होगी।

शारदा टीनका बक्स खोलकर और कुछ कपड़े उसमेंसे निकालकर घरके बाहर चली गई। राखालको अधिक देर तक उसकी राह नहीं देखनी पड़ी। कुछ मिनटोंके भीतर ही शारदाने मिलकी साफ सारी और मोटे कपड़ेकी शेमीज पहनकर साफ-सुथरे वेषसे एक छोटी-सी पोटली हाथमें लिये कमरेमें प्रवेश किया।

विस्मित राखालने जैसे शारदाके मुँहकी ओर देखा, वैसे ही शारदाने कहा—मुझे भी आपके साथ जाना होगा देवता।

राखालने और अधिक विस्मित होकर कहा—तुम कहाँ जाओगी मेरे साथ?

"काका बाबू बीमार हैं। रेणु अभी बालिका है, अकेली है। मैं गई तो बहुत काम आ सकूँगी।"

राखालने भौंह सिकोड़कर कहा—लेकिन—

बीचमें रोककर शारदाने कहा—नाहीं न कीजिएगा देवता, आपके पैरों पड़ती हूँ। काका बाबू मुझे पहिचानते हैं, रेणु भी जानती है। मेरे जानेसे वे असन्तुष्ट न होंगे, देख लीजिएगा। शारदाके कण्ठस्वरमें गहरी विनती ध्वनित हो उठी।

राखाल खड़े होकर सोचने लगा। सोचकर देखा, शारदाको साथ ले जानेसे लाभके सिवा हानि न होगी। बोला—अच्छा, तो फिर चलो। लेकिन तुमने अभी कुछ खाया-पिया तो है नहीं। मैं बाजार करके लौटकर आता हूँ। तुम ग्यारह बजेके भीतर नहा-धोकर खा-पीकर तैयार हो लो।

शारदाने कहा—आपके खानेका क्या होगा?

"मैंने सोचा है कि स्टेशनके रेस्टॉरेंटमें खा लूँगा।"

"मेरी रसोई चढ़ गई है। आप साढ़े दसके भीतर ही खाना तैयार पायेंगे। आज दो कौर यहीं खा लीजिए न देवता।"

"ना, ना, मेरे खानेके लिए तुम्हें इतना बखेड़ा न करना होगा। मैं दूकानमें ही खा लूँगा।"

"आपको दाल-भात न खाना होगा। गर्म पूड़ियाँ उतार दूँगी। पूरी खानेमें आपको क्या आपत्ति है?"

"आपत्ति कुछ नहीं है। अभी उस दिन ही तो रातको तुम्हारे यहाँ न्योता खा गया हूँ। अभी पेटके भीतर चाय और नाश्ता हजम नहीं हुआ।"

" तो कुछ पूरियाँ ही बना दूँ ? "

" अगर खाऊँगा तो दाल-भात ही खाऊँगा, पूरी नहीं। जातिका बखेड़ा मेरे नहीं है। मैं अभी तक तारक बाबू नहीं बन पाया हूँ। "

" तारक बाबूपर आप इतने नाराज क्यों हैं देवता ? "

राखालने कहा—निश्चय ही तुम जानती हो कि तारक जिस-तिसके हाथका अन्न नहीं ग्रहण करता।

शारदा हँसने लगी, जवाब नहीं दिया।

राखालने कहा—अच्छा तो चलता हूँ। चीज-वस्तु खरीदकर एकदम डेरेसे नहा-धोकर बक्स-बिस्तर लेकर यहीं लौटूँगा। तुम तैयार रहना।

राखाल चला गया। लगभग पौने ग्यारह बजे लौटा। एक फलकी टोकरीमें सनरा, बेदाना (अनार), अंगूर, आदि फल, ताड़की मिसरी, बार्ली, पर्ल-सागू, एक टीन उत्तम मक्खन, एक टीन रोगीके पथ्यके लिए हल्के बिस्कुट इत्यादि खरीद लाया था। इनके अलावा बेडपैन, गर्म पानी रखनेका बैग, आईस-बैग, आयल-क्लाथ आदि रोगीके काम आनेवाली कुछ और सामग्री भी खरीद लाया था। और उसका अपना बिस्तर और बक्स भी था।

राखालने लौटकर आते ही खानेको माँगा। शारदाने कोठरीके फर्शपर आसन डालकर पहले ही जगह कर रखी थी। राखालको हाथ-पैर धोनेके लिए पानी और गमछा देकर वह थाली परोस लाई।

राखालने पूछा—तुम तैयार हो न शारदा ?

शारदाने जवाब दिया—मैं तो बड़ी देरसे तैयार बैठी हूँ।

राखाल आसनपर बैठकर चुपचाप भोजन करने लगा। भोजनका आयोजन बहुत साधारण ही था। किन्तु उसके भीतर जो आन्तरिकता और सयत्न आग्रह मौजूद था, उसका परिचय राखालके हृदयको अज्ञात नहीं रहा। तृप्तिके साथ भोजन करके राखाल जब उठ खड़ा हुआ तब शारदाने जल डालकर हाथ-मुँह धुलवाया। राखालको जीवनमें किसी दिन ऐसी सेवा नहीं प्राप्त हुई थी और न इसका उसे खयाल ही था। अतएव उसे यथेष्ट संकोच मालूम पड़ रहा था। किन्तु शारदाके इस ऐकान्तिक साग्रह यत्न और सेवामें बाधा डालनेको उसका जी न चाहा। हाथ धुलाकर शारदाने दाँत खोदनेका खरिका दिया। इसके बाद

हाथ-मुँह पोंछनेके लिए गमछा राखालके हाथमें पकड़ाकर शारदाने कुछ ताजे लगे हुए पानके बीड़े सामने लाकर रख दिये।

राखालने कहा—इसीको विधाताकी माया कहते हैं। कहाँ स्टेशनका खरीदा खाना, और कहाँ शारदाके हाथका बना अमृततुल्य अन्नव्यंजन! मय हाथ-मुँह धोनेके पानी, दाँत खोदनेका खरिका, हाथ पोंछनेका गमछा, घरके लगे पान। आज न जाने किसका मुँह देखकर उठा था!

शारदा मुसका दी, कुछ बोली नहीं। राखालकी जूठी थाली, लोटा बाहर लेकर जाते-जाते कह गई—आप जरा बैठिए, मैं दस मिनटके भीतर ही आती हूँ।

राखाल एक सिगरेट सुलगाकर शून्य तखत-पोशके एक कोनेमें बैठकर परम परितृप्तिपूर्वक सिगरेट पीने लगा। उसने देखा, शारदा छोटी-सी एक मैली शतरंजीमें बँधा हुआ छोटा-सा बिछौनेका बण्डल तखतपोशपर रख गई है। चारों ओर नजर दौड़ाकर उसने देखा, कपड़े-लत्तेकी पोटली या बक्स नहीं है।

शारदा सचमुच दस मिनटके भीतर लौट आई। राखालने पूछा—तुम खा-पी चुकीं शारदा?

शारदाने कहा—खाने ही तो गई थी।

"यह क्या? इतनेहीमें खाना हो गया? निश्चय ही तुमने अच्छी तरह नहीं खाया।"

शारदाने हँसकर कहा—आज मैंने सबसे अधिक अच्छी तरह खाया है। देवताके प्रसादको क्या अनादर करके खाना चाहिए? अब लीजिए, उठिए। सब तैयार है। देखती हूँ, आपका सामान तो बहुत है। एक सूटकेस, अटैची-केस, एक बिस्तर, एक फलोंकी टोकरी, एक पैकिंग बक्स, मय एक जीवित लगेजके।

राखालने शारदाके परिहासका उत्तर न देकर कहा—तुम्हारा बिस्तरा तो तैयार देख रहा हूँ। कपड़ोंका बक्स कहाँ है?

शारदाने कहा—तीन-चार साड़ियाँ और दो-तीन शेमीजें इसी बिस्तरेमें बाँध ली हैं।

राखालने विस्मित होकर कहा—इतनेसे कैसे काम चलेगा?

शारदाने जरा हँसकर कहा—काफी हैं। मैली होनेपर साबुनसे धोकर साफ कर लूँगी, जो नित्य यहाँ करती हूँ।

राखाल कुछ गुमशुम हो रहा। बार-बार उसके मनमें आने लगा कि कहे—कपड़ोंकी तुम्हारे पास इतनी कमी है, मुझे बतलानेसे क्या तुम्हारी बेइज्जती होती शारदा? लेकिन मुह फोड़कर वह कुछ भी नहीं कह सका। क्रोधकी झोंकमें रुपए वापस लेनेकी बात याद आ जानेसे वह अपनेहीको अपराधी मानने लगा।

राखालने उदास कण्ठसे कहा—तो अब टैक्सी ले आऊ।

शारदा चौंककर कह उठी—अरे, मैं कहनेको बिलकुल ही भूल गई थी देवता, आप जब बाजार गये थे तब दमभर बाद ही विमल बाबू आये थे। वह कह गये हैं कि एक जरूरी कामसे जा रहे हैं, अभी लौट आवेंगे। आपसे उन्हें कुछ प्रयोजन है, कह गये हैं। वह अपनी मोटरमें हम लोगोंको स्टेशन भी पहुचा देंगे।

राखालके मुखके भावकी कोमलता गायब हो गई। उसने शुष्क स्वरमें कहा—अब उनसे भेंट करनेका समय नहीं है शारदा। लौट आनेपर उनसे मुलाकात होगी, देर नहीं की जा सकती, मैं टैक्सी लेने जाता हूँ।—

राखालकी बात पूरी होनेके पहले ही सदर दरवाजेके सामने मोटरका भोंपू सुना गया और आँगनसे विमल बाबूकी आवाज सुनाई पड़ी—शारदा बेटी—

शारदा बाहर निकलकर बोली—आइए।

विमल बाबूने घरमें प्रवेश करके कहा—यह लो राजू आ गया। भाग्यसे आज इस तरफ एक कामसे निकल आया था। मनमें आया कि पास तक जब आ गया हू तो शारदा बेटीको भी जरा देख जाऊँ। आकर सुना, ब्रज बाबूकी बीमारीका तार पाकर तुम लोग आज ही वहाँके लिए रवाना हो रहे हो। चलो, तुमको पहुँचा आऊँ। बड़ी गाड़ीपर ही आज निकला हूं, माल-असबाब ले जानेमें कोई असुविधा नहीं होगी।

इच्छा न रहने पर भी राखाल आपत्ति न कर सका। माल-असबाब मोटर-पर रख दिये जानेपर विमल बाबूने राखालका हाथ पकड़ कर कहा—राजू भैया, मेरा एक अनुरोध मानो। ब्रज बाबूकी बीमारीमें अगर किसी तरहकी सहायताकी आवश्यकता समझो तो मुझे तार देना न भूलना। रोगमें धन-बल और लोक-बल दोनोंकी जरूरत है। तुम्हारे सूचना देते ही फौरन् किसी बड़े डाक्टरको लेकर रवाना हो सकूँगा। इस बातपर विश्वास करनेमें तनिक भी दुविधा मनमें न लाओ कि मैं ब्रज बाबू और रेणुका अकृत्रिम हितैषी हूँ।

विमल बाबूके कण्ठकी गाद्गतासे, जान पड़ता है, राखाल कुछ अभिभूत हो पड़ा, इसीसे कुछ आश्चर्यके भावसे ही उसने उनके मुँहकी ओर ताका।

मुरझाई हुई हँसीसे विमल बाबूने कहा—मैं जानता हूँ राजू, आज उनका तुमसे बढ़कर बन्धु और कोई नहीं है। तो भी मेरे द्वारा अगर उन लोगोंका किसी ओरसे किसी तरहका कोई भी उपकार रत्ती भर भी हो सकना सभव समझो, तो मुझे खबर देना न भूलो। इतना भर मैं तुमको जताये रखता हूँ।

राखाल जैसे कुछ कहनेहीवाला था कि, बीचहीमें विमल बाबूने कहा—रेणु और ब्रज बाबू आज कितने अधिक असहाय हैं, यह मैं जानता हूँ राजू।

राखालकी दोनों आँखोंमें पानी भर आया। उसने कहा—आपके प्रति मैंने अविचार किया है, मुझे क्षमा कीजिएगा। काका बाबूकी बीमारीमें अगर किसी सहायताका प्रयोजन हुआ तो मैं अवश्य आपको खबर दूँगा।

१९

तारककी सुनिपुण सेवा, यत्न और सुन्दर व्यवहारसे सविताका परिक्लान्त मन बहुत कुछ स्निग्ध हो गया था। उच्छ्वसित वात्सल्य-रससे अभिषिक्त हृदय लेकर सविता तारकके हरएक व्यवहार, हरएक काम और हर बातचीतके भीतर अद्भुत विशेषता लक्ष्य करके मुग्ध हो रही थी। तारकने भी सविताको केवल अपनी सगी माताकी तरह ही नहीं, बल्कि भक्त जैसे निरकुश त्रुटि-हीनताके साथ अपने देवताकी सेवा करता है, वैसे ही सेवा-यत्न और समादरमें रत्ती भर भी अवहेला या लापर्वाही नहीं की।

बातचीतके प्रसगमें सविताने एकदिन तारकसे प्रश्न किया—तारक, तुम जो मुझे हरिनपुरमें ले आये भैया, सो इसकी खबर क्या तुमने राजूको नहीं दी?

कुछ कुठित भावसे तारकने उत्तर दिया—नहीं मा।

विस्मित होकर सविताने कहा—लेकिन उसीको तो तुम्हें सबसे पहले बतलाना उचित था तारक!

तारकने कहा—क्यों नहीं खबर दी, इसका कारण मै आपसे और किसी दिन कहूगा मा।

सविताने अत्यन्त विस्मित होकर कहा—तुम दोनों मित्रोंके बीच इसी बीचमें ऐसी कौन-सी बात हो गई, जो माको भी बतानेमें कुठित हो रहे हो भैया!

सिर झुकाये हुए तारकने कहा—हो सकता है कि राखालने यह नालिश आपसे की है, या न की होगी तो जल्दी ही एक दिन करेगा। इसीलिए मैंने भी सब कुछ आपसे कहनेका निश्चय कर लिया है मा।

तारकके कुंठित मुखकी ओर क्षणभर तीक्ष्ण दृष्टिसे देखते रहकर सविताने कहा—सुना है, राजूके तुम घनिष्ठ मित्र हो। मैं जानती थी, तुम उसे पहचानते हो। लेकिन अब समझमें आ रहा है कि तुम मेरे राजूको नहीं पहचान पाये भैया।

तारकने चंचल होकर कहा—क्यों मा?

सविताने कहा—किसीने उसके साथ चाहे जितना बड़ा अन्याय क्यों न किया हो, राजूने दुनियामें किसीके पास किसीके नामपर कभी शिकायत नहीं की और कभी करेगा भी नहीं। शिकायत करनेकी शिक्षा जीवनमें उसने नहीं पाई तारक, सहन करनेकी ही शिक्षा पाई है।

तारक और भी कुंठित हो पड़ा। बोला—मुझे माफ कीजिए मा, कहनेके दोषसे कुछ गलत न समझिएगा। मैंने कहना चाहा था—मेरा मतलब था कि राखालसे आपने मेरे संबंधमें जो घटना सुनी है या सुनेंगी, वह बाहरसे सत्य होने पर भी सम्पूर्ण सत्य नहीं है।

सविताने हँसकर कहा—मैंने राजूसे कुछ भी नहीं सुना भैया, किसी दिन सुन भी न पाऊँगी; इस संबंधमें तुम निश्चिन्त रह सकते हो।

तारक अकस्मात् कुछ उत्तेजित होकर वक्तृता देनेकी मुद्रासे हाथ-मुँह हिलाकर कहने लगा—किन्तु यह मैं किसी तरह न मान सकूंगा मा, कि आपसे भी हम लोगोंके विच्छेदका कारण छिपाना उसके लिए उचित हुआ है। आपने उसे केवल स्नेहके रस और अन्नके रससे ही नहीं पुष्ट किया है, आपहीके निकट उसने अपनी सारी शिक्षा दीक्षा जो कुछ है, सब पाई है। वह जो पृथ्वीपर अब भी जी रहा है और भले आदमियोंकी तरह रहकर जी रहा है, इसके लिए वह किसका भारी ऋणी है? किसके आश्चर्य असाधारण मन और असाधारण जीवनने राखालकी दृष्टिको और मनको इतना प्रसारित कर दिया है? किसका अपार स्नेह, आड़से विधाताकी करुणाकी तरह ही, उसके जीवनकी रक्षा सतर्क रहकर करता आ रहा है? उसी मासे सत्यको छिपाना न्याय्य न मान सकूँगा मा, आपके कहनेसे भी नहीं।

एक साँसमें इतनी वक्तृता करके तारक दम लेने लगा।

सविता स्थिर दृष्टिसे तारककी ओर ताकती हुई सुन रही थी। धीर कण्ठसे बोली—तारक, तुम दोनोंमें क्या बात हुई है भैया?

"तो फिर कहता , सुनो मा। राखालने मुझे आपका जो परिचय दिया था, सो अगर वह आपको सत्य ही अपना मा मानता होता तो वैसा परिचय कभी न दे सकता।

सविताने कुछ नहीं कहा। उसके मुसकाते हुए चेहरेके भावमें भी कुछ परिवर्तन नहीं देखा गया।

तारक फिर उत्साहके साथ कहने लगा—आपने कहा था मा, किसीके सम्बन्धमें बिना पूछे, उपयाचक होकर, कोई बात कहना उसका स्वभाव नहीं है। लेकिन मैंने तो इसके विपरीत ही प्रमाण पाया है। उसने उपयाचक होकर ही मुझको अपनी नई-माका ऐसा परिचय दिया था, जिसके जाननेका मुझे कोई प्रयोजन नहीं था। लेकिन वह मूर्ख यह नहीं समझा कि आगको राख बतानेसे पहले शायद सुननेवाला भूल कर सकता है, लेकिन वह भूल ज्यादा देरतक नहीं टिकती। अग्नि अपना परिचय आप दे देती है।

सविताने अब भी जवाब नहीं दिया। पहलेहीकी तरह प्रश्नकी नजरसे देखती हुई मौन रही।

तारक कहने लगा—अवश्य मैं यह स्वीकार करता हू मा कि उसने जब बहुत कुछ अतिरंजित कहानी सुनाकर मुझसे प्रश्न किया था कि यह सब सुनकर मुझे घृणा होती है कि नहीं, तब मैंने जवाब दिया था कि घृणा होना ही तो स्वाभाविक है राखाल। तब तो मैं जानता न था कि उसका मतलब ही आपके ऊपर अश्रद्धा उत्पन्न कर देना था। यह बात न होती तो सब बातें कहनेकी तो उसे आवश्यकता न थी।

अबकी सविता बोली। उसने शान्त स्वरसे ही कहा—राजू झूठ नहीं बोलता तारक। उसने जो कुछ तुमसे कहा है, सब सत्य है।

तारकका मुँह उतर गया। सकुचते हुए अस्पष्ट स्वरमें सूखे गलेसे उसने कहा—आप जानतीं नहीं मा कि वह कैसी भयानक बात है—

सविताने कहा—जानती हू। तुमने चाहे जो कुछ क्यों न सुना हो तारक,

राजूके मुखकी कोई भी बात मिथ्या नहीं है।

तारकके गलेकी नलीको जैसे किसीने सख्त मुट्ठीमें दबाकर स्वररोध कर दिया। चेष्टा करनेपर भी उसके कण्ठसे एक शब्द भी नहीं निकला।

सविता धीरे धीरे कहने लगी—तुमने राजूके सम्बन्धमें केवल गलती ही नहीं की, अविचार भी किया है। उसने तुम्हें कुछ गलत समझाना नहीं चाहा, बल्कि तुम्हीं कुछ गलत न समझ लो, इसी डरसे शुरूसे ही सब घटना खुलासा करके तुमसे कह दी है। अगर तुमने समझा हो कि उसकी बात झूठ है, तो तुमने बड़ी गलती की है।

तारकने सूखे स्वरमें कहा—लेकिन मा, मैंने तो कुछ जानना नहीं चाहा था। फिर उसने उपयाचक होकर क्यों—

सविताने मलिन हसी हँसकर कहा—तुम उच्चशिक्षित और बुद्धिमान् हो। सब तरफ मन लगाकर सोचकर भले-बुरेका विचार करनेकी शक्ति ही तुममें रहना सभव है। ससारमें ऊपरसे देखनेमें अनेक वस्तुओंको शायद हम एक ही तरहकी देख पाते हैं, किन्तु सादृश्य रहनेपर भी वे सभी वास्तवमें एक नहीं होतीं। इसके सिवा, यह तो जानते हो कि बाहरकी ओरसे भीतरका विचार करना कभी ठीक नहीं होता। ऐसे मामलोंमें यह बात साधारण लोग नहीं समझ पाते और समझना भी नहीं चाहते। किन्तु तुम तो उन लोगोंमें नहीं हो। राजू इस बातको जानता है, इसीसे उसने अपनी नई-माके दुर्भाग्यकी कहानी तुम्हारे आगे खोलकर कह दी।

तारक बहुत देर तक सिर झुकाये चुप बैठा रहा। फिर सिर उठाकर बोला—राखालने एक दिन मुझसे कहा था मा कि ससारमें हजारमेंसे नव सौ निन्नानबे स्त्रियाँ साधारण हैं, कहीं कभी एक आध असाधारण स्त्री देखनेको मिलती है। नई-मा वही ९९९ के बाद कभी कहीं मिल जानेवाली एक स्त्री हैं। इच्छा करने पर भी कोई उनका अनादर या अवहेला नहीं कर सकता। उसने सत्य ही कहा था।

सविता कुछ बोली नहीं, अन्यमनस्क भावसे दूसरी ओर ताकती रही। तारक जरा हिल-डुलकर बैठकर, कण्ठस्वरमें बहुत-सा जोश लाकर कहने लगा—ज्ञान होनेके पहले ही शिशुअवस्थामें मेरी माता नहीं रही थी—पहचानता था केवल पिताको। पिताने ही अपने हाथसे पाल-पोसकर मुझे बड़ा किया है। वही पिता जब अपने

सुखके लोभसे मातृहीन सन्तानके लिए एक सौतेली मा ले आये, तब दुःख, अभिमान और घृणाके मारे मैं घर छोड़कर चला आया। पिताका मुख फिर नहीं देखा, घरका भी नहीं। आपको पाकर मा, जीवनमें फिर नये सिरेसे पिता-माताके स्नेहका स्वाद पाया। मेरे लिए आप माके सिवा और कुछ नहीं हैं। आपके जीवनमें चाहे जो आँधी तूफान, चाहे जो आघात, चाहे जो गुरुतर परीक्षा ही आई हो, आपके हृदयके अपरिमेय मातृ-स्नेहको वह बूँदभर भी नहीं सुखा सकी। सन्तानके लिए यही सबसे बढ़कर 'पाना' है।

सविताने कहा—तुम्हारे पिता अभी जीवित हैं?—मगर तुमने तो एक दिन मुझसे अपनेको पितृ-मातृ-हीन कहा था!

तारकने हँसकर कहा—ठीक ही कहा था मा! मेरे जन्मदाता शायद अब भी जीवित रह सकते हैं, लेकिन मेरे पिता जीवित नहीं है। पिताकी मृत्यु हुए बिना मातृहीन अभागी सन्तानके जीवनमें विमाताका आविर्भाव नहीं होता—मेरा यही विश्वास है।

सविता विस्मित नयनोंसे तारककी ओर ताकती रही।

तारक कहने लगा—जीवनमें मेरे बड़ी बड़ी आशायें और अनेक उच्च आकांक्षाएँ हैं। केवल खा-पीकर पहनकर किसी तरह जीवन धारण करके जीते रहना मैं नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ—हर चीजकी बहुतायतके बीच, ऐश्वर्यके बीच सार्थक सुन्दर जीवन लेकर जीना। हजार आदमियोंके बीच मेरे ही ऊपर सबकी नजर पड़े, हजार नामोंके बीच मेरे ही नामको सब लोग जानें। कर्मजीवनकी सार्थकतासे, यश-गौरवके सम्मानसे, प्रतिष्ठा और प्रसिद्धिसे उन्नत वृहत् जीवन लेकर जियूँ—यह मैं चाहता हूँ। केवल धन कमाना ही मेरे जीवनकी एकान्त कामना नहीं है, केवल स्वच्छन्द जीविका-निर्वाह ही मेरा चरम लक्ष्य नहीं है।

सविताने स्निग्ध स्वरमें कहा—यह तो बहुत अच्छा है भैया। मर्दके जीवनमें ऐसी ही ऊंची आकांक्षा होनी चाहिए। लक्ष्य जितना उच्च और विस्तृत रहेगा—जीवन भी उतना ही प्रसारित होगा।

तारकने उत्साहित होकर कहा—आपको तो मैंने जता दिया है मा कि कितने दुःख और कष्टसे, कितनी बाधाओंके बीच, अपने ऊपर ही निर्भर रहकर—अपने ही भरोसे विश्वविद्यालयकी सीढ़ियोंपर चढ़ा हूँ—परीक्षाएँ पास की हैं।

मैं बड़ा जिद्दी हूँ मा। जो काम करनेका मनमें इरादा करता हूँ, वह जब तक पूर्ण या-सिद्ध नहीं होता तब तक दम नहीं लेता।

सविता मुसकराते मुखसे तारकके यौवनोचित आशा, आकांक्षा और उत्साहसे दमक रहे मुखकी ओर ताककर अन्यमनस्क भावसे जैसे कुछ सोचने लगी।

तारक कहने लगा—अपने जीवनकी सारी कहानी केवल आपहीसे खोलकर कही है मा। क्या जाने क्यों, समय समयपर मनमें आता है कि जीवनमें शायद कुछ भी नहीं मिला—कुछ भी नहीं पाया। सोचता हूँ कि यदि किसी दिन लाखों रुपया पैदा भी कर लिया, तो उससे और क्या लाभ होगा? यश भी अगर देश-देशान्तरमें फैल गया तो उससे ही क्या होगा? सम्मान और प्रतिष्ठापूर्ण प्रसिद्धिकी चरम चूड़ापर चढ़नेसे भी क्या मेरी बचपनसे चली आ रही अतृप्त तृष्णा मिटेगी? चिरदिन जो अभिमान, जो दुःख अपने गोपन अन्तरके भीतर ही मैं अकेले धारण किये रहा, विधाता तकसे जिसके लिए नालिश नहीं की, वह वेदना क्या किसी दिन मेरे इस धन, मान, यश या कर्म जीवनकी सफलतासे दूर होगी? सारा हृदय जैसे हाय हाय कर उठता है; काम करनेका उत्साह और उद्दीपना ठण्डी पड़ जाती है। मनमें आया है कि भाग्य-देवताने जिस मनुष्यको पृथ्वीपर भेजकर बचपनहीमें माताके स्नेहसे वंचित कर दिया है, वह कितना बड़ा दुर्भाग्य लेकर मनुष्योंकी इस हाटमें आया है, यह किसीको समझाकर कहनेकी अपेक्षा नहीं रखता। जीव-जगत्की सृष्टि करनेवालेका सबसे श्रेष्ठ दान माताका स्नेह है। उसी स्नेहसे जो जन्मसे ही वंचित है, उसका फिर—वेदनाके आवेगसे तारकका गला रुँध गया। सविताकी आँखोंकी कोरोंमें आँसू भर आये थे। उसने कुछ भी नहीं कहा, सान्त्वना भी नहीं दी। उसके मुखपर गहरी सहानुभूतिकी छाया सुस्पष्ट हो उठी। जो गाढ़ी वेदना वह चुपचाप बहुत ही छिपाकर हृदयके एकान्त कोनेमें धारण करती आ रही है, सुदीर्घ कालसे उसके उसी वेदनाके स्थानको तारकने आज बिना जाने छू लिया। तारकके अन्तके कुछ शब्दोंने सविताके सारे हृदयको मथ डाला। चुपचाप आँखें नीची किये वह अपने अशान्त हृदयके आवेगको संयत करने लगी।

सदर-दरवाजे पर डाकियेने पुकारा—चिट्ठी—

तारक बाहर जाकर चिट्ठी ले आया।

सविताके नाम चिट्ठी थी। शारदाने लिखी है। खबर दी है कि विमल बाबूसे

राजूकी भेंट राहमें हुई थी। उसके मुँहसे विमल बाबूने खबर पाई है कि गाँवमें कन्यासहित व्रज बाबू कुशलपूर्वक हैं।

सविताने पत्र पढ़कर, हँसकर कहा—जान पड़ता है, राजू शारदाके यहाँ नहीं जाता। जाय ही कैसे ?—वह तो शायद जानता ही नहीं कि शारदा मेरे साथ हरिनपुर नहीं आई। तारक कुछ बोला नहीं। सविताने फिर कहा—देखूँ, मैं ही उसको न हो तो एक चिट्ठी लिख दूँ। एक काम करो न तारक, तुम उसे यहाँ आनेका निमन्त्रण देकर चिट्ठी लिख दो, मैं भी उसीमें उसे यहाँ आनेके लिए लिख दूँगी। यहाँ उसके आनेसे तुम दोनों मित्रोंके मान-अभिमानकी भी मीमांसा हो जायगी।

तारकने कहा—अच्छा तो है। मैं आज ही लिखे देता हूँ।

सविताने स्नेहपूर्ण स्निग्ध कंठसे कहा—राजू मेरा बड़ा अभिमानी तुनुकमिजाज लड़का है। लेकिन उसके हृदयकी तुलना मैंने कहीं नहीं देखी।

यह बात सविताने सहज भावसे ही कही, किन्तु तारकके मनमें इसने और अर्थमें चोट पहुँचाई। उसे जान पड़ा कि नई-माने शायद मेरे ही अन्तःकरणके साथ तुलना करके राजूके सबधमें यह बात कही है। उसके मुँहपर अँधेरी छा गई और वाक्य हो गये निस्तब्ध।

सविता इस ओर लक्ष्य न करके ही विगलित कंठसे कहने लगी—राजूके बारेमें जब मैं सोचती हूँ तारक, तब खयाल होता है कि मेरा राजू अधिक स्नेहका धन है या रेणु ? राजू और रेणु, दोनोंमें कौन अधिक है और कौन कम, मैं ठीक नहीं कर पाती।

तारक कह उठा—तब तो आप अपने हृदयको अभी तक पहचान नहीं सकीं मा। रेणुके साथ राजूकी कोई तुलना ही नहीं हो सकती।

सविताने कहा—क्यों भला बताओ ?

"राजूको आप चाहे जितना सन्तानके तुल्य क्यों न मानें, तो भी वह सन्तानके 'तुल्य' ही रह जायगा—'तुल्य' शब्दको बाद देकर सम्पूर्ण रूपसे अपनी सन्तान न हो जायगा। हो भी नहीं सकता।"

सविताने कहा—सभी जगह सब मामले एक तरह नहीं होते तारक।

"यह मैं जानता हूँ मा। तो भी कहता हूँ, सुनिए। आप स्वयं ही विचार करके देखिए, आपके हृदयके स्नेहके अधिकारमें रेणु और राजूका समान दावा

चाहे जितना हो, दोनोंमें भिन्नता या अन्तर कितना अधिक है, यह मैं दिखाये देता हूँ। आप अपने इस हरिनपुर आनेको ही ले लीजिए। चलनेके पहले दिन रातको सुना, राखालने आपको हरिनपुर आनेके लिए मना किया था। चूँकि आपने कहा था कि लड़का जब सयाना हो तब उसकी सम्मति लेनेकी जरूरत है और यही सुनकर उसने असम्मति प्रकट की थी। पर आप उसको न मानकर मेरे यहाँ चली आईं। लेकिन मा, अगर रेणु आपके यहाँ आनेके सम्बन्धमें अपनी अनिच्छाका जरा-सा भी आभास देती, तो आप हरिनपुर आना निश्चय ही बन्द कर देतीं।

सविताने जरा चुप रहकर कहा—मैं जानती हूँ तारक, कि राजूने केवल अभिमानवश नाराजीसे ही मुझे आनेको मना किया था। यह उसका केवल तर्क या जिद थी। सचमुच ही अगर मुझे यहाँ भेजनेके बारेमें उसकी अनिच्छा होती तो मैं कभी न आ सकती भैया।

" लेकिन मान लीजिए, रेणु अगर केवल जिद या तर्क करके ही आपको कहीं जानेके लिए मना करती तो उसके उस तर्क और जिदकी खातिर किये बिना क्या आप रह सकतीं मा ? "

सविता चुप रही। बहुत देर बाद धीरे-धीरे बोली—तुमने ठीक ही कहा है तारक। जान पड़ता है, मनुष्य अपने हृदयहीको सबसे कम जानता है। मगर एक बात है, राजू मेरे निकट रेणुसे बढ़कर भले ही न हो सके, किन्तु मैं राजूके निकट मासे बढ़कर हूँ। मेरी ओरसे नहीं, परन्तु राजूकी अपनी तरफसे वह रेणुसे बढ़कर है। इस जगह मुझसे भूल नहीं हुई।

तारक चुप हो रहा। क्षणभर बाद दूसरा प्रसग उठाकर बोला—कहो, विमल बाबूकी चिट्ठी तो आज भी नहीं आई मा ?

सविताने कहा—तुमने क्या हालमें उन्हें चिट्ठी लिखी है ?

" लिखी क्यों नहीं! जान पड़ता है, उन्होंने आपको आठ-दस दिनसे चिट्ठी नहीं दी। यही बात है न ? "

" हाँ। लेकिन मैंने भी उनकी पहलेकी चिट्ठीका जवाब अभीतक नहीं दिया। जान पड़ता है, इसीसे उन्होंने चिट्ठी नहीं लिखी। कारण, यह तो शारदाकी चिट्ठीसे मुझे मालूम ही हो जाता है कि वह कुशलसे हैं। "

तारकने उच्छ्वसित कण्ठसे कहा—यही एक मनुष्य मैंने देखा है मा, जिसके पैरोंपर आप ही सिर झुक जाता है।

सविताने जवाब नहीं दिया।

तारक आप ही आप कहने लगा—कैसा बड़ा मन है, कैसा उदार चरित्र है, कैसे बढ़िया आदमी है। सच्चा कर्मवीर है। जीवनमें ऐसे सार्थक-काम पुरुष कम ही देख पड़ते हैं।

सविताने मुसकाकर कहा—यह बात तुमने किस हिसाबसे कही तारक? आर्थिक उन्नतिके सिवा उन्होंने ससारमें और कौन-सी सफलता प्राप्त की है? और सारे जीवनमे वे ऐसा कौन-सा बड़ा आनन्द सचय कर पाये हैं?

तारकने उच्छ्वासकी झोंकमें कह डाला—जो आदमी अपने सामर्थ्यसे बेशुमार धन अनायास कमा सकता है, इतने बड़े बड़े धन्धे खड़े कर सकता है, उसके जीवनमें और छोटी-मोटी सार्थकतायें हों या न हों, उनको लेकर आक्षेप नहीं है मा। मर्द आदमीके कर्ममय जीवनकी इस तरहकी बहुत बड़ी सार्थकताकी अपेक्षा और क्या काम्य रह सकता है, बोलिए?

सविता हँसी, जवाब नहीं दिया। तारकके मुँहसे पुरुषोंके जीवनकी उच्च आकांक्षा और उच्च आदर्शके सम्बन्धमें अब तक वह बहुत-सी बड़ी बड़ी बातें और कल्पनाएँ ही सुनती आ रही थी। किन्तु उसके व्यक्तिगत जीवनकी आशा आकांक्षा सार्थकताका लक्ष्य किस तरफ है, यह वह किसी दिन स्पष्ट करके निर्देश नहीं कर पाया था या किया नहीं था। सविताकी चिन्ता-धारा न जाने कैसी एक अनिर्दिष्ट शून्यतामें खो गई।

शिबूकी माने आकर पुकारा—माजी, देर हुई जा रही है, चलकर भोजन बना लीजिए।

तारकने कहा—बहुत दिनसे तो माके हाथका अमृतस्वरूप प्रसाद पा रहा हूँ। अब पाचिकाको ही हाँड़ी चढ़ानेकी अनुमति दीजिए। इस घोर गर्मीमें आँचके सामने बैठनेसे आपकी तबियत खराब हो जायगी।

सविताने हँसकर कहा—आगकी गर्मीमें रसोई करनेसे औरतोंका स्वास्थ्य खराब नहीं होता तारक, उन्नत होता है।

"यह साधारण स्त्रियोंको हो सकता है माँ, आप उनके दलमें नहीं हैं—म जानता हू।"

"तुम कुछ नहीं जानते बेटा।"

"नहीं मा, मैं नहीं सुनूँगा। देखा है, कलकत्तेके घरमें आपका रसोइया

महराज था। फिर यहा क्यों आप महराजके हाथका नहीं खायेंगी, बताइए ? महराजके हाथका खाना खानेको जी नहीं चाहता, यह आपका उज्र व्यर्थ है। असल बात यह है कि आप स्वयं परिश्रम करना चाहती हैं।"

"अगर यही हो तो उसमें तुम्हें आपत्ति क्यों है भैया ?"

अकृत्रिम आन्तरिकताके साथ प्रबल वेगसे सिर हिलाकर तारकने कहा—ना, यह न होगा। अपनी राजराजेश्वरी माको मैं प्रतिदिन अपने हाथसे रसोई बनाने, मसाला पीसने, कपड़े धोनेका काम न करने दूँगा। ये सब सचमुच आपके काम नहीं हैं मा।

सविताके दोनों नेत्र सजल हो उठे। बिल्कुल अन्यमनस्क भावसे जैसे कुछ सोचने लगी। कुछ बोली नहीं।

तारकने कहा—आजसे दासी और पाचक महराज आपका काम करेंगे—मैं उनसे कहे देता हूँ। अब आपके ये सब अत्याचार नहीं चल सकेंगे।

सविताने करुण हँसीके साथ कहा—तारक, अगर मुझको इतना-सा भी काम न करने दोगे भैया, तो यह मुझपर ही अत्याचार होगा। मैं तुमसे स्पष्ट कहती हूँ कि महाराजका बनाया खाना मेरे गलेके नीचे नहीं उतरेगा। दासी-चाकरकी सेवा मेरे शरीरमें बिछूटी या करनका * कोड़ा मारेगी। यह जानकर भी अगर तुम मेरे कामके लिए नौकर-नौकरानी रखना चाहो तो मैं लाचार हूँ।

तारकने विस्मयसे अभिभूत होकर कहा—आप क्या हमेशा ही इस तरह अपना सब काम अपने ही हाथसे करती रहेंगी मा ?

सविताने कहा—हमेशा करूँगी कि नहीं, यह नहीं जानती भैया। लेकिन आज मैं दास-दासीकी सेवा सहन नहीं कर पाती, इतना ही कह सकती हूँ। ईश्वरने अगर कभी मुह उठाकर देखा तो तुम्हारे ही पास और किसी समय आकर पलगपर बैठे-बैठे नौकरानियोंसे सेवा लूँगी बेटा।

तारक सविताकी बातका रहस्य भेद न कर सका। दुःखित चित्तसे चुप हो रहा। कुछ देर बाद धीरे धीरे बोला—मा, मनुष्यको मनुष्य छोटा कैसे समझता है, यही सोचता हूँ। लेकिन मैं मनुष्यका परिचय एक मात्र मनुष्यके सिवा जाति-

---

* बिछूटी या करन एक पौधा होता है, जिसके लगनेसे शरीरमें बेहद खुजलाहट और जलन होती है।

पाँति कुल-गोत्रसे अलग करके सोच ही नहीं सकता। इसी लिए मेरे निकट मुसलमान, क्रिस्तान, ब्राह्मण, बौद्ध, वैष्णव, शाक्त, सभी समान हैं।

सविताके विषाद-गम्भीर मुखपर आनन्दकी आभा फूट उठी। उन्होंने कहा—यह मैं जानती हूँ तारक। तुम्हारा अन्त करण कितना ऊँचा और उदार है, तुमसे परिचित होनेके पहले ही मैंने जान लिया था। तुमको मैं स्नेह करती हूँ, विश्वास करती हूँ।

तारकने विस्मय और कुतूहल-मिश्र कण्ठसे कहा—मुझे देखनेके पहलेसे ही आपने मेरा परिचय पा लिया था मा? कहाँ, इतने दिन तो आपने बताया नहीं!

सविता स्नेहके साथ मुसका दी।

तारकने कहा—किन्तु चाहे जिससे मेरे बारेमें आपने सुना हो, यह आपने कैसे जान लिया कि मैं विश्वासके योग्य हूँ?

ममतामय कोमल स्वरसे सविताने कहा—कैसे जाना यह मत सुनो भैया! हाँ, यह जान लो कि मैं जानती थी, इसी लिए तुम्हारे स्नेहके आह्वानको पूरा करनेके लिए राजूके भी मनको व्यथा देकर यहाँ आई हूँ। इसमें कोई भी भूल नहीं है।

तारकने अभिभूत स्वरमें कहा—मुझपर इतना स्नेह, इतना विश्वास करती हैं मा?

सविताने गम्भीर स्वरमें कहा—केवल विश्वास नहीं बाबा, उससे भी बढ़कर तुम्हारे ऊपर भरोसा करनेका साहस मैंने पाया है। तुम तो जानते हो तारक, मेरे कोई लड़का नहीं है। राजूने मेरे लड़केके अभावको अवश्य पूरा किया है, फिर भी कुछ अपूर्ण है। वह शून्यता—तुमको ही पूरी करनी होगी भैया।

तारक विस्मय-विमूढ़ चित्तसे अभिभूतकी तरह ताकता रहा।

२०

शारदाको लेकर राखाल जब ब्रजबाबूकी शय्याके पास पहुँचा, उस समय दशा यह थी कि रोगका प्रबल प्रकोप कुछ कुछ शान्त होनेपर भी वह बिलकुल नीरोग नहीं हुए थे। इस बीमारीमें ब्रज बाबूके शरीरके साथ उनका मन भी बहुत ही दुर्बल हो गया था। राखालको देखकर उनकी बद आँखोंसे आँसू बहने

लगे। स्वभावसे कोमलचित्त राखाल अपने पितृतुल्य प्रिय काका बाबूकी यह असहाय अवस्था देखकर अपने आँसू नहीं रोक सका।

ब्रज बाबू धीमी आवाजमें धीरे-धीरे बोले—राजू, मैंने तुमको बुलाया है। आँसुओंसे रुँधे हुए गलेको साफ करके फिर बोले—तुम्हारी बहनको देखनेके लिए कोई नहीं है भैया। उसीके लिए तुमको बुलाया है।

राखालने कुछ कहा नहीं। ब्रज बाबू अत्यंत क्षीण स्वरमें कहने लगे—राजू, यहाँ इन लोगोंने मुझे जाति-बहिष्कृत कर रखा है। मेरे गोविंदजी अपने पहलेके घरमें नहीं जा पाये, अपनी ही वेदीपर नहीं चढ़ने पाये। मेरी रेणु गोविन्दजीका भोग बनाती है, इसीपर सबको आपत्ति है। मेरे न रहने पर यहाँ कोई मेरी रेणुका भार न लेगा। उसे ले जाकर तुम उसकी विमाताके पास ही पहुचा देना। हेमन्त नाराज होगा, यह मैं जानता हूँ; किन्तु आश्रय निश्चय देगा। इसके सिवा और तो कोई उपाय सूझ नहीं पड़ रहा है बेटा!

राखाल चुप ही रहा। जिसके पिता नहीं, पास एक कौड़ी नहीं, उस अविवाहित रेणुको उसकी विमाता और उसका हर बातमें नफा-नुकसान देखनेवाला भाई अपने घरमें रखेंगे या नहीं, इस सम्बंधमें राखालको यथेष्ट सन्देह था। तो भी उसने मुँहसे कुछ नहीं कहा।

ब्रज बाबू कहने लगे—उसका ब्याह कर जा सकता तो निश्चिन्त मनसे गोविन्दजीके चरणोंमें स्थान ले सकता। अन्तिम समयमें एकाग्रचित्तसे गोविन्दजीका स्मरण करनेमें भी बाधा पा रहा हूँ राजू। रेणुके लिए जो दुश्चिन्ता है वह मुझे शान्तिसे मरने नहीं देती।

राखालने कहा—अभी यह सब क्यों सोचते हैं काका बाबू? आपको ऐसा कुछ नहीं हुआ, जिसके लिए रेणुको अभी हेमन्त मामाके पास भेजनेकी व्यवस्था करनी होगी। आप स्वस्थ हो जाइए, अब मैं खुद ही रेणुके ब्याहके प्रयत्नमें लग जाऊँगा।

ब्रज बाबूने करुण हँसी हँसकर कहा—किन्तु रेणु तो कहती है कि वह ब्याह नहीं करेगी राजू!

राखालने कहा—वह अभी बच्ची है। उसने एक बात कह दी तो क्या उसीको मानकर हमेशा चलना होगा? उस समय आपके इतने बड़े सर्वनाशके बीच, दुःख-कष्टके धक्केसे उसने यह बात कह दी थी। किन्तु आज आपकी यह

अवस्था देखकर उसे यह समझते क्या देर लगेगी कि उसके जीवनमें अन्य आश्रय लेनेकी अत्यन्त आवश्यकता है ?

व्रज वाबूने अत्यन्त मलिन हँसी हँसकर कहा—राजू, रेणु तुम्हारी नई-माकी लड़की है। ससारमें एकमात्र मेरे और भगवानके सिवा और कोई नहीं जानता कि उसकी माकी जिद कैसी थी। उसे इसी जिदके लिए अपना सारा जीवन तहस-नहस करके वलि देना पड़ा है। उसे अगर जिद सवार होती थी तो उसे तोड़नेकी शक्ति और किसीमे तो थी ही नहीं, स्वय उसमें भी न थी। रेणु उसी माकी बेटी है।

राखालने कहा—लेकिन मैं समझता हूँ काका वावू, कि रेणु नई-माकी तरह जिद्दी नहीं है।

"तुम इन लोगोंको जानते नहीं राजू। लड़कीने अपनी माताकी अविकल प्रकृति पाई है। मेरी समझमें नहीं आता कि जिस मासे वह ज्ञान होनेके पहले ही विछुड़ गई थी, उसके स्वभाव या प्रकृतिको अन्त करणमें उसने कैसे पाया! नई-वहूकी तरह तेजस्विनी, सत् प्रकृति और सत् चरित्रवाली स्त्रियाँ समारमें वहुत थोड़ी ही होती हैं। यह वात मैं जितना अच्छी तरह जानता हूँ, उतना और कोई नहीं जानता। वही नई वहू...व्रज वावूका गला रुँध आया। गला साफ करके फिर वोले—मेरे भाग्यके सिवा यह और कुछ नहीं है राजू। उसे मैं कुछ भी दोप नहीं देता।

व्रज वावूको इस सब चर्चासे उत्तेजित हुआ देखकर राखाल पखा लेकर हवा करने लगा और वोला—ये सव वाते इस समय रहने दीजिए काका वावू। आप पहले अच्छे हो लीजिए, उसके वाद देखा जायगा।

व्रज वावूने जीवनमें किसी दिन सविताके वारेमें किसीके साथ वातचीत या आलोचना नहीं की। आज अपने सन्तान-तुल्य राजूके साथ उसी विपयको लेकर उन्हें आलोचना करते देखकर स्वय राजूको अत्यन्त आश्चर्य हुआ। रोग मनुष्यको इतना दुर्वल कर डालता है कि उस समय उसे अपनी चिन्ताके वारेमें भी सयम नहीं रहता। जान पड़ता है, व्रज वावूमें भी इस समय अपने मनकी गोपन गहरी चिन्ताओंको अकेले वहन करनेका सामर्थ्य नहीं था।

शारदाने कोठरीमें आकर व्रज वावूको प्रणाम किया। चकित भावसे राखालकी ओर ताककर व्रज वावूने कहा—क्या तुम्हारी नई-मा भी आई हैं राजू ?

राखालने कहा—जी नहीं। वह कलकत्तेमें नहीं हैं। बर्दवानमें तारकके पास गई हैं। शारदा आपकी बीमारीकी खबर सुनकर आनेके लिए व्यस्त हो उठी। बोली—काका बाबू मुझे जानते हैं, मेरी सेवा लेनेमें वह आपत्ति नहीं करेंगे।

ब्रज बाबूने सुस्तीके बोझसे तकिएपर सिर डालकर कहा—जब तक मेरी रेणु बेटी है, किसीकी सेवा लेनेकी जरूरत न होगी राजू। मगर शारदा बेटी आई है, अच्छा ही किया—मेरी रेणुको वह देख-सुन सकेगी। उसे देखने-सुनने और यत्न करनेवाला कोई नहीं है। घरका काम, ठाकुरजीकी सेवा, उसपर रोगीकी सेवाके बोझसे दिन-रातमें दम भरके लिए भी उसे छुट्टी नहीं मिलती।

राखालने कहा—नई-माको क्या आपकी बीमारीकी खबर दे दूँ काका बाबू?

ब्रज बाबू त्रस्त भावसे कह उठे—ना, ना, तुम क्या पागल हुए हो? ऐसा काम न करना। मेरी बीमारीका समाचार अगर वह सुन पावेगी तो फिर उसे किसी तरह कहीं भी रोका नहीं जा सकेगा।

राखाल कुछ नहीं बोला।

सिरमें रक्तका दबाव अत्यन्त अधिक बढ़ जानेके फलस्वरूप ब्रज बाबूके बाएँ अंगमें पक्षाघातके लक्षण सुस्पष्ट हो उठे हैं। प्राणहानिकी शंका है। गाँवके डाक्टर कहते हैं कि ऐसे नाजुक रोगीको वे अपनी चिकित्सामें रख छोड़ना ठीक नहीं समझते। उपयुक्त औषध, पथ्य और इन्जेक्शन आदि गाँवमें मिलते नहीं। यहाँ तक कि रक्तका दबाव मापनेका उत्कृष्ट यन्त्र भी यहाँ नहीं है। कलकत्ते ले जाकर चिकित्सा करानेसे लाभ हो सकता है। हार्ट अत्यन्त दुर्बल है, नाड़ीकी गति भी बहुत तेज है। अतएव अगर कलकत्तेसे कोई अनुभवी सुयोग्य चिकित्सक लाना सम्भव हो तो शीघ्र ही उसकी व्यवस्था करनी चाहिए।

राखाल मुश्किलमें पड़ गया। कलकत्तेके अनेक बड़े बड़े डाक्टरोंके नाम वह जानता है; लेकिन साक्षात् मुलाकात-परिचय किसीसे नहीं है। इसके सिवा ऐसे रोगीके लिए किस डाक्टरको लाना ठीक होगा, यह भी एक समस्या है। फिर धनका भी अत्यन्त अभाव है। उसकी अपनी जो कुछ थोड़ी-सी साधारण पूँजी थी, रेणुकी बीमारीके समय खर्च हो गई। इस समय ब्रज बाबूकी चिकित्साके लिए यथेष्ट धन चाहिए। अथ च, उनके पास कुछ भी नहीं है। इस दशामें नई-माको खबर देनेके सिवा और उपाय ही क्या है? यह निश्चित है कि यह खबर पाकर नई-मा आये बिना

नहीं रह सकेंगी। किन्तु गाँवके इस अपने घरमें उनका पैर रखना किसी ओरसे भी वांछनीय नहीं है। इसका परिणाम रोगीके लिए भी बुरा हो सकता है। राखालको अपनी इस दुश्चिन्ताका कोई कूल-किनारा न मिला। किन्तु शीघ्र ही कोई एक व्यवस्था कर डालनेका विशेष प्रयोजन है। . ऐसे ही समयमें राखालके पास विमल बाबूका पत्र आया।

व्रज बाबूके स्वास्थ्यके सबंधमें प्रश्न करके अंतमें लिखा है—मेरा अनुरोध है कि व्रज बाबूके लिए उपयुक्त चिकित्सक, नर्स, दवा, पथ्य और धन, जो कुछ दरकार हो, तार द्वारा जरूर जरूर उसकी सूचना मुझे देना। मैं फौरन ही उसकी व्यवस्था कर सकूँगा।

राखाल पत्र हाथमें लिये चिन्तित मुखसे बैठा था। शारदाने आकर पूछा—यह किसकी चिट्ठी है देवता?

"विमल बाबूकी।"

शारदाने कहा—कलकत्तेसे डाक्टर लानेके लिए आप इतनी चिन्ता कर रहे हैं देवता, अथ च विमल बाबूको जरा लिख देनेसे ही वह अच्छा डाक्टर भेज सकते हैं।

राखालने कहा—हूँ।

शारदाने कहा—मैं समझ गई, आप संशयमें पड़े हैं। उनकी सहायता लेना आपको खटकता है।

राखालने कुछ नहीं कहा।

शारदा कुछ देर चुप रहकर फिर धीरे धीरे बोली—काका बाबूकी हालत ऐसी हो गई है कि कब क्या होगा, कहना कठिन है। जो करना है सो जल्दी ही कर डालिए। न हो, और कुछ प्रयोजन जनाकर नई-माको ही रुपयोंके लिए लिखिए।

राखाल फिर भी चुप रहा।

शारदाने कहा—अगर कुछ खयाल न कीजिए तो एक बात आपको याद करा दूँ।

राखालने प्रश्नकी दृष्टिसे देखा।

"तुच्छ मान-अपमान, उचित-अनुचितके वजनका हिसाब लगा कर चलनेकी

अपेक्षा इस समय काकाबाबूके प्राण बचानेकी चेष्टा ही क्या सबसे बढ़कर जरूरी नहीं है? आप अपने कर्त्तव्यकी ओरसे जरा सोचकर देखनेकी चेष्टा कीजिए न।"

"तुम क्या करनेको कहती हो?"

"इस हालतमें हमें विमल बाबू अथवा नई-माकी सहायता लेना उचित है। नई-माकी सहायता लेनेमें रेणु अगर कुंठित हो तो यह उसके लिए अस्वाभाविक नहीं है। किन्तु आपको तो वह बाधा नहीं है।"

"तुमने ठीक ही कहा शारदा। काका बाबूकी इस जीवन-संकटकी अवस्थामें उचित-अनुचितका प्रश्न कमसे कम मेरी ओरसे उठना कभी उचित नहीं है। तो फिर नई-मा और विमल बाबू, दोनों जनोंको यहाँकी सब हालत जनाकर दो चिट्ठियाँ लिख दूं।"

"किन्तु माको जतलानेके लिए काका बाबूने उस दिन विशेष करके आपको मना जो कर दिया है?"

"यह भी ठीक है। तो फिर केवल विमल बाबूको ही—अच्छा—विमल बाबू तो काका बाबूके परिचित हैं? काका बाबूसे बतला कर ही न व्यवस्था की जाय—"

"यह बुरी युक्ति नहीं है। मगर रोगकी इस हालतमें वह इस प्रस्तावसे विचलित तो न होंगे?"

राखालने अत्यन्त कातरभावसे कहा—तो फिर क्या करूँ शारदा? उन लोगोंको बतलाये बिना ही क्या विमल बाबूको खबर दे दूं?

कुछ सोचकर शारदाने कहा—यही कीजिए देवता।

* * *

रेणु गोविन्दजीका भोग तैयार कर रही थी।

शारदा दूर बैठी तरकारी काटते-काटते बातें कर रही थी। रेणु काम करते-करते 'हाँ' 'ना' 'फिर' इस तरहकी संक्षिप्त दो-एक बातें कह देती थी।

हमेशा ऐसा ही होता है। रेणु रहती है प्रायः निर्वाक् श्रोता और शारदा ग्रहण करती है वक्ताका आसन। कितनी ही बातें, जिनका कुछ ठीक-ठिकाना नहीं, प्रायः अपने अनजानमें ही शारदा सबसे अधिक अपने देवताकी बातें किया करती है। नई-माकी बातें भी बहुत-सी कहती है। किराएदारोंकी बातें तो हैं

ही। केवल रमणी बाबूके बारेमें और अपने अतीतके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहती। रेणु कोई प्रश्न नहीं करती, तनिक भी कुतूहल किसी बातमें प्रकट नहीं करती। बड़ी बड़ी दोनों आँखोंसे ताकती हुई चुपचाप सब बातें सुनती जाती है। उसके दोनों निपुण हाथ किसी न किसी प्रयोजनके काममें लगे रहते हैं। किसी दिन उसके मुँहसे अधिक बातें नहीं सुनी जातीं।

शारदा तरकारी काटते-काटते कह रही थी—आज देवता विमल बाबूको कलकत्तेसे कोई अच्छा डाक्टर लेकर यहाँ आनेके लिए तार देने गये हैं। मैं समझती हूं, कल ही वह डाक्टरको साथ लेकर आ जायँगे।

रेणुकी दृष्टिमें विस्मय झलकने पर भी मुँहसे कोई प्रश्न नहीं निकला।

शारदा कहने लगी—विमल बाबूके आ जानेसे बहुत कुछ सहारा मिलेगा। उपयुक्त चिकित्सा, औषध, पथ्य, सभीकी व्यवस्था हो जायगी। काका बाबू अब जल्दी ही चंगे हो उठेंगे।

अबकी रेणुने जिज्ञासायुक्त दृष्टिसे शारदाकी ओर ताका।

शारदा उस समय अपनी ही धुनमें बकती जा रही थी—लेकिन ऐसा आदमी दुनियामें दूसरा मैंने नही देखा रेणु। जैसे सदाशय, वैसे ही स्नेहशील। सुना है, करोड़पति हैं, उनके देश विदेशके रोजगारमें लाखों रुपए लगे हैं, किन्तु ऐसा अहङ्काररहित सहज विनीत मनुष्य इसके पहले मैंने नहीं देखा था। यथार्थमें जिसे शिवतुल्य कहते हैं। ऐसे न होते तो भगवान् उन्हें इतना ऐश्वर्य ही क्यों देते? कहावत है—मनके गुणसे धन होता है। विमल बाबूके धन भी जैसा है, मन भी वैसा है।

रेणु उस समय चुपचाप भोग बनाकर पिताके लिए पथ्य तैयार कर रही थी। चुप रहने पर भी वह मन लगाकर शारदाके मन्तव्य सुन रही थी, यह स्पष्ट जान पड़ रहा था।

शारदाके वाक्य-प्रवाहमें जैसे ज्वार आ गया था। वह कहने लगी—विमल बाबूने जिस दिन बे-घरबार होकर राहमें खड़े होनेकी लज्जासे हम सबको बचाया, उस दुर्दिनकी बात याद आ जाने पर आज भी मेरी आँखोंके आगे अँधेरा छा जाता है। जो बाड़ी-भरके लोगोंका आश्रय कहो, बल और भरोसा कहो, सब कुछ थीं, वही मा जब आश्रयहीन होनेको बैठी थीं तब हम लोगोंके मनमें कैसा भय, चिन्ता और घबराहट पैदा हो गई थी, इसे केवल भगवान् ही जानते हैं।

खासकर मेरे पैरोंके नीचेसे तो धरती ही खिसक जानेको हो गई थी। उस समय माके सिवा इस संसारमें और कोई आश्रय या सहारा न था।

रेणुने वैसे ही विस्मयकी दृष्टिसे देखकर प्रश्न किया — क्यों ?

शारदाने कहा—तुमको तो अपना सभी वृत्तान्त बता चुकी हू बहन। तुम क्या वे सब बातें भूल गईं ? मेरे चरम दुर्दिनमें माने मुझे अपने स्नेहका आश्रय दिया था, इसीसे न आज जीवित हूँ।

रेणुने आत्मविस्मृत भावसे कहा—उसके बाद ?

"उसके बादकी कहानी भी तुम मेरे मुहसे सुन चुकी हो बहन। मेरा पुनर्जन्म मा और देवताके ही कारण हुआ। अब बीच-बीचमें सोचती हूँ रेणु, भाग्यसे ही उस दिन मैं मरी नहीं।"

रेणुने हँसकर कहा—क्यों शारदा दीदी, उस दिन यदि मर जातीं तो आज तुम्हारी क्या क्षति होती बहन ?

"बहुत क्षति होती। वह जितनी बड़ी क्षति है, तुम बच्ची हो, समझ नहीं पाओगी बहन।"

रेणु चुपचाप अपना काम करने लगी। शारदा जब तरकारी काट चुकी तब बाकी तरकारीको झबरीमें संभालकर रखते रखते बोली—संसारमें कोई भी यथार्थ खरी चीज पानेके लिए उसका बड़ा मूल्य देना पड़ता है। दुर्लभका मूल्य बहुत होता है। नकली और मिलावटीकी समस्या मनुष्योंके बीच इतनी अधिक बढ़ गई है कि इस समय कौन असली है और कौन नकली, यह पहचानना कठिन है। जीवनमें जिसने जितना बड़ा सचय कर पाया है बहन, उसे उतना ही बड़ा मूल्य देना पड़ा है भारी दुःखके बीचसे। अन्तको मैंने यह समझा है कि कसौटीपर कसे गये बिना जीवनकी परख नहीं होती।

रेणु किसी दिन भी कोई बात विशेष करके जाननेके लिए शारदासे प्रश्न नहीं करती थी। लेकिन आज वह एकाएक प्रश्न कर बैठी—शारदा दीदी, तुमने तो अपने जीवनमें अनेक दु.ख पाये हैं भाई, उससे क्या कोई खरी चीज जमा कर सकी हो ?

शारदा चौंक उठी। रेणु ऐसा प्रश्न कर सकती है, यह संभावना एक बार भी उसके मनमें नहीं आई थी। कुछ परेशान होकर ही उसने उत्तर दिया—यह मैं कैसे कहूँ बहन ?

"क्यों ? जिस तरह ये सब बातें कही हैं।"

शारदाने सहसा अनावश्यक गभीर होकर कहा—यह तो नहीं जानती कि कुछ सचय कर पाई हूँ कि नहीं, किन्तु इसमें मुझे कोई सशय नहीं है कि यथेष्ट संबल पाया है और वह सोलहवों आने खरा है।

सरलमति रेणुने ममतासे विगलित होकर कहा—शारदा दीदी, जो स्वामी तुम्हें अकेली असहाय छोड़कर भाग गये, उनको अब भी तुम इतनी भक्ति करती हो ?

शारदाने कुछ जवाब नहीं दिया। उसके मुखपर वेदनाके चिह्न सुस्पष्ट हो उठे। वह तरकारीकी झबरी और हँसिया लेकर दूसरे कमरेमें रखनेके लिए चली गई।

राखालने आकर पुकारा—रेणु—

"क्या है राजू दादा ?"

"काका बाबूका खाना तैयार हो गया बहन ?"

"हो गया। अब बाबूजीको नहला देती हूँ।"

"काका बाबू सो रहे हैं। तेरी अगर रसोई बन चुकी हो तो जरा इस तरफ आ न, कुछ बातें करनी हैं।"

"बस, अपन सबके लिए भात चढ़ाकर अभी आती हूँ भाई, तुम चलो।"

थोड़ी देर बाद रेणु जब हाथ-पैर धोकर राखालके पास आकर खड़ी हुई, उस समय राखाल घरके फर्शपर बैठा अखबार पढ़ रहा था। सिर उठाकर बोला—आ, बैठ।

रेणु बैठ गई। बोली—डाक्टर साहब आज तुमसे क्या कह गये हैं राजू दादा!

"अच्छा ही कह गये हैं।"

"तब क्यों तुम कलकत्तेको तार दे आये बड़ा डाक्टर लानेके लिए ?"

"तू पागल है। शुरूसे ही तो सुन रही है कि यहाँके डाक्टर कहते हैं कोई अच्छा डाक्टर लाकर दिखानेकी जरूरत है। इस रोगका इलाज करना गाँवके डाक्टरोंके वशका नहीं। मलेरिया, प्लीहा या बारीका बुखार होता तो यहाँके डाक्टर चतुर्भुज होकर चिकित्सा करते। किसी औरको न बुलाने देते। खैर, यह बात छोड़ो। तुझे एक जरूरी सलाहके लिए बुलाया है।"

रेणु चुपचाप राखालके मुंहकी ओर ताकने लगी।

दो-तीन बार गला साफ करके अखबारको तह करते करते राखालने कहा—कह रहा था कि काका बाबूके जरा आराम होते ही तो यहासे डेरा-डण्डा उठाना होगा। न हो फिलहाल कलकत्ते जाकर जब तक काका बाबू पूरी तौरसे आराम न हो लें, तबतक पहलेकी तरह एक छोटा-सा घर किराएपर लेकर रहा जायगा। लेकिन उसके बाद—

राखाल कहते कहते चुप हो गया। उसका कण्ठस्वर दुविधासे रुक गया।

रेणु वैसी ही जिज्ञासु दृष्टिसे ताकती रही।

राखालने चिन्तित मुखसे कहा—उसके बाद क्या व्यवस्था हो सकती है, यही सोचता हू। यहा तो फिर लौटकर आया नहीं जा सकता।

रेणुने शान्त कण्ठसे कहा—क्यों?

राखालने विस्मित होकर कहा—यहा इतने दिन रहकर भी क्या समझ नहीं पाई रेणु? जातिभाइयोंका आचार-व्यवहार तो देखती है! काका बाबू इतने बीमार हैं, लेकिन कोई एक दफा झांकता भी नहीं!

रेणु बहुत देर चुप रहकर बोली—लेकिन तुम तो जानते हो राजू दादा, कलकत्तेमें बारहों महीने रहना हमारी इस अवस्थामें हो नहीं सकता। यहाँ घरका किराया नहीं लगता, महरीको केवल एक रुपया महीना देना पड़ता है। तरकारी-भाजी मोल लेकर खाना नहीं पड़ता। खर्च कितना थोड़ा है!

राखालने कहा—लेकिन काकाबाबूके शरीरकी जैसी हालत है, उससे उनपर तो भरोसा नहीं किया जा सकता बहन! जरा सोचकर देख, उनके न रहनेपर तेरा आश्रय कहाँ है? यहां जातिभाई तो तुम लोगोंसे सबंध ही छोड़ बैठे हैं। सौतेली मा पहले ही अलग होकर अपने पितृकुलमें खिसक गई है। कलकत्तेमें जाकर जितने दिन रहना हो, उतनेमें तेरे ब्याहकी कुछ व्यवस्था हो गई, तो काकाबाबू निश्चिन्त होकर रह सकेंगे। उनकी जो साधारण आमदनी है उससे मेरे साथ एकत्र रहकर मजेमें काम चल जायगा। मेरे रहते किसीकी सहायता उन्हें न लेनी होगी।

रेणु चुपचाप सुन रही थी। उसके मौनसे उत्साहित होकर राखाल कहने लगा—मैंने बहुत सोच-विचार कर देखा है बहन, इसके सिवा और कोई अच्छी व्यवस्था नहीं हो सकती। लड़कीके भविष्यकी दुश्चिन्ताने ही काकाबाबूको सबसे

चढकर परेशान कर डाला है। तुझे किसी सत्पात्रके हाथमें दे सकनेपर उनके मनकी भारी दुश्चिन्ता दूर हो जायगी। मुझे आशा है, तब वह सहजमें ही स्वस्थ हो उठेंगे।

रेणुने कोमल स्वरमें कहा—बाबूजीको छोड़कर मैं कहीं नहीं जा सकूँगी राजू दादा!

राखालने कहा—लेकिन बिना गये भी तो कोई उपाय नहीं है दीदी। तुम अगर लड़का होतीं तो छोड़ जानेकी बात ही न उठती। लेकिन लड़कीको तो आश्रय (ब्याह) छोड़कर कोई उपाय नहीं।

"लेकिन कम उम्र विधवा लड़कियाँ तो जीवनभर बापहीके घर रहतीं देखती हूँ।"

राखालने सूखी हँसी हँसकर जवाब दिया—रहती हैं, यह सत्य है, किंतु उनके पिताके घरमें खड़े रहने लायक आश्रय नहीं रहता तब वे ससुरालमें ही जाकर आश्रय ग्रहण करती हैं, यह भी निश्चय तुमने देखा होगा। स्वामी न रहने पर भी उनके ससुरालके लोग तो रहते हैं।

रेणु सिर झुकाये कुछ देर चुप रहकर धीरे धीरे बोली—राजू दादा, मैंने अपने मुँहसे ही बता दिया है कि ब्याहमें मेरी तनिक भी रुचि नहीं है। मैं ब्याह नहीं कर सकूँगी।

राजू हँस दिया। बोला—मैं तुझे बुद्धिमती ठहराता था, लेकिन अब देखता हूँ, तू एकदम पागल है रेणु! अरे, उस दिन अगर तू यह बात न कहती तो क्या काका बाबू जीवित रह सकते? एकाएक कारबार फेल हो जानेसे, सर्वस्व चला गया। रहनेका घर तक नीलामपर चढ़ जानेसे एकदम राहमें खड़े होना पड़ा। उस दुःसमयमें तेरा ब्याह बद होनेका बहाना लेकर, झगड़ा करके, हेमन्त मामा अपनी बहन और भांजीका पावना कौड़ी-कौड़ी—सोलह आनेकी जगह अठारह आना—वसूल करके अलग खड़े हो गये। उन्हें भय था कि कहीं पीछे काकाबाबूकी देनदारीकी लपेटमें उन्हें भी राहका फकीर न बन जाना पड़े! संसार ऐसा ही स्वार्थी है बहन!

राखालने एक बार रुककर एक लम्बी साँस छोड़ी। इसके बाद फिर कहना शुरू किया—स्वामीके इतने बड़े दुःसमयमें स्त्रीने अपने भाईके साथ मिलकर, अपने रुपए-पैसेके हानि-लाभको ही सिर्फ देखा और सोचा, स्वामीकी ओर दृष्टिपात

भी नहीं किया। तू अगर उस दिन उन्हें इस तरह भरोसा देकर न कहती रेणु, कि 'तुम्हें अकेला छोड़कर मैं कभी कहीं न जाऊँगी बाबूजी' तो काका बाबू संसारमें किसका सहारा लेकर खड़े होते!

रेणुने बहुत धीमे स्वरमें कहा—मैंने तो बाबूजीको सान्त्वना देने या हिम्मत बँधानेके लिए यह बात नहीं कही थी। मैंने तो सच बात ही कही थी।

रेणुके कहनेके ढंगसे राखालने मन ही मन निराश होने पर भी मुँहपर हँसी लाकर कहा—मैं क्या यह कहता हूँ कि तूने सच नहीं, झूठ कहा था? किन्तु जानती है बहन, संसारमें अधिकांश सत्य ही केवल सामयिक सत्य होते हैं। चिरकालके लिए सत्य अगर कुछ है तो वह संसारके बाहरकी वस्तु है। तू अगर उस दिनकी अपने मुँहकी बातकी रक्षा करनेके लिए आज कमर कस ले, तो उसका फल शायद यह होगा कि तुम लोगोंके जीवनमें अकल्याण ही दिखाई देगा। जो कल्याणको ले आता है, उसीको 'सत्य' कहते हैं। जो अशुभकर है, वह सत्य नहीं है। उस दिन जिस बातने काका बाबूको सबसे बढ़कर सान्त्वना और शान्ति दी थी, आज उसी बातकी रक्षा करनेके लिए अगर तुम जिद पकड़ लोगी तो जान लो कि वह अवांछित बात ही सबसे बढ़कर काका बाबूके लिए दुःख और दुश्चिन्ताका कारण हो जायगी। यहाँतक कि कदाचित् वह उनकी मृत्युका कारण भी हो सकती है। एक बात न भूलो रेणु, जो उग्र विष मृतप्राय रोगीको मौतके मुँहसे लौटाकर जीवनदान करता है, वही विष पीकर स्वस्थ मनुष्य आत्महत्या कर लेता है। स्थान, काल और अवस्थाके अनुसार एक ही व्यवस्था किसी समयमें जैसे मंगल करनेवाली होती है, वैसे ही अन्य किसी समय उससे अमंगल भी होता है। तुम अब सयानी हुई हो, सब ओरसे स्पष्ट करके, विचार करके देखो। विशेष प्रयोजनसे किसी समय तुमने एक बात कह दी थी, इस लिए उसी कही हुई बातको जीवनके सब मंगल-अमंगल, प्रयोजन-अप्रयोजनसे बड़ी बनाकर अकल्याणको न्योता देकर न बुलाओ।

रेणु आँखें नीची किये चुप बैठी रही।

२१

कलकत्तेके दो प्रसिद्ध और अनुभवी विचक्षण डाक्टर ब्रज बाबूको विशेष रूपसे देख-भालकर उनकी चिकित्साका अच्छा बंदोबस्त करके कलकत्ते लौट गये।

विमल बाबू और भी कुछ दिन रहनेके लिए उनके पास ठहर गये। ब्लडप्रेशर और जरा कम होते ही डाक्टरोंकी सलाहके माफिक व्रजबाबूको कलकत्ते ले जाना होगा।

मेडिकल कालिजके आसपास किसी जगह, काफी रोशनी और हवा जिसमें आवे ऐसा एक छोटासा घर किराए पर लेनेके लिए विमल बाबूने अपने कलकत्तेके कर्मचारियोंको पत्र लिख दिया है। उनके कर्मचारी सब ठीक कर रखेंगे।

कलकत्तेके डाक्टर आकर जब रोगीकी व्यवस्था कर गये, तबसे व्रजबाबू अपनेको बहुत कुछ सुस्थ अनुभव कर रहे हैं, सभीका मन खूब प्रसन्न है।

तीसरे पहर व्रजबाबू उत्तर ओरके बरामदेमें एक डेक-चेयरपर लेटे थे। पासकी चौकीपर विमल बाबू हाथमें अखबार लिये बैठे थे। दोनोंके बीच विश्वव्यापी ट्रेड-डिप्रेशनकी बुरी हालतके विषयपर बातचीत हो रही थी।

इसी आलोचनाके प्रसंगमें व्रज बाबूने कहा—आपने जब पहले मेरे पास आकर मेरा कारोबार खरीद लेनेका प्रस्ताव किया था, तब मेरे मनमें आया था कि साधारण बड़े आदमियोंकी तरह ही व्यवसायके सम्बन्धमें आपको केवल शौकिया आग्रह और उत्साह है, सूक्ष्म भविष्यकी दृष्टि और अपने भले-बुरेका ज्ञान अर्थात् जिसे कारोबारी बुद्धि कहते हैं, वह आपमें नहीं है। इसके बाद जब आपके और और सब प्रचुर लाभजनक बड़े बड़े रोजगारों और कारोबारोंका विवरण मैंने सुना, तब मुझे आश्चर्य हुए बिना नहीं रहा। आश्चर्य मुझे इसलिए हुआ कि इतने बड़े रोजगारी आदमी होकर भी आपने क्या देखकर मेरे डूबे हुए कारोबारको इतने चढ़े दामोंपर खरीदना चाहा था।

विमल बाबू हँसे।

व्रज बाबूने फिर कहा—अच्छा विमल बाबू, सच सच कहिए तो, आप क्या यह समझ नहीं पाये थे कि उस कारोबारको उस दशामें खरीद लेना तो दूर, खुशामद करके गले लगाने पर भी कोई लेना न चाहता उसपर जो 'देना' हो गया था उसका परिणाम देखकर। ऐसी हालतमें उसको लेनेके माने थे जान-बूझकर खुशीसे अपने रुपए गंगाके भीतर फेंक देना।

विमल बाबू वैसे ही मुसकाने लगे, अबकी भी कोई जवाब नहीं दिया।

व्रज बाबूने कहा—अद्‌भुत आदमी हैं आप!

अबकी विमल बाबू बोले—मुझसे भी कहीं बड़े अद्‌भुत आदमी आप हैं।

ब्रज बाबूने कहा—कैसे, बताइए तो ?

विमल बाबूने कहा—आप जान सुनकर भी अविश्वासी और प्रतारक आत्मीयोंके हाथमें अपने हाथसे खड़ा किया हुआ अपना भारी कारोबार सौंपकर निश्चिन्त थे।

मलिन हँसी हँसकर ब्रज बाबूने कहा—दुनियामें मनुष्यको विश्वास करना क्या इतना बड़ा अपराध है विमल बाबू? विश्वास मैं किसी भी कारणसे नहीं खो सकता।

"बार बार हानि उठाकर और दु.ख भोग कर भी क्या विश्वास बनाये रखना संभव है ?"

"यह तो नहीं जानता; किन्तु रखना अच्छा है। अविश्वासीके लिए कहीं भी आश्रय नहीं है, कोई भी सान्त्वना नहीं है।"

"अपने जीवनकी अभिज्ञतासे क्या आपने यही सत्य जाना है ?"

"हाँ। विश्वास करके मैं ठगाया नहीं। बाहरसे लोगोंने मुझे बार-बार निर्बोध कहा है; किन्तु मैं जानता हूँ, मैंने गलती नहीं की, उन्होंने भूल की है।"

विमल बाबू तीक्ष्ण दृष्टिसे ब्रज बाबूका मुँह ताकते रहे।

दूर दिगन्तमें नजर टिकाये हुए ब्रज बाबू कहने लगे—मैं अपनी सब कहानी एक दिन आपको सुनाऊँगा। आपने औरोंके मुँहसे कहाँ तक और क्या सुना है, मैं नहीं जानता। लेकिन मेरे मुँहसे उस दिन जितना कुछ सुना है, वह समस्त नहीं है। अपनी कहानी कहनेके पहले मुझे आपसे कुछ पूछना है।

"कहिए, क्या पूछना चाहते हैं ?"

"आपकी जैसी आर्थिक अवस्था है उससे आपको लक्ष्मीका वर-पुत्र कहा जा सकता है। आप सबल, सुखी, स्वास्थ्यसम्पन्न पुरुष हैं। भाग्यदेवी सभी तरफसे आपपर सुप्रसन्न है—आपको किसी बातकी कमी नहीं है। अथ च इतनी अवस्था तक आपने विवाह नहीं किया, इसका यथार्थ कारण क्या मैं जान सकता हूं ? अवश्य ही बतानेमें अगर कोई बाधा न हो तो।"

"बतानेमें कुछ भी बाधा नहीं है। कारण सीधा साधा है। पहले तो समय और सुयोगका अभाव, दूसरे विवाहकी इच्छा न होना।"

"पहला कारण शायद एक दिन सत्य था, किन्तु आज तो वह बात नहीं है? तब व्यवसायकी उन्नतिकी चिन्ता और चेष्टामें आप देशदेशान्तरमें घूमते फिरते थे, गृहस्थी खड़ी करनेकी बात सोचनेका तब अवकाश नहीं था। किन्तु उसके बाद—"

"अभी कहा तो, रुचि नहीं हुई।"

"रुचि-अरुचिकी बात उठनेपर फिर कोई प्रश्न ही नहीं किया जा सकता विमल बाबू। तो भी मेरी और एक जिज्ञासा है, उसका उत्तर दीजिए। क्या अब गृहस्थ बननेमें कोई बाधा है?

व्रज बाबूके प्रश्नसे विमल बाबूको जितना विस्मय हुआ, उससे भी अधिक कुतूहल जान पड़ा। दबी हुई हँसीसे उनका मुख और आँखें चमक उठीं। उन्होंने कहा—बाधा तो कभी नहीं थी व्रज बाबू, आज भी नहीं है। जान पड़ता है, शायद मेरे विवाहका रास्ता इतना अधिक बाधारहित होनेके कारण ही विधाता उसकी राह रोके बैठे रहे। नववधूका शुभागमन नहीं हुआ।

व्रज बाबूने कहा—आपकी बात कुछ ठीक समझमें नहीं आई।

"देखिए, हमारे देशमें औरतोंकी एक कहावत है, शायद आपने सुनी होगी—

अतिबड़ घरनी ना पाय घर।
अतिबड़ सुन्दरी ना पाय वर॥

मेरे बारेमें भी यही हुआ। विवाहके पात्रकी दृष्टिसे मै सब तरहसे योग्य हू, यह बात सभी लोगोंने कही है, कमसे कम घटक-लोग तो कहते ही हैं। तो भी सारी जवानी बीत गई, पर ब्याहका फूल नहीं खिला। ऐसी दशामें इसे विधाताकी बाधाके सिवा और क्या कहा जा सकता है—आप ही कहिए?"

"किन्तु यह बात भी तो नहीं है कि इतने दिन नहीं खिला तो अब किसी दिन नहीं खिलेगा।"

"समय निकल गया दादा। बे-मौसम कहीं फूल खिलता है। जोर-जबर्दस्ती करनेसे उसे केवल विकृत बना दिया जाता है।—ब्याह बहुत कुछ मौसमी फूलकी तरह है। वह ठीक अपनी ऋतुमें आप ही खिलता है। मौसमके चले जानेपर फिर नहीं खिलता, तब वह दुर्लभ होता है।"

व्रजबाबूने कुछ सोचकर हँसते हुए चेहरेसे कहा—अच्छा होशियार माली यदि कोशिश करे तो वह बे-फसल भी फूल खिला सकता है। खैर, इसे छोड़ो, मैं यह नहीं मान सका कि ब्याह एक मौसमी फूल है। हमारे देशमें ब्याहके फूल खिलना एक मुहाविरा है, लेकिन किसी भी देशमें शायद ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि वह फूल खेतीके नियमको मानकर चलता है।

विमल बाबू बोले—ना ना, यह नहीं। मैं यहना चाहता हूँ कि जीवनमें विवाहकी एक निर्दिष्ट शुभ लग्न होती है। वह लग्न निकल जानेपर फिर ब्याह नहीं होता। जो लोग उसके बाद भी ब्याह करते हैं, वह विवाह ठीक ब्याह नहीं होता।

"तो फिर वह क्या होता है?"

"वह केवल स्त्री और पुरुषका एकत्र रहना-भर है—कहीं वंश चलानेके प्रयोजनसे, कहीं संसार-यात्रा-निर्वाहके अथवा सुख सुविधा और आरामके प्रयोजनसे और कहीं केवल हृदय और मनकी विलासिताको चरितार्थ करनेके लिए।"

विस्मययुक्त कुतूहलसे व्रज बाबूने प्रश्न किया—इन सब चीजोंको बाद देकर विवाहको और क्या वस्तु आप कहना चाहते हैं?

"यह तो ठीक समझाकर कहना कुछ कठिन है। संसारमें देखा जाता है कि समाजके द्वारा अनुमोदित पुरुष और नारीके मिलनको विवाह कहा जाता है। लेकिन मैं ऐसा नहीं मानता। मनुष्यके जीवनमें एक आनन्दका समय आता है कि जिस परम क्षणमें नरनारीका वांछित मिलन देह और मनमें अपूर्व रससे सरस और रंगसे रंगीन हो उठता है। दो हृदयों, दो देहों और मनोंकी वह जो रस-मधुर रंगीनी है, उसीको मैं विवाह कहता हूं। सूर्यास्तके बाद ही जब संध्या नहीं होती, अथ च दिनका अन्त हो जाता है—वह जो सुंदर संधि-लग्न होती है, उसकी आयु बहुत थोड़ी होती है। उसे हम गोधूलि-बेला कहते हैं। उसी रमणीय स्वल्प समयके भीतर पश्चिमके आकाशमें परमसुंदर प्रकाशकी लीला और अक्षय रंगका वैचित्र्य जाग उठता है, दिन-रातके लंबे समयके भीतर फिर किसी तरह, किसी घड़ीमें नहीं पाया जाता। वह उसी विशेष क्षणकी सामग्री है। मनुष्यके जीवनमें विवाह भी वही चीज है।"

व्रज बाबूने मुसकाकर कहा—समझ गया। किन्तु आपने जो कहा विमल बाबू, वह तो शायद आप लोगोंकी कल्पनाके काव्यके पन्नोंमें लिखा है, वास्तव जीवनके हिसाबके खातेमें नहीं।

"इसी लिए तो हम लोगोंके विवाहित जीवनके पन्नोंमें इतना गैर मिल जमा हो उठता है, किसी तरह हिसाब नहीं मिलता।"

"अर्थात् आपने कहा है कि विवाहका मामला काव्यके खातेमें छन्दके अन्तर्गत है, हिसाब-खातेके अंकोंके अन्तर्गत नहीं है?"

इस बातका जवाब टालकर विमल बाबूने कहा—आप ही बताइए न दादा! विवाहकी अभिज्ञता मेरे जीवनमें तो एक बार भी नहीं हुई, किन्तु आपको तो एकसे अधिक बार हो चुकी है। आप इस मामलेमें मुझसे अधिक अभिज्ञ हैं।

"मेरी बात अगर मानिए तो कहूँ।"

"कहिए।"

"ब्याहके फूल खिलनेका दिन आज भी आपका अटूट है।"

"इसके माने? आप क्या कहना चाहते हैं कि इस अवस्थामें—"

विमल बाबूका वाक्य समाप्त होनेके पहले ही व्रजबाबू हँस उठे। बोले—आपने सचमुच हँसा दिया विमल बाबू!

"क्यों, बताइए तो!"

"आपकी ऐसी असभव धारणा कैसे हुई कि अब आपकी ब्याहकी अवस्था नहीं है? तब हम लोग तो—

"किन्तु अधिक अवस्थामें आपकी विवाहकी अभिज्ञता एक बार भी सुखकी नहीं हुई—यह भी तो सत्य है।"

"आप क्या भाग्यको मानते हैं?"

"कुछ कुछ मानता क्यों नहीं। हाँ, अन्धा अदृष्टवादी अलबत नहीं हूँ।"

"यह क्या स्वीकार करते हैं कि जन्म, मृत्यु और विवाह, ये तीनो बातें सम्पूर्ण भाग्यके ऊपर निर्भर हैं?"

"ना। मनुष्य इस युगमें विज्ञानकी सहायतासे जन्म और मृत्युको सम्पूर्ण न होनेपर भी कुछ कुछ अपनी इच्छाके अधीन कर पाया है, यद्यपि जन्म और मृत्युका मामला एकदम प्रकृतिका नियम है। जीवमात्र ही प्रकृतिके नियमोंके

अधीन हैं। अतएव इन दोनोंको छोड़कर ब्याहको ही लीजिए। यह सामाजिक सुविधाके लिए मनुष्यका गढ़ा हुआ नियम है। इस लिए इस मामलेमें अदृष्टका विशेष हाथ नहीं है। इस क्षेत्रमें मनुष्यकी इच्छा ही प्रधान है।"

ये सब युक्ति और तर्क ब्रज बाबूको शायद अच्छे नहीं लग रहे थे। अतएव वह इस आलोचनामें योग न देकर चुपचाप आँखें मूँदकर डेक-चेयरपर पड़े रहे।

विमल बाबूने भी हाथके अखबारमें मन लगाया।

सन्ध्या घनी हो रही थी, अखबारके अक्षर धीरे धीरे अस्पष्ट होते जा रहे थे। विमल बाबूने दो एक बार सिर उठाकर देखा कि लालटेन जलाई गई है कि नहीं।

आधे लेटे हुए ब्रज बाबू आँखें मूँदे क्या सोच रहे थे, कौन जाने। एकाएक सीधे होकर उठ बैठे और दाहिना हाथ बढ़ाकर उन्होंने विमल बाबूका एक हाथ जोरसे पकड़ लिया। फिर व्यग्र कण्ठसे बोले—विमल बाबू, तो आप सचमुच विश्वास करते हैं कि विवाह भाग्यके अधीन नहीं है, मनुष्यकी इच्छाके ही अनुगत है?

विमल बाबूने अत्यन्त विस्मित होकर कहा—हाँ, मेरा अपना विश्वास तो यही है। लेकिन आप एकाएक इस बातके लिए इतने चंचल क्यों हो उठे ब्रजबाबू?

"बताता हूँ। किन्तु इसके पहले आप यह वादा कीजिए कि आप मेरे अनुरोधकी रक्षा करेंगे। ना—ना, अनुरोध नहीं, प्रार्थना—यह मैं भिक्षा माँग रहा हू।" ब्रज बाबूने व्याकुल होकर विमल बाबूके दोनों हाथ जोरसे पकड़ लिये।

बहुत अधिक विपन्न होकर विमल बाबूने कहा—आप यह क्या कह रहे हैं? मैं आपके छोटे भाईके समान हूँ। आप जब जो आज्ञा करेंगे, उसका पालन करूँगा। ऐसी अनुचित बात कहकर मुझे अपराधी न बनाइए।

"ना ना, उस बातको सुनकर आप समझ सकेंगे कि यह मेरा अनुरोध नहीं, प्रार्थना ही है। बोलिए, आप मेरी विनती मानेंगे?"

"यदि साध्य हुई तो निश्चय ही मानूँगा।"

यह बात विमल बाबूने विशेष उत्कण्ठित होकर ही कही।

आँखोंमें आँसू भरे हुए ब्रज बाबूने कहा—गोविन्दजी आपका भला करेंगे। मेरे जन्मकी दुःखिनी बेटीका भार आप ले लीजिए विमल बाबू! उसे आपके हाथमें सौंपकर मैं निश्चिन्त हो जाना चाहता हूँ।

विमल बाबू स्तम्भित हो गये। उन्होंने स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी कि व्रज बाबू उन्हें विवाहके पात्रके रूपमें अपनी कन्याके लिए चुन सकते हैं। क्षणभर अवाक् रहकर उन्होंने कहा—आप पहले जरा सुस्थ हो लीजिए व्रज बाबू, यह सब आलोचना बादको होगी।

व्रज बाबू कातर भावसे कहने लगे—आप उदार प्रकृतिके हैं, आपका मन उन्नत है। और किसीके आगे मैं भरोसा करके यह प्रस्ताव न कर पाता। मेरे जीवनके दु ख और दुर्दशाकी कहानी आप सभी जानते हैं। देवताके निर्माल्यकी तरह मेरी लड़की निष्पाप है। उसके गुणोंकी सीमा नहीं है, रूप भी बिल्कुल ही अवज्ञाके योग्य नहीं है। अथ च ऐसी लड़कीके भी भाग्यमें विधाताने इतना दु ख लिखा था। आप शायद नहीं जानते, अब रेणुका ब्याह होना ही कठिन है। मेरे न धनका बल है, न लोकबल है, न कुलका गौरव है। उसके ब्याहका आशा-भरोसा नहीं है।

अतिशय आशासे आग्रह-युक्त होकर व्रजविहारी बाबू अब तक बात कर रहे थे, किन्तु विमल बाबूको कुछ उत्तर न देकर चुपचाप सिर झुकाये बैठा देखकर अकस्मात् उनका उत्साह बुझ गया और वह आँखे मूँदकर आरामकुर्सीपर लुढ़क रहे। थोड़ी देर बाद दोनों जुड़े हुए हाथ माथेसे लगाकर निरुपायकी तरह बोले—गोविन्द, तुम्हारी ही इच्छा पूरी हो।

शारदा बरामदेमें लालटेन ले आई।

विमल बाबूने पूछा—बेटी, राजू क्या घरमें हैं?

शारदाने कहा—जी नहीं, जरा देर पहले डाक्टरके यहाँ गये हैं। अभी आते होंगे।

फिर व्रज बाबूकी ओर देखकर उसने कहा—काका बाबू, संतरेका रस क्या ले आऊँ?

व्रज बाबूने हाथ हिलाकर इशारेसे मना किया।

विमल बाबूने कहा—नहीं क्यों दादा, आपके संतरेका रस पीनेका समय हो गया है, ले क्यों न आवेगी। ले आओ, शारदा बेटी।

व्रज बाबूने फिर निषेध नहीं किया। आँखें मूँदे निर्जीवसे पड़े रहे। लालटेनकी हल्की रोशनीमें विमल बाबूने तीक्ष्ण दृष्टिसे लक्ष्य किया, असुस्थ व्रज बाबूका

रक्तहीन मुखमण्डल पीला और विवर्ण हो रहा है, दोनों मुँदी हुई आँखोंके कोनोंसे बहुत छोटी-छोटी दो आँसूकी बूँदें निकल आई हैं।

प्राणोंसे अधिक प्रिय कन्याके भविष्यके संबंधमें कितनी गहरी निराशाकी छिपी हुई वेदनासे इस परम सहिष्णु मनुष्यके नेत्रोंसे आँसू निकले हैं, यह विमल बाबूके समझनेको बाकी नहीं रहा। निरुपाय वेदनासे उनका सारा हृदय व्यथित हो उठा। चुपचाप बैठकर सोचने लगे, लेकिन सान्त्वना देनेका उपाय या भाषा, कुछ भी न खोज सके।

गोविन्दजीकी आरतीका कांसेका घंटा बज उठा। रेणु स्वयं उपस्थित होकर पुजारी ब्राह्मणके द्वारा आरती करा रही थी। ब्रज बाबू आरामकुर्सीपर सीधे होकर उठ बैठे। जब तक घंटा-घड़ियालका बजना बन्द नहीं हुआ, वह माथेपर दोनों हाथ रक्खे सिर झुकाये गोविन्दजीको प्रणाम करते रहे। धूप, चन्दनके चूरे और गूगलके धुएकी सुगन्धसे शीतल सन्ध्याकी धीमी हवा महक उठी। घण्टा-झाँझका बजना बन्द होनेपर भी बहुत देर तक ब्रज बाबू उसी एक ही भावसे अपने इष्टदेवकी मन-ही-मन वन्दना करके, फिर उसी आराम-कुर्सीपर लम्बे होकर लेट गये।

रेणुने आकर उन्हें गोविन्दजीका चरणामृत और सन्तरेका रस पिलाया। थोड़ी देर बाद राखाल आकर विमल बाबूकी सहायतासे ब्रज बाबूको घरके भीतर ले गया। दो आदमियोंके कन्धोंपर दोनों हाथोंसे अस्वस्थ शरीरका भार रखकर अत्यन्त कष्टसे ब्रज बाबू थोड़ा-सा चल सकते हैं। अब भी सारे अंगोंमें—सारे शरीरमें—स्वाभाविक बल वापस नहीं आ पाया है।

आहार आदिके बाद रातको किसी समय विमल बाबू ब्रज बाबूके पलँगके पास आकर बैठ गये। ब्रज बाबूका शीर्ण शिथिल हाथ अपने हाथकी मुट्ठीमें लेकर विमल बाबूने चुपके चुपके कहा—आपने संध्या-वेलामें जो प्रस्ताव किया था, उसके बारेमें मैं जरा सोच-विचार करके देखना चाहता हूँ। कल मैं आपको बतलाऊँगा।

ब्रज बाबूने सिर हिलाकर इशारेसे अपनी सहमति जनाई।

विमल बाबूके उठ जानेपर छायासे ढकी हुई निर्जन कोठरीमें शय्याशायी ब्रज बाबू अस्फुट स्वरसे बारंबार इष्ट देवता गोविंदजीका नाम उच्चारण करने लगे।

दूसरे दिन प्रातःकाल विमल बाबू जब ब्रज बाबूके पास आकर बैठे तब ब्रज बाबूने लक्ष्य किया कि एक परितृप्त आनन्दकी स्निग्ध दीप्ति विमल बाबूके मुख-

मण्डलपर छाई हुई है। उस उज्वल मुखकी ओर ताककर ब्रज बाबू शायद मन-ही-मन आशान्वित हो उठे, किन्तु भरोसा करके प्रश्न नहीं कर सके।

बोले—अखबार आया है। राजू पढ़कर सुनाना चाहता था, मैंने मना कर दिया। क्या होगा दुनिया भरके लोगोंके दैनिक विवरण सुनकर, उससे तो किसी सद्ग्रन्थको सुननेसे मनको शान्ति मिलेगी और परलोकमें भी कल्याण होगा।

विमल बाबू हँसे। बोले—कौन पुस्तक सुननेको जी चाहता है, बताइए, पढ़कर सुनाऊँ।

"चैतन्य-चरितामृत* पढ़िएगा?"

"वैष्णव धर्मशास्त्रमें यह एक अद्भुत पुस्तक है।"

"आपने पढ़ी है? ब्रज बाबूके स्वरमें विस्मय और आनन्द एक साथ उच्छ्वसित हो उठे।

"थोड़े-से पन्नेभर उलटे-पलटे हैं। पढ़ा है, ठीक नहीं कहा जा सकता।"

"सो ठीक ही है। चैतन्यचरितामृतको जो मनुष्य पढ़ सका है, अर्थात् उसके अर्थको हृदयगम कर पाया है, वह तो गोविन्दजीके चरणकमलोंमें पहुँच गया है।"

विमल बाबूने कहा—यहाँ क्या चैतन्यचरितामृत है?

"हाँ, है। रेणुसे चैतन्यचरितामृत और श्रीमद्भागवत साथ लानेके लिए कह दिया था। रेणुको स्वय भी इस पुस्तकसे बहुत प्रेम है।"

"यह बात है? तो यह कहिए कि लड़कीको भी आपने भगवत्प्रेमामृतका स्वाद चखा दिया है!"

ब्रज बाबूने जीभ काटकर दोनों हाथ माथेसे लगाकर अपने इष्टदेवको प्रणाम करते हुए कहा—छी छी, ऐसी बात मुँहसे न निकालनी चाहिए। उससे मुझे अपराध लगेगा। गोविन्दके प्रेमका आस्वाद मनुष्य क्या मनुष्यको दे सकता है विमल बाबू? ज्ञान, बुद्धि, विद्या, मेधा, सभी वहाँ तुच्छ अर्थहीन हैं। वही जिस-पर कृपा करते हैं, केवल वही भाग्यवान् पुरुष या स्त्री संसारमें उनके प्रेमका दुर्लभ स्वाद पाकर धन्य होता है।

विमल बाबू चुप रहे।

---

* चैतन्यदेवका चरित (भगवान), जिन्हें श्रीकृष्णका अवतार माना जाता है गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय।—अनुवादक।

ब्रज बाबू कहने लगे—यह जो कल सन्ध्या समय बड़ी आशा और आकांक्षासे आपके आगे एक प्रार्थना की थी, उसके लिए आज सवेरे तो तनिक भी आग्रहका अनुभव नहीं कर रहा हूं। यह क्या गोविन्दकी ही करुणा नहीं है?

निरुद्वेग सरल हँसीसे ब्रज बाबूका मुख कोमल हो उठा।

विमल बाबूने कहा—मैंने कल रातको सोचकर उस मामलेमें अपना कर्तव्य ठीक कर लिया है।

ब्रज बाबूके रोग-पांडुर मुखमण्डलपर परितृप्तिकी आनन्द-रेखा झलक आई। बोले—मैं जानता हूं तुमको उपलक्ष्य करके गोविंद मुझे इस भारसे मुक्त करेंगे।

विमल बाबूने कहा—कैसे आपने जाना, बताइए तो?

उनके ये कई एक शब्द स्निग्ध कौतुकसे पूर्ण थे।

ब्रज बाबूने सिर हिलाते-हिलाते कहा—भैया, गोविन्द ही तो अपने इस अधम सेवककी सब चिन्ताओंका निवारण करते हैं। उन्होंने तुम्हें इसीके लिए मेरे पास भेजा है। ब्रज बाबूके चेहरेपर असीम विश्वास और भक्तिकी पवित्र आभा थी।

विमल बाबू चुपके रहे।

संसारके बहुविध दुःखसे निपीड़ित इस रोगतुर वृद्धके सरल चित्तकी परितृप्तिकी प्रफुल्लिताको नष्ट कर देनेको उनका जी नहीं चाह रहा था, अथ च वह बात विना कहे काम न चलता था। वृद्धकी भ्रान्त धारणाको शीघ्र ही दूर न कर देनेसे जटिलता बढ़नेकी संभावना है।

विमल बाबूने कहा—मैंने कल विशेष रूपसे आपके प्रस्तावके विषयमें सोचकर देखा है। सब ओरसे विवेचना करके मैंने रेणुको ग्रहण करना ही तय किया है। किन्तु इस संबंधमें एक बात कहनी है। वादा आप कीजिए कि मैं जो चाहूँगा, वह आप देंगे।

ब्रज बाबू क्षण भर विमूढ़ दृष्टिसे विमल बाबूके मुँहकी ओर ताकते रहे, फिर अस्फुट कंठसे बोले—कहिए—

विमल बाबूने कहा—आपने मुझे अपनी कन्याका दान करना चाहा है। मैं उसे अपनी इच्छासे और आनन्दके साथ ग्रहण करना चाहता हूँ। याग-यज्ञ मंत्र उच्चारण करके धर्म, समाज और आईनके अनुसार पत्नीके रूपमें ग्रहण करनेसे वह मेरे गोत्र और उपाधिको लेकर मेरे वंशमें शामिल हो जाती। मेरी सम्पत्ति-

पर उसका अधिकार होता, मेरे मरने पर उसे सूतक लगता। मैं याग-यज्ञ मन्त्रोच्चारण करके धर्म, समाज और आईनके अनुसार ही उसे अपनी दत्तक कन्याके रूपमें ग्रहण करना चाहता हूँ। उससे भी वह मेरे वंश और गोत्रमें अधिकार पावेगी। मेरी सम्पत्तिकी उत्तराधिकारिणी होकर मेरे मरनेपर अशौच पालन करेगी।

व्रज बाबू जैसे कुछ समझ न पा रहे हों, ऐसी दृष्टिसे ताकते रहे, मुँहसे कुछ कह न सके।

विमल बाबू कहने लगे—मैं जानता हूँ कि रेणुपर आपका कितना अधिक स्नेह है। मुझे भी उसपर कुछ कम स्नेह नहीं है। उसे सन्तानके रूपमें ही ग्रहण करनेको मैं प्रस्तुत हुआ हूँ।

जरा चुप रहकर विमल बाबूने फिर कहा—विवाहयोग्य सत्पात्र अगर मेरे वंशमें कोई होता, तो उसे अपनी सारी सम्पत्तिका उत्तराधिकारी करके रेणुको मैं अपनी पुत्र-वधूके रूपमें ले जाता। किन्तु वैसा अपना मेरा कोई नहीं है। दूरके नातेमें जो हैं भी, वे रेणु बेटीके योग्य नहीं हैं। इसीसे मैंने ठीक किया है कि सीधे-सीधे उसे ही दत्तक कन्याके रूपमें ग्रहण करूँगा। रेणु बेटीको उसके योग्य वरके हाथमें देनेका भार और उसके भविष्यकी चिन्ताकी जिम्मेदारी सब मैं अपने ऊपर लेता हूँ—अब वह आपपर नहीं है।

व्रज बाबूने एक लंबी साँस छोड़कर आँखें मूद लीं। कुछ जवाब नहीं दिया। उनके चेहरेपर इच्छा या अनिच्छाका कोई लक्षण ही प्रकट नहीं हुआ, जैसे चुप थे वैसे ही चुप रहे।

दोपहरको राखालने विमल बाबूको जरा आड़में बुला ले जाकर अत्यन्त गंभीर मुखसे कहा – आपके साथ कुछ सलाह करना है।

विमल बाबूने जिज्ञासाकी दृष्टिसे उसकी ओर देखा। राखालने जेबसे डाकघरकी मोहरवाला एक पोस्टकार्ड निकालकर दिया और कहा—पढ़कर देखिए।

विमल बाबूने कार्ड हाथमें लेकर एक बार नजर दौड़ाकर अन्तमें हस्ताक्षरपर लक्ष्य किया। लिखा था—मंगलाकांक्षी हेमंतकुमार मैत्र। विमल बाबूने पूछा—यह कौन है राजू? पहचान नहीं पाया।

राखालने कहा—काका बाबूके इस ब्याहके साले हैं। हम लोगोंके शकुनी मामा। नाम नहीं सुना क्या?

विमल बाबूने कहा—ओह। यही ब्रजबाबूके कारोबारके प्रधान मैनेजर थे न?

राखालने कहा—हाँ। केवल कारोबारही के क्यों, जमीन-जायदाद, घर-द्वार, स्त्री-कन्या, सभीका भार उन्होंने अपनी इच्छासे अपने कंधेपर लेकर काकाबाबूको बिलकुल बिना किसी झंझटके गोविन्दजीके चरणोंमें समर्पण कर दिया था।

चुपचाप आँखें नीची किये विमल बाबूने उस पोस्टकार्डको पढ़ा। फिर आँख उठाकर राखालकी ओर ताका।

राखालने कहा—बताइए, यह चिट्ठी काकाबाबूके हाथमें देना ठीक होगा कि नहीं?

विमल बाबू कुछ जवाब न देकर सोचने लगे।

राखालने फिर कहा—लेकिन काका बाबूसे यह बात छिपा रखना भी तो हम लोगोंके लिए उचित न होगा।

विमल बाबूने कहा—हाँ, अनुचित तो होगा ही।

इसके बाद क्षणभर सोचकर बोले—यह चिट्ठी उनके हाथमें देनेकी जरूरत नहीं, पढ़कर सुनानेसे ही काम चल जायगा। कारण, चिट्ठीमें कुछ अनावश्यक कटु बातें लिखी हैं। वह अंश उन्हें न सुनाना ही अच्छा होगा।

"निश्चय। बताइए कौन अंश छोड़कर कितना उन्हें सुनाया जा सकता है?"

यह जो लिखा है कि "यह मैं जानता हूँ कि जिस कलंकित वंशमें रानीने जन्म लिया है, उसके कलुषकी लज्जा तो उसे चिरकाल वहन करनी होगी। मुझे आशंका है कि आपके अपराध और महान् पातककी सजा अन्तको कहीं मेरी निरपराध भानजीको न भोगनी पड़े। इसीलिए उसे यथासम्भव जल्दी ही सत्पात्रसे ब्याहनेकी व्यवस्था मैंने की है। आपको खबर देनेको जी नहीं चाहता था, किन्तु लोकतः और धर्मतः—" इत्यादि। ये सब अंश उन्हें सुनानेकी जरूरत नहीं है।

राखालने कहा—रानीका ब्याह उसके पिताकी इच्छा-अनिच्छा, सम्मति-असम्मतिकी अपेक्षा न करके ही ठीक हो गया। आश्चर्य है! संसारमें ऐसा कहीं देखा है विमल बाबू?

विमल बाबू जरा हँस-भर दिये।

राखाल फिर चिट्ठीको पढ़ने लगा—"आज बिना विघ्न-बाधाके हल्दी चढ़नेका काम सम्पन्न हो गया है। कल गोधूलि-लग्नमें शुभ विवाह है।" बस, केवल

इतना ही लिखा है। कहाँ ब्याह हो रहा है, लड़का कैसा है, कोई खबर नहीं दी। बुद्धि और विवेचना देखी आपने?

विमल बाबू चुप रहे।

राखालने कहा—बड़ी लड़कीका ब्याह नहीं हुआ, अथ च छोटी लड़कीका धूम धामसे ब्याह हो रहा है!

विमल बाबूने शान्त स्वरमें कहा—संसारका यही नियम है राजू। कोई कुछ भी किसीके लिए अपेक्षा किये नहीं रहता।

"काका बाबू सर्वस्व उन्हें सौंपकर आज कौड़ी-कौड़ीको मोहताज हो गये हैं, इसीसे तो इतनी अधिक ज्यादती सम्भव हुई। नहीं तो न हो सकती।"

उदास कण्ठसे विमल बाबूने कहा—यह भी शायद ससारका सहज नियम है!

यह पत्र जबसे मिला, राखालके हृदयके भीतर आग-सी लगी हुई थी।

तीखे स्वरमें उसने कहा—ससारका नियम है, इस लिए सभी कुछ सहा नहीं जा सकता विमल बाबू!

विमल बाबूने हँसकर कहा—लेकिन सहन किये बिना भी तो कोई उपाय नहीं है राजू?

२२

जाड़ोंकी शाम है। कलकत्तेकी एक तग गलीके भीतर एकतल्ले मकानकी कोठरीमें, जिसके किवाड़ उँढकाये हुए थे, रेणु हरीकेन लाल्टेन सामने रखकर पशमकी एक छोटी टोपी बुन रही थी। दरवाजेके बाहरसे शारदाकी हल्की आवाज सुनाई दी—दीदी—

रेणुने जवाब दिया—आओ।

शारदाने दरवाजा ठेलकर भीतर प्रवेश किया। उसके पीछे एक बड़ा झौआ लिये दासी थी।

रेणुने उसे देखकर शारदाकी ओर ताका। शारदाने कहा—गोविन्दजीके लिए माने कुछ फल-मूल, साग-सब्जी और अन्डा मक्खन भेजा है।

रेणुके नेत्रोंकी दृष्टि तीव्र हो उठी। क्षणभर स्तब्ध रहकर सयत स्वरमें उसने कहा—शारदा दीदी, यह तो हम ले न सकेंगे।

शारदा कुंठित कंठसे कैफियत देनेके स्वरमें बोली—यह क्या कहती हो दीदी, यह तो तुम लोगोंके लिए नहीं है। यह तो गोविन्दजीके—

रेणुने शारदाकी बात पूरी न होने देकर शान्त स्वरमें कहा—गोविन्दजीको उपलक्ष करके माने यह सब हम लोगोंके लिए ही भेजा है। यह तुम भी जानती हो और मैं भी जानती हूँ शारदा दीदी। किन्तु इसे लेनेका उपाय नहीं है। मासे कहना, वह हमें क्षमा करें।

शान्त कंठके इन कुछ शब्दोंके पीछे कितना सुनिश्चित अटल भाव है, यह समझनेमें शारदाने गलती नहीं की। दासीको इशारेसे कोठरीके बाहर अपेक्षा करनेको कहकर शारदा फिर रेणुके पास आकर बैठी। पूछा—काका बाबू अब अच्छे तो हैं?

हाथका पशमका काम समाप्त करते करते रेणुने जवाब दिया—हां।

बहुत देर सन्नाटा रहा। कहनेके लायक कोई बात न खोज पाकर शारदा मन-ही-मन संकोच और अस्वस्तिका अनुभव कर रही थी। इसीसे उठनेको हो रही थी। इसी समय रेणुने ही बात शुरू की।

ऊनकी टोपी बुनते-बुनते धीमे स्वरमें बोली—शारदा दीदी, माको समझाकर कहना कि वह मनमें कष्ट न पावें। मेरे लिए मनमें दुःख या दुश्चिन्ता रखनेके लिए उन्हें मना कर देना। जो होनेका नहीं वह नहीं होता, इस बातको वह मेरी अपेक्षा अधिक ही जानती हैं। दुःख दूर करनेकी चेष्टामें सिर्फ दोनों तरफके दुःखका बोझ ही भारी होगा।

शारदा अवाक् हो रही। उसे जान पड़ने लगा कि आँखें नीची करके काममें मन लगाये इस लड़कीने बहुत ही निकट बैठे रहकर भी जैसे बहुत दूरसे ये कई शान्त शब्द कहला भेजे हैं।

और भी कुछ समय इसी तरह चुपचाप बीत जाने पर शारदाने कुछ इधर-उधर करके कहा—तो फिर मैं आज चलती हूँ भाई?

रेणुने सिर हिलाकर इशारेसे सम्मति जनाई।

रेणु एक ही तरह अखण्ड मनोयोगके साथ ऊनकी वह छोटी-सी टोपी फुर्तीले हाथसे बुनने लगी। रातमें ही इसे पूरा करके एक जोड़ी छोटे मौजे बुनना शुरू करना होगा।

\+ \+ \+ \+

इतना ही लिखा है। कहाँ ब्याह हो रहा है, लड़का कैसा है, कोई खबर नहीं दी। बुद्धि और विवेचना देखी आपने?

विमल वाबू चुप रहे।

राखालने कहा—बड़ी लड़कीका ब्याह नहीं हुआ, अथ च छोटी लड़कीका धूम धामसे ब्याह हो रहा है।

विमल वाबूने शान्त स्वरमें कहा—संसारका यही नियम है राजू। कोई कुछ भी किसीके लिए अपेक्षा किये नहीं रहता।

"काका वावू सर्वस्व उन्हें सौंपकर आज कौड़ी-कौड़ीको मोहताज हो गये हैं, इसीसे तो इतनी अधिक ज्यादती सम्भव हुई। नहीं तो न हो सकती।"

उदास कण्ठसे विमल वाबूने कहा—यह भी शायद ससारका सहज नियम है।

यह पत्र जबसे मिला, राखालके हृदयके भीतर आग-सी लगी हुई थी।

तीखे स्वरमें उसने कहा—ससारका नियम है, इस लिए सभी कुछ सहा नहीं जा सकता विमल वावू!

विमल वाबूने हँसकर कहा—लेकिन सहन किये विना भी तो कोई उपाय नहीं है राजू?

२२

जाड़ोंकी शाम है। कलकत्तेकी एक तंग गलीके भीतर एकतल्ले मकानकी कोठरीमें, जिसके किवाड़ उढकाये हुए थे, रेणु हरीकेन लाल्टेन सामने रखकर पशमकी एक छोटी टोपी बुन रही थी। दरवाजेके वाहरसे शारदाकी हल्की आवाज सुनाई दी—दीदी—

रेणुने जवाब दिया—आओ।

शारदाने दरवाजा ठेलकर भीतर प्रवेश किया। उसके पीछे एक वड़ा झौआ लिये दासी थी।

रेणुने उसे देखकर शारदाकी ओर ताका। शारदाने कहा—गोविन्दजीके लिए माने कुछ फल-मूल, साग-सब्जी और अच्छा मक्खन भेजा है।

रेणुके नेत्रोंकी दृष्टि तीव्र हो उठी। क्षणभर स्तब्ध रहकर सयत स्वरमें उसने कहा—शारदा दीदी, यह तो हम ले न सकेंगे।

शारदाको विस्मय हुआ। और दिन रेणुसे भेंट करके जब वह घर लौटती थी, तो देखती थी सविता उत्कंठित प्रतीक्षाके साथ उसकी राह देख रही है। उसके बाद कितने सतृष्ण आग्रहसे एकके बाद एक प्रश्न करके सब हाल—सब बातें ब्योरेके साथ जानना चाहती थी।—रेणु क्या करती थी? उसने क्या क्या कहा? उसने बाल बाँधे थे कि नहीं? कपड़े धोये थे कि नहीं? रेणु पहलेसे कुछ दुबली हो गई है या वैसी ही है—इत्यादि। व्रज बाबूकी अपेक्षा रेणुके बारेमें ही सविता अधिकतर जानना चाहती है, यह भी शारदाने लक्ष्य किया है।

कितनी ही देर चुपचाप बीत गई। शारदा आप ही आप कहने लगी—उनका अभाव ऐसा कुछ अधिक नहीं है मा, जिसके लिए आप इतना अधिक सोचती हैं। सिर्फ दो प्राणी हैं। खर्च ही क्या है, और काम ही कितना है? इसीसे जान बूझकर रेणुने पाचक नहीं रखा। उनकी घर-गिरिस्तीमें अभाव या कमी तो कुछ मैंने नहीं देखी।

सविताने पंजिकाका एक पन्ना मोड़कर, चिह्न रखकर, उसे बन्द कर दिया। फिर शारदाके मुहकी ओर पूर्ण दृष्टिसे ताककर मृदु हास्यके साथ कहा—अभाव नहीं सही, लेकिन तुम वह सामानका झौआ कहाँ छिपाकर रख आई हो शारदा?

शारदा सिटपिटा गई। विस्मय-विस्फारित दृष्टिसे ताककर उसने देखा, सविताके मुखपर वेदनाका चिह्नमात्र नहीं है। बल्कि होठोंकी कोरमें दबी हुई हँसीकी रेखा है।

सविताने कहा—तुम शायद यह सोचकर डर गई हो शारदा कि सामान लौट आया सुनकर तुम्हारी मा दुःख और क्षोभसे खाट पकड़ लेगी, क्यों?

शारदाने लज्जित होकर कहा—नहीं, ठीक यह तो नहीं सोचा, मगर हाँ, डरी अवश्य थी कि आपके मनको भारी धक्का लगेगा।

सविताने स्नेहके साथ शारदाकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा—बेवकूफ लड़की, तुम्हारी तरह माके हृदयकी ओर ही केवल दृष्टि रखकर माको प्यार करना क्या सभीने सीखा है? इसके लिए रेणुके ऊपर तो मैं नाराज नहीं हो सकती बेटी। उसका कुछ दोष नहीं है।

"यह कहनेकी जरूरत नहीं है। रेणु आपहीकी बेटी है, आज यह बात मैं सबसे अधिक स्पष्ट रूपमें देख आई मा।"

लगभग सात-आठ महीने हुए, व्रज वावू गाँवका घर छोड़कर कलकत्तेमें आकर रहने लगे हैं। विमल वावूके किराए पर लिये गये अच्छे मकानमें जानेको रेणु किसी तरह तैयार नहीं हुई। व्रज वावूके वहुत कुछ सुस्थ हो उठनेसे रेणु जिद करके कम किराएके एक छोटेसे एक ही खंडके मकानमें आकर रही है। पिताकी वीमारीमें असहाय अवस्थामें, लाचार होकर दूसरेकी सहायता ग्रहण करनी पड़ी थी, लेकिन वरावर औरका मुँह ताकते रहनेको—दूसरेका आश्रय लेनेको वह राजी नहीं है। इस चुप्पे स्वभावकी सुशील लड़कीकी सम्मति या असम्मति कितनी सुदृढ और दुर्लंघ्य है, यह इस घटनाके वाद सव समझ गये हैं।

रेणुने थोड़ेसे वेतनकी एक दासी रख ली है। घरके कामकाज और देव-सेवासे जो अवकाश मिलता है, उसमें वह खुद छोटे वच्चोंके लिए जाँघिया, पेनी, फ्राक आदि सीं लेती है। ऊनके मोजे, टोपी, स्वेटर वुनती है। आचार, जेली और वड़िया तैयार करके दासीके हाथों दूकानदारोंके पास वेचनेको भेज देती है।

खुली छतके ऊपर कारोगेट (पनालीदार) टीनसे छाई हुई एक सीढियोंवाली कोठरी है। उस कोठरीको साफ करके सजाकर ठाकुरजीका स्थान वनाया गया है। व्रज वावू खाने-पीने और सोनेके समयको छोड़कर हर घड़ी उसी पूजाकी कोठरीमें ही रहते हैं। गिरस्ती किस तरह चलती है, खर्चके लिए पैसा कहाँसे आता है, इसकी खवर जानना नहीं चाहते। जाननेसे डरते हैं। रेणुके सिवा और किसीसे भी वहुत कम वोलते या मिलते हैं।

शारदाने आशका की थी कि सामग्री लौट आनेसे सविताको वड़ा धक्का लगेगा। इसीसे घर पहुँचकर वह सामानसे भरा झोआ चुपकेसे नीचेके खण्डकी कोठरीमें रखवाकर ऊपर चढ़ गई।

सविता अपनी कोठरीमें बैठी पंजिका (पचांग) के पन्ने उलट रही थी। शारदाको देखकर उसने प्रश्नकी दृष्टिसे उसकी तरफ ताका।

कोठरीके फर्शपर सविताके पास वैठकर शारदाने कहा—काका वावू अव अच्छे हैं मा।

"और रेणु?"

"रेणु भी ठीक है।"

सविताने और कोई प्रश्न न करके फिर पचांगके पन्नोंमें मन लगाया।

शारदाको विस्मय हुआ। और दिन रेणुसे भेंट करके जब वह घर लौटती थी, तो देखती थी सविता उत्कंठित प्रतीक्षाके साथ उसकी राह देख रही है। उसके बाद कितने सतृष्ण आग्रहसे एकके बाद एक प्रश्न करके सब हाल—सब बातें ब्योरेके साथ जानना चाहती थी।—रेणु क्या करती थी? उसने क्या क्या कहा? उसने बाल बाँधे थे कि नहीं? कपड़े धोये थे कि नहीं? रेणु पहलेसे कुछ दुबली हो गई है या वैसी ही है—इत्यादि। व्रज बाबूकी अपेक्षा रेणुके बारेमें ही सविता अधिकतर जानना चाहती है, यह भी शारदाने लक्ष्य किया है।

कितनी ही देर चुपचाप बीत गई। शारदा आप ही आप कहने लगी—उनका अभाव ऐसा कुछ अधिक नहीं है मा, जिसके लिए आप इतना अधिक सोचती हैं। सिर्फ दो प्राणी हैं। खर्च ही क्या है, और काम ही कितना है? इसीसे जान बूझकर रेणुने पाचक नहीं रखा। उनकी घर-गिरिस्तीमें अभाव या कमी तो कुछ मैंने नहीं देखी।

सविताने पंजिकाका एक पन्ना मोड़कर, चिह्न रखकर, उसे बन्द कर दिया, फिर शारदाके मुँहकी ओर पूर्ण दृष्टिसे ताककर मृदु हास्यके साथ कहा—अभाव नहीं सही, लेकिन तुम वह सामानका झोआ कहाँ छिपाकर रख आई हो शारदा?

शारदा सिटपिटा गई। विस्मय-विस्फारित दृष्टिसे ताककर उसने देखा, सविताके मुखपर वेदनाका चिह्नमात्र नहीं है। बल्कि होठोंके कोनेमें हल्की सी हँसीकी रेखा है।

सविताने कहा—तुम शायद यह सोचकर डर गई हो कि सामान लौट आया सुनकर तुम्हारी मा दुःख और क्षोभसे खाट पकड़ लेगी, क्यों?

शारदाने लज्जित होकर कहा—नहीं, ठीक यह तो नहीं सोचा; मगर हाँ, डरी अवश्य थी कि आपके मनको भारी धक्का लगेगा।

सविताने स्नेहके साथ शारदाकी पीठपर हाथ [illegible]
लड़की, तुम्हारी तरह माके हृदयको और भी [illegible]
करना क्या सभीने सीखा है? इसके लिए [illegible]
सकती बेटी। उसका कुछ दोष नहीं है।

"यह कहनेकी जरूरत नहीं है। रेणु [illegible]
में सबसे अधिक स्पष्ट रूपमें देख आई मा।"

सविताने इस प्रसंगको टालकर सहज स्वरमें कहा—क्या कहकर आज उसने तुम्हें लौटा दिया ?

शारदाने आदिसे अन्त तक सब कहकर अन्तमें कहा—अच्छा मा, मैं एक बात आपसे पूछती हूँ। आपने क्या यह जानकर ही सामान भेजा था कि वह लौट आवेगा ?

सविताने सिर हिलाकर इशारेसे जताया कि नहीं। इसके बाद पूछा—शारदा, ठीक ठीक बताओ तो बेटी, सचमुच ही क्या उन लोगोंके यहाँ कोई अभाव, किसी चीजकी कमी, तुम नहीं देख आई हो ?

" भीतरकी बात मैं कैसे जान सकती हूँ मा ? "

" देखनेसे क्या जान पड़ा ? "

शारदा सिर नीचा करके चुप रही।

सविताने फिर प्रश्न नहीं किया—आज जब तुम गई, उस समय वह क्या कर रही थी ?

" ऊनकी टोपी बुन रही थी। "

सविताके चेहरेपर वेदनाके चिह्न सुस्पष्ट हो उठे। क्लेशव्यंजक स्वरमें उसने कहा—मैंने चेष्टा की थी, राजूके द्वारा उसका ऊनका सामान खरीदनेकी। लेकिन उसने राजूके हाथ उसे बेचना नहीं चाहा।

" क्यों मा ? "

" राजूने जिस कीमतपर उससे खरीदना चाहा था वह कीमत लेनेको वह राजी नहीं हुई। कहा था कि यह तुम लोगोंका सहायता करनेका कौशल है। "

शारदा स्तब्ध हो रही। सविताकी शान्त गंभीर मूर्तिकी ओर ताककर वह मनमें सोचने लगी कि इस स्थिर शान्तिकी आड़में कैसा विक्षुब्ध तूफान उठ रहा है—दुनियामें किसीको इसकी खबर नहीं है।

शारदाने कहा—मा, सुना था, रेणुके लिए एक अच्छे लड़केका सम्बन्ध जो डाक्टर है, देवता लाये थे। उस सम्बन्धका क्या—

उठती हुई लम्बी साँसको दबाकर सविताने कहा—वह नहीं हुआ। लड़कीने ब्याह न करनेका प्रण कर लिया है।

शारदाने धीरे धीरे कहा—ऐसी बुद्धिमती लड़की होकर भी वह—

उसकी बात पूरी होनेके पहले ही सविताने कहा—सुना है, उसने कहा कि हिन्दू घरकी लड़कीको दो बार हल्दी नहीं चढ़ती। वाग्दत्ता कन्या भी विवाहिताके ही समान होती है। मेरे ब्याहका मामला तो वाग्दानके बाद बहुत दूर तक आगे बढ़ गया था। मैं नहीं चाहती कि अब दुबारा वही सब बातें हों। तुम लोग मेरे ब्याहकी चेष्टा न करो राजू दादा। मैंने जान लिया है, उससे मेरा भला न होगा।

सविताके चुप होनेपर शारदा व्याकुल कंठसे कह उठी—यही अगर लड़कीका मन है, तो न हो, उसी पात्रके साथ लड़कीके ब्याहकी चेष्टा कीजिए न, जिसके साथ उसके हल्दी तक चढ़ गई थी। भाग्यमें होगा तो स्वामी शायद पागल नहीं भी निकले।

सविताने मुरझाई हुसी हँसकर कहा—उसी पात्रके साथ तो सात-आठ महीने हुए, रेणुकी वैमात्र बहन रानीका ब्याह हो गया है।

सुनकर शारदा स्तंभित हो गई।

एक मर्मभेदी दीर्घ श्वास छोड़कर सविताने कहा—मेरी गलतीसे ही ऐसा हुआ।

शारदा एकटक सविताका मुँह ताकती रही।

सविता धीमे स्वरमें, जैसे स्वगत भावसे ही कहने लगी—मैं अगर इस तरह जिद करके रेणुका ब्याह रोक न देती तो शायद उन लोगोंको यों इतनी जल्दी गृहहीन होकर राहमें न खड़ा होना पड़ता। अवश्य एक-न-एक दिन उन लोगोंको राहमें तो खड़ा होना ही पड़ता, पर मैंने वह काम जल्दी करा दिया, कमसे कम रेणुकी विमाता इतने सहजमें चट करके सम्पत्तिका हिस्सा बँटाकर अलग हो जानेका बहाना न पाती।

शिवूकी माने आकर कहा—मा, दादा बाबू आ गये हैं; चलिए, उन्हें खानेको दीजिए। रात हो रही है।

शारदा चट उठकर खड़ी हो गई। बोली—आपको जाना न पड़ेगा मा, मैं ही जाकर तारक बाबूको भोजन परोसे देती हूँ। आप बल्कि तनिक विश्राम कीजिए।

सविताने कहा—नहीं शारदा, चलो, मैं भी चलती हूँ। वह भोजनके समय मुझे पास न देखकर व्यस्त हो उठेगा।

शारदाके साथ सविता भी नीचे उतर गई।

* * * *

हरिनपुरसे लौटकर सविताने रहनेका घर बदल दिया है। रमणी बाबूके उस पुराने घरमें पैर रखनेको उसका जी नहीं चाहा। नियतिके दुर्लंघ्य विधानसे बारह वर्षसे अधिक लम्बे समय तक जहाँ, प्रतिक्षण आत्महत्याकी असह्य यन्त्रणा भोगकर भी, एक तरहकी मोहाच्छन्न अवस्थामें अर्ध-अचेतनकी तरह उसे बिताना पड़ा, उसी घरकी ओर आज दृष्टिपात करनेमें आतङ्कसे उसका शरीर सिहर उठता है। अथच इसी घरसे आश्रयच्युत होनेकी सभावनासे अभी उस दिन भी तो उसे चिन्ताके मारे और कुछ सूझा ही न था। दीर्घ काल तक अपनी रुचिको निष्ठुरभावसे निष्पेपित कर, स्वभावके विपरीत प्रभावमें आगे बढ़नेके फलस्वरूप जिस असीम थकावटसे वह चूर चूर हो पड़ी थी, वह भार क्रमशः दिन पर दिन दुःसह होता जा रहा था।

विमल बाबूने जो घर व्रजबाबू और रेणुके लिए ठीक कर रक्खा था, उसी घरमे सविता आ गई है। विमल बाबू कलकत्तेमें नहीं है। व्यापार-सबधी जरूरी तार पाकर सिंगापुर लौट गये हैं। विमल बाबूने राखालसे अनुरोध किया था कि सविताके देखने-सुननेका भार लेकर वह इस नये घरमें आकर रहने लगे। किन्तु नई माके रक्षणावेक्षणका भार लेनेको राजी होनेपर भी इस घरमें रहनेमे राखालने अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। तब विमल बाबूसे यह जानकर तारकने अपनी इच्छासे नई-माके डेरेमें रहकर उनकी हिफाजतका भार ग्रहण कर लिया है।

सविताकी अनुकूलतासे तारकने बर्दवानकी स्कूल-मास्टरी छोड़कर हाईकोर्टमें प्रैक्टिस शुरू कर दी है। घरकी बाहरी बैठकमें उसके बैठने और मवक्किलोंसे बातचीत करनेका प्रबध है और एक वकीलके उपर्युक्त साज-समानसे उस स्थानको निर्दोष भावसे सजा दिया गया है। विमल बाबूने स्वय व्यवस्था करके उसे हाइकोर्टके एक लब्धप्रतिष्ठ वकीलका जूनियर कर दिया है। विमल बाबूकी ही छोटी मोटरसे वह अदालत जाता-आता है। तारककी पोशाक गाउन आदि सब जरूरी सरजाम सविताने खरीद दिया है।

तारकका भोजन समाप्त होनेपर सविता ऊपर चली आई थी। बहुत देर बाद शारदाने ऊपर आकर कहा—मा, आज भी क्या आप कुछ भी मुँहमें न डालेंगी?

सविताने कहा—नहीं शारदा, मेरे गलेके नीचे कुछ न उतरेगा। हाँ, तुम अगर मेरे कारण उपास करना चाहो तो फिर मुझे खाना ही पड़ेगा, लेकिन मैं जानती हूँ, तुम अपनी माके ऊपर ऐसा जुल्म न करोगी।

परिपूर्ण यौवनके उच्छ्वसित वसन्तका समय, जब जीवन स्वतः ही आनन्दकी प्याससे आतुर होता है, उसे अकेले नि.सग अवस्थामें विताना पड़ा है। न मिला है हृदयका अन्तरग साथी, न पाया है यौवनका सजीव साथी। उसी एकान्त अकेलेपनके बीच एकाएक एक दिन कहाँसे क्या आकस्मिक विप्लव हो गया, उसे वह स्वय भी स्पष्ट नहीं समझ पाई। जब चेत हुआ, तब आसपास आँख खोलकर देखा कि सारे विश्व-ससारमें उसका कोई नहीं है, कुछ नहीं है। स्वामी, सन्तान, घर, परिजन, ससार, प्रतिष्ठा, मान-मर्यादा सभी बाजीगरके खेलकी तरह गायब हो गये हैं। भय-चकित चित्तसे सहसा उसने अनुभव किया कि ससार और समाजके बाहर बांधवहीन, अवलंबन-हीन वह अकेली शून्यमें लटकी हुई है। पैर टिकाकर खड़े होने लायक जमीन भी पैरोंके नीचे अब आश्रयके रूपमें नहीं है।

जीवनके इस आकस्मिक सर्वनाशकी घड़ीमें जिस अत्यन्त कीचड़से भरी आश्रय-भूमिके बहुत ही तग घेरेके भीतर उसने अपनेको खड़ा किया है, वह समाजके ज्ञान और बुद्धि-विवेचनाके बिल्कुल बाहर है। केवल जैव-प्रकृतिकी स्वाभाविक आत्मरक्षाप्रवृत्तिवश ही जीवन-धारणका अनिवार्य प्रजोजन है। किन्तु जितने ही दिन बीतते गये उनके साथ साथ उस कलुषित आश्रयकी कीचड़, गदगी और कदर्यतासे उसका शरीर और मन प्रतिदिन घृणासे सकुचित होता रहा है, जाग्रत आत्मचेतना हर घड़ी पश्चात्तापके मर्मभेदी आघातसे आहत और जर्जर हुई है। तो भी इस असत्य और अवांछित सकीर्ण आश्रयको छोड़कर और भी अनिश्चितमें फाँद पड़नेपर वह भरोसा नहीं कर सकी। अपनी निपट असहाय अवस्थाको समक्ष कर भीतर-ही-भीतर काँप उठी है। इसी तरह उसके दिन पर दिन, महीने पर महीने, सालके बाद साल लगातार बेचैनी और बेबसीमें कट गये हैं।

जीवनके प्रारम्भके समय अगर कोई बलिष्ठ प्राणवान् पुरुष उसके जीवनकी राहमें आ खड़ा होता, तो आज उसके उज्ज्वल नारी-जीवनकी दीप्तिसे गृहस्थी और समाज क्या जगमगा न उठता? प्रसन्न देह और मनके, आनन्दित हृदयके अनुकूल आवेष्टनके प्रभावसे वह क्या आज लक्ष्मीस्वरूपा पत्नी, आदर्श जननी, ममता-माधुर्यमयी नारी नहीं बन जाती? काहेके लिए उसके जीवनके उदयकी उषा इस तरह असमयके कुहासेमें विलीन हो गई? घड़ी भरमें इतना बड़ा प्रलय किस तरह सघटित हो गया, जो स्वय उसके लिए भी स्वप्नातीत था।

सविताके इस अगाध और आँसुओंसे तर चिन्ता-प्रवाहमें सहसा बाधा आ पड़ी। दरवाजेको बार बार जल्दी जल्दी पीटनेके साथ तारकका कंठस्वर सुनाई दिया—नई-मा—नई-मा, जरा दरवाजा खोलिए—

सविता उठ बैठी। जब तक वह अपनेको सँभाले और अस्तव्यस्त वस्त्रको जरा ठीक करे, बार-बार द्वारपर आघात और लगातार तारककी व्यग्र पुकार जारी रही।

जल्दीसे आँसू पोंछकर और फुर्तीसे देह और माथेपरका वस्त्र ठीक करके सविताने द्वार खोल दिया। तारककी इस व्यस्ततासे यह सोचकर कि घरमें कोई दुर्घटना हो गई है, वह शंकित हो उठी थी। दरवाजा खोलकर बाहर निकलते ही तारकने कहा—सुना है, आप रोज ही रातको कुछ खाती-पीती नहीं है? आज भी कुछ मुँहमें नहीं डाला। तबियत क्या बहुत ही खराब है?

तारकका प्रश्न सुनकर सविता विस्मय और खीझसे स्तब्ध हो गई, कोई उत्तर नहीं दिया।

तारकने फिर प्रश्न किया।

सविताने शान्त स्वरमें उत्तर दिया—नहीं, मैं अच्छी हूँ।

तारकने कहा—तो फिर क्यों नित्य इस तरह उपवास करती हैं? ना, ना मैं यह नहीं सुनूँगा। कुछ-न कुछ खानेकी जरूरत है। कल ही मैं डाक्टरको ले आऊँगा।

तारकके स्वरसे यथेष्ट उद्विग्नता प्रकट हुई।

सविताने कहा—यह सब हंगामा न करो तारक। मैं मना करती हूँ।

तारकने कहा—तो फिर बताइए, अकारण उपवास करके शरीरके ऊपर ऐसा अत्याचार क्यों कर रही हैं?

"रात हो गई, जाकर सोओ तारक।"

सविताकी आवाजमें हद दर्जेकी क्लान्ति फूट पड़ी।

तारक इससे कुंठित हो गया। बोला—अच्छा, आपकी जो खुशी हो करें। मैं सब हाल लिखकर सिंगापुर भेजता हूँ। वह आकर अगर कहें कि तारक, तुम्हें मैं देखने-सुननेकी जिम्मेदारी सौंपकर गया था, तुमने मुझे जनाया क्यों नहीं, तो मैं उनको क्या जवाब दूँगा?

सविताका हृदय जल उठा। किन्तु उसने धीरभावसे ही कहा—मैंने दो दिन खाया नहीं, या तीन दिवस सोई नहीं, इसके लिए वह किसीसे भी कैफियत तलब नहीं करेंगे।

"तो फिर मेरे यहाँ रहनेकी क्या जरूरत है नई-मा?"

तारकके स्वरमें रूठनेकी झलक थी।

सविताने थके हुए स्वरमें कहा—आज मैं बहुत ही थकी हुई हूँ तारक। बहस करनेकी शक्ति नहीं है। सोने जाती हूँ।

सविताने धीरे धीरे फिर द्वार बन्द कर लिया।

शारदा सीढ़ीके सिरेपर ही खड़ी थी। तारक लौटते समय उसे देखकर तीव्र स्वरमें कह उठा—यह बात आपने मुझे क्यों नहीं बतलाई कि नई-मा रोज रातको उपासी रहती हैं? आज शिबूकी माके मुखसे मुझे मालूम हुआ।

"आपने तो उनके सम्बधमें कुछ जानना नहीं चाहा।"

शारदाके कठकी निर्लिप्ततासे तारक गरज उठा—क्या, इतना बड़ा मिथ्या अपवाद! मैं नई-माकी खबर नहीं रखता? देखने-सुननेमें त्रुटि करता हूँ?

"बेकार चिल्लाइए नहीं। मैंने यह सब कुछ नहीं कहा।"

"निश्चय ही कहा है। मैं समझ गया, मेरे विरुद्ध एक षड्यन्त्र चल रहा है। आज रातको ही मैं सब विमल बाबूको लिखे देता हूँ।"

"लिख आप सकते हैं। लेकिन नई-मा उससे नाराज होंगी।"

"अपना कर्त्तव्य मैं करूँगा ही। सारी जिम्मेदारी वह मेरे ही ऊपर छोड़ गये हैं, यह बात मैं भूल नहीं सकता।"

"नई-माकी रुचि अरुचिके ऊपर जुल्म करनेको वह किसीसे नहीं कह गये हैं। कहेंगे ही कैसे? यह अधिकार किसीको नहीं है।"

व्यंगके स्वरमें तारकने कहा—तो फिर यह अधिकार किसे है, जरा सुनूँ? आशा करता हूँ, राखाल बाबूको नहीं।

शारदाकी दृष्टि कठोर हो गई। अपनेको प्राणपणसे सयत करके कोमल स्वरमें ही उसने कहा—नई माके ऊपर जोर करनेका अधिकार आज अगर किसीको है तो राखाल बाबूको ही, और किसीको नहीं।

धीमे स्वरमें कही गई इस बातने तीक्ष्ण नोकवाली छुरीकी तरह तारकको छेद दिया।

गूढ़ क्रोधको दवा न पानेके कारण तारक कह उठा—सो तो है ही। इसीसे वह नई-माको असहाय अवस्थामें देखने-सुननेका भार तक अपने ऊपर नहीं ले सके! नई माके घरमें आकर रहनेसे कहीं उनके अच्छे नाममें बट्टा न लग जाय!

शान्त गलेसे शारदाने कहा—जो लोग स्वार्थ सिद्ध करनेके प्रयोजनसे सब कुछ करनेको तैयार होते हैं, राखाल बाबू उन लोगोंमें नहीं हैं। नई-माको देखने-सुननेका भार लेनेकी अपेक्षा नई-माकी ओरसे ही बहुत बड़े कर्त्तव्यका भार वह लिये हुए हैं। इसे आप नहीं जानते, इसीसे समझ नहीं पावेंगे।

उत्तरकी राह न देखकर शारदा सीढ़ियोंसे नीचे उतर गई।

दोपहरके समय तुरंतकी नहाई हुई सविता भीगे हुए घने केशोंकी राशिको पीठके ऊपर फैलाये हुए धूपकी ओर पीठ करके निविष्ट चित्तसे पत्र लिख रही थी। पहिनी हुई साड़ीकी काली किनारी उसकी शंखकी तरह सुंदर और गोरी गर्दनके एक ओर लिपटी हुई पीठके ऊपर तिरछी पड़ी हुई थी। उदास, विषाद-भरे, मानसिक व्यथाकी छायाकी छापसे युक्त, शीर्ण, सूखे हुए मुखमण्डलपर एक करुण शोभा खिली हुई है।

शारदा वहीं बरामदेके एक किनारे बैठी अपने एक शेमीजकी सिलाई कर रही थी। रास्तेकी ओरसे देखा कि राखाल आ रहा है। सिलाई हाथमें लिये ही वह सदर-दरवाजा खोलनेके लिए नीचे उतर गई।

कुंडा खटकानेकी जरूरत नहीं पड़ी; खुले हुए द्वारमें शारदा राह देख रही है, यह देखकर राखालका मन भीतरसे कुछ खुश हो उठा। पर उसे प्रकट न करके राखालने कहा—ठीक दोपहरको सदर दरवाजेमें क्यों खड़ी हो शारदा?

"एक आदमीकी राह देख रही हूँ।"

"कौन है वह? निश्चय ही कोई फेरीवाला होगा!"

"ऊँह, आप जान नहीं सके।"

"तुम्हीं न हो जना दो।"

"आपही अगर कोई जानना न चाहे तो और कोई दूसरा उसे नहीं जना सकता देवता!"

"तुम्हारी बात तो एक पहेली जान पड़ती है!"

"सुना है, खयाली आदमियोंको हर एक बात पहेली जान पड़ती है। अच्छा जरा खिसकिए, दरवाजा बन्द करूँ।"

शारदा दरवाजेकी जंजीर चढ़ाकर राखालके साथ भीतर दालानमें आई।

राखालने जरा हँसकर कहा—क्या और दिन भी इस तरह सन्नाटेकी दोपहरीमें किसीके लिए दरवाजेपर खड़ी होकर राह देखती रहती हो शारदा?

उसके गलेमें स्वच्छ परिहासका हलका सुर था।

शारदाने क्षणभर राखालके मुँहकी ओर ताककर देखा कि यह वक्रोक्ति या व्यंग तो नहीं है। इसके बाद उसने भी हँसकर जवाब दिया—हाँ, नित्य ही खड़े रहना पड़ता है। जिस दिन पहले आपने मुझे देखा था, उस दिन भी तो एक आदमीकी राह देखती हुई इसी तरह दरवाजा खोले अपेक्षा कर रही थी।

"यह बात है? कौन थे वह?"

शारदाने हँसकर कहा—मेरे परम हितैपी बधु मरण देवता। उनके आनेका द्वार तो उस दिन इसी तरह अपने हाथसे खोल दिया था। किन्तु उस खुले द्वारसे मरण-देवताके बदले आये मर्त्य-लोकके देवता।

राखालके कानोंकी जड़ लाल हो उठी। बातको हलका करनेके लिए ही उसने कहा—जाने दो, कोई अपदेवता नहीं घुस आया, यही यथेष्ट है।—चलो ऊपर चलें। नई-मा क्या इस समय विश्राम कर रही हैं?

"नहीं, चिट्ठी लिख रही हैं। अभी ही तो उन्होंने भोजन किया है।"

"यह क्या! इतनी देरको!"

"नित्य ही तो ऐसा होता है। घरका सब काम-काज अपने हाथसे कर लेनेके बाद स्नान-जप-पूजा आदि आह्निक जब समाप्त कर लेती हैं तब तीन बज जाते हैं। इसी समय भोजन करने बैठती हैं। आज बल्कि कुछ जल्दी हो गया है।"

"इसके क्या माने? अपने हाथसे इन सब कामोंके करनेका अभ्यास तो नई-माको नहीं है। ऐसा करनेसे वह बीमार पड़ जायँगी। नौकर, चाकर, महरी, रसोइया, ये सब क्या अब नहीं हैं? वह अकेली हैं, ऐसी क्या उन्हें कमी है—"

"कमीके कारण नहीं देवता।"

"फिर?"

"यह उनका कठिन आत्म-दमन है।"

राखाल चुप रहा।

शारदाने उसी भाव छोड़कर कहा—चलिए, बैठिए।

राखालने शारदाके मुँहकी ओर ताककर कहा—मैं दोपहरके समय आकर नई-माके विश्राममें तो बाधा नहीं डालता शारदा ?

"अगर ऐसा जान पड़ता है आपको, तो आप इस समय नहीं आया करें।"

राखालने जरा इधर-उधर करके कहा—लेकिन इस समयको छोड़कर और समय आनेका अवकाश जो मुझे नहीं है शारदा !

होठ दबाकर दबी हँसीके साथ शारदाने जवाब दिया—यह मैं जानती हूँ।

राखालने सन्देहके स्वरमें कहा—इसके माने ? तुम इस बारेमें क्या जानती हो ?

"जानती क्यों नहीं ! इस समय इस घरके नये वकील बाबू अदालतमें रहते हैं। इसीलिए आपका मित्र-सङ्कट—नहीं, बन्धु सम्मिलन होनेकी सम्भावना नहीं है।"

"हूँ, खरियासे हिसाब लगाना सीख गई हो। अब चलो, ऊपर चलोगी या खड़ा रखोगी ?"

शारदाने कहा—उस तरफकी उस बेंचके ऊपर चलकर जरा बैठो देवता। माकी चिट्ठी समाप्त होनेमें अभी जरा देर होगी। उसी अवकाशमें आपसे मैं कुछ बातें पूछना चाहती हूँ।

"चलो, ऊपर चलकर ही सुनूँगा।"

"माके सामने मैं कह न सकूँगी। मुझे अटक मालूम होगी।"

शारदा राखालको एकतल्लेकी दालानके उत्तर ओर ले गई। एक तरफ पीठवाली एक बेंच पड़ी हुई थी। अपने आँचलसे उस बेंचके ऊपरकी धूल झाड़कर शारदाने कहा—बैठिए।

राखालने बैठकर कहा—अब ? तुम्हारे लिए आसन ?

"मैं खड़ी ही ठीक हूँ, मेरी बातें थोड़ी ही हैं। आपको बहुत देर अपेक्षा न करनी होगी।"

"तथास्तु। अब कथाका आरंभ हो।"

"आप इस तरह ठट्ठा तमाशा करेंगे तो कैसे कहूँगी ?"

"अच्छा, ठट्ठा-तमाशा दोनों ही मैंने वापस लिये। अब कहो।"

शारदा राखालके पाससे कुछ दूर दीवालका सहारा लिये खड़ी थी। हाथके असमाप्त सिलाईके कामको आँखें नीची किये कुछ देर तक उलटती-पलटती हुई कुछ

राखाल उदास नेत्रोंसे आँगनकी ओर ताकता रहा, कुछ बोला नहीं।

शारदाने कहा—माके बारेमें आप अविचार न कीजिएगा। आप भी अगर रूठकर माको गलत समझेंगे तो पृथ्वीपर सत्यके ऊपर निर्भर रहा ही न जा सकेगा। फिर मनुष्य जियेगा कैसे?

राखालने नजर नीची कर ली। उसे कहनेके लिए कुछ नहीं सूझ पड़ा। जवाब देनेके लिए कुछ था भी नहीं।

"जरा माके पास चलो देवता। आज आपके सिवा ऐसा कोई नहीं है जो उनके मनकी इस मर्मभेदी आगकी ज्वालाको जरा-सा भी शान्त कर सके।"

"अबसे मैं तुम्हारे ही कहनेके माफिक चलनेकी चेष्टा करूँगा शारदा।"

भरे हुए गलेसे शारदाने कहा—आप केवल मेरे जीवनदाता ही नहीं हैं, मेरे गुरु भी हैं। मैं अंधी थी, आपने ही मुझे दृष्टि दी है। मैं अज्ञान थी, आपने मुझे ज्ञान दिया। आपके दृष्टिकोण—देखनेके ढंग—की स्वच्छतासे आज मेरी दृष्टि बदली है। मेरे अन्तर्यामी जानते हैं कि मैं यह बात तनिक भी बढ़ाकर नहीं कह रही हूं।

२३

विमल बाबू सिंगापुरसे कलकत्ते लौट आये हैं।

तारककी चिट्ठीसे सविताके शारीरिक कष्ट-साधनकी खबर पाकर उन्होंने उसे लिखा था—"तुम्हारी नई-मा खुद जो करके तृप्ति पावे, उसमें मेरा बाधा देना संगत नहीं है।"

यह पत्र पाकर तारक एक तरहसे बच गया। कारण, कानूनकी नई-नई प्रैक्टिसमें वह दिन-दिन अधिक व्यस्त होता जा रहा है, अब और तरफ ध्यान देनेकी फुर्सत बहुत ही कम उसे मिल पाती है।

अब वह नई-माके नहाने-खानेके नित्य अनियम, उपवास और परिश्रमके कठोर अत्याचार, किसी बातके लिए एक शब्द भी नहीं मुँहसे निकालता। गंभीर मुखसे और यथासम्भव चुप रहकर नहाना-खाना समाप्त कर बाहरकी बैठकमें—अपने आफिसमें—चला जाता है।

सविता हँसती है। एक दिन पास बुलाकर कहा—तारक, माके ऊपर नाराज हो गया?

मुख अन्धकार करके तारकने कहा—यह अधिकार तो मुझे नहीं है नई-मा। मैं एक राहका कंगाल ही तो हूं।

सविताने स्नेहके साथ कहा—छिः, ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए भैया।

तारक और भी कुछ व्यंग बातें खोंचा देकर सुनानेवाला था, लेकिन शारदाको आते देखकर झिझक गया। वह अच्छी तरहसे जानता है कि नई-माके कुछ न कहनेपर भी शारदा यह नहीं सहन करेगी। हो सकता है, ऐसे अप्रिय सत्य अभी बिना किसी संकोचके मुंहपर स्पष्ट रूपसे कह बैठेगी, जिन्हें सहना उसके लिए बहुत ही कठिन है, अथ च प्रतिकारका भी उपाय नहीं है।

विमल बाबूने अपने कलकत्ता लौटनेकी खबर सविताको पत्र और तार भेजकर जना दी थी। सविताने यह खबर सुनकर तारक उनकी अभ्यर्थना करनेके लिए सवेरे उठकर ही जहाजकी जेटीपर उपस्थित हो गया था। जाकर देखा, विमल बाबूकी छोटी और बड़ी दोनों मोटरगाड़ियां लेकर उनके मैनेजर, जमादार और दरबान वगैरह वहां मौजूद हैं। विमल बाबूने तारकको अपनी गाड़ीमें बुला लिया।

मोटरमें विमल बाबूने तारकसे सबसे पहले यही प्रश्न किया कि राजू अच्छी तरह तो है तारक?

विस्मित होकर तारकने पूछा—क्यों, उसे क्या हुआ है?

"नहीं, यों ही पूछता हूं। मैंने उसे लिखा था न, कि अगर उसे कुछ असुविधा न हो तो यहीं जेटीपर ही आकर मिल ले।"

तारकके मुखकी चमक क्षणभरमें ही बुझ गई। सूखे हुए गलेसे उसने प्रश्न किया—शायद कोई आवश्यक प्रयोजन था?

"हां। आया नहीं, यह देखकर जान पड़ता है, या तो उसकी कुछ तबियत खराब हो गई है, या मेरी चिट्ठी नहीं मिली।"

तारकने कहा—नहीं, अभी परसों शामको ही तो उसे मैंने अपने डेरेपर देखा है।

विमल बाबूने कहा—तो फिर संभवतः किसी काममें अटक जानेके कारण नहीं आ पाया। ड्राइवरसे कहा—शिवचरन, पटलडॉगा चलो।

तारकने कहा—मुझे जरा पहले उतार दीजिएगा विमल बाबू। इस मोहल्लेमें आज मेरा एक जरूरी कन्सल्टेशन है।

"तो यह कहो कि तुम्हारी वकालत खूब चमक उठी है?"

"सो आपके आशीर्वादसे निहायत बुरी नहीं है। प्रायः नित्य ही कोई-न-कोई मुकदमा रहता है।"

"अच्छा अच्छा, तुम जीवनमें उन्नति कर सकोगे।"

तारक विनम्र हास्यके साथ विमल बाबूके पैर छूकर गाड़ीसे उतर गया।

पटलडाँगामें आकर देखा गया कि राखालका डेरा डबल तालेसे बन्द है। खबर पानेका या पता लगानेका भी कोई उपाय वहाँ नहीं है।

विमल बाबू वहाँसे लौटकर सीधे सविताके मकानपर आकर उतर पड़े। उनकी आवाज सुनकर शारदाने चटपट बाहर निकलकर हँसते हुए चेहरेसे प्रणाम किया। विमलबाबूकी ओर देखकर बोली—आप बहुत दुबले हो गये हैं। काले भी बहुत हो गये हैं। उस देशकी आब-हवा शायद अच्छी नहीं है।

विमल बाबूने हँसकर जवाब दिया—संसार-भरकी माताओंकी नजर हमेशासे यही एक बात कहती आई है। लड़का कुछ दिन बाहर घूमकर जब घर लौटकर आता है, तब माताएँ उसे सिरसे पैरतक देखकर, देह और माथेपर हाथ फेरकर कहेंगी ही कि आहा, मेरा बच्चा आधा होकर लौटा है। इसका प्रमाण कहाँ है शारदा मा, कि मैं पहले इससे कम काला था या इससे ज्यादा मोटा था?

शारदा शरमा गई और विमल बाबूकी बात टालकर बोली—बैठिए, माको बुलाये देती हूं।

बुलाना नहीं पड़ा। चौकेसे सविता स्वयं बाहर निकल आई। मिलकी अधमैली मैली मोटी धोती पहने थी। शुभ्र ललाटसे हटकर कानोंके पास रूखे केशगुच्छ काले रेशमकी तरह डोल रहे थे। चेहरा पहलेकी अपेक्षा अधिक दुर्बल और शीर्ण हो गया था। बड़ी बड़ी आँखोंकी निष्प्रभ दृष्टिमें दबी हुई विषादकी छाया थी।

विमल बाबूको यह आशा नहीं थी कि वह सविताके शरीरकी दशा इतनी खराब देखेंगे। इसीसे चौंककर बोले—यह क्या, तुम्हारा शरीर इतना ज्यादा खराब कैसे हो गया? बीमार तो नहीं हो गई थीं?

भोरके अँधेरे आकाशमें जो पीला प्रकाश हुआ करता है, उसीकी तरह हलकी हँसीके साथ सविताने कहा—बीमार तो नहीं हुई। लेकिन तुमने जो मुझे लिखा था कि जहाजसे उतरकर अपने घर ही जाओगे। वहाँ नहा-धोकर, खा-पीकर विश्रामके बाद तीसरे पहर यहाँ आओगे। लेकिन यह तो देखती हूं कि एकदम धूलभरे पाँवों ही यहां पधारे हो।

शारदा अन्यत्र चली गई। जाती हुई शारदाकी ओर दृष्टिपात करके गलेको और जरा नीचा करके धीरेसे विमल बाबूने कहा—धूलभरे पैरोंसे ही देवीके दर्शन करनेका शास्त्र-विधान है।

"यह बात है।"

"विश्वास न हो पंजिका * खोलकर देख लो। लेकिन इसे छोड़ो। मेरे प्रश्नका उत्तर दो।"

"किस प्रश्नका ?"

"शरीर इतना अधिक खराब क्यों हुआ ?"

सविताके होठोंके कोनोंमें दबी हुई हँसी फूट उठी। विमल बाबूने ही क्षणभर पहले शारदासे जो कहा था, उसीकी अविकल नकल करके—कहनेके ढंगतकका भी—सविताने कहा—संसारके दयामयोंकी नजर हमेशासे असहाय दीन-दुखियोंके सम्बन्धमें यही एक बात कहती आ रही है।

सविताके मुँहसे अपनी ही बात दोहराई जाती सुनकर विमल बाबू जोरसे हँस पड़े। सविता भी हँसने लगी। अस्पष्ट वेदनाकी छायासे घिरे हुए घरका आकाश और हवाकी मलिनता जैसे बहुत दिन बाद आज उन्मुक्त हास्यकी स्वच्छ धारासे धुल गई।

विमल बाबूने कहा—तुमसे मैं हार मानता हूँ सवि—रेणुकी मा।

'सविता' कहते-कहते विमल बाबूने चटपट सँभलकर 'रेणुकी मा' कहा, इसपर लक्ष्य करके सविता जरा मुसकिरा उठी। फिर बोली—कहाँ स्नान भोजन करोगे ? यहाँ या घरपर ?

"जहाँ तुम कहो।"

"घर ही जाओ।"

"वहाँ मेरी अपेक्षा करके बैठा रहनेवाला कोई नहीं है, यह तुम जानती ही हो। हैं केवल नौकर-चाकर और कर्मचारी। दूरके नातेकी एक मौसी जरूर रहती

---

* बंगालमें जो जंत्री या पत्रांग छपता है, उसमें बहुत-से शास्त्रके विधि विधान और वाक्य भी लिखे रहते हैं। इस देशके पत्रांग या पत्रेसे उसमें अनेक विशेषताएँ रहती हैं। उसे पंजिका कहते हैं। पंजिकाका घर-घरमें प्रचार है और बंगलामें होनेके कारण औरतें भी उसे देख लेती हैं। —अनुवादक

है अपने एक जड़-बुद्धि लड़केको लेकर। लेकिन उनके लिए मेरा आना प्रसन्नताकी बात है या भयकी, यह ठीक निर्णय करना कठिन है।"

"कुछ भी हो, घर ही जाओ। वहाँ चाहे जो हो, वे सभी तुम्हारे आनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, यह बिलकुल ठीक है। वह चाहे प्रीतिसे हो चाहे भीतिसे। सीधे यहाँ आकर उतरना अच्छा न दिखाई देगा।"

"शायद निंदा होगी? किसकी होगी? तुम्हारी या मेरी?"

"तुम्हें किसकी जान पड़ती है?"

"होगी तो दोनोंका नाम उसमें शामिल होगा।"

"तो फिर अब देर क्यों करते हो?"

"सोचता हूँ कि मनकी विशेष अवस्थामें मिथ्या भी अनेक समय प्रशंसासे अधिक लुभावना होता है।"

"दार्शनिक तत्त्व रहने दो, अब घर जाओ।"

"जाता हूँ। लेकिन देखता हूँ, तुम मुझे—"

विमल बाबूके मुँहकी बात छीनकर सविताने कहा—किसी तरह यहाँसे भगा पाऊँ तो चैन पड़े। यही न? हाँ, यही बात है। इस समय इसीकी साधना कर रही हूँ दयामय! उसका कण्ठस्वर पीछेकी तरफ कुछ भारी हो उठा।

विमल बाबू विचलित हुए। अप्रत्याशित विस्मयसे इस असावधान घड़ीमें उनके मुखसे निकल पड़ा—सविता!

करुण हँसीके साथ विमल बाबूकी ओर ताककर सविताने कहा—फिर सब बातें कहूँगी, इस समय कुछ न पूछो।

"ना, मैं मन जाने बिना घर नहीं जाऊँगा। तुमको बताना होगा कि क्या हुआ है।"

"बताऊँगी। तीसरे पहर आना। रातको बल्कि यहीं खाना। मैं आजकल अपने ही हाथसे राँधती हूँ।"

विमल बाबूने कहा—यही होगा। किन्तु देखो, उस समय मुझे ठगकर और बातोंमें न भुला देना।

"डरो नहीं। जीवनमें एक अपनेको ठगनेके सिवा किसी औरको ठगा या धोखा दिया हो, याद नहीं पड़ता।"—सविताका गला काँप उठा।

विमल बाबूने लक्ष्य किया, सविता आज सहज परिहासके उत्तरमें भी जैसे किसी एक भारी वेदनासे गम्भीर हो उठती है। उनसे यह समझनेमें गलती नहीं हुई कि यह उनके हृदयमें छिपे हुए किसी एक विक्षोभका ही बाहरी लक्षण है। इसीसे और कोई भी बात न करके तीसरे पहर ही आनेको कहकर विदा हो गये।

सन्ध्यासे कुछ पहले विमल बाबू जब आये, उस समय सविता इस वेलाकी रसोई बना चुकी थी और सन्ध्याका स्नान समाप्त करके साफ सुथरे वस्त्र धारण किये तिमंजिलेकी छतपर एक डेक चेयरपर बैठी थी। सामने एक और कुर्सी रखी थी। शुभ्र आवरणसे ढकी एक छोटी तिपाईके ऊपर स्वच्छ कॉचके ग्लासमें पीनेका साफ पानी ढँका रखा था। एक डिब्बा विलायती सिगरेट, जिस ब्राण्डका विमल बाबू हमेशा पीते हैं, रखा था। तिपाईके ऊपर एक दियासलाईकी डिब्बी और राख झाड़नेकी पीतलकी चमचमाती हुई ऐश ट्रे।

विमल बाबूके आनेपर कमल-नालसे गौर-वर्ण शरीरको झुकाकर सविताने उनके दोनों पैर छूकर प्रणाम किया।

विमल बाबू व्यतिव्यस्त होकर पीछे हट गये। बोले—यह क्या करती हो, यह क्या पागलपन है—

दोनों विशाल नेत्रोंको उज्ज्वल करके सविताने कहा—पागलपन नहीं, तुम्हारे प्रधान प्रश्नका यही उत्तर है। सवेरे आमन्त्रण किया, सन्ध्याको प्रणाम निवेदन किया। अब तो और कुछ मुझसे नहीं पूछोगे दयामय?

सविताके कण्ठस्वरमें ऐसा एक अश्रुत-पूर्व माधुर्य बरस पड़ा कि विमल बाबू जरा देर अभिभूतकी तरह खड़े रहे। उन्हें जान पड़ा कि यह जैसे वह पूर्व परिचित सविता नहीं है जिसको असहाय अवस्थामें रमणी बाबूके सुसज्जित भवनमें उन्होंने दिन-पर-दिन निगूढ़ वेदनासे मौन छायाके तले विषाद-भरी प्रतिमाकी तरह बार-बार देखा है। आज भी सवेरे चौकेके सामने जिसकी मलिन क्लिष्ट मूर्तिको देखकर वेदनाने उनके हृदयको भीतरसे मथ दिया था—यह जैसे वह सविता भी नहीं है। इस समय उसके खूब गोरे, क्षीण और कृश मुखमण्डलमें एक प्रशान्त कोमल स्निग्धता थी। उस मुखमें हृदयके आवेगकी अत्यन्त अधिकतासे उत्पन्न उच्छ्वासकी दीप्ति या चमक न थी, शरमीली प्रेमिकाकी प्रणय-सुलभ लज्जाके रंगकी लालिमा नहीं थी। दोनों सुकुमार होठोंमें प्रीति-स्निग्ध संयत हास्यकी माधुर्यमयी सुषमा थी। विषादयुक्त दोनों शान्त नयनोंमें दूरतक

फैलनेवाली दृष्टिका विकास था। आज सकल अगभंगीकी प्रत्येक रेखामें एक ऐसी सुचारु, सुन्दर, अथच मर्यादा-सूचक अभिव्यक्ति विकसित हो उठी है, जिसमें स्नेह और श्रद्धाकी, विश्वास और निर्भरताकी व्यंजना अत्यन्त सुस्पष्ट है। ससारमें नारीकी इस मूर्त्तिके दर्शन अत्यन्त दुर्लभ हैं। विमल बाबूने अपने बहुविचित्र जीवनमें नारीका ऐसा रूप और कहीं नहीं देखा।

सविताकी इस महिमामण्डित मूर्त्तिकी ओर ताककर आज सर्वप्रथम विमल बाबूको लगा कि वह इस जगत्‌में जिस स्तरके मनुष्य हैं, सविता उससे बहुत ऊपरके लोककी रहनेवाली है। मानव-जीवनकी जिस अन्तरतम अनुभूतिने, चरम दुर्योग या विपत्तिके बीच प्रत्यक्ष प्राप्त की गई जिस बुद्धि और अभिज्ञताने, दुःखके दुर्गम पथमें क्षत-विक्षत पैरोंवाले यात्रीके जिस भूयोदर्शन या सूझ-बूझने आज सविताके भीतर-बाहरको घेरकर ऐसी एक महिमाका रूप खड़ा कर दिया है, जिसे यथेष्ट दूरीसे सिर नवाकर केवल प्रणाम ही किया जा सकता है, उसके पास जाकर खड़ा नहीं हुआ जा सकता।

विमल बाबूके इस अभिभूत भावको लक्ष्य करके मनमें सकुचित होनेपर भी, मुखपर सहज भाव बनाये रखकर ही सविताने कहा—खड़े कब तक रहोगे, बैठो।

विमल बाबू चुपचाप अपने लिए रखी हुई कुर्सीपर बैठ जरूर गये, किन्तु तब भी सविताकी ओर एकटक निहारते ही रहे। उनकी उस दृष्टिमें आज रूप-मुग्धकी विह्वल व्याकुलता नहीं है, है अनुरागीका श्रद्धायुक्त विस्मय। यह जैसे वांछित देवमूर्त्तिके प्रति भक्तका वन्दनासे सुन्दर सम्पूर्ण दर्शन है।

सविताने सकुचित होकर कहा—एकटक क्या निहार रहे हो?

"तुम्हींको देख रहा हूं।"

"मुझे क्या कभी देखा नहीं?"

"आजकी तुमको मैंने सचमुच ही कभी नहीं देखा। जिसे देखा है, वह इस समयकी तुम नहीं हो।"

"वह कौन हूं मैं दयामय?"

"वह और ही हो तुम। वह तुम हो दुःखके पीड़नसे विचलित और अतीत वर्त्तमान तथा भविष्यकी चिन्तासे कातर। अपनी चिन्तामें अपनेको खोये हुए असहाय तुम।"

"और आजकी मैं?"

"यह तुम और एक नई ही महीयसी महिला हो। इस रूपको मैंने आज ही पहले पहल देख पाया है। सचमुच ही इतने दिन इसके साथ मेरा परिचय नहीं था। सिंगापुरमें तुम्हारी लिखी चिट्ठियोंमें इसकी पग-ध्वनि अवश्य मैंने सुन पाई थी—आज यहाँ आकर उसका अपूर्व अविर्भाव देखा।

सविता हँसी। वह हँसी उदास थी गोधूलि समयके लाल लाल प्रकाशमें दूरसे आया हुआ वंशीमें बज रही पूरवीका सुर जैसे मनुष्यके चित्तको क्षणभरके लिए ही सही, अकारण उदास कर देता है, वैसे ही सविताकी इस हँसीमें वही क्षणभर उदास बना देनेका अद्भुत जादू छिपा है। सविताने कहा—क्या जानें, यह हो भी सकता है। एक ही जन्ममें मनुष्यके कितने और जन्म हो जाते हैं, इसकी क्या गिनती है।

विमल बाबू कुछ बोले नहीं। विस्मित नेत्रोंसे लक्ष्य करने लगे, सविता एक कत्थई किनारीकी दूधिया गरदेकी सारी पहने है। अपने किसी कामसे एक बार काशी जाकर विमल बाबू ही यह गरदेकी सारी पूजा-आह्निकके समय पहननेको ले आये थे। सारी पहननेके लिए विमल बाबूके अनुरोध करनेपर सविताने हँसकर जवाब दिया था—अभी रहने दो। समय आनेपर पहनूँगी।

आज ही वह सारी पहनकर सविता विमल बाबूकी प्रतीक्षा कर रही थी।

विमल बाबूने कहा—पुनर्जन्म या जन्मांतर मैं नहीं मानता था, किन्तु तुमने मुझे मनवा दिया। यह सच है कि इसी जीवनमें मनुष्यका जन्मान्तर होता है। इसीसे तो तुम्हें इतने दिन बाद मेरी दी हुई सारी पहननेका समय मेरे इसी जन्ममें हुआ है।

सविताको निरुत्तर देखकर विमल बाबूने कहा—शायद मैं गलत कह रहा हूँ 'समय हुआ है' न कहकर 'समय बीत गया' ही मुझे कहना चाहिए था—क्यों सवि—रेणुकी मा?

विमल बाबूके प्रश्नका उत्तर टालकर सविताने मुसकाते हुए कहा—लेकिन तुम यह तो बताओ कि यह विडम्बना और भी कितने दिन भोगोगे? भीतरसे जो पुकार (संबोधन) आपसे आप निकल रही है, उसे बार-बार गला दबाकर, ठेलकर, हटाकर औरके मुखकी पुकारको दोहरानेकी चेष्टा करते हो। इसमें कितनी बार तो तुमने ठोकर खाई है। तो भी न छोड़ोगे?

विमल बाबू अप्रतिभ हो पड़े।

सविता कहने लगी—पहले पुकारा तुमने 'नई-बहू,' वह तुम्हारे अपने मुँहकी पुकार नहीं है। उस नामसे पहले जिन्होंने पुकारा, उन्हींके मुँहसे वह अच्छी मालूम देती है। तुम्हारे मुँहसे वह बेसुरी सुनाई दी। उसके बाद तुमने 'रेणुकी मा' कहनेकी चेष्टा की। वह भी तुम्हारे मुँहमें बार-बार बाधा पाती है, स्वाभाविक सहज भावसे निकल नहीं पाती, किसी दिन निकल भी न पावेगी।

"तो फिर क्या कहकर पुकारूँ, तुम्हीं बता दो।"

"क्यों, यही सविता कहो न, जो सहज भावसे तुम्हारे मुँहमें आ रही है।"

"खैर, न हो यही कहूँगा। लेकिन 'रेणुकी मा' कहकर पुकारनेको एक दिन तुम्हींने तो मुझसे कहा था।—अच्छा, सच बताओ, अनजानमें मैंने क्या किसी दिन इस सम्बोधनकी मर्यादाको हानि पहुँचाई है?

सविता—यह खयाल तो तुम मनमें भी न लाओ। इस नामसे पुकारनेके लिए कहकर मैंने ही गलती की थी। तुम्हारे निकट तो मेरा वह परिचय नहीं है। इसीसे यह संबोधन किसी भी दिन तुम्हारे कंठमें सजीव नहीं हो सका। देखो, अनेक दुःख पाकर अब एक बात मैं बहुत अच्छी तरह समझ पाई हूँ कि जिसका जो है, उसका वही अच्छा है। तुम्हारे मुखसे 'सविता' सम्बोधन जितना सहज-सुन्दर है, वैसा और कुछ भी नहीं।

विमल बाबूने हँसकर कहा—तो फिर मेरे हृदयके आनन्दके झरनेमें जिस नामके बुलबुले अपने आप सतरंगी इन्द्रधनुषके रंगको लेकर उठते हैं और आप ही फूटफूटकर विलीन हो जाते हैं अब उसी नामसे सम्बोधित करनेकी अनुमति मुझे दो। लेकिन जानती हो, बुलबुलोंके उठने-फूटनेका विराम नहीं है?

सविता—जानती हूँ।

विमल—तुम क्या उसे सहन कर सकोगी रेणुकी मा? भले ही वह जलबिन्दुका बुलबुला भर हो, तो भी भय होता है कि शायद तुमको चुभेगा।

सविताके मुखपर छाया-सी उतर आई। बोली—यही तो तुम लोगोंका दोष है। औरतोंके सम्बन्धमें कभी, किसी दिन, तुम लोग सहज नहीं हो पाते। या तो अतिभक्ति अतिश्रद्धासे गद्गद होकर बड़े सम्मान और मर्यादासे स्त्रियोंको बहुत ऊँचेपर बिठा देना चाहोगे और या एकदम नर-नारीके चिरकालके आदिम

सम्पर्कसे खड़ा करके घनिष्ठता कर बैठोगे। पुरुष और नारीके बीच मनुष्यका सहजसुन्दर सम्बन्ध क्या सचमुच ही नहीं स्थापित किया जा सकता?

विमल बाबू शान्त कण्ठसे बोले, तुम्हारे और मेरे संबंधके बीच यह प्रश्न उठनेका समय यद्यपि आज भी नहीं आया सविता, तथापि मैं तुमसे ही पूछता हूँ कि ऐसा क्यों होता है, बता सकती हो?

जरा सोचकर सविताने कहा—ठीक नहीं जानती। लेकिन हाँ, अनुमान होता है कि शायद समाज-विधिकी बुनियादके नीचे इसका बीज बोया हुआ है। नहीं तो सर्वत्र, सभी क्षेत्रोंमें, एक ही विषमय फल क्यों फलता है? देखो, समाजके बाहर आकर आज मेरी नजरमें समाजके कल्याण और अकल्याणके दोनों पहलू बहुत ही स्पष्ट होकर प्रकट हो उठे हैं। उसके भीतर रहकर मैं उसके गुण और दोषके दोनों पहलू इस तरह नहीं देख पाई थी।

विमल बाबू खूब मन लगाकर सविताकी बात सुन रहे थे, आप कुछ नहीं बोले। सविता कहती चली गई—मनुष्य अपने मनको लेकर कितनी बड़ाई करता है, किन्तु उसके विषयमें वह कितना जानता है—कितना पहचानता है? जीवन-नाटकके हरएक अंकमें उसका रूप बदलता रहता है। यही देखो, उस दिन तक भी मैं मनमें यही सोचती आई हूँ कि मेरे बराबर स्वामीकी भक्ति जगत्में कदाचित् और किसी भी स्त्रीने कभी नहीं की। स्वामीको मेरी तरह इतना प्यार प्रेम भी शायद अन्य कोई स्त्री नहीं कर पावेगी। बाहरकी दुनियाके विपरीत खबर जानने पर भी, अपने हृदयके भीतरका हाल तो मैं अच्छी तरहसे जानती हूँ। किन्तु इतने दिन बाद आज मेरी वह धारणा बदल गई है। अपने अन्तःकरणका यथार्थ अर्थ इतने दिन बाद समझ पा रही हूँ।

विस्मित होकर विमल बाबूने कहा—क्या समझी हो सविता?

कुछ कुछ स्वगत-भावसे ही सविताने कहा—ठीक स्पष्ट करके उसे कहना कठिन है। आज केवल इतना ही मैं अच्छी तरह समझ पा रही हूँ कि अन्तरकी श्रद्धा, भक्ति तथा संस्कारगत धारणा और हृदयका प्रेम एक ही वस्तु नहीं है।

"किन्तु मैंने सुना है कि अनेक समय श्रद्धा-भक्ति ही प्रेमकी नींव बन जाती है।"

"हाँ, यह होता है। अनेक जगह करुणा, ममता या समवेदना-सहानुभूति

भी शायद प्रेमको खड़ा कर देती है। किन्तु मेरा विश्वास है कि नारी और पुरुषमें परस्पर भीतर और बाहरका स्वाभाविक मेल न होनेपर प्रेम स्फूर्त होने पर भी सुसार्थक नहीं होता। इसके सिवा और भी एक बात है। अनेक समय श्रद्धा-भक्तिको अथवा स्नेह-ममताको मनुष्य प्रेम समझ लेनेकी गलती भी करता है।"

"तुम क्या यह कहना चाहती हो कि स्नेह या ममतासे जिस प्रेमका जन्म होता है, वह सत्य या सार्थक नहीं?"

"ऐसी बात क्यों कहूँगी? निश्चय ही वह सत्य है, और सत्य होनेसे ही सार्थक हुए बिना नहीं रह सकता। मैं कहती हूँ कि स्नेह और ममता यदि यथार्थ ही प्रेममें परिणत हो जाय तभी वह सत्य है। सागरमें पहुँच पानेपर सभी जल एक हो जाते हैं—झरनेका जल, वर्षाका जल और बहियाका जल भी।"

विमल बाबू सविताकी ओर स्थिर दृष्टि स्थापित करके बोले—अच्छा, ये सब बातें तुमने जानीं किस तरह?

जरा देर निरुत्तर रहकर सविताने खुले आकाशमें नजर फैलाकर कहा—अपने ही इस विडंबित जीवनकी अभिज्ञतासे जानी हैं दयामय।

विमल बाबू प्रश्नपूर्ण दृष्टिसे सविताकी ओर निहारते रहे।

सविताने कहा—तुमको एक दिन अपनी सभी बातें बताऊँगी।

विमल बाबूने उलाहनेके स्वरमें कहा—तुम सभी बातें और एक दिन कह-नेको कहकर एक किनारे रख देती हो। कब तुम्हारा वह 'और एक दिन' आवेगा सविता? एक दिन तुमने कहा था कि तुमको अपने स्वामीकी सब बातें सुनाऊँगी—उन्हें केवल मैं ही जानती हूँ, और कोई नहीं।

सविताने कहा—कहनेकी इच्छा होती है, लेकिन कह नहीं पाती। अपनेको सँभालना कठिन हो जाता है। किन्तु वे सब बातें सुनकर लाभ ही क्या है? अपनी इच्छासे स्वामीको छोड़कर जो स्त्री ऐसे अथाह जलमें फाँद पड़ी है, उसका आज भी स्वामीके प्रति क्या मनोभाव है—यह जाननेको शायद कौतूहल होता है?

"छी-छी, हँसीमें भी ऐसी बात मुझसे तुम्हें न कहनी चाहिए—यह क्या तुम नहीं जानती सविता!"

"जानती हूँ। क्षमा करो। तुमको अकारण ही मैंने चोट पहुँचाई। मेरे

अपराधकी कोई सीमा नहीं है।" इसके बाद अन्यमनस्क चित्तसे सविता कुछ सोचने लगी।

विमल बाबू चुपचाप एक ओर ताकते रहे।

बहुत समय इस तरह चुपचाप बीत गया।

विमल बाबूने ही पुकारा—सविता—

"क्या कहते हो?"

"सच कहो, तुम क्या मुझसे भय करती हो?"

"भय? भय किसलिए?" सविताके स्वरमें विस्मयकी ध्वनि थी।

विमल बाबूको जवाब देनेमें इधर-उधर करते देखकर सविताने मुरझाई हुई हँसीके साथ कहा—तुमसे डरनेके लिए तो मेरे पास अब कुछ भी बचा नहीं है। कौन क्षति बाकी है अब, जिसके लिए भय करूंगी?

विमल बाबूने कहा—जीवनके ऊपर इतना क्षोभ और चाहे जो प्रकट करे, तुम्हें न करने दूँगा। मनुष्यकी सारी मर्यादा जीवनकी किसी एक आकस्मिक दुर्घटनासे बिल्कुल भस्म नहीं हो जाती। मनुष्य जब तक जीता रहता है तब तक उसका सभी कुछ बना रहता है—कुछ भी समाप्त नहीं हो जाता—चुक नहीं जाता।

सविता चुप रही। कितनी ही देर बाद स्थिर कण्ठसे बोली—तुमको मैं तनिक भी नहीं डरती। बल्कि इतने दिन तुम्हारे संबधमें अपने इस सम्पूर्ण निर्भर होनेको ही डरती रही हूं। अब वह भय भी मिट गया है। तुमपर मैं विश्वास करती हूं। मुझे जान पड़ता है, संसारमें शायद और कोई भी स्त्री इस तरह किसी निःसम्पर्कीय पुरुषपर निःसंशय होकर विश्वास नहीं कर सकी।

जरा रुककर, आवाज और भी नीची करके, सविताने फिर कहा—मैं जानती हूं कि तुम मुझे कभी, किसी दिन, नीचे नहीं उतार सकोगे। पुरुषोंके निकट स्त्रियोंका अपमान और अवहेलना जिससे होती है, वह तुम कभी न होने दोगे। सबसे बड़ी बात यह कि मुझे समझनेमें तुमसे गलती नहीं हुई।

विमल बाबूने धीमी आवाजसे कहा—मनुष्य, मनुष्य ही है; देवता तो नहीं है। अपने सब भले बुरे, दोष गुण, बलिष्ठता और दुर्बलताको लेकर ही उसका समग्र रूप है। अतएव उसके ऊपर क्या इतना अधिक विश्वास रखना संगत है!

सविताने कहा—नहीं जानती, क्या संगत है और क्या असंगत। बुद्धिसे

विचार करके इसे जानना भी नहीं चाहती। जो अपने अन्तरके भीतर एकान्त भावसे अनुभव किया है, वह आपसे कह भर दिया है।

विमल बाबूने कहा—जानती हो सविता, तुम्हारे संस्पर्श अर्थात् लगावमें आकर मुझे क्या लाभ हुआ? मैंने पहले पहल यह अनुभव किया कि अकल्याणके भीतरसे भी परम कल्याण आकर जीवनको स्पर्श करता है।

सविताने कहा—यह बात मानती हूँ। अकल्याणकी राहमें ही, लंबी सफरसे क्लान्त सन्ध्याको, तुम्हारे साथ अचानक साक्षात हुआ था और हुआ था विरुद्ध आवेष्टनके बीच अवांछित परिचय। भाग्यसे उस दिन जबर्दस्ती तुम मुझे देखने आये थे।

विमल बाबूने चोट खाकर अकृत्रिम दुःखके स्वरमें कहा—तुम्हारी यह धारणा सत्य नहीं है सविता। जीवनके अज्ञात-पथमें मनुष्यके साथ मनुष्यका गहरा परिचय कब किस दिन किस जरिएसे कैसे हो जाता है, यह कोई नहीं जानता। बात मैंने अपने ही तरफसे कही थी। इतने दिन अपने अतीतके अपरिच्छिन्न अंशकी ओर दृष्टि डालनेसे मुझे वितृष्णा हुई है, घृणा, क्षोभ और लज्जा हुई है। कितनी ही बार सोचा है कि जीवनके अशुचि अंशको अगर किसी उपायसे धोकर बेदाग बना दिया जा सकता! स्मृतिकी पुस्तकसे इन ग्लानिमय दिनोंके पृष्ठको फाड़ फेंककर निश्चिह्न किया जा सकता! किन्तु आज सर्व प्रथम मनमें आ रहा है कि भगवान्‌ने इस जीवनमें उन दिनोंकी अमिट कालिमा अंकित करके मंगल ही किया है।

विस्मित सविताने सिर उठाकर कहा—इसका अर्थ?

विमल बाबूने कहा—समझ नहीं पाई? आज अपने लोभके अपवित्र स्पर्शसे मैं ही तुम्हारी रक्षा कर सकूँगा। मैं तुमको अपने जीवनके इस कलंकित आँगनमें लाकर खड़ा न कर सकूँगा। क्योंकि यहाँ तुम्हारा उपयुक्त आसन नहीं है।

सविताने अस्फुट स्वरमें कहा—सोनेमें दाग नहीं लगता दयामय! हम नारियाँ ही कलंकके कणमात्र स्पर्शसे चिरमलिन निकृष्ट धातु हो जाती हैं।

विमल बाबूने गम्भीर कण्ठसे कहा—मैं यह जरा भी नहीं मानता। देखो सविता, तुम और जिसके लिए चाहे जो हो, मेरे जीवनमें परमकल्याणरूपिणी ही हो। यह बात झूठ नहीं है। जीवनमें मेरा बहुत-सी विचित्र नारियोंसे साक्षात् हुआ है। किन्तु तुम्हारे साथ हुआ है सदर्शन। मेरे भीतर जो सत्य मनुष्य अब तक

पड़ा सो रहा था, उसे तुमने ही धक्का देकर उस दिन जगा दिया, जिस दिन तुम्हारे स्वतः अभिजात प्रकृतिके अपने स्वरूपको, उस विषण्ण, मुरझाये हुए, पश्चात्ताप-दग्ध, अथच सहज मर्यादामहिम रूपको पहली ही बार देखकर मैं पहचान सका। रमणी बाबूके आमोद-प्रमोदके बुलावेने देखने कुछ और ही गया था, लेकिन देखा उसके विपरीत। तुम्हारे जीवनके इतिहासने सविता, आज मेरे अपने जीवनका 'क्षोभ' भुला दिया है। संसारमें मेरी ही जैसी अनुभूति जिसे हुई है, ऐसा आदमी यहीं पहले पहल मैंने देखा — और वह हो तुम, जो अपनी प्रकृतिसे विच्छिन्न होकर अवांछित अन्य प्रकारका जीवन, अनिच्छा होने पर भी, स्वेच्छासे बितानेके लिए बाध्य हुई हो। यह अपने स्वभावको दबाकर, पारिपार्श्विक अवस्थाका अधिकार मिटाकर, आयुको किसी तरह समाप्तिकी ओर खींच ले जाना ही तो है। अनुभूतिके क्षेत्रमें तुम और मैं, यहीं, एक ही जगह आ खड़े हुए हैं। हो सकता है, इसी कारण तुम्हारे हृदयके साथ मेरी जो अन्तरंगता संभव न थी, वह केवल संभव ही नहीं—सहज भी हो गई।

सविता नजर नीची किये सुन रही थी, अब भी वैसे ही अवनत-नेत्र मौन रही।

विमल बाबू धीर कण्ठसे कहने लगे—आज मेरे लिए जीवनका अर्थ बदल गया है। मनकी पुरानी धारणाओंके ऊपर जो बहुत दिनोंकी ढेर धूल जमा थी, वह बिल्कुल साफ हो रही है। बहुत लम्बे समय तक उपेक्षासे पड़े हुए आईनेके ऊपर जमे हुए मैलने उसकी जिस स्वच्छताको ढक रखा था, वह जैसे आज किसी नई गृहलक्ष्मीके यत्नपूर्वक साफ करनेसे एकदम निर्मल हो उठा है। आज सारी पृथ्वी मुझे बिल्कुल नई जान पड़ रही है। यह जवानीका उद्दाम हृदयावेग नहीं है, देहकी नस-नसके तरुण रक्तका चंचल नृत्य नहीं है। यह मेरे हिम-कठिन अन्तर्लोकमें मूर्छित पड़ी हुई आत्माका जागरण है। हृदयके कुहासेसे ढके आकाशमें नव चेतनाका प्रथम सूर्योदय है।

सविताको यह कल्पना भी न थी कि स्वभावसे स्वल्पभाषी विमल बाबू इस तरह अपने हृदयकी गहरी अनुभूतियोंको भाषामें प्रकट कर सकते हैं। संसारमें शायद सभी कुछ संभव है। इसीसे बहुत ही धीरे, प्रायः अस्पष्ट स्वगत उक्तिकी तरह ही सविता कहने लगी — यह तो तुम्हारे मनकी गढ़ी हुई मैं हूं। उसके साथ सत्यकी जो मैं हूँ उसका मेल कितना है, इसका पता तुमको नहीं है और मैं भी

नहीं जानती। खैर, वह जानाजानी न हो, भगवान करें, जैसा तुमने मुझे देखा है, वह तुम्हारे निकट मिथ्या न हो।

२४

विमल बाबू जब राखालको खोज रहे थे, उस समय वह कलकत्तेके बाहर था, रेणु और ब्रज बाबूको वृंदावन पहुंचाने गया था। लौटकर जब वह विमल बाबूसे मिला, तब उन्होंने उलाहना दिया कि एक दिन अपेक्षा करते तो मेरे साथ ब्रज बाबूकी मुलाकात हो जाती, तुमने इसकी व्यवस्था क्यों नहीं की राजू? तुमको तो मैंने चिट्ठी लिखी थी।

"वे लोग आपकी मुलाकातको टालना चाहते थे, इसी लिए इतनी जल्दी चल दिये।"

"इसका कारण?"

"सो तो मैं नहीं जानता। मगर हाँ, काका बाबूकी अपेक्षा रेणु ही बहुत व्यस्त हो गई थी।

"समझ गया।"

विमल बाबू कुछ देर चुप रहकर बोले—वृन्दावनमें उन लोगोंको कहाँ रख आये हो?

"गोविन्दजीके मंदिरके पास ही एक गलीमें। घर बड़ा है, उसमें अनेक किराएदार रहते हैं। इन लोगोंके सोनेके लिए दो कोठरियाँ ली हैं और रसोईके लिए थोड़ी सी जगह। किराया साधारण ही है।

विमल बाबूने चिन्तित मुखसे कहा—तुम्हारे सिवा तो उन लोगोंको देखने सुननेवाला और कोई वहां है नहीं। मैं सोचता हूँ कमसे कम कुछ दिनके लिए भी इस समय तुम्हारा वृन्दावनमें जाकर रहना जरूरी है।

"लेकिन इसके फलस्वरूप मेरी यहाँकी जीविका चली जायगी।"

विमल बाबू सिर झुकाकर सोचने लगे।

कुछ समय यों ही चुपचाप कट गया। राखालने कहा—नहीं जानता, आप भाग्यको मानते हैं या नहीं, किन्तु मैं मानता हूँ।

राखालकी बातका उत्तर न देकर विमल बाबूने कहा—तुमने शायद सुना होगा कि तारक हाईकोर्टमें वकालत करने लगा है। प्रैक्टिस कुछ बुरी नहीं चल रही है। जान पड़ता है, उसकी उन्नति होगी ही। इस लड़केमें बड़े होनेकी आकांक्षा खूब है। मैंने बड़ी आशा की थी कि उसके साथ रेणुको ब्याह दूंगा। किन्तु ब्रज बाबूके साथ तो इस विषयकी आलोचनाका ही सुयोग नहीं मिला।

राखाल विस्मित होकर विमल बाबूका मुंह ताकने लगा।

विमल बाबूने फिर कहा—तुम्हारी नई-माकी भी यही इच्छा थी। सुनते तो शायद ब्रज बाबू भी राजी हो जाते।

राखालने कोमल स्वरमें कहा—लेकिन तारक क्या राजी हो गया है?

"उससे तो यह बात नहीं कही। मगर तुम्हारी नई-माने इशारेसे कुछ जता दिया है।"

राखालने फिर कहा—आप क्या समझते हैं कि तारक इस प्रस्तावसे सहमत होगा?

विमल बाबूने कहा—सहमत न होनेका तो कोई कारण नहीं देखता। रेणु सब बातोंमें सुयोग्य लड़की है। केवल एक ही त्रुटि है कि इस समय उसके पिता गरीब हैं। किन्तु माका जो कुछ है, सब रेणु ही पावेगी। तारक खुद भी तुम्हारी नई-माको यथेष्ट श्रद्धा-भक्ति करता है, उन्हींके पास वह रहता है। इसलिए किसी भी ओरसे उसके नामंजूर करनेका कोई कारण तो नहीं देख पड़ता।

राखाल चुप रहा। विमल बाबूने कहा—राजू, तुम्हें एक काम करना होगा।

राखालने कहा—क्या, कहिए?

"तारकके आगे यह प्रस्ताव तुम्हें ही उपस्थित करना होगा।"

राखालने विस्मित होकर कहा—आपने क्या सुना नहीं कि रेणु ब्याह करनेसे एकदम इन्कार करती है?

"उसे राजी करनेका भार मुझपर है। तुम तारकके आगे यह प्रसंग उठाकर उसका मतामत जब बताओगे, तब मैं आप वृन्दावन जाकर रेणुको राजी करके आ सकूंगा।"

राखालने कहा—आप गलती कर रहे हैं। रेणु या तारक, कोई भी इस ब्याहके लिए राजी होगा, ऐसा नहीं जान पड़ता।

विमल बाबूने कहा—रेणुकी बात छोड़ो। तारक क्यों न राजी होगा बताओ तो?

"यह मैं कैसे बताऊँ? मगर जान पड़ता है कि संभवतः राजी नहीं होगा।"

"तुम एक बार प्रस्ताव करके ही देखो न।"

"अच्छा।"

× × × ×

डेरेपर लौटकर कपड़े उतारे बिना ही बिछौनेके ऊपर राखाल लबा होकर पड़ रहा। आँखें मूँदे-मूँदे संभव-असंभव न जाने क्या क्या सोचते-सोचते चिन्ता करते-करते भोजन करनेका समय निकल गया, भोजनका खयाल ही नहीं रहा।

बूढ़ी नानी कुछ दिनोंसे बीमार होकर खाट पकड़े हुए थी। काम करने नहीं आ पाती। अपने नातीको कामके लिए भेजती है। नातीकी अवस्था अधिक नहीं है।—यही तेरह-चौदह सालकी होगी। नाम है नीलू। खूब मौजी और फुर्तीला लड़का है। मुखपर हँसी बनी ही रहती है और हमेशा कोई-न-कोई गीत गुनगुनाया करता है। काम-काज खूब चटपट कर सकता है। मगर प्रायः प्रतिदिन ही राखालके दो-एक चायके प्याले, रकाबी, काँचके ग्लास उसके हाथसे टूटते रहते हैं। जब वह अप्रतिभ मुखसे, लबी जीभ बाहर निकालकर उसे दाँतोंसे काटता हुआ सामने आकर खड़ा हो जाता है, तब राखाल उसका चेहरा देखकर ही समझ लेता है कि आज फिर कोई एक बर्तन टूटा। काँचके टुकड़ोंको साव-धानीसे बीनकर फेंक देनेके लिए कहकर राखाल उसे आइंदा चायके बर्तनोंको सावधानीसे उठाने रखनेका सदुपदेश देता है। तत्क्षण जोरसे सिर हिलाकर सम्मति जताकर फिर नीलू तीन छलाँगमें वहाँसे गायब हो जाता है। राखाल अपनी नानीके नातीको दुलारसे नीलू चाचा कहकर पुकारता है।

चार बजेके समय नीलूने आकर जब राखालको पुकारकर जगाया, तब आँखें मलते हुए वह बिछौनेपर उठ बैठा और उसे खयाल आया कि आज उसने खाना नहीं खाया। विमल बाबूसे मिलनेके बाद वह डेरेपर लौटकर कपड़े उतारे बिना ही बिछौनेपर पड़ गया था, कब उसे नींद आ गई, पता नहीं। घर-द्वार, काम-काज, वेष-भूषा, शरीर और स्वास्थ्य, किसी ओर अब उसका ध्यान नहीं। यहाँतक कि खाने-पीनेका भी खयाल उसे प्रायः नहीं रहता। यह अच्छा नहीं है। वह गरीब आदमी है। इस तरहकी लापरवाही बड़े आदमियोंको ही शोभा देती

है। जिनका प्रतिदिनका पेटका अन्न प्रतिदिनकी कमाईपर निर्भर है उन्हें यह अन्य-मनस्कता नहीं सोहती। बार-बार नागा करनेके कारण उसकी ट्यूशनें एक-एक करके चली गई हैं। केवल एक ट्यूशन किसी तरह बनी हुई है। इसका एक कारण यह है कि राखाल उनके लिए समय-असमयपर एक मात्र विश्वस्त कामका आदमी है; ट्यूटरके हिसाबसे उसका मूल्य न रहने पर भी, बन्धुके हिसाबसे—विश्वस्त कामके आदमीके हिसाबसे यथेष्ट मूल्य है। उसका अपना लिखने-पढ़नेका काम भी इन्हीं सब झंझटोंके मारे बंद है। यात्रा-मंडलियोंके लिए खेल और पात्रोंके संवाद लिखने तथा फर्जी नामसे या बिना नामके नाटक रचनेके काममें भी वह हाथ नहीं लगा सका। बैंक और डाकखानेकी पास-बुकमें जमाका खाना शून्य हो आया है। हलवाईकी दूकान, मोदीकी दूकान तथा ग्वालेके कुछ रुपए बाकी पड़े हैं। यद्यपि आजकल वह अपनी पोशाककी सफाई-सुथराई और शौकके विलासपर बिल्कुल ही ध्यान नहीं देता, तो भी दर्जी और धोबीका भी कुछ देना पिछला पड़ा हुआ है।

नीलूके पुकारनेसे राखालने उठकर मुँह धोते-धोते कहा—नीलू चाचा, स्टोव जलाकर राजा बेटाकी तरह चायका पानी तो चढ़ा दो जल्दीसे।

नीलू कोठरीके सामनेकी दालानमें जूठे बर्तन न देख पाकर, विस्मित होकर, राखालके पास आया था। उसने उद्विग्न स्वरमें पूछा—बाबू, आपकी क्या कुछ तबीयत खराब है?

राखालने उसके मुहकी ओर ताककर कहा—किसने कहा रे?

"आपने कुछ खाया जो नहीं!"

राखालने हँसकर कहा—ना, तबियत खराब नहीं है। यों ही आज नहीं खाया। तुम अब एक काम तो करो नीलू चाचा, चायका पानी चढ़ाकर उस मोड़की दूकानसे कुछ गरम-गरम तले सिंघाड़े तो ले आओ। चायके साथ खाये जायँगे।

नीलू स्टोव जलाकर उसपर चायका पानी चढ़ाकर खानेका सामान लेने गया। राखाल चाय बनाने बैठा। एक बार उसके मनमें आया कि इतना हंगामा न करके शारदाके पास जाकर यह कहनेहीसे तो सब काम बन जायगा कि आज बेवक्त सो गया था, खाना भूल गया। बस, इसके बाद कुछ चिन्ता न करनी होगी।

कल्पनामें शारदाके स्तमित क्रुद्ध मुखकी आड़में जिस व्याकुल स्नेहका छिपा हुआ रूप राखालकी आँखोंके आगे प्रकट हो उठा, उसे स्मरण करके उसके भीतरसे एक गहरी लम्बी साँस निकल आई। ना, शारदाके पास जाना उचित नहीं है। बेचारी निरुपाय वेदनासे केवल मर्माहत होगी। राखाल जानता है कि अपने हाथसे देवताकी सेवा और यत्न करनेकी शारदाको कितनी बड़ी आकांक्षा है। उदास चित्तसे चायका सामान लेकर राखाल चाय बनाने लगा।

*　　*　　*　　*

उधर शारदा और सवितामें बातचीत चल रही थी। सविताने कहा—तुम अपने सोनारपुरका हाल तो कहो शारदा, सुनूं।

शारदाने हाथका सिलाईका काम करते-करते जवाब दिया—आपको जिसने एक बार देखा है मा, उसे फिर पहचनवा न देना होगा कि रेणु आपकी ही बेटी है। केवल चेहरा ही आपका जैसा नहीं है, बुद्धिमें, मर्यादा-बोधमें और मनके आभिजात्यमें वह आपका ही प्रतिचित्र है।

सविताने कहा—शारदा, तुमने इस तरह बात करना किससे सीखा? यह तो तुम्हारी अपनी भाषा नहीं है।

शारदाने लज्जित होकर सिर झुका लिया।

"जान पड़ता है, रेणुके संबधमें इन सब बातोंकी चर्चा और किसीके साथ भी की है?"

शारदाने लज्जा और सकोचके साथ कहा—हाँ, सोनारपुरमें देवताके साथ रेणुके बारेमें बातचीत हुआ करती थी।

सविताने हँसकर शारदाके सिर और पीठपर हाथ फेरकर कहा—मैं जानती हूं, तुम बुद्धिमती लड़की हो।

शारदाने उत्साहित होकर कहा—सच मा, इतनी अधिक समानता बहुत कम देखी जाती है। रेणु जैसे एकदम आपके ही साँचेमें गढ़ी गई है।

सविता डरे हुए स्वरमें कह उठी—ना ना, ऐसी बात जबानपर न लाओ शारदा। भगवान् करें, मेरा जैसा उसका कुछ न हो।

शारदाने कुछ अप्रस्तुत होकर कहा—अच्छा, इस बातको रहने दीजिए इस समय। काका बाबूका वृतान्त कहूँ—क्यों?

"कहो।"

"काका बाबू बड़े भले आदमी हैं, लेकिन मा, संसारमें रहकर भी वह संसारसे उदासीन हैं। गोविन्द गोविन्द करके ही पागल हैं। इस संसारमें गोविन्दके सिवा उन्हें और किसी चीजपर उनकी आसक्ति नहीं जान पड़ती।"

सविताने सांस रोककर पूछा—अपनी बेटीके ऊपर भी नहीं?

सविताके शंकापूर्ण व्याकुल मुखकी ओर ताककर शारदाने कैफियतके स्वरमें जवाब दिया—उन्होंने संसारकी सारी चिन्ता अपने इष्टदेवके चरणोंमें ही सौंप दी है। जान पड़ता है, उनकी बेटी भी उसके बाहर नहीं है मा।

सविता पत्थरकी प्रतिमाकी तरह निश्चल हो रही।

शारदाने सान्त्वनाके स्वरमें कहा—व्याकुल होकर भी तो आदमी स्वयं कुछ नहीं कर सकता। उससे तो भगवान्के ऊपर निर्भर होकर रहना ही तो अच्छा है मा।

सविताने आर्त्त स्वरमें कहा—शारदा, तुम नहीं समझोगी; क्योंकि तुम सन्तानकी मा नहीं हुई हो। सन्तान क्या चीज है, इसे मर्द नहीं समझ सकते और जो स्त्रियाँ माता नहीं बनीं, वे भी ठीक नहीं समझ पातीं। रेणुके सम्बन्धमें आज मैं किस तरह तुम्हारे काका बाबूकी भाँति निश्चिन्त रहूँगी? चौबीसों घण्टे वही गोविन्द-गोविन्द करते-करते दिन गुजारनेसे ही गृहस्थीका, घरका और रोजगार-धन्धेका सर्वनाश हो गया है। अब भी क्या चेत नहीं हुआ? लड़कीके मुँहकी ओर देखकर भी क्या अभी तक यह धर्मका नशा कुछ कम नहीं हुआ?

शारदा डरी हुई नजरसे सविताके आरक्त मुखकी ओर ताकने लगी। सविता उत्तेजित किन्तु बहुत ही धीमे स्वरसे कहने लगी—अब तक सोचती थी कि मेरे स्वामीके समान स्वामी शायद कभी किसी स्त्रीको नहीं प्राप्त हुआ और न किसीको प्राप्त होगा। किन्तु अब मेरी वह भूल भंग हो गई। अब मैं समझ गई कि मेरे स्वामीके समान आत्मसर्वस्व पुरुष संसारमें थोड़े ही होंगे। अपनी स्त्री और अपनी सन्तानके प्रति जो मनुष्य किसी अपरिचितकी तरह उदासीन है, उसे विवाह

करनेकी क्या आवश्यकता थी ! ब्याह भी उन्होंने किया है अपने गोविन्दके ही लिए ! समझीं शारदा, तुम जिसे उनका महत्त्व समझती हो, वह ठीक उससे उल्टा है।

“ किसका महत्त्व उल्टा है नई-मा ? ” राखालने घरमें प्रवेश करते करते हँसते हुए प्रश्न किया। ”

सविताने उसकी ओर गर्दन घुमाकर शान्त स्वरसे कहा—तुम्हारे काका बाबूका।

क्षणभरमें राखालका हास्य-प्रसन्न मुख गंभीर हो गया। इसे लक्ष्य करके सविताने हँसकर कहा—मेरा राजू अपने काका बाबूकी तनिक भी निन्दा नहीं सह सकता।

राखालने गंभीर मुखसे ही कहा—यह तो तनिक भी आश्चर्य नहीं है मा। ससारमें काका बाबूकी भी निन्दा हो सकती है, यही क्या सबसे बढ़कर आश्चर्य नहीं है ?

सविताने कहा—राजू, मैंने तुम्हारे काका बाबूकी निन्दा नहीं की। किन्तु आज—

राखालने हाथ जोड़कर कहा—और कुछ न कहिएगा मा। मैं पहलेका आदमी हूँ, आजकी मुझे खबर नहीं—जानना भी नहीं चाहता। जो कुछ पहले की खबर जानता हूँ, वह भी कहीं बदल न जाय, इसी भयसे इस समय सशंक हूँ।

सविता क्षणभर राखालकी ओर ताकती रही। फिर धीरे धीरे बोली—पागल लड़के, एक समयका जाना हुआ कभी चिरकालका नहीं हो सकता। जबरदस्ती वैसा करनेके लिए या तो आँखें मूदकर अंधा होकर रहना पड़ता है और या फिर चरम क्षतिका दुःख भोगना होता है। ससारका यही नियम है।

सविताके स्वरमें गहरा स्नेह था।

राखालने फिर कुछ नहीं कहा। शारदाको उठकर जाते देखकर उसने पूछा—तारक इस समय घरमें है या नहीं, जानती हो शारदा ?

शारदाने कहा—आज तो कचहरी नहीं है। सम्भवतः नीचे अपने आफिसके कमरेमें ही हैं।

राखालने कहा—तारकसे कुछ जरूरी बात करनी है। मैं चलता हूँ नई-मा !

सविताने कहा—चाय पीकर जाना राजू।—शारदा तुमने जो कचौरियाँ बनाई हैं, चायके साथ राजूको देना न भूलना।

शारदाने हँसते हुए मुँहसे कहा—जो तो ये खाना न चाहेंगे मा, खायगे भी तो निन्दा करेंगे।

राखालका मन आज कुछ प्रसन्न न था। और समय होता तो शारदाकी इस बातको लेकर ही शायद उसे चिढ़ानेके लिए वह बहुत कुछ कहता। किन्तु जान पड़ता है, आज अप्रसन्न होनेके कारण ही उसने रूखे स्वरसे कहा—ना, घरका बना खाना खानेका मुझे अभ्यास नहीं है शारदा। इच्छा भी नहीं है। जिनके लिए तुमने कचौरियाँ बनाई हैं, उन्हींको खिलाना।

शारदाने विस्मित नेत्रोंसे राखालकी ओर ताका। उसके विवर्ण मुखपर नजर पड़ते ही राखालका हृदय वेदनासे धक-से हो उठा। किन्तु कुछ न कहकर वह उठकर चल दिया।

सविताने शारदाकी ओर ताककर स्नेहपूर्ण सान्त्वनाके स्वरमें कहा—उसकी बातसे मनमें दुःख न करो शारदा। मेरे ऊपर क्रोध करके ही तो वह तुमको कड़ी बात सुना गया है। अनेक कारणोंसे राजूके मनकी दशा इस समय अच्छी नहीं है बेटी।

अकारण ही अकस्मात् तिरस्कृत होकर शारदा स्तंभित हो गई थी। सविताके सान्त्वना देनेसे दबी हुई वेदना रोके न रुक सकी—संयमका बाँध टूट गया। एकाएक झरझर करके उसकी दोनों आँखोंसे आँसू बह चले।

आँसुओंसे भीगी हुई शारदा आकुल स्वरमें कह उठी—मैंने क्या कसूर किया है मा, जो देवता जब किसीके ऊपर नाराज होते हैं तो मुझे ही चुभनेवाली कड़ी कड़ी बातें सुना जाते हैं।

शारदाको पास खींचकर सविताने कहा—वह तुम्हें अपना ही आदमी समझता है न बेटी। तुमको सचमुच स्नेह करता है, इसी कारण तुम्हारे ऊपर वह आघात करता है। उसके अपना कहनेको संसारमें कोई नहीं है शारदा।

शारदाके उमड़े हुए आँसू अब भी संयत नहीं हुए थे। उसने आँसुओंसे रुंधे गलेसे अभिमानके स्वरमें कहा—जैसे मेरे संसारमें सब कोई है मा। कहाँ, मैं तो किसीको जब-तब इस तरह बातका खोंचा मारकर चोट नहीं पहुँचाती।

सविताने हँसकर कहा—सभीका स्वभाव तो एक-सा नहीं होता बेटी।

शारदाने कहा—वह जानते हैं कि मैं सब कुछ सह सकती हूँ, लेकिन उनका यह व्यंग—यह ताना किसी तरह नहीं सह पाती। यह जान-सुनकर भी वह इससे वाज नहीं आते।

शारदा आँखें पोंछती-पोंछती उठ गई।

उधर तारकके बैठकखानेमें प्रवेश करके राखालने देखा, सेक्रेटरियट मेजके सामने कुर्सीपर बैठा तारक मुकदमेके कागज-पत्र मन लगाये देख रहा है। राखालके जूतोंकी आहटसे जरा सिर उठाकर देखते ही तारक चौंक उठा और विस्मित कण्ठसे कह उठा—यह क्या! राखालको देख रहा हूँ!

मेजके पास ही रखी हुई एक कुर्सीपर बैठते-बैठते राखालने कहा—क्यों, आना न चाहिए क्या?

" आना क्यों न चाहिए? आते नहीं हो, इसीसे तो आनेसे आश्चर्य हो रहा है।"

" आता तो मैं अक्सर हूँ।"

" यह जानता हूँ। लेकिन वह मेरे पास नहीं, अन्दर महलमें।"

" अन्दरसे ही पुकार आती है, इसीसे वहाँ आता हूँ।"

तारकने दिल्लगीके स्वरमें कहा—आज क्या सदरसे पुकार आई है?

" नहीं। आज मुझे ही सदरसे प्रयोजन है।"

" आशा करता हूँ, निश्चय ही कोई मामलेकी बात न होगी।"

" मामला ही है। बता सकते हो, संसारकी कौन बात मामलेके अंदर नहीं है?"

तारक हँसने लगा।

राखालने कहा—सुना है, तुम्हारी वकालत खूब चल रही है!

भौंहें जरा सिकोड़कर तारकने कहा—यह तुमसे किसने कहा?

" चाहे जो कहे, बात तो सच ही है। अब एक दिन 'मिष्टान्नमितरे जनाः' की व्यवस्था करो।"

तारकने कहा—पागल हुए हो तुम। कहाँ है प्रेक्टिस? अभी तो केवल सीनियरके दर्वाजे धरना देकर पड़े रहना है और उसके सारे कामका बोझ गधेकी तरह ढोना है।

राखालने कहा—यह बात है? तब तो जान पड़ता है, विमल बाबूने गलत कहा।

तारकने चौंककर कहा—क्या विमल बाबूने तुमसे यह बात कही है? "हाँ।"

"उनसे तुम्हारी कब भेंट हुई? क्या कहा था—बताओ तो?" तारकके कंठस्वरमें आग्रह प्रकट हो उठा।

राखालने हँसकर कहा—वह बहुत-सी बातें हैं। इस समय तुम व्यस्त हो, सुननेका समय है क्या?

"है—है, तुम कहो।"

तारकके मुखपर और आँखोंमें व्यग्र कुतूहल लक्ष्य करके मन ही मन हँसते हुए भी चेहरेपर निर्विकार भाव बनाये रखकर राखालने कहा—चलो, सामनेके पार्कमें बैठकर बातें करें।

तारकने कहा—अच्छी बात है। वहीं चलो।

ब्रीफके बंडल फुर्तीसे समेटकर फीतेसे बांधते-बांधते तारकने कहा—बैठो। घरके भीतर जाकर जरा चायकी व्यवस्था कर आऊँ। चाय पीकर एकदम चला जायगा।

राखालने कहा—मैं अभी भीतर कह आया हूँ कि चाय नहीं पिऊँगा।

तारकने सक्षेपमें कहा—कह आये होगे। चायके मामलेमें 'ना' को 'हाँ' करनेमें दोष नहीं है।

तारक तेजीके साथ बैठकसे चल दिया। राखाल एक लंबी साँस छोड़कर कुर्सीकी पीठसे पीठ लगाकर अनेक प्रकारकी बातें सोचने लगा।

रेशमी पंजाबी कुर्ता पहनकर और पैरोंमें ग्रीसियन स्लीपर डालकर तारक लौट आया। उसके पीछे पीछे दासी ट्रेमें चाय और दो प्लेटोंमें कचौरी लेकर दाखिल हुई। राखालने वाक्यव्यय किये बिना चायका प्याला और कचौरीकी प्लेट ले ली और उनका सद्व्यवहार शुरू कर दिया। थोड़े ही समयमें प्लेट खाली करके बोला—तारक, अपनी चाय देनेवालीको जरा बुला सकते हो?

तारकने चायकी चुस्की लेते-लेते पुकारा—बिपूकी मा, जरा इधर आकर सुन जाओ।

दासीके आनेपर राखालने कहा—भीतर जाकर कहो, राजू बाबू और भी कुछ कचौरी खाना चाहते हैं।

दासी चली गई। तारकने खाते-खाते हँसकर कहा—राखाल बाबू कुछ और कचौरी खाना चाहते हैं, सुनकर अभी भीतरसे टोकनीभर कचौड़ियाँ आ जायँगी।

राखालने चायके दूसरे प्यालेमें चुस्की लगाते हुए कहा—और तारक बाबू खाना चाहते हैं, सुनकर गाड़ीभर कचौड़ियाँ आ जायँगी।

तारकने कहा—कचौरीकी 'क' भी नहीं आवेगी। सिर्फ खबर आवेगी कि कचौरी खतम हो गई। बाजारसे गरम कचौरी अभी मँगाकर भेजते हैं, तनिक अपेक्षा करनी होगी।

राखालने हँसकर भौंह सिकोड़ी। कहा—ऐसी बात है क्या?

तारकने कहा—तनिक भी बढ़ाकर नहीं कहता हूँ।

आधा घूँघट खींचे हुए प्रौढ़ा दासी शिबूकी माने बिना कारण ही अति सकोचसे सिमटी हुई होकर एक प्लेट गरम कचौड़ियाँ लाकर राखालके सामने रख दीं। तारकने हँसकर कहा—देख लिया! एकदम दर्जनके हिसाबसे आ गईं।

राखालने जरा हँसकर शिबूकी माको लक्ष्य करके कहा—मैं कुछ राक्षस तो हू नहीं शिबूकी मा? इतनी कचौरियाँ क्यों लाईं? लेकिन जब तुम ले ही आई हो तो सब खा लूँगा। लेकिन कचौरी तुमने अच्छी नहीं बनाई, समझीं? इतना मिर्चा डाल दिया है कि पेटके भीतर तक जलन पैदा हो गई है। मिर्चा जरा कम ही डालतीं तो अच्छा करतीं।

शिबूकी माने घूँघट जरा और आगे खींचकर, लाजसे सिर झुकाकर अस्पष्ट स्वरमें कहा—कचौरी मैंने तैयार नहीं की है। दीदीने बनाई है।

"ओह! इसीसे कचौरियोंमें इतना मिर्चा है।"

तारकको लेकर राखाल जब पार्कमें जाकर बैठा, तब तीसरा पहर हो गया था।

तारकने कहा—बहुत दिनों बाद तुम्हारे साथ पार्कमें घूमना आज हुआ राखाल।

इसके उत्तरमें राखाल जरा सूखी हँसी हँसा। इसे लक्ष्य करके मन-ही-मन कुछ अस्वच्छन्दताका अनुभव करके भी बाहर सहज भाव बनाये रखकर तारकने कहा—हाँ, क्या कहनेको कह रहे थे? विमल बाबूसे तुमने मेरे बारेमें क्या सुना है?

राखालने कहा—सुना है, तुम खूब काम कर रहे हो। तुम्हारा भविष्य

अत्यन्त उज्ज्वल है। तुम जैसे उपयोगी और परिश्रमी युवकके जीवनमें उन्नति अनिवार्य है।

राखालके कण्ठमें व्यंगका स्वर न रहने पर भी, उसके कहनेका ढंग कुछ ऐसा था कि तारकने उसे अपना उपहास ही समझा। भीतर-भीतर जल उठने पर भी बाहर शान्त भावसे ही कहा—तुम्हें बुलाकर विमल बाबूके यह सब कहनेका अर्थ क्या है?

"यह मैं कैसे जानूँ!"

तारक गंभीर हो गया। पूछा—तुम्हें और कुछ कहनेको है?

राखालने कहा—हाँ, है।

"वह कह डालो। तीसरे पहर निश्चिन्त होकर बैठकर पार्कमें हवा खाऊँ, ऐसा बड़ा आदमी मैं नहीं हूँ। देखते ही तो हो तुम, काम छोड़कर उठ आया हूँ।"

तारककी गर्मी देखकर राखाल हँसा। बोला—वकालतका पेशा करनेवालोंको इतना अधीर न होना चाहिए। फिर जरा रुककर कहा—एक बड़े मसलेपर बातचीत करनेके लिए ही तुमको यहाँ बुला लाया हूँ तारक!

तारक चुप रहा।

राखालने गंभीर स्वरमें कहा—तुम्हारे विवाहका प्रस्ताव लाया हूँ।

राखालके मुँहकी ओर तीक्ष्ण दृष्टिसे ताककर तारकने कहा—दिल्लगी करते हो?

राखालने कहा—दिल्लगी करनेके लिए तुम्हारे कामका हर्जा करके यहाँ नहीं बुला लाया हूँ। सचमुच ही मैं तुम्हारे व्याहका प्रस्ताव लेकर आया हूँ।

तारकने कहा—तो उस चर्चाको न उठाकर यहींपर समाप्तकर देना अच्छा होगा। कारण, मेरे पास व्याह करने लायक सम्पत्ति या सुमति, दोनों ही नहीं हैं। अभी देर है।

राखालने कहा—मान लो, इस व्याहमें अगर तुम्हारा सम्पत्तिका अभाव दूर हो जाय!

"तब भी नहीं। कारण, मैं जब तक आप कमाई करनेवाला न हो जाऊँ, तब तक विवाहकी जिम्मेदारी नहीं ले सकता।"

"मान लो, इस विवाहके द्वारा अगर धनोपार्जनकी दिशामें भी शीघ्र उन्नति हो? तब तो आपत्ति नहीं है?"

तारकने सन्देहकी दृष्टिसे राखालके मुँहकी ओर ताककर कहा—लड़की कौन है ? शायद किसी वकील-बैरिस्टरकी बेटी है ?

" नहीं। एक बहुत ही गरीब निराश्रय आदमीकी कन्या है।"

" मगर तुमने तो कहा कि इस विवाहमें—"

" हाँ, ठीक ही कहा है। गरीबकी लड़कीसे ब्याह करके भी सम्पत्तिका मिलना बिल्कुल ही विचित्र नहीं है। मान लो, लड़कीके किसी धनी आत्मीयकी सारी सम्पत्तिकी एकमात्र उत्तराधिकारिणी वही लड़की है—"

" कौन है वह लड़की ? "

" पहले यह बताओ कि तुम राजी हो या नहीं।"

" परिचय पाये बिना मैं यह न कह सकूँगा।"

" पूछो, तुम क्या परिचय चाहते हो। लड़कीके वंशका परिचय ? रूप ? गुण ? शिक्षा ?—"

तारकने भौंह सिकोड़कर कहा—भावी पत्नीके बारेमें सभी कुछ जाननेका प्रयोजन है।

राखालने जरा देर चुप रहकर कहा—लड़कीको सुन्दरी कहना कम बताना है। वह परमा सुन्दरी है। साथ ही गुणवती और सुशिक्षिता है। उच्च ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न है। पिता एक समय धनी अवश्य थे, किन्तु वर्त्तमानमें उनके पास एक कौड़ी भी नहीं है। पिताकी सम्पत्ति न पाने पर भी कन्या माताके धनकी अधिकारिणी है। उस धनका परिमाण भी कुछ थोड़ा नहीं है। कुल और गोत्रके विचारसे तुम्हारे बराबरका घर है। सब तरह लड़की किसी भी सुपात्र वरके योग्य है।

" पात्रीके पिताका नाम, धाम और इस समयका पेशा क्या मैं जान सकता हूँ ?"

" क्या इसीके ऊपर तुम्हारा मतामत निर्भर है ?"

" नहीं—हाँ, सो सम्पूर्ण न सही, कुछ तो निर्भर ही करता है।"

राखालने फिर कुछ देर चुप रहकर धीरे-धीरे कहा—पात्रीके पिता तुम्हारे अपरिचित नहीं हैं। मैं व्रजबिहारी बाबूकी लड़कीकी बात कर रहा हूँ।

तारक चौंक उठा। बोला—यह क्या ? तुम किस लड़कीकी बात कह रहे हो ?

"रेणुकी।"

"तुम क्या पागल हुए हो राखाल?" तारकके स्वरमें तीव्र विस्मय ध्वनित हो उठा।

राखालने तारकके प्रति अवज्ञापूर्ण दृष्टिपात करके कहा—पागल हो जाता तो अच्छा होता, किन्तु हो कहाँ पाता हूँ!

उत्तेजित स्वरमें तारकने कहा—होनेमें अब बाकी ही क्या है? नहीं तो नई-माकी लड़की रेणुके साथ मेरे व्याहका प्रस्ताव लेकर कभी आ सकते थे?

राखालने कहा—तो इसमें तुम्हारे इतने विस्मित या उत्तेजित होनेकी क्या बात है?

"यथेष्ट है। यह निश्चय ही तुम्हारा षड्यन्त्र है। जान पड़ता है तुमने नई-माको भी यही सलाह दी है?"

राखालने निर्लिप्त भावसे कहा—नहीं। उन्होंने मेरे परामर्शकी अपेक्षा नहीं रखी। उन्होंने बहुत पहलेसे रेणुके लिए तुमको पात्र चुन रखा है। मुझे इसकी कुछ भी खबर नहीं थी।

तारकने जोरसे सिर हिलाकर कहा—यह हो ही नहीं सकता—झूठ कहते हो

राखालने स्थिर स्वरमें कहा—देखो तारक, तुम जानते हो कि मैं झूठ नहीं बोलता।

तारकका चढ़ा हुआ गला अब नीचे उतर आया। बोला—तुम्हीं क्यों रेणुसे व्याह नहीं कर लेते?

राखालने कहा—मैं योग्य पात्र नहीं हूँ। रेणुके अभिभावक लोग इस बातको जानते हैं।

तारकने व्यंगके स्वरमें कहा—और मैं ही अभागा शायद सब तरहसे उनकी कन्याके योग्य सुपात्र हूँ?

राखालने कहा—तुम एम्० ए० पास विद्वान् लड़के हो—बुद्धिवान्, स्वास्थ्य-वान्, चरित्रवान्—

तारक असहिष्णु होकर बीचहीमें कह उठा—हाँ, अनेक बाण तुमने तो खींच मारे किन्तु यह क्या समझमें नहीं आया कि इस लड़कीको मैं अपने पिताके वंशकी कुल-वधूके रूपमें ग्रहण नहीं कर सकता। मैं गरीब हो सकता हूँ, लेकिन मर्यादासे हीन अब भी नहीं हुआ।

राखालने क्रोधसे स्तंभित कण्ठसे पुकारा—तारक !

"सच कहनेसे क्यों डरूँ ? तुम खुद इस लड़कीको ब्याह कर घर ला सकते हो ?"

तीक्ष्ण दृष्टिसे तारककी ओर ताककर राखालने कहा—उसी लड़कीकी माके आश्रयमें रहकर, उन्हींकी सहायता लेकर, अपना भविष्य बनानेमें जान पड़ता है, तुम्हारे वंशकी मर्यादा और कुलीनताका गौरव उज्ज्वल हो रहा है ? तारक, अपने मनुष्यत्वको दलित करके अगर तुम अपनी उन्नतिका रास्ता तैयार करोगे तो तुम्हें वह, जान रखो, अवनतिके गर्तमें ही ठेलकर ले जायगा !

तारक पागलकी तरह उछल पड़ा। बोला—शट अप। मुँह सँभालकर बोलो राखाल ! तुम जानते हो क्या, मैं इन लोगोंका पैसा-पैसा हिसाब करके चुका दूँगा ? इस शर्तसे ही मैंने कर्जके रूपमें उन लोगोंसे यह सहायता ली है।

राखाल हँस पड़ा। बोला—ओह, यह बात है ? तो फिर क्या है ! जब तुम कर्ज चुका दोगे तो फिर उनके साथ तुम्हारा कृतज्ञताका सम्पर्क क्या रह सकता है ? क्यों न ? न हो कुछ सूद दे देना, बस !

तारकने रूखे गलेसे कहा—देखो राखाल, इन सब बातोंको लेकर व्यंग न करो। आप जो नहीं कर सकते, वह करनेके लिए दूसरेसे कहते तुमको लज्जा नहीं आती ?

इस बातका जवाब न देकर राखालने कहा—देखता हूँ, तो तुम्हारे सम्बन्धमें मैंने गलती नहीं की। मैं जानता था कि तुम ऐसा ही कुछ जवाब दोगे। तो भी जब मैंने सुना कि नई-माने तुमको इस बारेमें पहले ही कुछ जता रखा है, तब आशा की थी कि शायद तुम्हारी असहमति नहीं भी हो सकती है।

तारक उठ खड़ा हुआ। बोला—नई-माने किसी दिन ऐसी बात मुझसे नहीं कही। कहनेका साहस भी नहीं कर सकतीं—यह जान रखो ! वह जानती हैं कि तारक राखाल नहीं है। वह राखालसे यह प्रस्ताव कर सकती हैं, लेकिन तारकसे नहीं।

उत्तरकी अपेक्षा न करके तारक तेजीके साथ पार्कसे बाहर चला गया।

२५

साल घूमकर नया साल आ गया। वह भी फिर समाप्त होनेको आया। संसारकी हालत कुछ बदल गई है।

विमल बाबू अंतिम बार सिंगापुर जाकर प्रायः डेढ वर्ष तक फिर कलकत्ते नहीं लौटे। इन दो वर्षोंमें राखालको कोई सात-आठ बार वृंदावन जाना पड़ा है। इससे उसके निजी कामधंदेकी यथेष्ट क्षति हुई है। दिन-दिन वह ऋणके जालमें जकड़ता जा रहा है, पर कोई उपाय नहीं।

रेणु वगैरहको आर्थिक सहायता करनेके लिए सविताने अनेक उपायोंसे बहुत कुछ चेष्टा की, किन्तु नहीं कर सकी। लगभग सवा लाख रुपये मूल्यकी जो सम्पत्ति केवल इकसठ हजार रुपयेमें रमणी बाबूकी सहायतासे उसने अपने नाम खरीदी थी, वह भी रेणुके ही लिए। उसे खरीदते समय नौ हजार रुपए सविताने रमणी बाबूसे लिये थे इस शर्त पर कि इस सम्पत्तिकी ही आमदनीसे वे रुपए चुका दिये जायेंगे। ऊँची दरके सूदके साथ वे नव हजार रुपए रमणी बाबूको उस सम्पत्तिकी आमदनीसे अदा भी कर दिये गये हैं। किन्तु जिसके लिए इतना आयोजन किया गया उसीने जब सम्पत्तिको स्पर्श नहीं किया और भविष्यमें भी किसी दिन उसके स्पर्श करनेकी आशा नहीं रही, तब सविता एकदम हताश हो गई—उसका दिल टूट गया। उसने अपने सब गहने ब्रज बाबूके सील-मोहर किये हुए बक्स समेत बैंकमें रेणुके ही नामसे जमा कर रखे थे। किन्तु आकाश-कुसुमकी रचनाकी तरह उसका सारा उपयोग ही वृथा होने जा रहा है।

उसने कल्पना की थी कि किसी उच्च शिक्षित, चरित्रवान्, स्वास्थ्यसम्पन्न युवकके हाथमें कन्या अर्पण करनेकी व्यवस्था करके अपनी सारी सम्पत्ति दहेजमें दे देगी। वह धन रेणुका पितृ-धन है। उसीके पिता और नानाके दिये हुए बहुमूल्य अलंकार एक लंबे अर्से तक बक्समें ही बंद पड़े रहे, किसी दिन सविताने उनको नहीं पहना। इतने दिन आशा थी कि वे शायद नव विवाहिता रेणुको अलंकृत करके सार्थक होंगे। उसकी बड़ी साध थी कि उसकी प्राणाधिक प्रिय रेणु परिपूर्ण दाम्पत्यके सौभाग्यसे सुखी होकर परितृप्त जीवन व्यतीत करेगी और दूरसे यह सब देखकर उसका अभिशप्त मातृजीवन चरितार्थ होगा। किन्तु जिसकी तकदीर खोटी है, उसकी शायद सभी व्यवस्था इसी तरह व्यर्थ हो जाती है।

इतने दिनोंमें सविताने निःसशय समझ लिया कि स्वामी और कन्याके जीवनमें उसके लिए तिलभर भी स्थान नहीं है—न भीतर, न वाहर।

आज जवानीके अस्ताचलमें, देह-कामनारहित प्रेम आप ही दरवाजेपर आकर उपस्थित हुआ है। सविता इसका मूल्य जानती है। वह जानती है कि यह कितना दुर्लभ है। लेकिन आज शायद अब नि स्वार्थ प्रेमको उपयुक्त सम्मान और समादरके साथ ग्रहण करनेकी मनोवृत्ति उसमें नहीं है। आज उसका सारा हृदय और मन मातृत्वकी ममताके रससे सिक्त होकर सन्तान-पालनके आनन्दकी प्याससे प्यासा हो उठा है। किन्तु वह स्नेहका पात्र कहाँ है?

अत्यन्त मानसिक उद्वेग और विक्षोभसे आजकल सविताके स्वास्थ्यमें घुन लग गया है। इसके ऊपर देहके प्रति लापर्वाही और अयत्नकी भी सीमा नहीं है।

शारदा प्राय ही शिकायत करती है। लेकिन इसके प्रतिकारका उपाय उसके हाथमें नहीं है। तारक कुछ नहीं कहता। उसकी वकालत उत्तरोत्तर जमती जा रही है। अपनी उन्नतिकी चेष्टामें ही वह दिन-रात डूबा रहता है।

तीसरे पहर सविता अपने कमरेमें तरकारी काटने वैठकर एक डाककी चिट्ठी खोलकर चुपचाप पढ़ रही थी। उसके मुखपर विस्मय और वेदनासे मिली हुई एक करुण हँसीकी रेखा थी। सिंगापुरसे विमल वावूने लिखा है—

"सविता, शारदा-वेटीके संक्षिप्त पत्रसे मालूम हुआ कि तुम्हारा स्वास्थ्य वहुत ही खराव हो गया है। अथ च इस सम्बन्धमें तुम विल्कुल ही लापर्वाह हो। शारदा-वेटीने जताया है कि समय रहते सावधान न होनेसे शीघ्र ही कठिन व्याधिसे तुम्हारे खाटपर पड़ जानेकी सभावना है।

"तुम तो जानती हो, भग्न स्वास्थ्यको लेकर अकर्मण्य जीवन वहन करनेका दु ख मृत्युसे वढकर कष्टदायक है। मुझे आशका हो रही है कि तुम इस तरह चलोगी तो उसी अति दु सभय जीवनको वहन करनेके लिए वाध्य होओगी।

"किसीकी भी इच्छाके ऊपर हस्तक्षेप करना मेरी प्रकृति नहीं है। इसीसे तुम्हारी इच्छाके ऊपर अपनी इच्छा प्रकट करनेमें मै कुठित होता हूँ। हितैपी वन्धुके हिसावसे मै तुमको स्मरण कराये देता हूँ कि अतिरिक्त मानसिक आघातसे तुम यहाँतक विचलित हो गई हो कि यह भी भूल गई हो कि जीवित मनुष्यके लिए स्वास्थ्यका कितना अधिक प्रयोजन है। अन्तर्गूढ़ मर्मवेदनासे आत्मचेतना गँवाकर देहके ऊपर अयथा अवज्ञा करना ठीक नहीं। मनुष्य इस भूलको भी

भविष्यमें एक दिन आप ही समझ पाता है। किन्तु तब शायद इतनी देर हो हो जाती है कि उसको सुधारनेका—प्रतिकारका उपाय नहीं रहता। इसीसे मेरा अनुरोध है कि शरीरके प्रति अयत्न न करो।"

सबके अन्तमें लिखा है—"तारकने अपने ब्याहकी बात सम्भवतः तुमको बतलाई होगी। इस विवाहमें तुम्हारी राय क्या है, यह मैं जानना चाहता हूँ। मेरी सम्मति और आशीर्वादके लिए प्रार्थना करके उसने मुझे पत्र लिखा है। पात्री है तारकके सीनियर वकील शिवशंकर बाबूकी भतीजी। यह विवाह उसकी वकालतकी उन्नतिके अनुकूल होगा, इसमें सन्देह नहीं।" इत्यादि।

सविताने एक लम्बी साँस छोड़कर पत्रको लिफाफेके भीतर भरकर रख दिया और तरकारी काटने लगी। उसका हृदय अश्रुसिक्त हो उठा।

तीसरे प्रहर शारदा महिला-शिक्षा-मण्डलीके स्कूलसे जब लौटकर आई, तब सविताने कहा—एक सुसमाचार सुना है शारदा?

आग्रहसे उन्मुख होकर शारदाने पूछा—कौन-सा सुसमाचार मा?

"हमारे तारकका विवाह है।"

उत्सुक होकर शारदाने कहा—कब है मा? कहाँ होगा? लड़की देखनेमें कैसी है?

"सो तो कुछ जानती नहीं बेटी। सुना है, हाईकोर्टके बड़े वकील शिवशंकर बाबूकी भतीजी है—वही जिनका जूनियर होकर तारक काम सीख रहा है।"

"यह क्या? आप इस बारेमें कुछ भी नहीं जानतीं तो फिर जानता कौन है मा!" शारदाके कण्ठसे विस्मय ध्वनित हो उठा।

सविताने हँसकर कहा—समय आनेपर सभी जान लेंगे शारदा। मुझे तो सिंगापुरसे खबर मिली है कि तारकका ब्याह है।

शारदाने मुख अन्धकार करके कहा—ओह, कैसा अद्भुत आदमी है यह तारक बाबू!

सविताने स्निग्ध स्वरमें कहा—वह मेरा जरा लजीला लड़का है। तुम उसे दोष न दो शारदा, बल्कि अभीसे तैयारीमें लग जाओ।

शारदा कुछ उत्तर न देकर मुँह फुलाये बाहर चली गई।

लगभग डेढ़ साल हुआ, सविताने शारदाको एक नारी-शिक्षा-संस्थाके स्कूलमें

सविताने भर्ती कर दिया है। वहाँ वह लिखना-पढ़ना, तरह-तरहके अर्थकरी गृहशिल्प, शिशु-पालन और शुश्रूषा-विज्ञान (नर्सिंग) आदि विभिन्न विभागोंके काम सीखनेके लिए प्रस्तुत हुई है। एक एक विषय सीखनेके लिए कुछ वर्ष या कुछ महिनेका समय बँधा है। वर्तमानमें लिखने-पढने और दर्जीका काम सीखनेके विभागमें शारदाका दूसरा वर्ष चल रहा है। सवेरे नौ बजे स्कूलकी गाड़ी आकर ले जाती है और शामको पाँच बजे लौटती है। तीसरे पहर सविता उसका खाना लिये बैठी रहती है। शारदाके लौटनेपर जल्दी मचाकर उसे कपड़े बदलाकर, हाथ-मुँह धुलाकर अपने हाथसे खाना परोसकर तब कहीं जाकर उसे कल पड़ती है। तारकके बारेमें भी यही बात है। अदालतसे लौटनेके पहले ही उसके विश्राम और जलपानकी व्यवस्था अपने हाथसे किये बिना सविताको तृप्ति नहीं मिलती।

तारक प्रतिवाद करता है, अनुयोग करता है, किन्तु सविता एक नहीं सुनती। शारदा कहती है--ना, आपकी सेवाका भार लेनेके लिए मैं आपके पास आई, किन्तु उलटे आपने ही अन्तको मेरी सेवाका भार अपने हाथमें ले लिया। मैं सचमुच यह नहीं सह सकती। आपके सिरपर परिश्रमका बोझा डालकर स्कूल जाना मुझे अखरता है।

सविता हँसकर कहती है—बेटी, इस कामसे ही मुझे बड़ी तृप्ति होती है। स्कूल जाना तुम मेरे जीते जी नहीं छोड़ सकतीं। तुम्हारे जीवनमें कुछ सहारा तो चाहिए। शिक्षा न पानेसे अपने पैरों खड़े होनेकी शक्ति कहाँसे पाओगी? एक दिन शायद तुम्हें इस पृथ्वीपर अकेला बच रहना होगा। अपने पैरों खड़े होना न सीखनेसे औरतोंके दुःखकी सीमा नहीं रहती, यह तो तुम अच्छी तरह जानती हो शारदा!

उसी दिन रातको तारक जब खाने बैठा, तब सविता नित्यकी तरह उसके खाने-पीनेकी देख-भाल करनेके लिए सामने बैठी थी। सविताने इसी समय कहा—तुम क्या ब्याह कर रहे हो भैया?

तारकने चौंककर पूछा—आपने किससे सुना?

सविताने शान्त हँसीके साथ कहा—आज सिंगापुरसे चिट्ठी आई है।

शारदा मिठाई परोस रही थी। बोली—हमारे घरके ब्याहकी खबर हमारे ही पास समुद्र-पारकी डाक द्वारा पहुँचती है तारक बाबू!

शारदाके इस व्यंगसे तारक बेहद चिढ़ गया, लेकिन उसे प्रकट न कर सका। सविताकी ओर ताककर कैफियत देनेके स्वरमें बोला—मेरे सिनियर वकील शिवशंकर बाबू अपनी भतीजीसे ब्याह करनेके लिए बड़ा जोर डाल रहे हैं। लेकिन मैंने अभीतक अपना मतामत नहीं जताया। यह ब्याह होगा या नहीं, इसका कुछ ठीक नहीं। मैंने अभी किसीसे ही नहीं कहा। केवल विमल बाबूको लिखा था—परामर्शके लिए।

सविताने कहा—यह सम्बन्ध तो तुम्हारे लिए भला ही जान पड़ता है। तुम आत्मीय-बन्धुहीन हो। ऐसा बड़ा मुरब्बी ससुर मिलना तो बड़े भाग्यकी बात है। लड़की अगर तुम्हें नापसन्द न हो तो इस शुभ कार्यमें देर न करना ही अच्छा है।

तारकने संकुचित होकर कहा—लेकिन इस ब्याहमें कई बाधायें हैं मा। सोचता हूं, शिव बाबूको जवाब दे दूं कि यह ब्याह सम्भव न होगा।

सविताने कहा—बाधा काहेकी है? मुझे बतानेमें क्या तुम्हें कुछ संकोच है भैया?

तारकने व्यस्त होकर कहा—ना ना, आपके आगे कहनेमें मुझे क्या बाधा हो सकती है? आप मेरी मा हैं। मैं आपसे कहनेको सोच ही रहा था—आज ही आपसे ये सब बातें कहता।

शारदाके मुंहमें अविश्वासकी हँसी देख पड़ी। उसने कहा—मा, तो अब मैं ऊपर जाती हूं। वह चली गई।

तारक कंठ-स्वर नीचा करके बोला—शिवशंकर बाबू मेरे साथ अपनी भतीजी-के ब्याहके लिए इच्छुक हैं। लेकिन उनकी कई शर्तें हैं। मैं एक शर्तको अभी तक मंजूर नहीं कर सका। यद्यपि शिवशंकर बाबूकी सहायतासे ही मैं इन थोड़ेसे दिनोंमें ही 'बार' में इतना नाम कर सका हूँ, और उनके सहायक रहते मैं बहुत जल्दी ही उन्नतिकी ओर आगे बढ़ता जा सकूंगा, यह भी ठीक है, लेकिन—

तारक बात अधूरी छोड़कर चुप हो गया।

सविता तारककी ओर जिज्ञासाकी दृष्टिसे देखती रही।

कुछ देर चुप रहकर तारकने धीरे-धीरे कहा—शिव बाबूकी प्रधान और पहली शर्त यह है कि ब्याहके बाद कुछ दिन, कमसे कम साल-डेढ़ साल, मुझे उनके पास जाकर रहना होगा।

" क्यों ? "

" उनकी भतीजी पितृहीना है। शिव बाबूके अपनी कोई लड़की नहीं है। इसी लिये—"

" समझ गई, भतीजीको ही उन्होंने अपनी बेटीकी तरह पाल-पोसकर बड़ा किया है। जान पड़ता है, उसे अपने पास ही रखना चाहते हैं—"

" हाँ, अपनी बेटीसे बढ़कर चाहते हैं। इसीसे कह रहे थे कि तुम अगर मेरे घरमें आकर रहो तो तुम्हारे काम-काजकी बड़ी सुविधा होगी। बादको तुम्हारा अलग घर बसानेकी जिम्मेदारी मेरी रही।"

" फिर इसमें तुम्हारी असुविधाकी क्या बात है ? "

तारकने थूक घूँटकर कुछ अस्पष्ट-सा कहा—मुझे तो ठीक कोई असुविधा नहीं है, बल्कि हमेशा उनके पास रहकर काम-काज सीखनेमें और अलग मुकदमा पानेमें सुविधा ही होगी, ऐसा जान पड़ता है, लेकिन मैं जाऊँ किस तरह मा ? मान लीजिए, आपकी देखभाल—

सविताने हँसकर कहा—ओह, इसलिए ? मेरे लिए तुम कुछ भी चिन्ता न करो तारक। मैं तो आज ही सवेरे सोच रही थी कि कुछ दिन बाहर कहीं चली जाऊँ। जीवनमें अब तक तीर्थपर्यटन नहीं किया। सोचती हूँ, अब तीर्थयात्रा करने निकलूँगी।

" अकेली जायगी ? "

" अगर जाऊँगी तो शारदाको भी साथ ले जाऊँगी, या उसे उसके शिक्षाप्रतिष्ठानके बोर्डिंगमें रख जाऊँगी। "

तारकने थोड़ी देर सोचकर कहा—लौटेंगी कितने दिनमें ?

सविताने मुरझाई हुई हँसी हँसकर कहा—हो सकता है कि कलकत्ते अब न लौट सकूँ। अगर उस तरफ कोई देश अच्छा लगा, तो वहीं एक छोटा सा घर खरीदकर रह जाऊँगी—यह सोच रही हूँ।

तारक चुप हो रहा।

सविताने कहा—उन लोगोंसे पक्का वादा कर लो।

तारकका भोजन समाप्त हो गया था। आसनसे उठते-उठते उसने कहा—सोचकर देखूँगा।

उसी दिन रातको सविता जब पलंगपर लेटी, और शारदा उसकी मसहरीके

किनारे बिछौनेके नीचे दबा रही थी, तब सविताने पूछा—शारदा, तुम्हारे स्कूलकी परीक्षा कब है?

शारदाने कहा—ढाई महीने बाद।

सविताने कहा—मैं कुछ दिन बाद तीर्थयात्राको निकलूँगी, विचार कर रही हूँ—तुम मेरे साथ चलोगी?

शारदाने ललककर उत्साहके स्वरमें कहा—हाँ मा, चलूँगी। एक काशीके सिवा मैं इस जीवनमें और किसी भी तीर्थमें नहीं गई। गयामें एक बार गई अवश्य थी, लेकिन वह बहुत छोटी अवस्थामें—ग्यारह बारह वर्षकी तब होऊँगी। पिताजी स्वामीको पिंडदान कराने लिवा ले गये थे।

यह सुनकर सविताको यथेष्ट विस्मय हुआ, लेकिन वह कुछ बोली नहीं।

शारदाने कहा—कब हम लोगोंका जाना होगा मा?

"सोचती हूँ, ब्याह हो जाय। उसके बाद कलकत्तेका रहना एकदम छोड़कर चली जाऊँगी।"

शारदाने कहा—मुझे अपने साथ रखिएगा न?

"नहीं बेटी, तुमको कलकत्ते लौटना होगा।"

शारदाने कहा—क्यों मा? उसके स्वरमें घबराहट थी।

सविताने कहा—तुम जिस प्रयोजनसे शिक्षा प्राप्त कर रही हो, वह अभी पूरा नहीं हुआ बेटी! लौट आकर बोर्डिंगमें रहकर शिक्षा पूरी करके उसके बाद मेरे पास जाकर रहना।

शारदा स्तब्ध होकर खड़ी रही। कुछ देर सोचकर मुरझाये हुए स्वरमें धीरे-धीरे बोली—तो मुझे तीर्थ घूमने जानेकी जरूरत नहीं मा।

सविताने कहा—क्यों? देशदेशान्तरमें घूम आनेसे बहुत कुछ जान सकोगी, सीख सकोगी।

शारदाने सिर हिलाकर कहा—नहीं मा, मैं न जाऊँगी। वे लोग अगर मुझे देख लें?

सविताने विस्मित होकर पूछा—यह क्या! वे लोग कौन?

शारदाने अत्यन्त कुंठित होकर कहा—मेरे मायकेके लोग।

सविता सब समझ गई। फिर कुछ नहीं पूछा। लम्बी साँस छोड़कर बोली—अच्छा, तीर्थ करने न जाओ। यहीं रहकर पढ़ो-लिखो, सीखो।

अकपट-व्याकुलतासे शारदा कह उठी—आपका साथ छोड़ते मुझे तनिक भी साहस नहीं होता मा! बोर्डिंगमें अकेले रहनेमें डर तो नहीं लगेगा मा?

सविता—भय काहेका? वहाँ तुम जैसी कितनी ही औरतें हैं। फिर मेरा राजू कलकत्तेमें ही है। तारक भी होगा। इन लोगोंसे तुम्हारी खोज खबर लेनेको—देखरेख रखनेको मैं कह जाऊँगी। जब जो जरूरत हो, इन लोगोंको जना सकोगी।

घरमें एक तरहसे अंधकार छाया हुआ था। सविताके पलंगके पास चुपचाप खड़ी शारदा सोचने लगी। बहुत देर बाद अस्पष्ट स्वरमें बोली—माँ,—

सविताने कहा—कहो शारदा, मैं जाग ही रही हूँ।

बिछौनेपरसे सविताने जवाब दिया।

"आज आपसे अपनी सब बातें कहनेकी इच्छा हो रही है।"

"आज बहुत रात हो गई है बेटी। तुम जाकर सो रहो।"

"जाती हूँ।—मैं ग्यारह वर्षकी अवस्थामें विधवा हो गई थी। ससुराल फिर नहीं गई। छोटी अवस्थामें ही मा मर गई थी। बापने फिर और ब्याह कर लिया।—"

सविताने रोककर कहा—तुम्हें कुछ भी न कहना होगा शारदा। मैं सब जान गई हूँ।

दूसरे दिन सविता विमल बाबूको पत्र लिख रही थी—

"बहुत दूर कहीं चले जानेके लिए मेरा मन बहुत ही व्याकुल है। बहुत सोच-विचारकर अन्तको तीर्थभ्रमणके लिए जाना ठीक किया है। अब यहा लौटनेकी रुचि नहीं है। सोचा है, अनिर्दिष्ट रूपसे—घूमते-घूमते जो देश—जो स्थान अच्छा मालूम होगा, वहीं रह जाऊँगी। कलकत्तेका यह घर रखनेकी अब जरूरत नहीं है। तारकके भावी ससुर तारकको अपने घरमें रखना चाहते हैं। वह तारककी वकालतमें सब तरहकी सहायता और भविष्यमें उसका अलग घर बसानेकी जिम्मेदारी लेनेको तैयार हैं। मैंने तारकको इस व्यवस्थासे सहमत होनेका परामर्श दिया है।

"शारदाकी शिक्षा जब तक समाप्त न हो, तब तक वह अपने शिक्षा-प्रतिष्ठानके बोर्डिंग हाऊसमें ही रहेगी। शिक्षा सम्पूर्ण हो जानेपर वह अगर चाहे तो मेरे पास जाकर रह सकती है।

"मैं केवल अपने राजूकी कुछ भी व्यवस्था नहीं कर सकी। मुझे मालूम हुआ है कि वह कुछ दिनोंसे ऋणके जालमें फस गया है। अथ च मेरी अथवा और किसीकी सहायता लेनेको वह बिलकुल तैयार नहीं है। उससे अनुरोध करनेकी भी हिम्मत नहीं होती। प्रत्याख्यानका दुःख सब ओरसे बढ़ानेमें कोई लाभ नहीं। इसका भी उपाय नहीं है कि राजूको अपने साथ ले जाऊ। कारण, उसे प्राय. ही वृन्दावन जाना पड़ता है। कोई ठीक नहीं कि कब वृन्दावनसे बुलावा आ जायगा।

"तारकके लिए इस समय अदालत जानेमे नागा करना असभव है, यह तुम जानते हो। अतएव पुराने दरवान महादेवसिंह और शिवूकी माको साथ लेकर यात्रा करना तय किया है। कुछ दिन तो घूम लू। उसके बाद जहाँ भी हो, स्थिर होकर बैठूगी।"

* * *

उस दिन किसी उपलक्षमें शारदाका स्कूल दो पहरको ही बन्द हो जानेके कारण शारदा एक बजेके लगभग घर लौट आई। उस समय सविता दक्षिणेश्वर गई थी और तारक अदालत। शारदा अकेली घरमें बैठी इतिहासका पाठ तैयार करने लगी।

सदर दरवाजेसे कुडी खटकानेके साथ किसीके पुकारनेकी आवाज सुनाई दी—नई-मा!

पुस्तक रखकर शारदाने जल्दीसे जाकर दरवाजा खोल दिया।

राखालने कहा—यह क्या? आज तुम्हारा स्कूल नहीं है क्या?

शारदाने कहा—था। छुट्टी हो गई है।

राखालने पूछा—काहेकी छुट्टी?

शारदाने शरारतकी हँसी हँसकर कहा—आप यहाँ आवेंगे, इस लिए छुट्टी हो गई!

राखालने गम्भीर मुखसे कहा—अच्छा, ये सब बातें कहनेमें तुम्हें कोई हिचक नहीं होती ?

शारदाने चपल कण्ठसे उत्तर दिया—जरा भी नहीं।

शारदाके पीछे पीछे सीढ़ियों पर चढ़ते-चढ़ते राखालने कहा—नई-मा क्या कर रही हैं ? उनसे कुछ प्रयोजन है।

शारदाने कहा—तब तो शाम तक राह देखनी होगी।

" क्यों ? क्या वह घरमें नहीं हैं ? "

" नहीं। दक्षिणेश्वर गई हैं। आज उपवास है न ! "

" काहेका उपवास ? "

" सो तो बतातीं नहीं। कहती हैं—व्रत है। "

" इतने व्रत ही कहाँसे आ जाते हैं ? देखता हूँ, पत्रा-जत्री वगैरह जला डाले बिना काम नहीं चलेगा। "

' आज उनकी बेटीका जन्म-दिन है। "

" यह बात है ? नई-माने शायद तुमसे कहा है। "

" आप भी पागल हुए हैं ! वह भला कह सकती हैं ? बहुत दिन पहले माको कहते सुना था कि माघकी पंचमी रेणुकी जन्म-तिथि है। "

राखालने हँसकर कहा—इसीसे इस दिन नई-माका उपवास टल नहीं सकता !

शारदाने कहा—हाँ, केवल उपवास ही नहीं, मैंने लक्ष्य करके देखा है, इस दिन मा गरीब दुखियोंको बहुत दान करती हैं। रुपये-पैसे, नये कपड़े, धोती, कम्बल, अलवान यह सब तो देती ही हैं, इसके सिवा अपनी पसदकी अनेक सुदर-सुदर रंगीन साड़ियाँ, डोरिया-साड़ियाँ, ब्लाउज, शेमीज वगैरह खरीदकर भिखारी औरतोंको—गरीबोंको बाँटती हैं। घरसे यह सब नहीं करतीं, और कहीं जाकर दे आती हैं। जैसे कालीघाट, दक्षिणेश्वर, गगा-घाट, ऐसे ही किसी स्थानमें।

राखालने कुछ नहीं कहा, गभीर मुखसे जैसे कुछ सोचने लगा।

शारदाने कहा—आपने क्या सुना है कि मा कलकत्तेका घर उठाकर सदाके लिए कहीं और चली जा रही हैं ?

राखालने सिर उठाकर कहा—कहाँ जा रही हैं ?

शारदाने कहा—अभी तो तीर्थभ्रमण करने जा रही हैं। उसके बाद किसी भी स्थानमें, रह जायँगी।

राखालने पूछा—कब जायँगी?

शारदाने कहा—तारक बाबूका ब्याह हो जानेके बाद।

राखालने आश्चर्यके साथ पूछा—तारकका ब्याह है क्या? कहाँ?

शारदाने विस्तारके साथ तारकके ब्याहकी खबर राखालको सुनाई।

राखालने कहा—तारक घर-जमाई होनेको राजी हो गया?

शारदाने कहा—केवल दो सालको। उसके बाद उन्हें अलग एक घर देकर अलग गिरिस्ती बसा देनेका वचन शिवशंकर बाबूने दिया है।

राखालने हँसकर कहा—तो फिर यह कहो कि तारक एक राजकन्या ही नहीं, आधा राज्य भी पा रहा है।

शारदाने परिहासके स्वरमें कहा—सुनकर आपको निश्चय ही अफसोस हो रहा है—क्यों न देवता?

राखाल इस परिहासका जवाब न देकर अन्यमनस्क भावसे कुछ सोचने लगा। शारदाने एकाएक विनतीके स्वरमें कहा—देवता, आप भी क्यों न ब्याह कर लीजिए?

अबकी राखालने जोरसे हँसकर कहा—तारकके साथ टक्कर देनेको ब्याह करूँ क्या?

शारदाने कहा—वाह, यह क्यों? हमेशा क्या यों ही अकेले 'मेस' में पड़े रहेंगे? घर बसानेकी साध नहीं होती?

राखालने कहा—साध रहने पर भी क्या सभी घर बसा सकते हैं शारदा?

"क्यों नहीं बसा सकते? दीन-दुखी लोग भी तो अपने मनके माफिक घर बसा लेते हैं।"

"लेकिन यह भी तो देखा जाता है शारदा कि गरीब-दुखीको अभाव-अनटनके बीच भी घर बसानेका सुयोग मिल गया, किन्तु महाधनीको सब तरहसे भरा-पूरा होनेपर भी वह सुयोग नहीं मिला। सभीके भाग्यमें सभी सुख और सभी साधें पूरी होना नहीं लिखा होता। देखो न, तुमने भी तो कोशिश करनेमें कोई कसर नहीं उठा रखी, लेकिन तुम क्या अपना घर बसा पा रही हो?"

स्वच्छंद स्वरमें शारदाने जवाब दिया—मेरी बात छोड़ दीजिए। इतनी कम उम्रमें अगर विधवा न हो जाती तो आज मेरी बहुत बड़ी गिरिस्ती होती। उसके बाद भी तो फिर खुदाके ऊपर खुदकारीकी दुर्बुद्धि लेकर नये सिरेसे गिरस्ती खड़ी की थी मैंने। लेकिन भगवानको सहन न हुआ तो क्या करूँ?

राखालने कहा—तो बस समझ लो—'भाग्य फलति सर्वत्र।'

राखालकी युक्तिपर कर्णपात न करके शारदाने कहा—अगर आपके ब्याह करनेके बाद गिरिस्ती न बनती अथवा गिरिस्ती बननेके समय ही बहू मर जाती या और कुछ हो जाता, तो मैं यह बात मान लेती। आपने तो आजतक कोई चेष्टा ही नहीं की।

राखालने कहा—चेष्टा करनेहीसे क्या काम पूरा हो जाता है? ब्याहका होना या न होना भी तो भाग्यके ऊपर निर्भर है—इसे शायद तुम नहीं मानना चाहतीं। देखो शारदा, यह सब इतिहास-भूगोल पढ़ना और गलीचे-शतरजी बुनना सीखना कुछ दिन बंद रखकर तुम्हें कुछ दिन थोड़ा-सा लाजिक (तर्कशास्त्र) पढ़ना चाहिए।

"कुछ जरूरत नहीं, करिए मुझसे बहस, देख लीजिएगा, कैसे आपको हरा देती हूँ।"

राखालने हाथ जोड़कर कहा—मैं हार माने लेता हूँ। एक तो स्त्री, उसपर अल्प विद्या—यह कैसी भयंकर चीज है, सो सभी जानते हैं। तर्कशास्त्रप्रणेता स्वयं आवें तो वे भी हार मानेंगे, मैं तो तुच्छ हूँ। अच्छा, अब इस बातको छोड़कर कामकी बातका जवाब दो। नई-मा कलकत्तेमें रहना छोड़कर तीर्थयात्रा करने जा रही हैं, तो तुम्हारी व्यवस्था क्या हो रही है? तुम भी क्या नई-माके साथ जा रही हो?

शारदाने हँसकर कहा—मान लीजिए मैं जाऊँ, तो आप उससे खुश होंगे या नाखुश?

राखालने जरा सोचकर कहा—खुश न होनेपर भी नाखुश होनेका ही मुझे क्या अधिकार है?

'अधिकार अगर पा जाइए, तब?"

राखालने हँसकर कहा—यह चीज इतनी तुच्छ नहीं है। अधिकार ऐसी चीज है जो दानकी सहायतासे आनेपर दुर्बल हो जाती है, इसीलिए यह मर्यादा

खो देता है। अधिकार जहां आप ही सहजभावसे उत्पन्न होता है, वहीं उसका जोर चलता है।

शारदाने कहा—तो फिर मुझे भी अनधिकार-चर्चा न करनी चाहिए। लेकिन सब मिलाकर यह अच्छी तरह समझा जा रहा है कि मैं माके साथ विदेश जाऊं, तो आप जरा भी खुश न होंगे।

"सो तुम्हारे ही होनेवाले कल्याणके लिए शारदा।"

राखालका कंठस्वर भारी हो उठा। बोला, पर इसमें मेरा अपना स्वार्थ है, यह न समझना।

शारदाने उदास भावसे दूसरी ओर मुह फेरकर कहा—संसारमें किसका स्वार्थ कहाँ किस बातमें है, कैसे समझ सकती हूं बताइए?

राखालने व्याकुल होकर कहा—मैंने झूठ नहीं कहा शारदा—

शारदाने अब भी हंस दिया। वह हँसी स्निग्ध और मधुर थी। बोली—सुनिए, नई-माने कहा है कि जब तक पढ़ाई-लिखाई समाप्त न हो तब तक मेरे लिए बोर्डिंगमें ही रहनेकी व्यवस्था कर जायँगी।

राखालने कहा—यही बहुत अच्छी व्यवस्था है।

शारदाका मुख अन्धकार हो उठा। उसने उलाहनेके स्वरमें कहा—लेकिन मुझे इस्कूल-विस्कूल बिल्कुल ही अच्छा नहीं लगता देवता।

"क्या अच्छा लगता है, बताओ?"

शारदा सिर झुकाये चुप रही।

राखालने कहा—मोटी मोटी पोथियां पढ़कर थिओरेटिकल (सैद्धांतिक) ज्ञान प्राप्त करनेकी अपेक्षा प्रेक्टिकल (व्यावहारिक) क्लासमें अपने हाथसे प्रत्यक्ष काम करना तो खूब इंटरेस्टिंग (मनोरंजक) होता है। यह तो तुम्हें अच्छा लगना चाहिए।

शारदाने नेत्र नीचे किये ही कहा—मुझे कुछ भी सीखना अच्छा नहीं लगता।

राखालने विस्मित होकर कहा—फिर तुमको क्या अच्छा लगता है शारदा?

विषादपूर्ण स्वरमें शारदाने कहा—उसके कहनेसे कोई लाभ नहीं। आप सुनकर शायद हँसेंगे, ठट्ठा करेंगे।

राखालने कहा—शारदा, तुम्हारे जीवनके सुख-दुःखकी बातपर भी व्यंग-विद्रूप करूं, इतना बड़ा नीच मैं नहीं हूँ।

अप्रतिभ होकर शारदाने कहा—नहीं देवता, यह बात नहीं है। मुझे क्या अच्छा लगता है, यह मैं आप ही नहीं समझ पाती। हाँ, इतना भर कह सकती हू कि एक निर्दिष्ट समयपर मशीनकी तरह स्कूलमें जाकर पढ़ने-लिखने या शिल्पकर्म अथवा धात्रीविद्या सीखनेकी अपेक्षा घरमें घर-गिरिस्तीके काम करना मुझे बहुत अच्छा लगता है। घर-गिरिस्तीको बिना किसी दोष या त्रुटिके अच्छी तरह सजाकर कायदेसे रखनेमें मेरे उत्साहकी सीमा नहीं है। इसके लिए मैं सवेरेसे रात तक बिना थकावटके परिश्रम कर सकती हूँ। छोटे-छोटे बच्चे मेरे अत्यन्त आनन्दकी सामग्री हैं। नई-माके पुराने घरमें जब मैं रहती थी तब आपने देखा तो है, छोटे-छोटे लड़की-लड़के सब मेरे ही पास रहते थे, खेलते-कूदते थे, सोते थे, पढ़ते-लिखते थे।

थोड़ी देर रुककर एक लम्बी साँस छोड़कर शारदाने कहा—अपने हाथसे अपने आदमियोंकी सेवा और यत्न करनेमें कितनी तृप्ति होती है, कितना आनन्द मिलता है, यह स्त्री-जातिके सिवा और कोई नहीं समझ सकता।

राखाल्ने व्यथित होकर कहा—शारदा, तुमको अपनी गिरिस्ती, अपना परिवार कुछ नहीं मिला, इसीसे उसकी ओर तुम्हारा इतना आकर्षण है।

शारदाने कहा—हो सकता है, यही बात हो। इसीसे तो आपसे विनती करके कहती हूँ देवता, कि आप ब्याह कर लीजिए। घर-गिरिस्त बनिए। मैं आपकी गिरिस्तीको लेकर रहूँगी। आप दोनों जनोंकी जी लगाकर सेवा और यत्न करूँगी। अपने हाथोंसे ऐसे सुन्दर ढगसे घर-गिरिस्तीको कायदेसे सजाकर रखूँगी कि देखिएगा, लोग बड़ाई करते हैं कि नहीं। इसके बाद नन्हें-मुन्हेंको पाल-पोसकर बड़ा करनेका भार पूरे तौरसे अपने ऊपर लूँगी। यह जो सिलाई, बुनना, शिशु-पालन आदि इतने कष्टसे सीख रही हूँ, सो क्या सचमुच ही अस्पतालमें या लोगोंके दरवाजे-दरवाजे घूमकर नौकरी करनेके लिए? यह सोचिएगा भी नहीं।

राखाल विस्मयसे अभिभूत होकर शारदाकी बातें सुन रहा था।

शारदा कहने लगी—स्कूलके इतने कड़े नियम मुझे बिलकुल ही बर्दाश्त नहीं होते। तो भी जोर करके क्यों सीखती हूँ, जानते हैं? आपकी गिरिस्ती करूँगी, इस लिए। मैं आपका ब्याह जरूर करूँगी। खुद लड़की पसंद करूँगी। गिरिस्ती साधूँगी। उसमें कोई त्रुटि या कमी न रहने दूँगी। लड़कों बच्चोंको पाल-पोसूँगी, उनकी देखरेख करूँगी। भगवान् न करें, अगर घर-गिरिस्तीमें किसी बातकी

कमी हुई, अभाव हुआ, तो उसे पूरा करनेके लिए किसीके आगे जाकर हाथ न फैलाना होगा; मैं खुद उसकी पूर्ति कर सकूँगी।

राखालने कहा—तुम क्या यही कल्पना लेकर स्कूलमें भर्ती हुई हो शारदा ?

राखालके मुँहकी ओर ताककर शारदाने कहा—आपने सोचा है कि आपके रहते क्या मैं अन्नके लिए पराये दर्वाजे हाथ फैलाकर नौकरी करने निकलूँगी ? किस दुःखके मारे जाऊँगी ? मुझे क्या पड़ी है ? मेरी बला जाय—

शारदाके गलेके भारीपनसे राखालके लिए अविश्वासका कोई कारण नहीं रहा।

शारदाके मुखकी ओर पूर्ण दृष्टिसे ताककर राखालने धीर कंठसे कहा—शारदा, तुम क्या यह कहना चाहती हो कि तुम अपना सारा जीवन ऐसे ही पराई दुनियामें ही लुटा जाओगी ? अपना घर-परिवार, अपना स्वामी, अपनी सन्तान न पानेसे जीवनमें गिरिस्तीकी साध क्या सम्पूर्ण सार्थक होती है ?

शारदाने कोमल स्वरसे कहा—यह मैं बहस करके आपको न समझा सकूँगी देवता। मैंने जाना है कि स्वामी, गिरिस्ती और सन्तान स्त्रियोंके जीवनमें सबसे बढ़कर आकांक्षाकी वस्तु हैं। जो स्त्री सच्चे रूपमें इसे चाहेगी, प्यार करेगी, वह कभी इसमें तनिक भी दाग नहीं लगने दे सकती। कोई भी स्त्री नहीं चाहती कि उसकी अपनी सन्तानके माथेपर बाप-माके किसी तरहके कलंककी छाप रहे। चाहे जिस कारणसे हो और चाहे जिसके दोषसे हो, यह बात तो मैं किसी दिन कभी भूल नहीं पाती कि मेरे जीवनमें अपवित्रताकी छूत लग गई है। अपने स्वामी-पुत्रको छोटा करके, बदनाम करके, मैं पत्नी बनूँ—इतनी बड़ी स्वार्थपर मैं नहीं हूँ। नहीं पाया स्वामी, नहीं पाई सन्तान, पर, जिन्हें मैं हृदयसे प्यार करती हूँ, उनकी सन्तान क्या अपनी सन्तानसे कम स्नेहकी वस्तु है ? उनकी घर-गिरिस्ती क्या अपनी गिरिस्तीसे कम आनन्ददायक है ?

राखाल निस्तब्ध होकर बैठा रहा।

कुछ क्षण बाद शारदाने धीरे धीरे कहा—देवता, मैं निर्बोध नहीं हूँ। आप ब्याह कीजिए। आपकी पत्नीको मैं प्यार कर सकूँगी। मैं ईर्षासे घृणा करती हूँ। इसके सिवा सबसे बड़ी बात क्या है, जानते हैं ? वही तो मुझे सब कुछ देगी। आपकी गिरिस्ती—आपकी सन्तान—मेरे आनन्दका सारा सहारा मैं उसीके हाथसे तो पाऊँगी।—मेरे जीवनकी सच्ची सार्थकता उसीका तो दान होगी।

निरुत्तर राखाल एक ही भावसे चिन्तामें डूबा बैठा रहा। बहुत देर चुपचाप बीत जाने पर राखालने सन्नाटा तोड़कर, सिर उठाकर, अस्पष्ट कण्ठसे कहा—तुम्हारे इस अनुरोधने आज सत्य ही मुझे अपने भविष्य जीवनके सम्बन्धमें सोचनेको विवश कर दिया शारदा! मैं सोचकर देखूँगा—आज अब चलता हूँ। नई-माके आनेपर कहना, मैं आया था।

२६

तारकका विवाह निर्विघ्न हो गया।

विमल बाबू कलकत्ते आये थे। सविता विमल बाबूके साथ तीर्थयात्राके लिए जानेको तैयार हो गई। कल वे रवाना होंगे। पुराने दरबान महादेवसिंहके अलावा विमल बाबूने एक दासी और रसोई बनानेवाली साथ लेनेकी व्यवस्था की है।

राखालको बुलाकर सविताने उसके हाथमें ब्रजविहारी बाबूके सील मोहर किये हुए गहने समेत बक्सको देकर कहा—ये गहने रेणुके हैं। वह न लेना चाहे तो संसारकी मातृहीन लड़कियोंको ये तुम बाट देना राजू। जिसके लिए ये सब रख छोड़े थे, उसीने जब हद दर्जेके दारिद्र्यको सिरपर उठा लिया, तब मैं इस बोझको लादकर क्यों मरूँ? डेढ़ लाख रुपए मूल्यकी जो जायदाद मेरे नाम थी, वह रेणुके ही बापकी कमाईके रुपयोंसे खरीदी थी। वह जायदाद मैंने रेणुके नाम ट्रान्सफर करके रजिस्ट्री कर दी है। यह लो वह दस्तावेज और कागज-पत्र। इसे भी वह अगर न स्वीकार करे तो इस सम्पत्तिकी जो व्यवस्था तुम ठीक समझना, वही करना। और, ये कई हजार रुपएके प्रामिसरी नोट और मेरा यह हार, कड़े और चूड़ियाँ हैं, जिन्हें ब्याहके समय मेरे बापने मुझे दी थीं। यह सब मैं उसे जो तुम्हारी घर-गिरिस्ती करने आवेगी, अर्थात् अपनी बहूरानीको, अपना यौतुक दिये जाती हूं। यह उसकी सासकी आशीर्वादी है। इसे लौटाना नहीं बेटा।

शारदा दूरपर खड़ी राखालके मुंहको ताककर मुस्कराई।

राखालने मुश्किलमें पड़कर कहा—नई मा, आपके इस लड़केकी विद्या-बुद्धिका हाल तो आपसे छिपा नहीं है। इतनी बड़ी भारी जिम्मेदारी मेरे ऊपर क्यों लादे जा रही हैं आप? मैं क्या इन सबकी व्यवस्था कर सकूँगा? इसकी अपेक्षा बल्कि तारकके पास यह सब जमा कर जाइए। वह कानूनदां आदमी है, धन

सम्पत्तिके मामलेको अच्छी तरह समझता-बूझता है। उसके हाथमें रहनेसे सुव्यवस्था हो सकती है।

सविताने कहा—मुझे क्या तू निश्चिन्त होकर जाने न देगा राजू!

इसके बाद उन्होंने भरे गलेसे कहा—जिस उद्देश्यको लेकर तुम्हारे काका बाबूके हाथसे यह सब एक दिन मैंने अपने हाथमें लिया था, वह सार्थक नहीं हुआ। तुम्हारे काका बाबूका कारोबार जो डूब गया है, उसीके साथ यह सब भी उसी दिन डूब जाता तो अच्छा होता। उससे शायद मैं आजकी अपेक्षा अधिक सान्त्वना पाती।

राखालने कुंठित होकर कहा—लेकिन वह चाहे जो कहिए नई-मा, मैं इस आर्थिक व्यापारमें बिल्कुल ही अज्ञ हूँ—कुछ भी नहीं जानता। मुझसे—

सविताने धीर कण्ठसे कहा—डरो नहीं राजू, तुम इस सबधमें जो व्यवस्था करोगे वही सुव्यवस्था और शुभ व्यवस्था होगी।

× × ×

सविता वगैरहने पहले द्वारकाकी यात्रा की। वहाँसे बहुत जगह घूमते-घूमते गुजरात, राजपूताना वगैरह भ्रमण करके वे आगरे पहुँचे। विमल बाबूने आगरेमें पूछा—मथुरा-वृन्दावन न देखोगी सविता? यहाँसे बहुत ही पास—

सविताने कहा—श्रीकृष्णके लीलाक्षेत्र प्रभास तीर्थको देखा, द्वारकापुरी देखी; मथुरा-वृन्दावन ही क्यों बाकी रहे—चलो चलें।

मथुरामें विमलबाबूके परिचित एक धनी सेठके यहाँ ये लोग आकर ठहरे। सेठजी कारोबारके सिलसिलेमें विमल बाबूके साथ विशेष परिचित थे। सेठने अपने सुरम्य गेस्ट-हाउस (अतिथि-भवन) में विमल बाबू वगैरहके रहनेका बंदोबस्त तो कर ही दिया, अधिकन्तु अपनी एक मोटरकार भी हमेशा विमल बाबूके व्यवहारके लिए तैनात कर दी।

मथुरासे मोटरपर बैठकर वृन्दावन पहुँचनेपर विमलबाबूने कहा—सविता, ब्रज बाबू वगैरहसे भेंट करने चलोगी?

सविताने कहा—पागल हुए हो! हम लोग देवदर्शन करने आये हैं; वही करके लौट जायगे।

दिनभर वृन्दावनके अनेक स्थानोंमें घूम-फिरकर थके हुए विमल बाबूने तीसरे पहर कहा—चलो, अब मथुरा लौट चलें।

सविताने कहा—सुना है, वृन्दावनमें गोविन्दजीकी आरती बहुत सुन्दर होती है। आरती देख न ली जाय?

विमल बाबूने कहा—अच्छी बात है। आरती देखकर ही लौटा जायगा।

एक विस्तृत मैदानके पास, एक वृक्षके नीचे, मोटर खड़ी करके शतरंजी बिछाकर ये लोग विश्राम करने लगे। महादेवसिंह दरवान विमल बाबूके चायके सामानका बेतका बक्स गाड़ीसे उतारकर स्टोव जलाकर पानी गरम करने लगा। सविता चाय नहीं पीती किन्तु अपने हाथसे बनाती है। अल्यूमिनियमकी केतलीसे खौलता हुआ पानी चीनीकी प्यालियोंमें ढालकर चीनी, चाय, दूध आदि सामग्री महादेवसिंहने सविताके आगे बढ़ा दी।

थके हुए स्वरमें सविताने कहा—महादेव, तुम्हीं आज चाय बनाओ। मैं घूमते घूमते बहुत थक गई हूँ।

विमल बाबूने उद्विग्न होकर कहा—तुम्हें अपनी तबियत क्या खराब मालूम पड़ रही है? तो फिर आज मंदिरमें भीड़के भीतर जानेकी जरूरत नहीं है।

सविताने कहा—ना, ऐसी बात नहीं है। आरती देखूँगी। जब देखनेका इरादा किया है, बिना देखे न लौटूँगी।

मैदानके छोरपर सूर्य अस्ताचलमें उतर गये। गहरे लाल प्रकाशसे नीला आकाश और हरा मैदान लाल हो उठा। अपने रहनेके स्थानको लौटनेवाले पक्षियोंके कोलाहलसे वृन्दावनके पेड़-पौधे और घने कुंज मुखरित हो उठे। सविता स्तब्ध होकर चुपचाप मैदानके छोरपर अन्यमनस्क दृष्टि फैलाकर बैठी है। विमल बाबू चुपचाप अखबार पढ़ रहे हैं। क्रमश: धीरे-धीरे संध्या घनी हो चली। अखबारसे सिर उठाकर विमल बाबूने कहा—चलो, अब मंदिरमें चलें। बादको जानेपर शायद तुमको भीतर घुसनेमें कष्ट होगा।

सविता जैसे सोतेसे जाग पड़ी हो, इस तरह चौंककर बोली—चलो।

गाड़ीपर बैठकर एकाएक क्या सोचकर सविताने कहा—देखो, न हो कुछ बाद ही हम लोग मंदिरमें चलेंगे। आरतीके घंटा-घड़ियाल पहले बज उठें। भीड़में ऐसा कौन-सा कष्ट होगा?

विमल बाबूने कुछ प्रतिवाद नहीं किया।

गाड़ी इधर-उधर थोड़ा घूमनेके बाद ही प्रकाशपूर्ण गोविन्दजीके मन्दिरमें आरतीके बाजे बज उठे। विमल बाबू वगैरहने मंदिरमें प्रवेश किया।

गोविंदजीकी आरती हो रही है। सविता गोविन्दजीकी मूर्तिके सामने खड़ी गलेमें आँचल डाले आरती देख रही है। किन्तु उसकी दृष्टि मूर्तिकी ओर टिकी हुई नहीं है, आसपास चंचल हो रही है।

एकाएक देख पड़ा, उसी बरामदेके एक कोनेमें ब्रज बाबू दोनों हाथ जोड़े खड़े एकटक एकाग्र मनसे आरती देख रहे हैं। उनके दोनो होंठ धीरे-धीरे चल रहे हैं, संभवतः नाम-जप कर रहे हैं।

आरती समाप्त होनेपर भीड़ छटकर कम हो गई। विमल बाबूने आगे बढ़कर ब्रज बाबूके पैर छुए। जैसे साँपने डस लिया हो, इस तरह ब्रज बाबू उछलकर हट गये और कह उठे—गोविन्द! गोविन्द! यह क्या किया! प्रभुके मंदिरमें मुझे प्रणाम! मुझे महापाप लग गया!

विमल बाबूने अप्रस्तुत होकर कहा—मैं नहीं जानता था कि मन्दिरके भीतर प्रणाम न करना चाहिए। क्षमा कीजिए।

ब्रज बाबूने कहा—गोविन्द, गोविन्द, आप हमारे विमल बाबू हैं न! चलिए चलिए, आंगनमें तुलसी-कुंजकी ओर चलकर बैठें।

विमल बाबूने कहा—चलिए।

ब्रज बाबू गोविन्दजीकी मूर्तिके सामने लंबे लेटकर, साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करके बार-बार अपने कान और नाक मलकर शायद विमल बाबूके प्रणामसे उत्पन्न अपराधके ही लिए क्षमाकी भीख माँगने लगे।

सविता स्थिर नेत्रोंसे जमीनपर पड़े हुए ब्रज बाबूकी ओर ताकती हुई निश्चल भावसे खड़ी रही।

बहुत लंबे प्रणामके बाद उठकर ब्रज बाबू, सविता और विमल बाबूके साथ, मन्दिरके बाहर दूसरे हिस्सेमें जाकर खड़े हुए।

ब्रज बाबूके चेहरेमें परिवर्तन हो गया है। मुखमण्डल और माथा मुँड़ा हुआ है। सिरपर दूध-सी सफेद चुटियाके गुच्छेके सिवा एक भी बाल नहीं देख पड़ता। गलेमें तुलसीके काठकी गुरियोंवाली मालाओंका गुच्छा है। नासिका और ललाटमें तिलक-रेखा, हाथमें हरिनामकी झोली, शरीरपर नामावली। गौर-वर्ण लंबा छरहरा शरीर धूपमें जलकर ताँबेके रंगका हो गया है और बुढ़ापेके कारण आगेकी ओर कुछ कुछ झुक गया है।

माताके प्रति कन्याका यह गैर जैसा आचरण देखकर व्रज बाबू मन-ही-मन कुंठित होते जा रहे थे। शायद इसी कारण सविताको उद्देश करके बोले—नई-बहू, गोविन्दके कुटीरमें एक दिन तुम लोग सेवा करने आ सकोगे क्या ?

सविताने रेणुके निर्लिप्त मुखकी ओर एक नजर डालकर व्रज बाबूको जवाब दिया—नहीं मँझले बाबू, तुम्हारे गोविन्दके कुटीरमें मुझ जैसी महापापिनीको प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है।

जीभ काटकर व्रज बाबूने कहा—गोविन्द! गोविन्द! वह दीनदयाल दीन-बन्धु—पतित-पावन हैं। वह अशरण-शरण हैं नई-बहू—

उमड़ी हुई रुलाईको प्राणपणसे रोकते-रोकते सविताने कहा—केवल तोतेकी तरह मुँहसे ही यह सब कह गये मँझले बाबू! तुम लोगोंके धर्मने तुम लोगोंको जैसा बना दिया है, वह तुम लोग अपनी आँखोंसे देख नहीं पाते, यही कुशल है। जिस धर्ममें क्षमा नहीं है, वह धर्म अधर्मसे कितना ऊँचा है ? सविता जल्दीसे मदिरके बाहरकी ओर बढ़ गई।

विमूढ़ व्रज बाबूके सामने आकर विमल बाबूने कहा—आपके साथ मुझे कुछ बात करना था। आपको कब सुविधा होगी, यह जान—

व्रज बाबूने कहा—जब आपको सुविधा हो।

विमल बाबूने कहा—अच्छी बात है। कल दोपहरको मैं आऊँगा। आपका डेरा—

"इस मन्दिरसे निकलकर बाएँ हाथकी राह पकड़कर जरा आगे बढ़कर दाहने हाथकी गलीमें है। घनश्यामदास बाबाजीका कुंज पूछनेसे ही सब लोग बता देंगे।"

रेणुने कहा—बाबूजी, कल तो श्रीगुरुमहाराजका चौबीस घंटेका नाम-कीर्तन और वैष्णवोंकी सेवा होगी। कल तो दिनभर हम लोग वहीं रहेंगे।

व्रज बाबूने व्यस्त होकर कहा—ठीक ठीक! खूब याद दिला दिया बेटी!—विमल बाबू, कल मुझे माफ करना होगा। कल मैं दिनभर अपने गुरुदेव श्रीवैकुण्ठ-दास बाबाजीके श्रीकुंजमें रहूँगा। आप परसों सवेरे आवें तो क्या कुछ असु-विधा होगी ?

विमल बाबूने कहा—कुछ नहीं। तो फिर परसों सबेरे ही मैं आपके पास आऊँगा, नमस्कार।

व्रज वाबूने कहा—गोविन्द ! गोविन्द !

मोटरपर सवार होकर ही आसनके ऊपर थके हुए शिथिल देहको फैलाकर सविताने कहा—अब अनेक स्थानोंमें घूमना अच्छा नहीं लगता। अब तो विश्राम चाहिए दयामय !

विस्मित विमल वाबूने सविताके मुँहकी ओर ताककर कहा—वृन्दावनमें ही रहना ठीक किया है क्या ?

"ना—ना—ना ! यहा मैं एक घड़ी भी नहीं ठहर सकूंगी।" फिर कंठ-स्वरमें कुछ जोर देकर ही कहा—मुझे सिंगापुर ले चलो। अत्यन्त विस्मित होकर विमल वाबूने कहा—यह क्या ?

सविताने कहा—हा, कल सवेरे ही यात्राकी सब व्यवस्था कर डालो। एक दिनकी भी अब देर नहीं। सविताके स्वरमें आकुल विनती ध्वनित हो उठी।

विमल वाबूने कहा—इतनी अधीर न होओ सविता। कल तो जाना हो नहीं सकता। वह रेलका रास्ता नहीं है, जहाजकी राह है। कलकत्ते होकर जाना होगा। इसके सिवा व्रज वाबूसे वादा कर आया हूं कि परसों सवेरे उनसे निश्चय मिलूंगा। अतएव कल दिन तो ठहरना ही पड़ेगा। परसों रातकी ट्रेनसे हम अवश्य मथुरासे चल सकेंगे।

सविता वालिकाकी तरह व्याकुल होकर वोली—ना ना, मैं न रह सकूगी। यहाँ मेरा दम घुट रहा है। इस देशसे मुझे तुम सदाके लिए वहुत दूरके देशमें ले चलो। वहुत दूर—जहां रीति-नीति, समाज, मनुष्य सभी और तरहके हों। मैं अपने सारे अतीतको पोंछ डालूगी ! उसे इस तरह अपने जीवनपर अधिकार किये न रहने दूँगी, मैं—

विमल वाबूने कोई उत्तर नहीं दिया। सविताके मनकी दशा समझकर चुप हो रहे।

दूसरे दिन सवेरे विमल वावू जब सोकर उठे तो उन्होंने देखा, सविताके सोनेकी कोठरीका दर्वाजा उस समय भी वंद है। विमल वावू हमेशा जरा देरसे उठते हैं। किन्तु सविताको तड़के उठनेका ही अभ्यास है। इतनी देरको भी सविताके शयन-कक्षका द्वार वंद देखकर वह शंकित हो उठे। दर्वाजेके सामने खड़े होकर वह यह सोच रहे थे कि दर्वाजेमें धक्का दें या नहीं, इसी समय दर्वाजा खोलकर सविता वाहर निकली। उसकी दोनों आँखें लाल हो रहीं थीं।

रातको जागनेकी सुस्ती और स्याही चेहरेपर गहरी झलक रही थी। मरणासन्न रोगीको लेकर लंबी रात-भर मौतके साथ जूझनेके बाद सवेरे नारीका चेहरा जैसे बदल जाता है, वही चित्र सविताके मुखपर जैसे उभर आया था।

विमल बाबूने एक बार सविताकी ओर व्यथित दृष्टिसे ताककर दूसरी ओर नजर फेर ली। कुछ भी नहीं पूछा।

सविताने कुछ लज्जित होकर कहा—देखती हूँ, बहुत देर हो गई। निश्चय ही तुम्हें चाय नहीं मिली। धोती बदलकर मैं अभी तैयार किये देती हूँ।

विमल बाबूने कहा—आज महराज ही चाय न बना दे सविता?

सविताने कहा—ना ना, वह चाय अच्छी नहीं बना पाता। मुझे ज्यादह देर न होगी।

इसके बाद आप ही कैफियत देनेके ढंगसे सहज कंठसे बोली—रातको अच्छी नींद नहीं आई। कल मिजाज ऐसा बिगड़ गया था कि सिरमें दर्द होने लगा और रातकी नींद मिट्टी हो गई, और क्या। जाती हूँ, चटपट स्नान कर आऊं।

सविता अँगोछा हाथमें लेकर बाथरूमकी ओर चली गई। विमल बाबू अन्य-मनस्क होकर सोचने लगे—कितनी दारुण निराशा और मर्म वेदनासे मनुष्यका चेहरा एक ही रातमें इतना मुरझाकर सूख जाता है।

चाय प्यालीमें ढालते-ढालते सविताने अत्यन्त सहज भावसे कहा—कल बहुत अच्छी तरह सोच-समझकर मैंने कर्त्तव्य ठीक कर लिया है। समझ गये?

विमल बाबूने कहा—काहेका?

"यही उन लोगोंके सम्बधमें।"

इस अनुद्दिष्ट सर्वनाम सविताने किसके लिए प्रयुक्त किया है, यह विमल बाबू समझ गये। कितनी गहरी वेदनाके फल स्वरूप अति प्रियनाम आज सर्वनामके रूपमें बदल गया है, यह भी उन्हें अज्ञात नहीं रहा। पूछा—क्या ठीक किया सविता?

"सिंगापुर जाना ही ठीक किया है।"

"और भी कुछ दिन तीर्थयात्रामें घूमा जाय। उसके बाद भी अगर जानेकी इच्छा हो तो जाना। क्यों, है न ठीक?"

"नहीं, अब तीर्थ-यात्रा नहीं। मनुष्यके हाथके गढ़े इन खिलौने जैसे तीर्थोंमें घूम घूमकर केवल घूमनेके नशेमें थोड़ा-सा समय अवश्य कट जाता है, पर

अन्तरकी भारी जिज्ञासाका उत्तर नहीं मिलता। इस खेलमें और चाहे जिसका मन बहले, पर जो सत्यको चाहता है, उसका मन नहीं बहलता। अब विश्राम चाहिए।

विमल बाबूने जरा इधर-उधर करके कहा—किन्तु जहाँ विश्रामकी आशासे जाना चाहती हो, वहाँ जाकर अगर विश्राम न पाओ?

"यह भय न करो। अबकी मुझसे गलती नहीं होगी। भगवानने जीवनका दिन ढलते समय अन्तमें जो सामग्री तुम्हारे हाथसे भेजी है, वह साधारण नहीं है। जो फूल डंठलसे टूटकर मिट्टीमें गिर गया है, वह फिर कभी शाखाके बंधनमें लौटकर नहीं आता। अबकी मैं समझ गई हूं। अगिया-बेतालके पीछे उसे पकड़नेके लिए दौड़ना केवल दु:खको बढ़ाना है।

बहुत देर चुपके बीत गई। विमल बाबूने पूछा—तो टेलीग्राम कर दूं सिंगापुरके जहाजमें दो केबिन रिजर्व करानेके लिए?

सविताने सिर हिलाकर स्वीकृति दे दी।

दूसरे दिन सवेरे विमल बाबू मथुरासे मोटरपर बैठकर जब वृन्दावनको चले, तब सवितासे बोले—ब्रज बाबूने तुमको अपने डेरेपर बुलाया था। एक बार घूम आओगी क्या?

सविता राजी नहीं हुई। विमल बाबू अकेले ही चले गये। वृन्दावनमें ब्रज बाबूका ठिकाना ढूढ़कर उनके डेरेपर पहुँचकर देखा, रेणुको पहले दिनकी रातसे कालरा हो गया है। चिकित्सा और सेवा-शुश्रूषाका उचित प्रबन्ध कुछ भी नहीं है। रोगीको हरिनाम-सकीर्तन सुनाया जा रहा है। ब्रज बाबू ठाकुरजीकी कोठरीमें हत्या दिये पड़े हैं। बीच बीचमें वहाँसे उठकर मुमूर्षु कन्याके दोनों होठोंमें जरा-जरा चरणामृत डाल देते हैं और फिर व्याकुल चित्तसे दौड़कर मूर्तिके सामने पछाड़ खाकर गिर पड़ते हैं। गुरुदेव वैकुण्ठदास बाबाजीके कुंजमें खबर भेजनेपर उन्होंने अपने आश्रमकी एक सेवादासी वैष्णवीको रोगिणीकी सेवाके लिए भेज दिया है। वह मथुरा जिलेकी युवती है। बंगला भाषा अच्छी-तरह समझ नहीं पाती। शुश्रूषाके संबंधमें भी उसे कुछ विशेष ज्ञान नहीं है। अचेत-सी रोगिणीको प्यासमें पानी पिला देती है और वैकुण्ठदास बाबाजीकी दी हुई आयुर्वेदिक गोलियाँ तथा ठाकुरजीका चरणामृत सेवन कराती है। रोगिणीकी शय्या और कपड़े वगैरह साफ नहीं हैं, गंदे हो रहे हैं—यह भी विमल बाबूको देख पड़ा।

हालत देखकर विमल बाबू फौरन सविताको लानेके लिए मथुरा लौट गये। वह समझ गये कि रेणुकी हालत शंकाजनक है।

खबर पाकर सविता जैसे पत्थर हो गई।

विमल बाबू उसे लेकर फौरन वृन्दावनको चल दिये।

मोटरमें बैठी हुई सविताके मुँहकी ओर उस समय देखा नहीं जाता। उसके भीतर जैसे एक बहुत बड़ी आँधी स्तब्ध हो रही है।

बहुत देर बाद, जलमग्न आदमीकी तरह छटपटाकर रुँधी हुई साँससे सविता कह उठी—ओह, गाड़ी इतनी धीरे क्यों चल रही है? मेरी साँस बद हुई जा रही है!

विमल बाबूके दो-एक समयोपयोगी बातें कहने पर भी वे सविताके कानोंमें नहीं पहुँचीं। वह अकस्मात् कह उठी—दयामय, तुमने तो अनेक देशोंके अनेक इतिहास पढ़े हैं। यह भी क्या तुमने कहीं पढ़ा है कि अपनी मा अपनी सन्तानकी ऐसी दुर्गतिका कारण हुई है?

विमल बाबू चुप रहे।

राहमें एक जगह एक कुएँके सामने मोटर रुकी—रेडीयेटरमें पानी भर लेनेके लिए। राहके किनारे दूरपर किसानोंकी किसी झोपड़ीसे किसी बालकके कण्ठका कातर क्रन्दन सुनाई पड़ा।

सविताने एकाएक जोरसे काँपकर व्याकुल कंठसे पूछा—अजी, उन लोगोंके यहाँ क्या हुआ है? यह रोनेका शब्द है न? सुन पा रहे हो क्या!

विमल बाबू सविताकी मानसिक अवस्था समझकर चिन्तित हुए। बोले—वह कुछ नहीं है। जान पड़ता है, कोई छोटा लड़का यों ही रो रहा है। लेकिन तुम अगर इतनी नर्वस हो पड़ोगी—व्याकुल हो उठोगी सविता, तो किस तरह वहाँ रोगिणीकी शुश्रूषाकी जिम्मेदारी लोगी?

सविताने अत्यन्त व्यस्त होकर कहा—ना, ना, मैं तनिक भी अस्थिर नहीं हुई। जो कुछ हुई हूँ, सो वहाँ जानेपर—उसे एक बार छातीसे लगा लेनेपर सब ठीक हो जायगा। इन पन्द्रह बरसोंमें मेरा हृदय भीतरसे खाली रहा है। भले ही वह मुझपर नाराज हो, भले ही मुझसे घृणा करे!—क्रोध और घृणा करनेकी तो

बात ही है । मैंने चाहे जो और चाहे जितनी गलती क्यों न की हो, तो भी मैं उसकी मा हूँ! यह क्या अब वह न समझेगी? निश्चय ही समझेगी, देख लेना! यह उसका क्रोध नहीं है, घृणा नहीं है, माके ऊपर रूठना है! मेरी बेटीका छुटपनसे ही रूठनेका स्वभाव है!

विमल बाबू लंबी साँसको दबाकर दूसरी ओर देखते रहे।

यथासभव तेज़ीसे वे लोग वृन्दावनमें व्रज बाबूके डेरेपर जा पहुँचे।

घरके सामने मूँजकी खटिया और गेरुए वस्त्र पहने वैष्णवोंके दलको देखकर विमल बाबूने शंकित नेत्रोंसे सविताकी ओर ताका। सविताके स्थिर धीर मुखपर अब उस चचलता, उद्वेग और व्याकुलताका लेश भी नहीं है। वहाँ गहरे विषादके साथ ही अत्यन्त कठिन भावकी यवनिका पड़ गई है। विमल बाबू चौंक उठे। उन्हें याद आया, सबसे पहले जिस दिन उन्होंने सविताको देखा था, उस दिन भी सविताके मुखपर इसी तरहकी अद्भुत कठिन, अथ च गहरी विषादव्यंजक छाया देखी थी।

सविताने रत्तीभर भी अस्थिरता नहीं प्रकट की। मोटरसे उतरकर डेरेके भीतर चली गई। सद्यशोकाहत व्रज बाबूने आँसू-भरे गलेसे कहा—आ गईं नई-बहू! ये सब रेणुको ले जानेके लिए व्यस्त हो रहे हैं—मैं कहता हूँ, यह नहीं हो सकता। जिसका धन है—वह आ जाय; उसके बाद तुम लोगोंकी जो खुशी हो सो करना। तुम्हारी अमानतको मैं रख नहीं सका, खो दिया। मुझे क्या तुम माफ कर सकोगी?

सविताने बात नहीं की। काँपते हुए होठोंको प्राणपणसे दबाकर निर्वाक् मुखसे उस गंदे फर्शके एक ओर लड़कीके बिछौनेकी ओर ताकती रही। पृथ्वीतल-पर, मलिन गंदे बिछौनेपर, मैले वस्त्रसे ढकी निस्पंद प्राणहीन शीतल देह पड़ी हुई है। आसपास जलका लोटा, चरणामृतका पात्र, वैद्यकी गोलिया, खरल-बटि-या आदि सब चीजें इधर-उधर अस्तव्यस्त पड़ी हैं।

सविताने आगे बढ़कर काँपते हाथोंसे लाशके मुँहपरसे मैले वस्त्रका आवरण हटा दिया। अत्यन्त शीर्ण, विवर्ण, रक्तलेशहीन मुखकी कालिमालिप्त मुँदी हुई दोनों आँखें गहरे गढेमें धँस गई हैं। ठुड्डी और गलेकी हड्डी ऊपर निकल आई

हैं। तैलहीन रूखे केशोंकी राशि गर्दनके नीचे ढेर हो रही है। स्नेहमयी जननीकी दृष्टिमें जैसे उस मुखपर सारे विश्वके गंभीरतम दुःख और वेदनाकी गूढ छाया सुस्पष्ट हो उठी।

मृत्यु-मलिन मुखकी ओर बड़ी देरतक अश्रुहीन एकटक नेत्रोंसे ताकते रहकर सविता एकदम झुक पड़ी और कन्याके बर्फ जैसे ठंडे मस्तकपर एक गहरा चुबन अकित कर दिया।

शवको ले जानेके लिए जब लोग आगे बढ़े, तब सविता आप ही हटकर खड़ी हो गई। किन्तु वृद्ध व्रज बाबू, अपने जीवन-भरके सयम, साधना और भगवद्-ज्ञानको भूलकर, आज बच्चेकी तरह रोते हुए जमीनपर लोटने लगे—मेरी बेटी! अपने बूढे बापको तू किसके हाथमें सौंपे जा रही है—

× × × ×

कई दिन बीत गये हैं। दुर्घटनाकी खबर पाकर कलकत्तेसे राजू आया है।

तार आया है कि व्रज बाबूकी कनिष्ठा पत्नी अर्थात् रेणुकी विमाता आ रही है। सभवतः व्रज बाबूका भार ग्रहण करनेके लिए ही वह आ रही है—यही सबका अनुमान है।

इन कई दिनोंमें सविताकी देहमें अकस्मात् बूढापेके सब चिह्न सुस्पष्ट हो उठे हैं। जागनेसे और गहरे शोकसे उसके मुख और आँखोंपर गहरी स्याही आ गई है। सूखे हुए होठोंमें लावण्यका लेशमात्र नहीं रहा। मुखका भाव जड़-सा निश्चेष्ट है।

शोकजीर्ण व्रज बाबूकी सेवाका सब भार अपने हाथमें लेकर सविता दिन-रात काममें डूबी रहती है।

घरके फर्शपर बैठी सविता सूपमें डालकर खीलें बीन रही थी, व्रज बाबूके रातके आहारके लिए। एक बहुत मैली साड़ी पहने थी, जिसमें जगह-जगह तेल, घी, कालिख, और कीचड़के दाग लगे हैं। सिरकी माँग टेढ़ी-मेढ़ी अस्पष्ट थी। रूखे बालोंमें छोटी छोटी लटें बन गई हैं।

विमल बाबू आकर खड़े हुए।

सविताने सिर उठाकर कहा—तुम और कितने दिन यहाँ रहोगे?

विमल बाबूने कहा—जितने दिन तुम कहो।

सविताने कहा—आज छोटी मालकिन आ रही हैं। जान पड़ता है, उनके आनेके पहले ही मेरा यहाँसे चले जाना उचित है। क्या कहते हो?

विमल बाबूने कहा—यह तुम सोच समझ लो।

सविताने कहा—लेकिन मैं समझ पा रही हूँ कि वे लोग इन्हें शान्तिसे नहीं रहने देंगे। यहाँसे उन्हें कलकत्ते खींच ले जानेके मतलबसे ही आ रहे हैं।

विमल बाबूने कहा—इसमें हानि क्या है?

सविताने सिर हिलाकर कहा—यह नहीं होगा। इस असहाय, असमर्थ, रोग और शोकसे जीर्ण मनुष्यको उसके अन्तिम आश्रय वृन्दावनसे खींचकर अन्यत्र ले जानेके बराबर निष्ठुरता और नहीं हो सकती। अन्तरका आकर्षण होता तो छोटी बहू यहीं रहकर स्वामीकी सेवा करतीं।

विमल बाबू चुप रहे।

सविताने कहा—इस धूल-धक्कड़के देशमें तुम्हें खूब ही कष्ट हो रहा है, यह मैं समझ रही हूँ। तुम लौट जाओ। मैं यहीं रह गई।

विमल बाबूने कहा—अच्छा।

विमल बाबू चले जा रहे थे, पीछेसे सविताने पुकारा—सुनो।

विमल बाबूके लौटनेपर सविताने उनकी ओर वेदनासे विह्वल दृष्टि उठाकर देखा और कहा—क्या मुझे एक बातका उत्तर दे जा सकोगे?

विमल बाबूने कहा—पूछो।

सविताने कहा—जन्मजन्मान्तरमें भी क्या मुझे इस क्षमाहीन ग्लानिका बोझा लादे फिरना पड़ेगा?

सविताका गला आँसुओंसे अवरुद्ध हो आया। फिर कहा—किन्तु रेणुने बड़ी होकर एक दिन भी जो मुझे 'मा' कहकर पुकारा था, अपने हाथसे सेवा-यत्न आदर किया था, उससे भी क्या मेरी कालिख नहीं धुली?

विमल बाबूने कहा—तुम्हारा मन ही इसका ठीक ठीक उत्तर देगा सविता।

"और एक बात है। मनुष्यके भीतरका प्रधान अवलम्बन जब इस तरह टूट जाता है, तब भी मनुष्य किस तरह, क्या लेकर, जीता रहता है—जानते हो?"

"मुझे जान पड़ता है, तुमने जो खोया है, उसे संसारके सभी अभागोंके बीच, सभी दुखियोंके बीच ढूँढ़ पाओगी।"

× × × ×

सविताने जो कहा था, हुआ भी ठीक वही। छोटी बहू अपने एक बहनौताको साथ लेकर, व्रज बाबूको कलकत्ता ले जानेके लिए आई। व्रज बाबूके कुछ कहनेके पहले ही सविताने कहा—देह और मनकी इस दशामें उनका कलकत्ते लौटना सभव नहीं है। आखिरी अवस्थाके बाकी शोकार्त दिन यहाँ फिर भी कुछ शान्तिसे कट जायँगे।

छोटी बहूने कहा—यहाँ एक आदमी तो बिना चिकित्साके प्राण गँवा बैठा। तबियत खराब होनेपर इन्हें देखेगा कौन, सेवा कौन करेगा? इसके सिवा चार आदमी मुझे क्या कहेंगे?

सविताने कहा—सेवाके लिए तुम खुद ही यहाँ रह सकती हो। इनको खींच ले जाना ठीक न होगा।

छोटी बहूने कहा—आपको तो ठीक पहचान नहीं पा रही हूँ।

सविताने कहा—मैं तुम्हारी ससुरालकी हूँ। आत्मीय होती हूँ। तुमने मुझे कभी देखा नहीं—पहचानोगी कैसे?

छोटी बहू निहायत बुरे स्वभावकी नहीं है। थोड़ा-सी निर्बोध, सीधी-सादी और आरामतलब प्रकृतिकी है। बारीकीसे कुछ समझ नहीं सकती—विचार नहीं कर सकती।

छोटी बहूने कहा—मैं वृन्दावनमें रहूँ—यह दादाकी बिल्कुल ही इच्छा नहीं है। यह जो कुछ दिनके लिए मैं यहाँ आई हूँ सो बड़ी मुश्किलसे उनके हाथ-पैर जोड़कर। इनको ले जानेमें ही मेरे लिए सब तरहसे सुविधाकी बात है।

सविताने कहा—यह मैं जानती हूँ। लेकिन यह इनके अपने लिए बहुत ही असुविधाकी बात है।

छोटी बहूने कहा—यह अगर मेरे साथ न जायँगे, तो इन्हें देखे-सुनेगा कौन? मुझे तो कल ही लौटना होगा।

सविताने कहा—जब तुम लोग कोई उनके अपने नहीं थे, उनको जानते-पहचानते भी नहीं थे, तब जो आदमी उनका सब कुछ देखने-सुननेका भार लिये रहता था, उसी आदमीने उन्हें देखने सुननेका भार इस समय भी ले रखा है। तुम अपने दादासे कह देना।

छोटी बहूने विस्मित होकर कहा—वह कौन है ?

सविताने कहा—तुम नहीं पहचान सकोगी बहन। अपने दादासे कहना, वह ठीक जान लेंगे।

छोटी बहू बहनोतेके साथ कलकत्ते लौट गई। विमल बाबूने भी सिंगापुर लौटनेकी व्यवस्था की।

यात्राके समय सविताने आकर उनको प्रणाम किया। शोकसे शीर्ण हो रही सविताकी ओर देखकर विमल बाबूने अस्पष्ट स्वरमें क्या शुभकामना की, कुछ समझमें नहीं आया।

सविताने मृदु स्वरमें अपराधीकी तरह ही कहा—तुम मुझे गलत न समझना। जीवनमें बारबार आश्रय-भ्रष्ट होना ही मेरे भाग्यका लेख है।

विमल बाबूकी बड़ी मोटर वृन्दावनकी सड़ककी लालरंगकी धूल उड़ाती हुई सविताकी नजरसे ओझल हो गई। स्तब्ध खड़ी हुई सविताके रक्तलेशशून्य मुखकी ओर ताककर डरे हुए स्वरसे राखालने पुकारा—मा-मा-नई-मा—

राखालके पुकारनेसे नजर घुमाकर सविता अकस्मात् उमड़ी हुई रुलाईके साथ धरतीपर लोट गई। बोली—राजू, मेरी रेणुने जब मुझे क्षमा नहीं किया, तब मैंने खूब जान लिया कि संसारमें किसीसे भी मैं क्षमा नहीं पाऊँगी।

× × × ×

लगभग एक महीनेके बाद अदनके बंदरगाहके पोस्ट आफिसकी मोहर लगा हुआ एक पत्र सविताके नाम वृंदावनमें आया। विमल बाबूने उसमें लिखा है—

"रेणुकी मा,

"तुम्हारा देश-भ्रमण समाप्त हो गया है। अब मैं पृथ्वी-भ्रमणके लिए जा रहा हूँ। तुम्हारे प्रति मैंने हृदयमें बिन्दुमात्र दुःख या क्षोभ रखा है, यह संदेह न करना। जीवन-भर, वृहत् व्याप्तिके भीतर—बड़े फैलावके भीतर—जुटे रहकर वर्तमान जीवनका यह तंग दायरा मुझे जैसे संकुचित बनाये डाल रहा है। इसी लिए यह यात्रा है।

"अन्तरकी अभिज्ञताकी ओरसे तुम्हारे साथ मेरे परिचयका मूल्य बहुत अधिक है। किन्तु जो पुरुषके जीवनको बाहर भी यथेष्ट विस्तृत उन्नत और

उन्मुक्त नहीं बना दे सकता, वह पुरुषके लिए कल्याणकर नहीं है। जीवनमें कभी गृहलाभ नहीं हुआ। सिर्फ धन और ऐश्वर्य पाया है। पथिग् वृत्तिमें ही मेरी किशोरावस्था और जवानी बीती है। आज प्रौढ़ावस्था भी समाप्त हो रही है। जीवनकी इस अबेलामें, तुम्हारे निकट घरके आनन्दकी उपलब्धि मुझे हुई, उससे मैं परितृप्त हुआ हूँ। इसके लिए मैं अकृत्रिम कृतज्ञता जनाता हूँ।

"तुम्हारे प्रति गहरी सहानुभूति और असीम श्रद्धा हृदयमें लेकर तुमसे बहुत दूर हटा जा रहा हूँ। यही भरोसा रह गया है कि आज जो यह यात्राकी नौका सुदूर कूलहीन जलमें बह चली है, उसके किनारे लगनेका लंगर तुम रहीं।

"जिस दिन, जब कभी, किसी भी कारणसे तुम्हें मेरी जरूरत हो—प्रयोजन हो, तुम टामस कुक कपनीके केयरमें टेलीग्राम कर देना। जीता रहनेपर, पृथ्वीके चाहे जिस छोरमें होऊँ, हवाई जहाजके द्वारा फौरन लौट आऊँगा।

"और, यह भी म जानता हूँ कि एक ऐसा आदमी पृथ्वीमें रहा, जो मेरी आखिरी विदाका दिन आनेपर, सारी बाधाओंकी पर्वा न करके मेरे पास आकर अवश्य उपस्थित हो सकेगा। यह जानना ही क्या अस्ताचलकी ओर उन्मुख एक जीवनके लिए यथेष्ट सबल नहीं है?"